UNIVERSAL
LIBRARY
OU_186121
UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 349.5 J84R Accession No. H 2714

Author

Title

This book should be returned on or before the date last marked below.

श्रीरामचन्द्रायं नमः ।

रामरामेतिरामेति रमेरामेमनोरमे ।
सहस्रनामतत्तुल्यं रामनामवरानने ॥

भूमिका।

जैसे कि, हिन्दी रसिक हरिभक्तिपरायण सुजन जन रामायणादि रामचरित्र पढकर अपार आनंद भोगते हैं वैसेही यह रामचन्द्रिकाभी हरिचरित्रका अपार समुद्र लहरारहा है इसकी एकही लहर लेनेसे आनंदही नहीं बरन् भुक्ति और मुक्तिभी मिलती है, रामचरणमें अनुराग बढकर पुरुष अतुल कीर्तिका भागी होता है यद्यपि केशवदासकी कविता बहुत कठिन और ललित है (जैसे कि–देनो न चाहै विदाई नरेश तो पूछत केशवकी कविताई) तथापि इसकी टीका ऐसी मनोविलास बुद्धिप्रकाश लोकरंजनार्थ परम उत्कृष्ट हुई है कि, बारहखडी जाननेवालाभी उत्तम रीतिसे पठनका फल प्राप्त कर सकता है इसमें रामचन्द्रजीका अपूर्व चरित्र सर्वत्र यथाक्रम वर्णित है इसके सिवाय काव्यनिरूपणभी ऐसा उत्तम है कि, लोक देखनेसेही सन्तुष्ट होंगे अधिक प्रशंसा व्यर्थ है. आशा है कि, सूर्यकी किरणों सदृश इसकी प्रतियेंभी सारे संसारमें गुणग्राहकोंके पास शीघ्र फैल जायँगी और वे अपने विशालनेत्रासे इसका अवलोकन पठन स्वाद सदासर्वदा हृदयकमलमें धारण करैंगे.

आपका कृपापात्र--

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेंकटेश्वर" मुद्रणयंत्रालय–मुंबई.

॥ श्रीः ॥

अथ रामचन्द्रिका-सटीककी विषयानुक्रमणिका ।

सं. प्र.	विषय.	पृष्ठांक.
१	यहि पहिले परकाशमें, मंगल चरण विशेषि । ग्रन्थारम्भ रु आदिकी, कथा लहाहिं बुध लेखि ॥	१–२०
२	या द्वितीय परकाशमें, मुनिआगमन प्रकाश । राजासों रचना वचन राघव चलन विलास ॥	२१–२६
३	कथा तृतीय प्रकाशमें, वन वर्णन शुभ जानि । रक्षण यज्ञ मुनीशको, श्रवण स्वयंवर मानि ॥	२७–३४
४	कथा चतुर्थ प्रकाशमें, बाणासुर सम्बाद । रावणसों अरु धनुषसों, दशमुख बाण विषाद ॥	३५–४०
५	यह प्रकाश पञ्चम कथा, राम गवन मिथिलादि । उद्धारण गौतम धरनि, स्तुति अरुणोदय आदि ॥	४१–५३
६	छठै प्रकाश कथा रुचिर, दशरथ आगमजानि । लगनोत्सव श्रीरामको, व्याह विधान बखानि ॥	५३–६७
७	या प्रकाश सप्तम कथा, परशुराम सम्वाद । रघुवरसों अरु रोष त्यहि, भञ्जन मान विषाद ॥	६७–८०
८	यह प्रकाश अष्टम कथा, अवध प्रवेश बखानि । सीतावरण्यो दशरथहि, और बन्धुजन मानि ॥	८०–८४
९	यह प्रकाश नवमें कथा, राम गमन वनजानि । जनक नन्दिनीको सुकृत, वर्णन रूप बखानि ॥	८४–९५
१०	यह प्रकाश दशमें कथा, आवन भरत सुनाम । राज मरण अरु तासुको, बसिबो नन्दीग्राम ॥	९५–१०२
११	एकादशे प्रकाशमें, पञ्चवटीको वास । शूर्पणखाके रूपको, रघुपति करि हैं नाश ॥	१०२–१११
१२	या द्वादश प्रकाश खर, दूषण त्रिशिरा नाश । सीता हरण विलाप सु,-ग्रीव मिलन हर त्रास	१११–१२४
१३	या तेरहें प्रकाशमें, वालिवध्यो कपिराज । वर्णन वर्षा शरदको, उदधि उलंघनसाज ॥	१२४–१४४

सं. प्र.	विषय.	पृष्ठांक.
१४	या चौदहें प्रकाशमें, ह्वै है लङ्कादाह । सागरतीर मिलान पुनि, करि हैं रघुकुलनाह ॥	१४४--१५३
१५	यह प्रकाश दश पञ्चमें, दशशिर करै विचार । मिलन विभीषण सेतु रचि, रघुपति जै हैं पार ॥	१५४--१६३
१६	यह वर्णन है षोडशै, केशवदास प्रकाश । रावण अंगदसों विविध, शोभित वचन विलास ॥	१६३--१७३
१७	या सत्रहें प्रकाशमें, लङ्काको अवरोध । शत्रु चमू वर्णन समर, लक्ष्मणको परबोध ॥	१७३--१८२
१८	अष्टादशे प्रकाशमें, केशवदास कराल । कुम्भकर्णको वर्णिबो, मेघनादको काल ॥	१८२--१९०
१९	या उन्नीस प्रकाशमें, रावण दुःख निधान । जूझैगो मकराक्ष पुनि, ह्वै है दूत विधान ॥	१९०--२०२
२०	या बीसएँ प्रकाशमें, सीता मिलन विशेषि । ब्रह्मादिक अस्तुति गमन, अवध पुरीको लेषि ॥	२०२--२१४
२१	एकईसयें प्रकाशमें, कह ऋषिदान विधान । भरत मिलनकपिगुणनको, श्रीमुख आप बखानि ॥	२१४--२२४
२२	या बाइसें प्रकाशमें, अवधपुरीहि प्रवेश । पुरवासिन मातानिसों, मिलिबो रामनरेश ॥	२२४--२२८
२३	या तेइसयें प्रकाशमें, ऋषिजन आगमलेषि । राज्यश्री चिन्हन कहे, श्रीमुख राम विशेषि ॥	२२८--२३६
२४	चौबीसयें प्रकाशमें, रामविरक्ति बखान । विश्वामित्र वशिष्ठसों, बोध कही शुभआनि ॥	२३६--२४८
२५	कथा पचीस प्रकाशमें, ऋषिवशिष्ठ सुख पाय । जीव उधारण रीति सब, रामहि कहो सुनाय ॥	२४८--२५६
२६	कथा छब्बीस प्रकाशमें, कह्यो वशिष्ठ विवेक । राम नामको तत्त्व अरु, रघुवरको अभिषेक ॥	२५६--२६१
२७	सत्ताइसें प्रकाशमें, रामचन्द्र सुखसार । ब्रह्मादिक अस्तुति विविध, निजमतिके अनुसार ॥	२६१--२६६

सं. प्र.	विषय.	पृष्ठांक.
२८	अट्ठाइसें प्रकाशमें, वर्णन वहुविधि जानि । श्रीरघुबरके राजको, सुरनरको सुखदानि ॥	२६७–२७०
२९	उनतीसएँ प्रकाशमें, वर्णि कह्यो चौगान । अवधि दीप शुककी विनति, राजलोक गुणगान ॥	२७१–२७९
३०	या तीसएँ प्रकाशमें, बरण्यो बहुविधि जानि । रङ्गमहल संगीत अरु, रामशयन सुखदानि ॥	२८०–२९३
३१	इकतीसएँ प्रकाशमें, रघुवर बाग पयान । शुकमुखसिय दासीनको, वर्णन विविध विधान ॥	२९४-३०२
३२	बत्तीसएँ प्रकाशमें, उपवन वर्णन जानि । अरु बहुविधि जलकेलिको, करहु राम सुखदानि ॥	३०२–३१०
३३	त्रयतीसएँ प्रकाशमें, ब्रह्मविनय बखानि । शम्बुक वध सिय त्याग अरु, कुश लव जन्मसो जानि ॥	३१०–३१७
३४	आयो श्वान फिरचादिको, चौंतीसयें प्रकाश । अरु सनाढ्य द्विज आगमन, लवणासुरको नाश ॥	३१७-३२५
३५	पैंतीसयें प्रकाशमें, अश्वमेध किय राम । माहन लव शत्रुघ्नको, ह्वै है संगर धाम ॥	३२५–३३०
३६	छत्तीसयें प्रकाशमें, लक्ष्मण मोहन जानि । आयसु लहि श्रीरामको, आगम भरत बखानि ॥	३३०–३३५
३७	सैंतीसयें प्रकाशमें, लवकटुबैन बखानि । मोहन बहार भरत्तको, लागै मोहन बाण ॥	३३५-३३८
३८	अडतीसयें प्रकाशमें, अङ्गद युद्ध बखान । व्याज सैन रघुनाथको, कुशलव आश्रम जान ॥	३३९–३४२
३९	नवतीसयें प्रकाश सिय, राम सँयोग निहारि । यज्ञ पूर सब सुतनको, दीन्हों राज विचारि ॥	३४२–३४८

इति विषयानुक्रमणिका समाप्ता ।

श्रीगणेशाय नमः ।

कवि केशवदासकृत-

रामचन्द्रिका--सटीक ।

जानकीप्रसाद टीकाकारकृत मंगलाचरण ।

कवित्त ॥ कुंडलित शुंडगण्ड गुंजत मलिंद झुंड वंदन विराजै मुंड अद्भुत गतिको । बालशशि भाल तीनि लोचन विशाल राजैं फणिगणमाल शुभ सदन[1] सुमतिको ॥ ध्यावत विनाही श्रम लावत न बार नर पावत अपार मोदभार धनपतिको । पाप गण मंदनकों विघन निकंदनकों आठों याम[2] वंदन करत गणपतिको ॥ १ ॥ सवैया ॥ जिनको अवलोकतही मन रंजन कंजनैं[3]की रुचि दूरि बहैये । मधुपालिन मालिनकी द्युतिशालिन आलिन दासनके मन ठैये । निधिसिद्धि अशेषकें धाम सदा मुख पूरन पूरन पुण्यन पैये । पगबंदनकै गिरिजापतिके रघुनन्दन रामकि कीरति गैये॥२॥ कवित्त ॥ तीन्यौं रूप तेरेई प्रभावनि त्रिदेव उतपति प्रतिपाल प्रलै निजमति कीजिये । नारद गणेश व्यास वालमीकि शेषआदि तव कृत पूरो लोक लोक यश लीजिये । सागर अपार हौं चहत पैरि पार जायो जग उपहासके प्रकाश भयभीजिये । शारदा भवानी कहौं जोरि युगपानी जन जानकीप्रसादपै कृपाकि कोर दीजिये ॥ ३ ॥ दोहा ॥ उत वर्णन रघुवर सुयश, इत मम प्रण प्रतिपाल ॥ ताते पवनकुमारको, करौं भरोस विशाल ॥ ४ ॥ बारबार बंदन करौं, गुरुचरणन सुखपाइ ॥ निजशिक्षा अंजनहृदय, दियो अदृष्टे[4] दिखाइ ॥ ५ ॥ कवित्त ॥ दामिनीसी दमकति पीतपट भाँति हीराहर बक पाँतिको प्रकाश धरियतु है । जुगुनूसे भूषण जवाहिर जगत सुनि शब्दमयूरहु साधुमोद भरियतु है । जानकीप्रसाद जग हरित करन मीठे बैनरस बैरीज्यों जवासे जरियतु हैं । राजसभा, विपद विराजैं छबिधाम नित रामघनश्यामको प्रणाम करियतुहै ॥ ६ ॥ षट्पद--परम प्रीति सिय जासु संग दामिनि समसोहै । शीश मुकुट बहुरंग अंग सुरधनुछबि रोहै ।

---

१ सिन्दूर । २ घर । ३ प्रहर । ४ कमल । ५ ब्रह्म

क्रोधानि हँसानि सुबैन बारि जगहित बरसावहिं । निरखि संतजन मोर जोर जय शोर मचावहिं । मन चतुरकिसान विचारिकरि नहिं उपाय देख्यो बियो ॥ घनश्याम राम उर आनिकरि स्वमतिशालि सिंचन कियो॥ ७ ॥ दोहा॥तापरिपाक अघायमन, चंचलतानि बिहाइ । रामचन्द्रिकाको तिलक, लाग्यो करन बनाइ ॥ ८ ॥'कठिनाई तम ग्रंथगृह, थलथल विविध विहारु॥ तिलक दीप बिनु अबुधक्यों, लखैं पदारथ चारु ॥ ९ ॥ तासों सुमति विचारि चित, कीन्हें तिलक अपार ॥ देखि रीति तिनकी करचों, हौं निजमति अनुसार ॥ १० ॥ घनाक्षरी कबित्त ॥ मेदिनी अमर अभिधान चिंतामणि गनि हारावली आदिको समत उर धारिकै । वाल्मीकि आदि कविताकी मतिभीनो दीनो ज्योतिष प्रमाणकहुँ जुगुति निहारिकै ॥ ग्रंथ-गुरुताके भय सकल न लीन्हों कीन्हों अरथ उकुति पद कठिन ठिहारिकै । रामचंद्रजूके चरणानि चित राखि रामचंद्र चंद्रिकाको कीन्हों तिलक बिचारिकै ॥ ११ ॥ चंचलाछंद ॥ नयनसूरजबाजि सिद्धिनिशीश संवतचारु । शुक्रसंयुतशुक्लपक्ष सुरेशपूजितबारु ॥ चारुदिकू तिथि हस्त तार वरिष्ठयोग नवीन । राम भक्ति प्रकाशिका अवतार ता दिन कीन॥१२॥ सोरठा ॥ रावणादि मतिहीन, राम सीय प्रति कटुवचन ॥ तहाँ अर्थ मृदु कीन, जानि प्रभाव सरस्वती ॥ १३ ॥ दोहा ॥ शब्दलग्यो संबंधमें, रह्यो छंदमें शेष ॥ ताहि मिलायो आनिकै, यों कहुँ कथा विशेष ॥ १४ ॥ कहुँ पूरव परकथनको, लख्यो विरोध विचारि ॥ तहाँ निवारणको कियो, निजमतिकी अनुहारि ॥ १५ ॥ जहाँ केर पर्याय पद, अर्थ बोध नहिं होहि ॥ तहाँ तासु इति अंतदै, लिख्यो दूसरो जोहि ॥ १६ ॥ जहाँ विरोधाभासहै, अर्थ विरोध प्रकाश ॥ लिख्यो अर्थ अविरोधही, तासों सहित हुलास ॥ १७ ॥ कठिन शब्दको अर्थ जहँ, एकठौर नहिं देखि ॥ तहाँ दूसरे ठौरमें, जानब लिख्यो विशेषि ॥ १८ ॥

ग्रन्थारम्भः ।

बालक मृणालनि ज्यों तोरि डारै सब काल कठिन कराल त्यों अकाल दीह दुखको । विपति हरत हठि पद्मिनी-के पातसम पंक ज्यों पताल पेलि पठवै कलुषको ॥ दूरिकै कलंक अंकभवशीश शशिसम राखत हैं केशोदास दासके

वपुषको ॥ साँकरेकी साँकरन सनमुख होतेही तो दशमुख मुख जोवै गजमुख मुखको ॥ १ ॥

टी०—बालक पाँच वर्षको हाथीको जैसे मृणाल पौनारोंको सब कालमें तोरि डारत है तैसे गणेश कठिन और कराल भयानक और अकाल कहे असमयको जो दीह कहे बडो पुत्र मरणादि दासनको दुःख है ताको तोरत हैं और जैसे बालक पद्मिनी कमलिनीके पातको हरत तोरत है तैसे ये विपत्ति दरिद्रादिको हरत हैं औ बालक जैसे पगसों दाबि पंक कहे कीचको पेलिकै पातालको पठावत है तैसे ये कलुष जे पाप हैं तिनको पठावत हैं इहां गजराजको त्यागकरि बालक सम यासों कह्यो कि पद्मिनी पत्रादि तोरनमें बालकको उत्साह रहत है तैसे गणेशजूको विपत्त्यादि विदारणमें बडो उत्साह रहत है कौतुकही विदारतहैं औ गणेशजू दासनके कलंकको अंक कहे चिह्नको दूरि करिकै जैसे भव महादेवके शीशको शशि है कलंक रहित ताही विधि दासनके वपुष शरीरको राखत हैं औ जनके सन्मुख होतेही साँकर राजभयादि ताकी साँकर बंधन जंजीरन कही नहीं रहति ऐसे जे गजमुख गणेश हैं तिनके मुखको दशमुख जे ब्रह्मा विष्णु महेश हैं तिनके मुख जोवे कहे निरखत हैं स्तुति करत हैं अथवा दशमुख जे दशौं दिशा हैं तिनके जे मुख हैं अर्थ यह दशौं दिशनके प्राणी स्तुति करतहैं ॥ "पञ्चवर्षो गजो बालः" इत्यभिधानचिंतामणिः। तौ इहाँ स्तुतिसों अभिकांक्षित वस्तुको मांगिवो सूचित भयो तासों आशीर्वादात्मक मंगल है दूसरो अर्थ जो ग्रंथ कविलोग करत हैं ताकी कथा। प्रथम संक्षेपसों कहतहैं सो युक्तिसों याही मंगलाचरणमें कह्यो है बालक या पदते श्रीरामचंद्रको जन्मसूचित भयो औ सबको कालरूप जो सुबाहु ताडकादि हैं तिन्हैं मृणालन पौनारिनके समान सहजही तोरि डारत भये मारत भये औ कठिन औ कराल कहे भयानक ऐसा जो धनुष है औ अकाल कहे कुसमयको जो दीह बडो दुःख है व्याह कृत उत्सवमें पशुरामकृत दुःख गर्वगति समेत तिनहुँनको त्यों कहे ताही प्रकारते मृणालन बहुवचन है तासों ताडकादि वध धनुभंग परशुरामगतिभंग सर्वत्र समता कियो॥ इति बालकाण्डकथा ॥ औ राज्यत्यागरूप जो विपत्ति है ताको हठिकै हरत कहे ग्रहण करत भये भरतादिको कह्यो न मान्यो आप पद्मिनी कमलिनीके पात कहे पुष्पपत्र सम सुकुमार हैं ॥ इति अयोध्याकाण्डकथा ॥ और पंक ज्यों

कहे पंकके सदृश नीच ऐसा जो विराध है ताको पेलिकै पातालको पठावत भये वाल्मीकीय रामायणमें लिख्यो है कि काहू अस्त्रशस्त्रसों न मरै तब रामचंद्र जीवतही गाडि लियो ताही प्रकार कलुष पापरूप जे खर दूषणादि हैं तिनहुँनको मारचो ॥ इति आरण्यकाण्डकथा ॥ औ कलंकको है अंक चिह्न जाके ऐसा जो बंधुपत्नी भोगी वालि है ताको दूरि करत मारत भये औ दास जो सुग्रीव है ताको भव महादेवके शीशके शशिके सम राखते भये जैसे भवशीश शशिको राहुको भय नहीं रहत तैसे शत्रुभयरहित सुग्रीवको कियो अथवा महादेवके माथेमें द्वितीयाको चन्द्रमा है यासों या जनायो कि भवसंसारको राज्य पाइ सुग्रीवकी और बढती ह्वैहै ॥ इति किष्किन्धाकाण्डकथा ॥ तथः याही पदमें सुन्दरौकाण्ड है ॥ केशव जे रामचंद्र हैं तिनके दास जे सुग्रीव हैं तिनके दास जे हनुमान हैं ताके वपुष शरीरको भवशीश शशिसम राखत भये कि लंकामें प्रकाशित करते भये कलंक रूप जे सिंहिका अक्षकुमारादि हैं तिनको दूरि करिकै कहे मारिकै ॥ इति सुन्दरकाण्डकथा ॥ औ रामचंद्रके सन्मुख होत ही विभीषणके साँकर कष्टकी जो साँकर जंजीर रही सो न कहे न रहत भई रामचंद्रके दर्शनहीं सो बिभीषणको दुःख दूरि भयो तब दशमुख जो ब्रह्मा विष्णु महेश हैं ते बिभीषणको मुख जोवत भये कि धन्य हैं बिभीषण जाको रामचन्द्र अंगीकार करचो औ गजमुख जे गणेश हैं तिन मुख कहे आदि दै और देवता हैं ते को कहे कहाँ हैं अर्थ यह गणेशादि देवता तौ जोवतही भये औ साँकर जे यमादिक हैं तिनको साँकर कहे कष्ट देवैया ऐसा जो रावण है सो रामचन्द्रके सन्मुख होतेही न रहत भयो गजमुख जे गणेश हैं तिनको मुख कहे श्रेष्ठ ऐसे जे रामचंद्र हैं तिनके मुखको जोवत भयो अर्थ यह उनके लोकको प्राप्त भयो अथवा मुख जोवै कहे मुखमें लीन होत भयो तुलसीकृत रामायणमें लिख्यो है कि " तासु तेज प्रभुवदन समाना । सुरनरसबन अचम्भौ माना" ॥ इति युद्धकाण्डकथा ॥ औ साँकर जो रावण है ताके साँकर जो रामचन्द्र हैं तिन्हें अयोध्याके सन्मुख होत ही दशमुख जे ब्रह्मा विष्णु महेश हैं ते मुख कहे मुख्य औ गजमुख जे गणेश हैं ते रामचन्द्रकी मुख जोवै कहे स्तुति करतेहैं अथवा दशमुख कहे दशौंदिशाके मुख औ गजमुख मुख कहे हाथिनमें मुख्य ते मुख जोवै कहे रामचन्द्रको मुख निहारतहैं ॥ इति उत्तरकाण्डकथा ॥ कोऊ कहै कि एक पदमें कैयो फेरि अर्थ कियो सो संक्षेपकथा है तासों दूषण नहीं है याही विधि रामायणादिक

तिलककारसे अर्थ कियो है याहूपर कोऊ हठ करै ताकारण द्वितीय प्रकारसों अर्थ बालक जो है शिशु सो जैसे बालखेलमें मृणालनको विनही श्रम तोरिडारे कहे तोरिडारत है इहाँ बालक पदमें जातिमें एक वचन है त्यों कहे ताहीविधि कठिन अतिकठोर औ भयानक ऐसा जो शंभुधनुष है ताको बाल अवस्थामें बालखेल सम रामचन्द्र तोऱ्यो त्यहीमुख कहे आदिदै ताडकावधादि सीयविवाहादि जे बालकांडकी संपूर्ण कथा हैं तिनको इहाँ मुखपदक्रमकी आदिमों नहीं है श्रेष्ठतामों है औ अकाल कहे कुसमयको जो दीह दुःख है अर्थ रामराज्याभिषेकमें कैकेयीको वर मांगिबो राम वनगमन दशरथ मरण भरतको व्रतकरि नंदिग्राममें वसन या प्रकारको जो अकाल दुःख है त्यहि मुख जे चित्रकूट गमनादि अयोध्याकांड कथा है तिनको औ विराध खर दूषणादि राक्षसनको मारिकै ऋषि लोगनकी विपत्तिको सहजही पद्मिनीके पातसम हरत कहे दूरि करत पंकरत पंक जे पापहैं तिनको जैसे पेलिकै पतालको पठवै कहे पैठे देत हैं अर्थ अपने दासनके जैसे पातक नाश करतहैं ताहिविधि कलुष कहे पापरूप बंधुपत्नीभोगी जो वालि है ताको पठायो अर्थ मार्‌यो तिनमुख जे आरण्यकाड औ किष्किन्धाकाण्डकी कथा हैं तिनको ऋषिनकी विपत्ति हरणादि आरण्यकाण्ड कथा जानो आदिपदते सीयहरणादि जानो औ वालिवधादि किष्किन्धाकाण्ड कथा जानो आदि पदते सप्ततालबेधन सुग्रीव राज्याभिषेकादि जानो औ क जो है अग्नि तासों लंकके जे अंक कहे ध्वजादि चिह्न हैं तिन्हैं दूरिकै कहे विध्वंस करिकै जारिकै इति अर्थ हनुमानके करसों लंका जारिकै दास जो बिभीषण है ताके वपुषको आजु पर्यंत राखतहैं रक्षाकरत हैं अर्थ रावणादिकों मारि जो विभीषणको लंकाको राज्य दियो तामें आजुलों रक्षा करत हैं तिनमुखकथनको हनुमान्‌के करसों लंकादाहादि सुन्दरकाण्डकी कथा जानो औ रावणादिको बधकरि बिभीषणको राज्यदानादि लंकाकाण्ड कथा जानो औ भरतको जो सांकर कहे नंदिग्राममें यतीवेष बासिबेको कष्ट है ताहीकी जो साँकर कहे बंधन जंजीर है ताको जो नशन कहे नाश करिवो है अर्थ रामचन्द्र आइकै भरत यतीवेषको दूरि कऱ्यो है तेहि मुखकस है आदिदै औज कहे यज्ञ मुख कहे आदिदै अर्थ अश्वमेधादि जे मुख कहे मुख्य कथा हैं तिनको योग कहे गीत है अर्थ कथन है ताको जे जोवै कहे देखा हैं. अर्थ इन कथनसों युक्त रामचंद्रिकाको जे पढते हैं तेहि कहे निश्चय करिकै दशमुख मुख होत हैं अर्थ वक्तृत्व

कारिकै दशमुखके सदृश जिनको एक मुख होतहै अर्थ बडे वक्ता होत हैं " मयूरेग्नौचपुंसिस्यात्मुखशीर्षजलेषु कम्" इति मेदिनी ॥" गंगीतंगातुगी-ताचगौश्चधेनुःसरस्वतीत्येकाक्षरी यजनेयः समाख्यातः" इत्येकाक्षरी ॥१॥

क०-बानी जगरानीकी उदारता बखानी जाइ ऐसी मति कहौधौं उदार कौनकी भई । देवता प्रसिद्ध सिद्ध ऋषि राज तपवृद्ध कहि कहि हारे सब कहिन कहूँलई । भावी भूत वर्त्तमान जगत बखानत है केशोदास केहूं न बखानी काहूपै गई ॥ वर्णैं पति चारि मुख पूत वर्णैं पाँच मुख नाती वर्णैं षटमुख तदपि नई नई ॥ २ ॥

टीका-जगरानी कहे जगमें श्रेष्ठ ऐसी जे वाणी सरस्वती हैं तिनकी उदारता बडाई जासों बखानी जाइ कहौ ऐसी मति बुद्धि उदार बडी कौने प्राणीकी भई है अर्थ काहूकी नहीं भई देवता बृहस्पति आदि औ प्रसिद्ध जे सिद्ध देवयोनि विशेष हैं अथवा भृगु आदि ऋषिराज वाल्मिकादि अथवा सिद्ध जे ऋषिराज हैं तप वृद्ध लोमश मार्कंडेय आदि जाकी उदारताको कहि कहि कहे वर्णि वर्णिकै सब हारे हैं कहिकै सब उदारता काहू न लई कहे न पायी अर्थ उदारताको अन्त न पायो हारे यासों कह्यो कि अब नहीं बखानत औ भावी कहे जे ह्वैहैं औ भूत जे ह्वैगये वर्तमान जेहैं जगत् कहे जगत्के प्राणी ते बखानत हैं सो केशवदास कहते हैं कि केहूँ कहे काहू प्रकारसों काहू प्राणीसों उदारता न बखानी गई औ पति जे ब्रह्मा हैं ते चारि मुखसों औ पूत महादेव पांचमुखसों नाती स्वामिकार्त्तिक षण्मुख सों वर्णत हैं ताहू पर नई नई कहे नवीन नवीन रहति है अर्थ यह कि यहि प्रकार मुख वृद्धिसों वर्णत हैं परंतु इनको वर्णन जाकी उदारताको छुई नहीं सकत अथवा ज्यहि वाणीके पति चारिमुख औ पूतके पांच मुख नातीको षण्मुख वर्णन करत हैं यासों या जनायो कि चारिमुखसों संपूर्ण जगत् उत्पत्तिके कर्त्ता पंचमुखसों नाशकर्त्ता षण्मुखसों देवतनके रक्षक ऐसे पति पुत्र नाती हैं जाके यासों बडी बडाई जनायो औ ताहूपर नवीन नवीन होति जाति है २ और अर्थ जामतिसो वाणी जो सरस्वती है तासों जगरानी सीताजूकी उदारता बखानी जाइ ऐसी मति .वाणीकी कौनकी कीन्ही भई

अर्थ कौने ऐसी मति वाणीको दीन्हीं औजवाणीके पति पुत्रादि चतुरादि मुखसों बर्णत हैं और अर्थ एकही है अथवा सरस्वतीकी उक्ति है कि वाणी जो मैंहों तासों जगरानी सीताजूकी उदारता बखानी जाइ कहे जाति हैं काहेसों अर्थ यह कि मोसों नहीं बखानी जाती काहेते कि ऐसी कौनकी उदारमति भई है कि जो बखाने काहेते कि देवतादि औ मेरे पति पुत्रादि सब बखानत हैं ताहू पर नई नई रहति है ऐसी सरस्वतीको अथवा सीताजूको नमस्कार करत हौं इति शेषः यामू नमस्कारात्मक मंगल है ॥ २ ॥

अन्यच्च ॥ पूरण पुराण अरु पुरुष पुराण परिपूरण बतावैं न बतावैं और उक्तिको ॥ दरशन देत जिन्हें दरशन समुझै न नेति नेति कहै वेद छाँडि भेद युक्तिको ॥ योनि यह केशोदास अनुदिन राम राम रटत रहत न डरत पुनरुक्तिको । रूप देहि अणिमाहि गुण देहि गरिमाहि भक्तिदेहि महिमाहि नाम देहि मुक्तिको ॥ ३ ॥

टी०—जिन रामचंद्रको पूर्ण कहे संपूर्ण अठारहौं पुराण अथवा पूरण कहे जे कछु वस्तु चाहत नहीं शुकादि पुराण स्कंदादि औ पुरुषपुराण लोमश मार्कंडेय आदि ते परिपूर्ण कहे सर्वत्र व्याप्त बतावत हैं और उक्ति कहे कथाको नहीं बतावत अर्थ कि और तर्क नहीं करत श्रीरामचंद्रजी जाको दर्शन देतहैं ताको फेरि दर्शनकी समुझ ज्ञान नहीं रहति अर्थ जाको रामचंद्रको दर्शन होतहै सो तिनमें लीन है जात हैं सायुज्य मुक्तिको प्राप्त होतहै अथवा और दर्शन स्त्री पुत्रादिकी समुझ नहीं रहंति अर्थ संसारको बंधन मोह छूटिजात है रामरूपही ध्यानमें निरखत हैं औ वेद जिनको अनेक भेदसों गान करि नेति नेति कहे ना इति ना इति कहे याही प्रकारको है सो न कहे नहीं हम जानत या प्रकार सब भेदकी युक्तिको छोडि कहत है अर्थ यह कि जिनको प्रमाण वेदऊ नहीं जानत रूप जो रामचंद्रको है सो अणिमा सिद्धिको देतहै औ गुण जे हैं ते गरिमा सिद्धिको देतहैं औ मुक्तिमहिमा सिद्धिको देतिहै औ नाम मुक्तिको देतहै यह जानिकै काव्यरीतिमें एकई वस्तुको द्वै बार कहौं तौ पुनरुक्ति दूषण होतहै ताको भय छोडिकै मुक्तिकी इच्छा करि अनुदिन रोज रोज राम नामको रटनहौं ॥ " अथौ दोषं

नपश्यतीतिप्रमाणात् ॥" और अर्थ रामनामको पुराणादि परिपूर्ण कहे भुक्ति मुक्त्यादि सब वस्तुसों पूरित अथवा सर्वत्र व्याप्त बखानत हैं सर्वत्र रहतहैं जहां चाहिये तहाँ लीजिये सब स्थानमें मिलत हैं औ जिननको दर्शन कहे षट्शास्त्र तिनकी समुझ नहीं है तिनकी रामचंद्र दर्शन देतहैं अति मूर्ख वाल्मीकादि नामहींके जपसों रामचन्द्रको दर्शन पायो अथवा दर्शन ज्ञान देतहैं नेति नेति कहे नाइति नाइति कि संपूर्णार्थ इनहीं से कहे की वाल्मीकी-से हीन गणिका यमनादि अनेकन पतितनको राम नामै सिद्धताको प्राप्त कीनहै जाति कुल विद्याके भेदकी युक्तिको छाँडिकै कछू जाति कुल विद्या परनहीं है जोई नामोच्चारण करै सोई सिद्धहोइ या प्रकार वेद कहतहैं अथवा प्रथमहींको अर्थ जानो जा नामके माहात्म्यको वेद नहीं जानता फेरि नाम कैसोहै रूपसौंदर्य औ अणिमासिद्धि औ अनेक गुण औ गरिमा सिद्धि औ महिमा सिद्धि औ नाम कहे यश औ मुक्तिको देतहै तौ सौन्दर्यादि जे दृष्टफल हैं ते जहाँ देखिये तहाँ राम नामहीके प्रभावसों जानियों औ मुक्ति अदृष्ट फल है ताके अर्थ अंत्य अवस्थामें सब राम नाम कहावतहै यह सनातन रीति चली आवतिहै तासों जानियतहै कि मुक्तिका दाता रामनाम छोडि दूसरो नहीं हैं अथवा रूप जो है वेष तामें अणिमादि सिद्धि देतहैं जैसे सूक्ष्म रूप चाहै तैसो धरैं औ गुणनमें गरिमा सिद्धि देतेहैं राम नामके जप प्रभावते सबगुण विद्यादि गरू होतहैं औ भक्तिमें महिमा सिद्धि बडाई देतहै जो रामनाम जपतहै सो बडो भक्त कहावत है औ नाममें मुक्तिको देत है अर्थ राम भक्तन प्राणिनकी मुक्ति जीवनमें सब नाम गणतहैं अथवा नाम यश औ मुक्तिको देतहै सो यह कहे ऐसो प्रभाव जानिके केशवदास जो है सो पुनरुक्ति भय छाँडिकै अनुदिन रामनामको रटत है या ग्रंथमें रामनाम वस्तु है ताका निर्देश कथनमात्र है तासों वस्तु निर्देशात्मक मंगल है ॥ ३ ॥

सुगीतछंद ॥ सनाढ्य जाति गुनाढ्य हैं जग सिद्ध शुद्ध-स्वभाव। कृष्णदत्त प्रसिद्ध हैं महिमिश्र पंडितराव ॥ गणेशसो सुत पाइयो बुधकाशिनाथअगाध। अशेषशास्त्र विचारिके जिन जानियो मतसाध ॥ ४ ॥ दोहा ॥ उपज्यो त्यहि कुल मंदमति, शठकवि केशवदास॥ रामचन्द्रकी चन्द्रिका,

भाषा करी प्रकाश ॥५॥ सोरहसै अट्ठावन, कार्तिकशुदि बुध वार॥रामचन्द्रकी चन्द्रिका, तब लीन्हों अवतार ॥ ६ ॥ बालमीकि मुनि स्वप्नमें, दीन्हों दरशन चारु ॥ केशव तिनसों यों कह्यो, क्यों पाऊं सुखसारु ॥७॥ मुनि श्रीछंद ॥ सिद्धि ऋद्धिः ॥ ८ ॥ सारछंद ॥ रामनाम सत्यधाम ॥ ९॥ और नाम कौन काम ॥ १० ॥

टीका—गुनाढ्यगुणनसों पूरित औ साधु मत उत्तम मत छंद उपजाति है जा छंदमें और और द्वै आदि छंदके चरण होइ सो छंद उपजाति कहावति है ॥ ४ ॥ ५ ॥ जो मैं तिथि नहीं कह्यो सो बार पदते सात बार हैं तासों सप्तमी तिथि सब कहतेहैं परंतु ज्योतिसके ग्रंथ ग्रहलाघवादिके मतसों कल्पांत अहर्गण किये बुधवार पंचमी और द्वादशी को आवत है सो द्वादशी भद्रा तिथि है और बुधे भद्रा सिद्धियोग होतहै और कार्तिक शुदी एकादशीको विष्णु जागतेहैं विष्णुके जागेके उपरांत ग्रंथारम्भ कर्‌यो तौ चैत्रादि मास गणनासों कार्तिक पर्यंत आठ औ रविवारादि वार गणनासों बुध पर्यंत चारिजोरि द्वादशी तिथि जानो ॥ ६ ॥ सुखसार मुक्ति चौबीसयें प्रकाशमें रामचंद्र कह्यो है कि जगछूटे सुखयोग तासों जानो ॥ ७॥ तीनि छंदकी अन्वय एकहै सिद्धि जो आठ अणिमादिक हैं और सिद्धि संपत औ सत्यको धाम ऐसो जो रामनाम है तासों सुखसार पै हौ सुखसार देबेको और नामको काम नहीं है तौ सिद्धिको धाम कहि ऐहिक सुखप्रद जनायो औ सप्तको धाम कहि सत्यही ब्रह्म है तासों ब्रह्मरूप प्रद जनायो अर्थ जीवतमें या लोकमें सुखद है औ अंतमें ब्रह्मपदप्रद है ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

केशव—रमणछंद ॥ दुख क्यों टरिहैं ॥ मुनि-हरिजु हरि हैं ॥ ११ ॥ मुनि—तरनिजाछंद ॥ बरणिबे बरणसो ॥ जगत-को शरणसो ॥ १२ ॥ प्रियाछंद ॥ सुखकंद है रघुनंदजू ॥ जग यों कहै जगबंदजू ॥ १३ ॥ सोमराजीछंद ॥ गुनो एक रूपी सुनो वेद गावैं ॥ महादेव जाको सदा चित्त लावैं ॥ ॥ १४ ॥ कुमारललिताछंद ॥ विरंचि गुणदेखै ॥ गिरागुण नीलेखै ॥ अनंत मुख गावै विशेहीन पावै ॥ १५ ॥

टीका-केशव पूंछ्यो कि लोभ मोहादि कृत जो दुःख हैं सो कैसे टरिहैं तब मुनि कह्यो कि, जब तू रामनाम ग्रहण करिहै तब रामचन्द्र हरि हैं छोडाइ हैं इहां हरिशब्द यासों कह्यो कि 'हरतिदुःखमिति हरिः' अर्थ दुःख हरिबो उनके नामहींको अर्थ है ॥ ११ ॥ दुःख छोडाई रामचंद्र मुक्ति देहैं या निश्चयके अर्थ रामचंद्रको ईश्वरत्व केशवको मुनि चारिछंदमें देखावत हैं जो जगत्को शरण रक्षक है सो बरण रूप अथवा रामनामांक तुम करिकै वर्णिवे है अर्थ रामचंद्रको रूप अथवा राम नाम वर्णन करो ॥ १२ ॥ सब जग कहत है कि रघुनन्दन जे रामचन्द्र हैं ते सुखके कंद कहे मूल हैं इनहीं-के आश्रित सब सुख है औ जगवंद्य है सब जग जिनको वंदना करत है सुखकंद कहि या जनायो कि सुखसार रामचंद्रही सों पाइ है और देव देबेको समर्थ नहीं हैं ॥ १३ ॥ जिन रामचंद्रको वेद जो हैं सो एकरूपी कहे जो सदा एकरूप रहत हैं ब्रह्मज्योति जासों गुन्यो कहे ठहरायोहै सो गान करत हैं सो हम वेद वाक्यसों सुन्यो है अथवा एक कहे जिन सम दूसरो नहींहै औ रूपी कहे अनेक रूपसों सर्वत्र व्याप्त हैं फिरि कैसे हैं जिनको महादेव सदा ध्यावते हैं ॥ १४ ॥ यामें रामचंद्रके गुणनको माहात्म्य है अनंत शेष विशेष निर्णय ॥ १५ ॥

नगस्वरूपिणीछंद ॥ भलो बुरो न तू गुने । वृथा कथा कहै सुने ॥ न रामदेव गाइहै । न देवलोक पाइहै ॥ १६ ॥ षट-पद ॥ बोलिन बोल्यो बोल दयो फिर ताहि न दीन्हों । मारिन मारयोशत्रुक्रोध मन वृथा न कीन्हों ॥ जुरि न मुरे संग्राम लोककी लीक न लोपी । दान सत्य सन्मान सुयश दिशि विदिशा ओपी ॥ मनलोभ मोह मद कामवश भये न केशवदास भणि । सोइ परब्रह्म श्रीराम है अवतारी अवतार मणि ॥ १७ ॥ दोहा ॥ मुनि पति यह उपदेश दै, जबहीं भयो अदृष्ट ॥ केशवदास तहीं करयो, रामचन्द्रजू इष्ट॥१८

टी०-तू अनेक कथा वृथा कह्यो सुनो करत है आपनो भलो बुरो नहीं गुनतो बिचारतो जबलौं जैसो पूर्व कहि आये ऐसे रामदेवको न गाइहै तबलौं अनेक कथनसों देवलोक न पैहै इहाँ देवलोक वैकुंठ जानो वैकुंठ देबेकी शक्ति

रामचन्द्रहीमें है और देव नहीं दैसकत कहूं न रामलोक पाइ है पाठ है तौ रामलोक वैकुंठ ॥ १६ ॥ प्रथम ईशत्व वर्णन करयो अब यामें रामचंद्रको स्वभाव गुण वरण्यो है रामचन्द्रजू जो बोले सो फेरि नहीं बोले अर्थ जो एक बात कह्यो सोई करयो है फेरि बदलिकै और बात नहीं कह्यो वन गमनादि वचनते जानो औ जाको दान दियो ताको फेरि वही दीन्हों अर्थ एकही बार ऐसो दियो जामें वाके फेरि माँगिबेकी इच्छा नहीं रही विभीषणादिको लंकादानादि ते जानो और शत्रुको एकही बार ऐसा मारिकै नाश कियो जामें फेरि नहीं मारिवे परयो खरदूषणादि वधते जानो औ संग्राममें जुरिकै नहीं मुरे खरदूषण रावणादिके युद्धते जानों औ लोककी लीक मर्यादाको लोप नहीं कियो रावणके वधसों ब्रह्मदोष मानि अश्वमेध करणादिसों जानो औ दान औ सत्य औ सन्मानके सुयश कारिकै दिशा औ विदिशा ओपी हैं अर्थ जिनको सुयश दिशि विदिशनमें छाइ रह्या है औ जिनको मन लोभ औ मोह औ मद औ कामके वश नहीं भयो राज्य त्यागादिसों लाभ विवश जानी माता पिताको दुःखितहुए देखि वन गमन करनादि सो मोह विवश जानो औ अगस्त्यादि ऋषिनके यथोचित सत्कारसों मदविवश जानी एक पत्नी व्रतसो काम विवश जानो जाके ऐसे स्वभाव गुणहैं सोई श्रीराम वाराहादि अवतारनमें मुनिश्रेष्ठ अवतारी कहे अवतारको धरे साक्षात्पर-ब्रह्म है अथवा श्रीराम अवतारी कहे अनेक अवतारनको धरत हैं औ पर-ब्रह्म है ॥ १७ ॥ अदृष्ट अंतर्द्धान इष्टपूज्य देवता ॥ १८ ॥

गाहाछंद ॥ रामचन्द्र पदपद्मं वृन्दारक वंदाभिवंदनीयं ॥ केशवपतिभूतनया लोचनं चंचरीकायते ॥ १९ ॥ चतुष्पदीः छंद ॥ जिनको यशहंसा जगत प्रशंसा मुनिजन मानसरंता । लोचन अनुरूपनि श्याम स्वरूपनि अंजन अंजित संता ॥ कालत्रयदर्शी निर्गुणपर्शी होत विलम्ब न लागै । तिनके गुण कहिहौं सब सुख लहिहौं पाप पुरातन भागै ॥ २० ॥

टी०—वृंदारक जे देवताहैं तिनके वृंदसमूह तिन कारिकै अभिवंदनीय अर्थ जिनको अनेक देवता वन्दना करतहैं ऐसे जे रामचंद्रके पदकमल हैं तिन प्रति केशवदासकी मतिरूपी जो भूतनया सीता हैं ताके लोचन चंचरी-काय ते कहे चंचरीक भ्रमरके ऐसे आचरण करत हैं अर्थ जब मुनिकी

आज्ञासों रामचंद्रको इष्टदेवता करयो तब सीता सम सदा रामानिकट वर्तिनी हमारी मतिके लोचन कमलमें भ्रमर सदृश रामचन्द्र चरणमें अनेक कौतुक करने लगे ॥ १९ ॥ मानस मानसर औ मन आय आपने लोचननके अनुरूप कहे योग्य औरके लोचनके योग्य कज्जलादि अंजन है संतनके लोचननके योग्य रामरूपही है ऐसे जे जिन रामचंद्रके अनेक प्रतिबिंब रूपनको जे संतजन ध्यानमें आनत हैं अथवा श्याम स्वरूपानि कहे श्यामरूपता रूपी जो अंजन है ना करिकै जे संत अंजित हैं तिन संतानको त्रिकालदर्शी औ निर्गुण पर्शी नेत्रन करि ज्योति स्पर्श करै या अर्थ ब्रह्मज्योतिके द्रष्टा होत बेर नहीं लागति जे रामचंद्रको ध्यान करत हैं ते त्रिकालदर्शी होत हैं औ ब्रह्मज्योतिको देखत हैं इति भावार्थः ॥ अथवा निर्गुणपर्शी होत कहे निर्गुणज्योतिमें मिलिजात बेर नहीं लागति अथवा निर्गुणते पर अन्य विष्णुकी श्रीशोभा होत बेर नहीं लागति पुरातन पूर्व कृत ॥ २० ।

दो०-जागति जाकी ज्योति जग, एकरूप स्वच्छंद ॥
रामचंद्रकी चन्द्रिका, वरणतहौं बहुछंद ॥२१॥ रोलाछंद॥
शुभ सूरजकुल कलशनृपति दशरथ भये भूपति । तिनके सुत भये चारि चतुर चितचारु चारुमति ॥ रामचन्द्र भुवचन्द्र भरत भारत भुवभूषण । लक्ष्मण अरु शत्रुघ्न दीह दानव दलदूषण ॥ २२ ॥ धत्ताछन्द ॥ सरयूसरितातट नगर बसै अवध नाम यश धामघर ॥ अघओघ विनाशी सब पुरवासी अमरलोक मानहुँ नगर ॥ २३ ॥

टी०-ज्योति ब्रह्मज्योति अथवा अंगछबि औ बहु छंद कहे अनेक रंगतौ जो रामरूपी चन्द्रकी ज्योति तौ एक रूप है ताकी चन्द्रिका अनेक रंग है वो आश्चर्य है यह युक्ति है औ अर्थ यह कि बहुत छंद जे दोहादि हैं तिनसों युक्त ॥ २१ ॥ सूर्य कुलके कलश जे नृपति अजादि हैं तिनमें दशरथ भूपति राजा भये भारत भरतखंड ॥ २२ ॥ यशको धाम कहे घर है धरा पृथ्वी जाकी अयोध्यापुरीके वासी देवतन सरिस अघपापनके ओघ समूहनके विनाशी हैं तासों देवलोक सम है ॥ २३ ॥

छप्पै ॥ गाधिराजको पुत्र साधि सब मित्र शत्रुबल ।
दान कृपान विधान वश्य कन्हों भुवमण्डल ॥ कै मन अपने
हाथ जीति जग इन्द्रियगन अति । तपबल याही देह भये
क्षत्रिय तै ऋषि पति ॥ तेहि पुर प्रसिद्ध केशव सुमति
काल अतीतागतनिगुनि । तहँ अद्भुत गति पगु धारियो
विश्वामित्र पुनि ॥ २४ ॥ प्रज्झटिकाछन्द ॥ पुनि आये
सरयू सरित तीर तहँ देखे उज्ज्वल अमलनीर । नव निरखि
निरखि द्युति गति गँभीर । कछु बरणन लागे सुमति धीर
॥ २५ ॥ अति निपट कुटिल गति यदपि आय । वह देत
शुद्ध गति छुवत आय॥कछु आपुन अध अध गति चलन्ति ।
झलपति तनको ऊरध फलन्ति ॥२६॥ मदमत्त यदपि मा-
तंग संग । अति तदपि पतित पावन तरंग । बहु न्हाइ न्हाइ
जेंहि जल सनेह ॥ सब जात स्वर्ग शूकर सुदेह ॥ २७ ॥

टी०—त्रिकाल दरशीत्व ते जेतो कालबीते रामचन्द्रको अवतार होनो रहै सो काल अतीत कहे बीतो गुनिकै औ जा कालमें रामचन्द्रजू यज्ञरक्षा करन लायक भये सो काल आगत आया गुनिके ॥२४॥२५॥ दुवौछंदन-में विरोधाभास है आप कहे अपना औ आप कहे जलके छुवतही शुद्धगति मुक्ति देत है अथवा जाके जलको कहूँ अनतहूँ छुवौ तौ शुद्धगति देतहै ऊर-धपदसे स्वर्ग जानो ॥ २६ ॥ मद मादिरासों मत्त यद्यपि मातंग चाण्डाल-नको संग है विरुद्धार्थः॥"मातंगः श्वपची हस्तीत्यभिधानचिंतामणिः" ॥ औ मत्तगज जामें स्नान करते है इत्यविरोधः पतितपावन कहे पतितनको पवित्र कर्ता स्नेहसों ताके जलमें न्हाइन्हाइके शूकरपर्यंत बहु प्राणी सुंदर देहको धारि सब स्वर्ग जातेहैं अथवा सनेह कहे अप्सरादिकनके इति शेषः। स्नेहसहित अर्थ अप्सरादि स्नेह साहित ताको स्वर्ग लेजाती है अथवा तेहिके जलके स्नेहहूँ सों कहे होइ सरयू जलमें स्नेह करै स्वर्ग जाइ अर्थ याही देहमें देवरूप ताको प्राप्त ह्वै जातहै जिनको देहत्यागहूको कष्ट नही होत इति भावार्थः। अथवा शूकर देह सहित जे जीव हैं ते स्वर्ग जातहै और देहधारी तौ जातेही हैं ॥ २७ ॥

नवपदीछंद ॥ जहँ तहँ लसत महामदमत्त । वर वारन वारन दलदत्त । अंग अंग चरचे अति चंदन । मुंडन मुरके देखिय वंदन ॥ २८ ॥ दोहा ॥ दीह दीह दिग्गजनके, केशव मनहुँ कुमार ॥ दीन्हीं राजा दशरथहि, दिगपालन उपहार ॥ २९ ॥ अरिल्लछंद ॥ देखि बाग अनुराग उपज्जिय । बोलत कलध्वनि कोकिल सज्जिय ॥ राजाति रतिकी सखी सुवेषनि । मनहुँ बहाति मनमथ संदेशनि ॥ ३० ॥

टी०-ग्रामबाहर जहाँ तहाँ महावत हाथिनको फेरतहैं तिनका वर्णन ह सुभावोक्ति है अथवा स्थान पर बँधे हैं वारन हाथी तिनके दल चमूको अकेलेई दलि डारत हैं यासों अतिबली जानो अथवा बार कहे बेर नहीं लागति शत्रुदलको दलि डारत हैं मुरके लगाये चन्दन रोरी ॥ २८ ॥ दिक्पाल इन्द्रादि उपाहार भेंट ॥ २९ ॥ कल अव्यक्त मधुर ॥ ३० ॥

फूलि फूलि तरु फूल बढावत । मोदत महामोद उपजावत । उडत परागन चित्त उठावत । भ्रमर भ्रमत नहिं जवि भ्रमावत ॥ ३१ ॥ पदाकुलकछंद ॥ शुभ सर शोभै सुनि मन लोभै । सरासिज फूले अलि रस भूले ॥ जलचर डोलैं बहुखग बोलैं । बरणि न जाहीं उर अरुझाहीं ॥ ३२ ॥ चतुष्पदीछंद ॥ देखो बनवारी चंचल भारी तदपि तपोधन मानी । आतितपमय लेखी गृहथित पेखी जगत दिगंबर जानी ॥ जग यदपि दिगंबरपुष्पवती नर निराखि निराखि मन मोहै । पुनि पुष्पवती तन अति अति पावनगर्भ सहित सब सोहै ॥ ३३ ॥

टी०-मोदत कहे सुगंधको पसारत ॥ ३१ ॥ ३२॥ द्वैछंदको अन्वय एक है बनवारी कहे उपवन औ श्लेषते बनकी वारी कुमारी कुमारीपक्ष विरोध है

वाटिका पक्ष शुद्धार्थ है विरोधाभास अलंकार है चंचल स्वभाव चंचल औ वायु योगसों चंचलहै दत्तजाभारी कहे गरूहै देह जाकी और दीर्घवृक्ष-दीर्घवृक्षयुक्त तपोधन तपस्विनी औ तपस्वी सम शीत घाम तोय दुःख सहति है गृहघर और परिखाछार दिवालीति दिगंबर वस्त्र रहित दुवौ पक्षमें पुष्पवती रजोधर्मिणी औ प्रफुल्लित तन अति कहे स्थूलकाय औ बहुत भूमिमें विस्तार है जाको अति पावन पवित्र अति दुवौ पक्षमें गर्व सहित गुर्विनी औ फलगर्भ सहित यासों सदा फलोत्पत्ति जनायो रति रस सुरत औ प्रीति जग जन लीना अनेक पुरुष भोगिनी परकीयाइति । औ जगके जनन करिकै युक्त अर्थ अति सुख पाइ जग जन बैठत हैं जामें प्रवीना दोष रहित औ सर्वोत्तमा नवीनापाठ होइ तौ नवोढा औ नूतनयनि आपनो पुरुष औ राजा सौंपी पतिकी औ स्त्री औ राजपत्नी ॥ ३३ ॥

छंद–पुनि गर्भसंयोगी रति रस भोगी जग जन लीन कहावै।
गुणि जग जललीना नगरप्रबीना अति पतिके चित भावै ।
अति पतिहि रमावै चित्त भ्रमावै सोतिन प्रेम बढावै । अब
यों दिनरातिन अद्भुतभाँतिन कविकुल कीरति गावै॥३४॥
हाकलिकाछंद ॥ संग लिये ऋषि शिष्यन घने पावकसे
तपते जनि सने ॥ देखत सरिता उपवन भले । देखन अव-
धिपुरी कहँ चले ॥ ३५ ॥ मधुभारछंद ॥ ऊंचे अवास ।
बहु ध्वज प्रकाश ॥ शोभा विलास । शोभै प्रकाश ॥३६॥
आभीरछन्द ॥ अति सुन्दर अति साधु । थिर न रहत पल
आधु । परम तपोमय मानि । दण्ड धारिनी जानि ॥ ३७॥
हरिगीत छन्द ॥ शुभद्रोण गिरिगण शिखर ऊपर उदित
औषधिसी गनौ । बहु वायु वश वारिद बहोरहि अरुझि
दामिनि द्युतिमनौ ॥ अति किधौं रुचिर प्रताप पावक
प्रगट सुरपुरकी चली । यह किधौं सरित सुदेश मेरी करो
दिवि खेलित भली ॥ ३८ ॥

टी०-उपवन वाटिका ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ अवास पर ॥ ३६ ॥ दंडधारिणी हैं दंडिनके व्रतको धरे हैं दंडी दंड धरे रहते हैं ये दंड कहे ध्वजदंड धरे हैं कैसो है ध्वजा औ दंडी अति सुंदर हैं सुवस्त्र रचित औ तपतेज करि भव्यरूप है साधुराग द्वेषरहित दुवौ हैं थिरनरहत वायुयोगसों चंचल रहता हैं औ अनेक तीर्थनमें फिरचो करत है औ परमतपोपय है सदा शीत घाम तोयसहती हैं औ प्राणायामादि अनेकतप करत हैं औ अर्थ विरोधाभास है विरोधार्थ अतिसाधु हैं औ पल आधु थिर नहीं रहती तौ साधुविषे चंचलता विरोध है औ परम तपोमय कहे बडे तपको करती है औ दंडधारिणी हैं दंडकहे राजदंड डांड इति धारण करता है लेता है तो तपस्वीको दंडलेवो विरोधहै अविरुद्धार्थ प्रथमको ते जानो ॥ ३७ ॥ द्रोणागिरि सदृश मंदिर है शिखर अग्रभाग औषधि सरिस करचो तासों अरुण पताका वर्णन जानो औ की दामिनी भिजुलीकी द्युति है अरुझि रही है तिनको वारिदके वश्यहै अर्थ वारिदकी आज्ञासों वायुवह कहे अनेक प्रकारसों बहोरत है मेघनके पास लैजायो चहतहै यासों मंदिरनकी अति उच्चता जनायो प्रताप पावक रघुवंशिनको इतिशेषः ॥ या प्रकार अरुणपताका पंक्तिको वर्णन करि यह पदसों दूसरी श्वेतपताका पंक्तिको अवलोकि वर्णन लगे सो जानो मेरीकरी कहे बनाई विश्वामित्र सृष्टिकरन लागे हैं तब नदी बनायो है सो आकाशमें हैं पुराणोक्त है कवि प्रियाहूमें कह्योहै कि, ऊँचे ऊँचे अटनिपताका अति ऊँची जनु कौशिककी कीन्ही गंगा खलैये तरल तर । अथवा मेरीकहे हमारी 'भगिनीभगिनीतिशेषः' । दिवि कहे दिव्यरूप कहे खेलति है आकाशमें कौशिकी नदीहै सो विश्वामित्रकी भगिनी है॥३८॥

दोहा ॥ जाति जीति कीरति लई, शत्रुनकी बहु भाँति ॥
पुर पर बाँधी शोभिजै, मानो तिनकी पाँति ॥ ३९ ॥ त्रिभंगी छन्द ॥ सम सब घर शोभैं मुनि मन लोभैं रिपुगण छोभैं देखि सबैं । बहु दुंदुभि बाजैं जनु घन गाजैं दिग्गज लाजैं सुनत जबैं ॥ जहँ तहँ श्रुति पढहीं विघन न बढहीं जैजस मढहीं सकल दिशा । सबई सब विधि छम बसत यथा क्रम देवपुरी सम दिवस निशा ॥ ४० ॥

टी०-ताही श्वेतपताका पांक्तिमें फेरि तर्क है ॥ ३९ ॥ द्वै छंदको अन्वय एक है क्षोभै हैं डरत हैं हम समर्थ रातिउ दिन देवपुरी सम है यामें श्लेषार्थ-हू है कैसी देवपुरी औ अयोध्या है सम बराबरि है दिनराति जामें घटत बढत नहीं छह महीना उत्तरायण दिन रहत है दक्षिणायन राति रहति है औ सम है तुल्य आनंद दायक है रातिउ दिन जामें रात्रिहूको चौरादिको भय नाहीं होत और अर्थ दुवो पक्ष एकही है ॥ ४० ॥

कविकुल विद्याधर सकल कलाधर राजराज बरवेष बने।
गणपति सुखदायक पशुपति लायक शूर सहायक कौन गने॥
सेनापति बुधजन मंगल गुरु गण धर्मराज मन बुद्धि घनी।
बहु शुभ मनसाकर करुणामय अरु सुरतरंगिनी शोभसनी ॥४१॥

टी०-फेरि कैसी है देवपुरी कवि शुक्र औ कुल कहे समूह विद्याधरनके विद्याधर देवयोनि विशेष हैं औ सकल कलाधर चंद्रमा औ राजराज कुबेर ये सब पवरद कहे सुंदरवेष कहे रूपसों बने हैं औ सुखदायक जो गणपति गणेश हैं औ लायक कहे श्रेष्ठ पशुपति महादेव हैं औ सूर कहे सूर्य और जे इन्द्र सहायक कामादि हैं तिन्हैं को गनै अर्थ की अनेक हैं सेनापति स्वामिकार्तिक औ बुधजन चन्द्र पुत्रजन पद इहाँ स्वरूपको वाची है औ मंगल भौम औ गुरु बृहस्पति औ गणक है गणदेवता ॥ "आदित्याविश्व-वसवस्तुषिताभास्वरानिलाः। महाराजिकसाध्याश्च रुद्राश्च गणदेवताः॥ इत्यमरः।" औ मनमें बुद्धि है घनी जिनके ऐसे धर्मराज कहे यमराज हैं बहु शुभयुक्त हैं मनसाकर कहे कल्पवृक्ष औ करुणामय कहे विष्णु औ सुरतरंगिनी आकाशगंगा इन सबकी शोभा सौ सनी है अर्थ ये सब वसत है यामें अयोध्या कैसी है कवि काव्यकर्त्ता वाल्मीकि सदृश औ विद्या चतुर्दश ॥ "अंगानि वेदाश्चत्वारो मीमांसान्यायविस्तरः॥ पुराणं धर्मशास्त्रं च विद्याश्चैताश्चतुर्दश।" इति। मनुः॥ अथवा धनुर्विद्यादि तिनके धर्ता औ सकल कहे चौंसठिहू कलानके धर्ता औ राजराज कहे बडे राजा ते वरवेषसों बने हैं अनेक राजा राजादशरथकी सेवामें हाजिर पुरीमें वसे रहतहैं औ सुखदायक गणपति कहे यूथप औ लायक श्रेष्ठ पशुपति गोपा-लादि अथवा गजादि औ सहायक कहे जे सबकी सहाय करते हैं ऐसे जे

शूर योद्धा हैं तिन्हैं को गनै बहुत हैं औ सेनापति चमूनाथ बुधजन पंडित औ मंगलपाठी और गुरुगण वसिष्ठादि अथवा मंगल कर्ता जे गुरुगण वसिष्ठादि हैं औ मनमें बुद्धि है घनी जाके ऐसो धर्मराज कहे न्यायदर्शी है कोसलवालेति औ बहुत प्राणी शुभ जो मनसा मनोभिलाष है ताके करनहार हैं अर्थ मनोरथके दाता हैं औ बहुत करुणामय कहे दयाशील हैं औ सुरतरंगिनी सरयू इनकी शोभा सों सनी है अर्थ इन सबसों युक्त है ॥ ४१ ॥

हीरकछन्द ॥ पंडितगण मंडितगुण दंडित मति देखिये । क्षत्रिय बर धर्म प्रवर क्रुद्ध समर लेखिये ॥ वैश्य सहित सत्य रहित पाप प्रगट मानिये । शूद्र सकति विप्र भगति जीव जगत जानिये ॥ ४२ ॥

टी०--पंडित पदते ब्राह्मण जानौ ते अनेक गुण जे शास्त्रादि हैं तिनसों मंडित युक्त हैं औ दंडित हैं शिक्षित है मति जिनकी अर्थ सत् मति सों युक्त हैं औ क्षत्रिय क्षत्र धर्म करिकै प्रबर बली हैं औ समरहीमें क्रोध करत हैं औ वैश्य बनिया सत्यसों युक्त हैं औ पापसों रहित हैं औ शूद्रनके जीवमें ब्राह्मणकी भक्तिज्ञ गति है ताहीमें तिनकी शक्तिबल जानियत हैं अर्थ शूद्रभक्ति युक्त ब्राह्मणकी सेवा करत है अथवा शूद्रनके जीवमें शक्ति कहे देवी औ विप्रकी भक्ति जगति है शूद्रनको देवी औ ब्राह्मणनकी उपासना उचित है या प्रकार आपने अपने धर्मसों युक्त चारों वर्ण बसत हैं यामें ॥ ४२ ॥

सिंहविलोकित छंद ॥ अति मुनितन मन तहँ मोहि रह्यो । कछु बुधिबल वचन न जाइ कह्यो ॥ पशु पक्षि नारि नर निरखि तबै । दिन रामचन्द्र गुण गनत सबै ॥ ४३ ॥

मरहट्ठाछन्द ॥ अतिउच्च अगारनि बनी पगारनि जनु चिंतामणि नारि । बहु सत मख धूपनिधूपित अंगनि हरिकीसी अनुहारि । चित्री बहु चित्रनि परम विचित्रनि केशवदास निहारि । जनु विश्वरूपको अमल आरसी रची

विरंचि विचारि ॥ ४४ ॥ सोरठा ॥ जगयशवन्तविशाल, राजा दशरथकी पुरी ॥ चंद्रसहित सब काल, भालथली जनु ईशकी ॥ ४५ ॥

टी०—दिनकहे दिनप्रति ॥ ४३ ॥ बहुत जे अतिउच्च अपार घर हैं बहु पदको संबंध सर्वत्र है तिनकी जे बनी पगार परिखा हैं छार देवालीति कहूं शिरबंदी कहतहैं तिनमें लगी अनेक पुर कौतुक देखिबेकों चिंतामणि सदृश नारी स्त्री ठाढी हैं चिंतामणि सदृश जिनको देखि मनोभिलाष पूरे होत हैं या प्रकारके स्त्रीभवन हैं औ बहुत घर सत कहे उत्तम जे मख यज्ञ हैं तिनके धूपन कहे धुमन करिकै धूपित अंगनिसों युक्त हैं ते हरि विष्णुके अनुहारि हैं अर्थ श्यामरूप हैं ऐसे यज्ञशाला हैं औ बहुत घर परम विचित्र कहे अद्भुत चित्रनिसों चित्रित हैं तिन्हैं मानो विरञ्चि ब्रह्मा विचारि एकाग्र चित्त करिकै विश्वरूप जो संसार है अथवा विराटूरूप ताकी आरसी ऐना बनायो है जैसे ऐनामें बिम्ब सदृश प्रतिबिम्ब देखि परतहै तैसे संसारमें जो वस्तु हैं सो सब मंदिरनमें चित्रित हैं ऐसे चित्रशाला हैं पुरीमें पैठि तिन्हैं विश्वामित्र निहारि कहे देखत भये ॥ ४४ ॥ जगमें विशाल सुंदर औ यशवंत कहें यशयुक्त जो राजा दशरथकी पुरी है सो सब काल चन्द्रमा सहित मानो ईश महादेवकी भालथली है चन्द्र सरिस यश है विशाल दुवौ हैं यासों सदा निष्कलंक यश युक्त पुरीको जनायो ॥ ४५ ॥

कुंडलिया ॥ पंडितअति सिगरी पुरी, मनहु गिरागति गूढ । सिंहनि युत जनु चंडिका, मोहति मूढ अमूढ ॥ मोहति मूढ अमूढ, देव सँग दितिसों सोहै । सब शृंगार सँदेह, मनोरति मन्मथ मोहै ॥ सब शृंगार सदेह सकल सुख सुखमा मंडित । मनो शची विधिरची विविध विधि वरणत पंडित ॥ ४६ ॥

टी०—सिगरी पुरी अति पंडित है, अर्थ पुरीके निवासी जन सब पंडित हैं यासों मानों गति कहे दशा है गूढ जाकी अर्थरूप पुरी है आपनी दशाको छपाये मानो गिरा सरस्वती हैं गिराहूके आसतजन अतिपंडित

होत हैं अथवा मनहूँको औ गिराकहें वचननहूँकी गति है गूढ जाकी अर्थ जाकी दशाको अंत मन वचन नहीं पावत चंडिकाको सिंहवाहन है औ विकराल रूप देखि मूढ औ अमूढके भयसे मोह होत है पुरी पुरुष सिंहनसों युक्त है औ अति विचित्र शोभा निराखि मूढ अमूढके आनंदसे मोह होत है अदितिके देवता पुत्र हैं तासों संगमें देव रहत हैं इहाँ अदिति पदकी अकारको लोप है भाषाके कविनको नियम है कहूं अकारादि पदकी अकारको लोपकरि डारत हैं यथा बिहारी कृतसप्तशातिकायां । "अधिक-अँधेरो जगकरै, मिलिमावस रविचंद" अथवा दिति दैत्यमाता सम है जैसे दितिसों बडे वीर दैत्यभये हैं तैसे अयोध्याहूमें अनेक वीर उत्पन्न होत हैं तिमन्मथ कामकी स्त्री है तासों मनको मोहति है पुरी शोभासों कामहूको मन मोहति है तासों अति शोभा युक्त जानौ शची इन्द्राणिहूं राज्यादि सब सुख औ सब सुखमा शोभासों मंडित है औ अनेक विधिसों पंडित र्णन करत है ऐसी पुरीहू है अथवा सुखमासों मंडित युक्त सकल जे सुख तिनसों शची कहे संचित पूँजी भूत मानौं विधातैं रच्यो है अर्थ पूर्ण ुख औ पूर्ण शोभा एकत्र करि ताहीको पुरी बनायो है ॥ ४६ ॥

काव्यछंद ॥ मूल नहीं को जहां अधोगति केशव गाइय । होम हुताशन धूम नगर एकै मलिनाइय ॥ दुर्गति दुर्ग नहीं जो कुटिल गति सरि तनहीमें ॥ श्रीफलको अभिलाष प्रगटकवि कुलके जीमें ॥ ४७ ॥ दोहा ॥ अतिचंचल जहँ चलदलै, विधवा बनी न नारि ॥ मन मोह्यो ऋषिराजको, अद्भुत नगर निहारि ॥ ४८॥ सोरठा ॥ नागर नगर अपार, महामोहतम मित्रसे । तृष्णालताकुठार, लोभसमुद्र अगस्त्यसे ॥ ४९ ॥ दोहा ॥ विश्वामित्र पवित्रमुनि, केशव बुद्धि उदार ॥ देखत शोभा नगरकी, गये राजदरबार ॥ ५० ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचंद्र-
चंद्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां विश्वामित्रस्याऽयो-
ध्यागमनं नाम प्रथमः प्रकाशः ॥ १ ॥

टी०—मूल जर अधोगति नर्क औ नीचेको गति गमन हुताशन अग्नि दुर्गति नर्क औ दुष्कारि कहे गति जिनमें कुटिलता इति श्रीफलद्रव्य औ बिल्वफल कुचनकी उपमा देवेको परिसंख्यालंकार है ॥ ४७ ॥ चलदल पीपर वृक्षवनी वाटिका सोइ विधवा है याहूमें परिसंख्या है ॥ ४८ ॥नागर प्रवीण मित्र सूर्य जो सदा सब वस्तु पाइवेकी इच्छा है सो तृष्णा जानो औ जो कछू वस्तु देखि सुनिकै इच्छा चलै सो लोभ जानो ॥ ४९ ॥ ५० ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसाद-निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां प्रथमः प्रकाशः ॥ १ ॥

दोहा ॥ या द्वितीय प्रकाशमें, मुनि आगमन प्रकाश ॥ राजासों रचना बचन, राघव चलन विलास ॥ १ ॥ हंस छंद । आवत जात राजके लोग । मूरति धारी मानहुँ भोग ॥ २ ॥ मालतीछंद ॥ तहँ दरबारी । सबमुखकारी ॥ कृत-युग कैसे । जनु जन वैसे ॥ ३ ॥ दोहा ॥ महिष मेष मृग वृषभ कहुँ, भिरत मल्ल गजराज ॥ लरत कहूँ पायक नटत, बहु नर्त्तक नटराज ॥ ४ ॥ समानिका छंद ॥ देखि देखिके सभा । विप्र मोहियो प्रभा ॥ राजमंडली लसै । देवलोकको हँसै ॥ ५ ॥ मल्लिकाछंद ॥ देशदेशके नरेश । शोभिजै सबै सुवेश ॥ जानिये न आदि अंत । कौन दास कौन संत ॥ ६ ॥ दोहा ॥ शोभित बैठे तेहि सभा, सात द्वीपके भूप ॥ तहँ राजा दशरथ लसै, देवदेव अनुरूप ॥ ७ ॥ देखि तिन्हैं तब दूरिते, गुदरानो प्रतिहार ॥ आये विश्वामित्रजू, जनु दूजो करतार ॥ ८ ॥ उठि दौरे नृप सुनतहीं, जाइ गहे तब पाइ ॥ लै आये भीतर भवन, ज्यौं सुरगुरु सुरराइ ॥ ९ ॥ सोरठा ॥ सभामध्य बैताल, ताहिसमय सो पढि उठ्यो ॥ केशवबुद्धि विशाल, सुंदर सूरो भूपसो ॥ १० ॥

टी०-॥ १ ॥ २ ॥ कृतयुग सत्ययुग ॥ ३ ॥ मल्ल बाहुयुद्ध कर पायक पटेबाज नटत कहे नाचत हैं नर्तक नृत्यकारी ॥ ४ ॥ ५ ॥ जहाँ सिंहासनमें राजा दशरथ बैठे हैं सो आदि है तहाँते जहाँ पर्यंत दरबारी बैठे हैं सो अंत है सो आदिते अंततक दरबारिनमें कौन दास कहे सेवक हैं औ कौन संत कहे स्वामी है यह नहीं जानियत अर्थ सब दरबारी राजसाज सँवारे हैं। " सद्विद्यमाने सत्ये च प्रशस्तार्चितसाधुषु " इत्यभिधानार्चितामणिः ॥इहाँ अर्चितपदको पर्याय स्वामी जानो ॥ ६ ॥ देवदेव इंद्र ॥ ७ ॥ गुदरानो जाहिर कियो करतार ब्रह्मा ॥ ८ ॥ ९ ॥ बेताल भाट ॥ १० ॥

बैतालाघनाक्षरी ॥ विधक समान हैं विमानीकृत राज-हंस, विविध विबुधयुत मेरुसो अचल है । दीपति दीपति अति-सातौं दीपदीपियतु, दूसरो दिलीपसो सुदक्षिणाको बल है । सागर उजागरकी बहुवाहिनीको पति, छनदानप्रिय किधौं सूरज अमल है । सबबिधि समरथ राजै राजा दशरथ भगीरथपथ गामी गंगा कैसो जल है ॥११॥ दोहा ॥ यद्यपि ईंधन जरि गये, अरिगण केशवदास ॥ तदपि प्रतापानलनके, पल पल बढत प्रकाश ॥ १२ ॥ तोमरछन्द ॥ बहुभाँति पूजि सुराईं । कर जोरिकै परे पाईं ॥ हँसिके करयो ऋषि मित्र । अब बैठ राजप वित्र ॥ १३ ॥ मुनि सुनि दान मानसहंस। रघुवंशके अवतंस ॥ मनमाँह जो अतिनेहु । यक बात माँगे देहु ॥ १४ ॥

टी०-विमानी कृत कहे वाहनीकृत हैं राजहंस जिन करिकै ब्रह्माको हंस वाहन है और राजा विमानीकृत कहे मानरहित किये हैं राजनके हंस जीव जिनकरिकै अथवा विमानीकृत वाहनीकृत हैं राजनके हंसजीव जिन करिकै अर्थ-शत्रुभयसों मित्र प्रेमसों मनमें चढाये रहत है विबुध देवता औ पंडित दिलीपकी स्त्रीको सुदक्षिणा नाम रह्यो ताके पातिव्रतको बल रहो औ सुष्ठु जो दक्षिणा दानद्रव्य है वाहिनी नदी औ चमूक्षण दारा त्रिनहौ हे प्रिय ! जाकी सूरजके अमलमें अर्थ सूर्यके प्रकाशमें रात्रिको नाश होत है अथवा क्षणदान कहे जलांजलि दान औ क्षणक्षण प्रति है दानही प्रिय जिनको क्षणक्षणमें दान दीवो करत हैं गंगाजल सगरके सुतनके तारिबेको भागी

रथके पीछे पीछे आयौ है औ राजा कुल पंथ गामी हैं श्लेष धर्मोपमा हैं कोउ परंपरित रूपक कहत हैं ॥ ११ ॥ १२ ॥ ऋषिनमें मित्र सूर्यसम हैं ॥ १३ ॥ दानरूपी जो मानस मानसर है ताके तुम हंस हौ अर्थ दानहीमें है विहार जिनको बडे दाता हौ अवतंस कर्णभूषण ॥ १४ ॥

राजा—अमृतगतिछंद ॥ सुमित महामुनि सुनिये । तन मन धन सब गुनिये ॥ मनमहँ होइ सो कहिये । धनि सो जो आपुन लहिये ॥ १५ ॥ ऋषि दोधकछंद ॥ राम भये जवने वन माहीं । राक्षस वैर करैं बहुधाहीं ॥ रामकुमार हमैं नृप दीजे । तौ परिपूरण यज्ञ करीजे ॥ १६ ॥ तोटकछंद ॥ यह बात सुनी नृपनाथ जबै । शरसे लगे आखर चित्त सबै ॥ मुखते कछु बात न जाइ कही । अपराध विना ऋषिदेह दही ॥ १७ ॥ राजा—अतिकोमलके सब बालक ता ॥ बहु दुष्कर राक्षसघालकता ॥ हमहीं चलि हैं ऋषिसंग अबै । सजि सैन चलै चतुरंग सबै ॥ १८ ॥ विश्वामित्र—षट्पद ॥ जिन हाथ न हठि हरषि हनत हरिणीरिपुनन्दनि ॥ तिन न करत संहार कहाँ मदमत्तगयन्दनि ॥ जिन बेधत सुशलक्ष लक्ष नृप कुँवर कुँवरमनि । तिनबाणनि वाराह बाघ मारत नहिं सिंहनि । नृपनाथ नाथ दशरथ सुनिय अकथ कथा यह मानिये । मृगराज राजकुल कलश अब बालक वृद्ध न जानिये ॥ १९ ॥

टीका—जो वस्तु आप लहिये लीजिये सो धन्य है ॥ १५ ॥ रामपरशुराम ॥ १६ ॥ १७ ॥ हाथी घोडा रथ पियादा चारों सेनाके अंग हैं ॥ १८ ॥ हरिणीके साहचर्यते रिपुपदते हरिणी रिपु कहे सिंह जानौ जिन हाथन सिंह हरिणी मारत हैं तिनसों कहा गजनको नहीं मारत अर्थ गजहू मारत है औ कुँवरनमें मणि श्रेष्ठ ऐसे नृपकुँवर जिन बाणनि सुख कहे सहजेही लक्ष कहे लाखन लक्ष निशान बेधत हैं तिनसों वाराह वाघसिंहनहूंको नहीं मारत ? अर्थ मारत हैं हे नृपनाथ ! यह कथा अकथ कहे अतर्क मानौ निश्चय

इंति। अथवा अकथ कहे अद्भुत जो यह कथा है ताकी मानिबे कहे निश्चय मानौ आशय यह रामचन्द्र राक्षसनको वध करि हैं यामें संदेह ना करौ ॥ १९ ॥

सुंदरीछंद ॥ राजनमें तुम राज बडे अति । म सुख माँगों सो देहु महामति ॥ देवसहायक हौं नृपनायक । है यह कारज रामहिं लायक ॥ २० ॥ राजा-मैं जो कह्यो ऋषि देनसो लीजिय । काज करो हठ भूलि न कीजिय ॥ प्राण दिये धन जाहिं दिये सब । केशव राम न जाहिं दिये अब ॥२१॥ ऋषिराज तज्यों धन धाम तज्यों सब । नारि तजी सुत शोच तज्यों तब ॥ आपनपौ जो तज्यौं जगवंद हैं । सत्य न एक तज्यो हरिचंद हैं ॥ २२ ॥

टी०-॥ २० ॥ २१ ॥ एकसमय इन्द्र नारदसों हरिश्चन्द्रके सत्यप्रतापादिको माहात्म्य सुनि इंद्रासन लेबेको भय मानि दुःखित भये हैं तब ब्रह्मादि देवन इंद्रको धीरज दैकै हरिश्चंद्रके सत्यभंगकरिवेके लिये नारदको विश्वामित्रके पास पठायो विश्वामित्र नारद मुखसों देवनकी आज्ञासुनि काहू कामरूपी राक्षसको बोलाइ कह्यो कि तू शूकर रूप ह्वै अयोध्यामें जाइ राजा हरिश्चंद्रको मृगया मिष हमारे आश्रममें ल्याउ राक्षस गोकियो विश्वामित्रके आश्रममें राजाको ल्याइ लुप्त भयो आश्चर्ययुक्त ह्वै राजा आश्रम नदी में न्हाइ कपट द्विजरूपधारि विश्वामित्रको सब पृथिवी औ सर्वस्वदान करचो है फेरि विश्वामित्र कह्यो है कि शतभार सुवर्ण दक्षिणा देउ तौ सर्वस्व लेउ नाहिं तौ सत्यको छोडो तब काशीमें जाइकै मदना नामस्त्री औ रोहिताश्व नामा पुत्रको देवशर्मा ब्राह्मणके हाथ साठिभार सुवर्णको बेंच्यो है औ चालिस भार सुवर्णको कालसेन चांडालके हाथ अपना बिकाई सौभार सुवर्ण विश्वामित्रको दियो फेरि चांडालकी आज्ञाते श्मशान घाटपर उचित द्रव्य लेबेको बैठे हैं कछु दिनमें पुष्प तोरतमें रोहिताश्वको सर्प काट्यो मरचो ताको लै मदना बहाइबेको गई तहाँ चांडालको उचित पंचमुद्रा लैहिकै बहावन दियो है या प्रकार सुतको शोच छोंड्यौ सत्यपाल्यो यह संक्षेप कथा लिख्यो है विशेष सो हरिश्चंद्रोपाख्यान पुराणनमें प्रसिद्ध है ॥ २२ ॥

राज वहै वह साज वहै पुर। नाम वहै वयधाम वहै गुर ॥ झूँठेसों झूँठई बांधत हौं मन। छोंडत हौ नृप सत्यसनातन ॥२३॥ दोहा ॥ जान्यो विश्वामित्रके, कोप बढ्यो उरआय। राजा दशरथसा कह्या, वचन वशिष्ठ बनाइ ॥ २४ ॥ षटपद ॥ इनहींके तपतेज यज्ञकी रक्षा करिहैं। इनहींके तपतेज सकलराक्षसबल हरिहैं ॥ इनहींके तपतेज बढिहै तन तूरण। इनहींके तपतेज होहिंगे मंगल पूरण। कहि केशव सुत आइहैं इनहींके तपतेज घर। नृप बेगि राम लक्ष्मण दुवौ सौंपौं विश्वामित्रकर ॥ २५ ॥

टी०—साज छत्र चामर चमू आदि नाम यश गुरु वशिष्ठ झूठे जे पुत्रादि हैं तिनसौं झूँठई कहे वृथाही मनको बांधतहौ लगावतहौ अथवा झूँठेसों कहे न सहित है अर्थ पुत्रादि झूँठे मायाके प्रपंच है तिनसौं मिलिकै झूँठई जो झुठाई है तासों मनको बांधत हौ अर्थ की ना बांधौ अथवा झूँठेकी सो कहें झूँठेकी तरह जैसे झूँठाप्राणी झूठाइमें मनलगावतहै तैसे तुमहूं लगावतहौ औ सनातन कहे परंपराको सत्य छाँडत हो देनकहि अब नहीं देत सो ना चाहिये ॥२३॥२४॥ तेज प्रताप तूरन जलदी मंगल विबाहादि ॥२५॥

सोरठा ॥ राजा और न मित्र, जानहुँ विश्वामित्रसे ॥ जिनको अमित चरित्र, रामचन्द्रमय मानिये ॥ २६ ॥ दोहा ॥ नृपपै वचन वशिष्ठको, कैसे मेट्यो जाइ ॥ सोंप्यो विश्वामित्रकर, रामचन्द्र अकुलाइ ॥२७॥ पंकजवाटिकाछंद ॥ राम चलत नृपके युगलोचन। वारिभरित भये वारिदलोचन ॥ पायन परि ऋषिके सजि मौनहिं। केशव उठि गये भीतर भौनहिं ॥ २८॥ चामरछन्द ॥ वेदमंत्रतंत्र शोधि अस्त्रशस्त्र दैभले ॥ रामचन्द्रलक्ष्मणै सो विप्र क्षिप्र लै चले ॥ लोभ क्षोह मोह गर्व कामकामनाहई। नींद भूख प्यास त्रास वासना सबै गई ॥ २९ ॥

टी०-राक्षसवधमें अमित कहे संपूर्ण जो चरित्र हैं सो रामचन्द्रमय कहे रामचन्द्रचरित्र मय रामचन्द्र चरित स्वरूपति जिनको विश्वामित्रहीको चरित्र मानौ अर्थ जो राक्षसवधमें वा वेधनादिकृत रामचन्द्र कारि हैं सो कृत रामचन्द्र द्वार है विश्वामित्रही कारि हैं आशय यह कि यामें कछु श्रम रामचन्द्रको नहीं है ये केवल तुम्हारे पुत्रको यश दियो चाहत है याते इन सम मित्र दूसरो न जानौ अथवा रामचन्द्रमय कहे रामचन्द्र प्रति समर्पित मानिये अर्थ जो करत है सो रामचन्द्रको समर्पण करत है ॥२६॥ ॥ २७ ॥ वारि जलसों भारित रोचनकों वारिद मेघ भये अरुण रंग है आंसुनकी वर्षा करन लागे ॥ २८ ॥ वेदके मंत्र और तन्त्र शास्त्रके मन्त्र शोधि शोधिक दिया अथवा वेदके मंत्र दिये बलातिबला विद्या दियो है सो वाल्मीकीयरामायणमें लिख्यौ है औ तंत्रशास्त्रके मंत्रनसों शोधिकै मंत्रि कारिकै अस्त्रशस्त्र दिये क्षिप्र कहे जल्दी तिन विद्यानके प्रभाव सो लोभादिक बासना दूरि भई यथा। रघुवंशे। "तौ बलातिबलयोः प्रभावतो विद्ययोः पथि मुनिप्रदिष्टयोः। मम्लतुर्न मणिकुट्टिमोचितो मातृपार्श्वप-रिवर्त्तनाविव" ॥ २९ ॥

निशिपालिकाछन्द ॥ कामवन राम सब बासतरु देखियो ।
नैन सुख दैन मन मैन मलै लेखियो । ईश जहँ कामतनुकै
अतनु डारियो । छोडि वह यज्ञथल केशव निहारियो
॥ ३० ॥ दोहा ॥ रामचन्द्र लक्ष्मणसहित, तनमन अति-
सुखपाय ॥ देख्यो विश्वामित्रको, परम तपोवन जाय ॥ ३१ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणि-श्रीरामचन्द्रचन्द्रिकाया-मिंद्रजिद्विरचितायां रामचन्द्रलक्ष्मणयोर्विश्वामित्रतपोवनगमनं नाम द्वितीयः प्रकाशः ॥ २॥

टी०-जा वनमें महादेव कामको जारचो है ताको कामवन नाम है अथवा कामवन कहे अभिलाषको दाता वनतवनमें रामचन्द्र सब वास कहे ऋषिनके वास कुटीति औ तरुवृक्ष देख्यो अथवा वासतरु सुगंधयुक्त तरु मैनमय कहे काम स्वरूपता बनम ईश महादेव जहाँ जा स्थानमें काम को जारचो है ता स्थानको देखि छोडिक विश्वामित्रको यज्ञ थल जाइकै देख्यो ॥ ३० ॥ ३१ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसाद-निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां द्वितीयः प्रकाशः ॥ २ ॥

दोहा ॥ कथा तृतीयप्रकाशमें, वन वर्णन शुभ जानि । रक्षण यज्ञ मुनीशको, श्रवण स्वयंवर मानि ॥ १ ॥ षट्-पद॥तरुतालीस तमालताल हिंताल मनोहर । मंजुल बंजुल तिलक लकुच कुल नारिकेरवर॥ एला ललित लवंग संगपुंगी-फल सोहैं । सारी शुककुल कलित चित्तकोकिलआलि मोहैं ॥ शुभ राजहंस कलहंसकुल नाचत मत्तमयूरगन ।अतिप्रफुलित फलित सदा रहै केशवदास विचित्रवन ॥२॥ सुप्रियाछंद ॥ कहुँद्विजगण मिलि सुखश्रुत पढहीं । कहुँ हरिहरि हरहर रटर-टहीं॥ कहुँमृगपतिमृगशिशुपयपियहीं॥कहुँ मुनिगण चितवत हरि हियहीं ॥३॥ नराचछंद ॥ विचारमान ब्रह्मदेव अचमान मानिये । अदीयमान दुःख सुःख दीयमान जानिये ॥ अदंडमान दीनगर्व दंडमान भेदवै । अपट्टमान पापग्रन्थपट्ट-मान वेदवै ॥ ४ ॥

टी०—तालीश वृक्ष विशेष हिंताल खजुरि बंजुल अशोक लकुच बड-हर ॥ १ ॥ मृगपति पदते सिंहकी स्त्री पुरुष जातिमात्र जानौ अर्थ सिंहि-नीनको पय दूध मृग बालक पियत हैं यासों या जनायो कि जहाँ सह-जहूं बैर नहीं है कृत्रिमकी कहावत है औ कहूतेई मृग शिशु मुनिनके हियको हारिकै मुनिनकी ओर चितवत हैं यासों मृग बालकनकी अति सुन्दरता जानो ॥ २ ॥ ३ ॥ जहाँ सदा ब्रह्म जो वेद है सोई विचार्यमान है विचारयो जात है अथवा परब्रह्म देव पदते यहां विष्णु जानौ अथवा सदेव यासों या जनायो कि सुदेव सेवामें सब रहत हैं कोऊ कुदेव यक्षिणी आदिकी सेवा नहीं करत औ दुःख अदीयमान है कोऊ काहूको दुःख नहीं देत सुख दीयमान है दीन अदंडमान है दीनको कोऊ दंड ताडन नहीं करत औ वै कहे निश्चय करत औ वै कहे निश्चय करि गर्व औ भेददंडमान है पाप ग्रंथ मारन मोदनादिके ग्रंथ अपट्टमान हैं कोऊ नहीं पढत ॥ ४ ॥

विशेषकछंद ॥ साधु कथा कथिये तहँ केशवदास जहां । विग्रह केवल है मनको दिनमान तहां ॥ पावनवास सदा ऋषिको सुखको बरषै । को बरनै कवि ताहि विलो-

कत जी हरषै ॥ ५ ॥ चंचला रक्षिवेको यज्ञकुल बैठे वीर सावधान । होन लागे होमके जहां तहां सबै विधान ॥ भीम-भाँति ताडुकासो भंगलागि कर्न आइ । वान ना निरामपै न नारि जानि छाँडि जाइ ॥ ६ ॥ ऋषि सोरठा ॥ कर्म करति यह घोर, विप्रनको दशहू दिशा । मत्त सहस गज जोर, नारी जानिन छाँडिये ॥ ७ ॥ राम-शशिवदना ॥ सुनु मुनिराई जगसुख दाई । काहि अब सोई । जेहि यश होई ॥ ८ ॥ ऋषि-कुंडलिया ॥ सुताविरोचनकी दुती दीर-घजिह्वा नाम । सुरनायक ह्वै संहरी परम पापिनी वाम ॥ परमपापिनी बाम बहुरि उपजी कविमाता । नारायणसो हती चक्र चिंतामणिदाता ॥ नारायण सो हती सकल द्विजदूषण-संयुत । त्यों अब त्रिभुवननाथ ताडुका तारहु सहसुत ॥ ९ ॥

टीका-साधु कथा उत्तम कथा विष्णुविषयकीनी आदि अथवा साधु जे संतजन हैं नारदादि तिनकी कथा तहाँ तेहि आश्रममें मुनिजनन करिकै कथिये कथन करियत है औ जहां केवल मनहीको निग्रह है मनइंद्रिनको राजा है मनके निग्रहसों सब इन्द्रिनको निग्रह जानो औ तहां मान दि-नहींके है और काहूके नाहीं है दिनपक्षमें मान प्रमाण दिन मान कैतो है यह पूछिवेकी रीति लोकमें प्रसिद्ध है अन्यत्र मान गर्व परिसंख्यालंकार है अथवा दिनहीको मान आदर है यज्ञादिसत्कर्म दिनहीमें होत हैं तासो॥५॥ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥विरोचन बलिके पिताकी सुता दीरघजिह्वानामा पापिनी रही ताको सुरनायक इंद्र मारचो है औ फेरि अति पापिनी कवि जे शुक्र हैं तिनकी माता भई ताको नारायण मारचो है एक समय देवनके युद्धमें हारिकै दैत्य ब्राह्मणके शरणमें बचिवो जानिके शुक्र माताके शरण जाइ लुकाने तहां शत्रुको रक्षक जानि इंद्रकी आज्ञासों विष्णु शुक्र माताको शिर चक्रमे खंडन करि दैत्यनको मारचो है ताही कोपसों भृगुमुनि जाइ विष्णुके उरमें लात मारचो है औ आपने पुत्र शुक्रको दैत्यगुरु कियो है यह कथा पुराणनमें प्रसिद्ध हैं कैसे हैं नारायण चिन्तामणिके दाता हैं अथवा चिंतामणि सरिस दाता हैं सकल द्विज दूषण संयुत ताडुकाको

विशेषण है औ सहसुत कहे मारीच सहित यासों या जनायो इन्द्र विष्णुहूं दुष्टस्त्री वध कियो है ॥ ९ ॥

दोहा ॥ द्विजदोषी न विचारिये, कहा पुरुष कह नारि ॥ राम विराम न कीजिये, वाम ताडुका तारि ॥ १० ॥

मरहट्ठाछंद ॥ यह सुनि गुरुबानी धनुगुन तानी जानी द्विज-दुखदानि । ताडुका सँहारी दारुण भारी नारी अतिबल जानि ॥ मारीच बिडारयो जलाधि उतारयो मारयो सबल सुबाहु ॥ देवनि गुन पष्यों पुष्पनि वष्यों हष्यों अति सुरनाहु ११ ॥ दोहा ॥ पूरण यज्ञ भयो जहीं, जान्यो विश्वामित्र ॥ धनुषयज्ञकी शुभ कथा, लागे सुनन विचित्र ॥ १२ ॥

टीका--बिराम कहे बेर ॥ १० ॥ ताडुकादि वधसों गुणनकी परीक्षा कियो कि ये गुण विष्णुहीमें हैं तासों विष्णुको अवतार भयो अब रावण वध ह्वै है यह जानि इंद्र हर्षित भये ॥ ११ ॥ १२ ॥

चंचरीछंद ॥ आइयो तेहि काल ब्राह्मण यज्ञको थल देखिकै । ताहि पूंछत बोलिकै ऋषि भाँति भाँति विशेषिकै ॥ संग सुंदर राम लक्ष्मण देखि देखि सो हर्षई । बैठिके सोइ राजमंडल वर्णई सुख वर्षई ॥ १३ ॥ ब्राह्मण ॥ शार्दूलविक्रीडितछंद ॥ सीताशोभन व्याह उत्सव सभा संभार संभावना तत्तत्कार्यसमग्रव्यग्र मिथिलावासी जना शोभना ॥ राजा राजपुरोहितादिसुहृदो मंत्री महामंत्रदा नाना देशसमागता नृपगणा पूजापराः सर्वदा ॥ १४ ॥

टी०--जनकपुरको ब्राह्मण सीयस्वयंवरके अर्थ काहू राजाको निमंत्रण लिये जात रह्यो सो यज्ञको स्थान देखिवेको सुभावही आयो अथवा ऋषिहीको निमंत्रण ल्यायो है अथवा कोउ साधारण पथिक ब्राह्मण है ताको निकट बोलि कहे बोलाइकै विश्वामित्र भाँति भाँति विशेषसों जनकपुरकी कथा पूंछत हैं सो ब्राह्मण ऋषिके संग रामलक्ष्मणको देखि ऋषिकी स्त्रीके वचन सत्य जानि अब सीताको व्याह ह्वै है यहैं निश्चय करि हर्षित

आनंदित होत है काहेते पंचमप्रकाशके तृतीयछंदमें ब्राह्मण कहि है कि का ऋषिकी स्त्री चित्रमें सीताका ऐसो कोऊ बरु लिखि लयाइ जैसो रामचन्द्रक देखियत है ॥ १३ ॥ सीताको जो शोभन कहे सुंदर व्याह है ताको जे उत्सव सभा कहे कौतुक सभा है स्वयंवर सभा इति । ताके जे अनेव संभार सामग्री हैं अनेक राज सत्करादि वस्तु तिनकी जो संभावना विचार है तासों राजा जनक औ राजपुरोहित सतानंद तिन्हैं आदि दै और जे सुहृद मित्र हैं और महामंत्रके देनहार जे मंत्री हैं औ समग्र कहे सम्पूर्ण मिथिलावासी जे शोभन कहे सुबुद्धिजन हैं ते सब तत्तत्कार्य कहे अपने अपने उचित कार्यमें व्यग्र कहे आसक्त हैं । संलग्न इति अथवा आकुल हैं " व्यग्रो व्यासक्त आकुले " इति मेदिनी । औ सर्वदापूज्य औ पर कहें उत्कृष्ट ऐसे नाना देश अनेकदेशके नृपगण समागत कहे आये हैं ॥ १४ ॥

दोहा ॥ खंण्डपरसको शोभिजै, सभामध्य कोदंड ।
मानहुँ शेष अशेष धर, धरनहार बरिबंड ॥ १५ ॥ सवैया ॥
शोभति मंचनकी अवली गजदंतमई छबि उज्ज्वल छाई ।
ईश मनो वसुधामें सुधारि सुधाधरमंडल मंडि जोन्हाई । तामहँ
केशवदास विराजत राजकुमार सबै सुखदाई । देवनसों जनु
देवसभा शुभ सीयस्वयम्वर देखन आई ॥ १६ ॥ दोहा ॥
नवति मंचालिका, करसंकलित अपार । नाचति है जनु
नृपतिकी, चित्तवृत्ति सुकुमार ॥ १७ ॥ सोरठा ॥ सभा-
मध्य गुणग्राम, बंदीसुत द्वै शोभहीं ॥ सुमति विमति यह
नाम, राजनको वर्णन करैं ॥ १८ ॥ सुमति-दोहा ॥ को
यह निरखत आपनी, पुलकित बाहुविशाल ॥ सुरभि स्वयं-
वर जनु करो, मुकुलित शाखरसाल ॥ १९ ॥

टी०—जामें देशांतरनके राजा लोग आय आय बैठत हैं ऐसे स्वयंवर सभामें चारों ओर मंच कहे मचाननकी अवली पंक्ति बनति है ॥ १५ ॥ सो मंचावली सीयस्वयंवरमें गजदंत हाथी दाँतनकी बनी है तामें ब्राह्मण

१ महादेव.

उत्प्रेक्षा करते हैं कि, ईश जे विधाता हैं ते मानो जुन्हाईसों मंडिकै युक्त करिकै वसुधा पृथ्वीमें सुधाधर चंद्रमाको मंडल कहे परिवेष सुधारि कहे सुधान्यो बनाया है जोत्स्नायुक्त चंद्रपरिवेष सम कहे मंचावलीकी अति श्वेतता जनायो ईश बनायो सम कहे अति रुचिर रचना जनायो औ देव सरिस राजकुमार हैं देवसभासरिस मंचावली जानो ॥ १६ ॥ पंचालिका नृत्यकी जातिविशेष है अपार कर कहे हस्तक भेदसों संकलित युक्त ॥१७॥ ॥ १८ ॥ सुरभि कहे वसंतरूपी जो स्वयंवर है त्यहि मानो रसाल आंबकी शाखाको मुकुलित बौरयुक्त कन्यो है जैसे वसंतमें आंबकी शाखा बौरति है तैसे धनुष उठाइबेको मोद करि बाहु रोमाञ्चित भयो अथवा सुरभि रूपी जो है स्वयं कहे अपना त्यहि वर कहे सुन्दर रसाल शाखको मुकुलित किये हैं ॥ १९ ॥

विमति-सोरठा । ज्यहिं यश परिगलमत्त, चंचरीक चारण फिरत ॥ दिशि विदिशन अनुरक्त, सो तौ मलिकापीड नृप ॥ २० ॥ सुमति-दोहा ॥ जाके सुखमुखवासते, वासित होत दिगंत ॥ सो पुनि कह यह कौन नृप, शोभित शोभ अनंत ॥ २१ ॥ विमति-सोरठा ॥ राजराज दिगबाम । भाल लाल लोभी सदा ॥ अति प्रसिद्ध जग नाम । काश्मीरको तिलक यह ॥ २२ ॥

टी०-पांच छंदनमें विमतिके पांच प्रश्नोंको श्लेषसों उत्तर दियो है मल्लिक नामा जो पर्वत है ताको आपीड कहे शिखा भूषण है अर्थ मल्लिक पर्वतको राजा है । यथा च पद्मपुराणे । "मल्लिकाख्यो महाशैलो मोक्षदः पश्यतां नृणाम् । यत्रांगेषु नृणां तोयं श्यामं वा निर्मलं भवेत् । पातकस्यापहारीदं मया दृष्टं तु तीर्थकम् ॥ १ ॥ " औ मल्लिका जो चँबेली है ताको आपीड शिखा भूषण बेनी मालादि " शिखास्वापीडशेखरौ " इत्यमरः । कैसो है राजा औ मालती माला ज्यहिंके यशरूपी जो परिमल सुगंध है तासों मत्त चंचरीक भ्रमर सदृश जे चारण भाट हैं ते दिशिविदिशिनमें अनुरक्त संलग्न फिरत हैं अर्थ जाको यश दिशि विदिशनमें भाट गावत फिरत हैं औ यश अर्थ सदृश जो परिमल सुगंध है तामें मत्त चारण सदृश जे चंचरीक भ्रमर हैं ते दिशि विदिशनमें अनुरक्त फिरत हैं अर्थ जाके सुगंधमें मत्त है

भ्रमर दिशि विदिशनमें उडत फिरत हैं ॥ २० ॥ सुख कहे सहज मुखके वास सुगंध ते ॥ २१ ॥ काश्मीरंको तिलक कहे काश्मीर देशको राजा औ काश्मीर कहे केशारिको तिलक कैसो है राजा औ तिलकराज जे कुबेर हैं तिनकी दिशा उत्तर दिशारूपी जो वाम स्त्री है ताके भालको लाल रक्त जो सुमेरु है सो है लोभी सदा ज्यहि राजाको अर्थ सुमेरुके यह इच्छा रहति है कि इन्द्रको राज छोडि या राजाको राज हमपर होय यासों या जनायो कि राजा रूपगुण करि इन्द्रहूंसों अधिक है अथवा यह राज सुमेरुको सदा लोभी है इन्द्रको जीति सुमेरुपर राज्य करिबेकी इच्छा राखत है औ राजराज दिग सदृश जे बाम स्त्री हैं राजराज दिक सदृश कहे या जनायो जैसे द्रव्यरूप लक्ष्मीसों युक्त उत्तर दिशा है तैसे शोभारूप लक्ष्मीसों युक्त स्त्री हैं तिनके भालको जो लालरत्न है शोभा है 'सदा जा तिलकको अर्थ जो तिलक लाल हू की शोभा बढावत है तासों तिलकके निकट रहिबेकी भाल लालके इच्छा रहती है आशय यह कि अति भूषणनसों भूषित औ अति सुंदरीहू स्त्रीनकै शोभा बढावत है साधारण नहीं है और अर्थ राजराज कहे राजनको राजा है और दिशारूपी जो बाम स्त्री है ताको मालको लाल है औ लोभी है सदा कहे याचकनकी याचकताको याचकनको याचिबो सर्बदा जाको भावत है अर्थ बडो दाता है सदा पर सो मैं याचकताकी कहत हैं औ अर्थराजदिग जो उत्तर दिशा है ताके वाम भाग जो पूरब दिशा है ताके भालको लाल सूर्य ताको सदा लोभी ऐसा जो काश्मीर देश है ताको राजा है अति जाडेसों जा देश वासिनके सदा सूर्योदयकी इच्छा रहति है ॥ २२ ॥

सुमति-दोहा ॥ निज प्रताप दिनचर करत, लोचन कमलप्रकाश ॥ पान खात मुसुकात मृदु, को यह केशवदास ॥ २३ ॥

टी०-अर्थ यह जाके अंगनमें प्रताप कांतिकी झलक सब लोचन पसारिकै निहारत हैं ॥ २३ ॥

विमति-सोरठा ॥ नृपमाणिक्य सुदेश, दक्षिणतिय जिय भावती । कटितट सुपट सुवेश, कलकाची शुभ मण्डई ॥ ॥ २४ ॥ सुमति-दोहा ॥ कुण्डल परसत मिस कहत, कहौ कौन यह राज ॥ शंभुशरासन गुन करो, करना

लम्बित आज ॥ २५ ॥ विमति-सोरठा ॥ जानहिं बुद्धि-निधान, मत्स्यराज यहि राजको ॥ समरस समुद्रसमान, जानत सब अवगाहिकै ॥ २६ ॥ सुमति-दोहा ॥ अंगराग-रंजित रुचिर, भूषणभूषितदेह ॥ कहत विदूषकसों कछू, सो पुनि को मछनृप येह ॥ २७ ॥

टी०-नृपमाणिक्य नृपश्रेष्ठ औ उत्तम माणिक्य राजा कैसो है कि सुन्दर है देश द्रविडादि जामें ऐसी जो दक्षिण दिशा रूपी तिय है ताको अति भावत है जो दक्षिण दिशाके कटितटमें कहे मध्यभागमें सुन्दर है पटपद्धति जाको औ कल कहे दुःखरहित ऐसी जो कांची नामा पुरी है ताको मंडत है भूषित करत अर्थ कि याके देशमें मध्यभागमें विष्णुकांची शिवकांची पुरी हैं तामें जाको बास है माणिक्य कैसो है कि सुदेश कहे सुंदरी दक्षिण कहे प्रवीण जे तिय स्त्री हैं तिनको अति भावती है फेरि कैसो है कि सुष्ठु पट वस्त्र युक्त जो कटितट है तामें कल कहे अव्यक्त मधुर स्वरयुक्त जो कांची क्षुद्रघण्टिका है ताको मण्डई कहे भूषित शोभित करै है ॥ २४ ॥ कर्णालंबित करौ कर्ण पर्यंत खैंचौ ॥ २५ ॥ मत्स्य नामा जो देश विशेष है मछरीबन्दर करि प्रसिद्ध है ताको यह राजा है औ मत्स्यराज राघव मत्स्य सो जैसे समुद्रको अवगाहि मँझाइकै सब जानत है ऐसे राजा समररूपी समुद्रको मँझाइकै सब समर भेदको जानतहै अर्थ कि बडो शूर है ' मत्स्यो मीने पुमान्भूम्नि देशे ' इति मेदिनी ॥ २६ ॥ विदूषक मसखरा, " हास्यकारी विदूषक " इत्यमरः ॥ २७ ॥

विमति-सोरठा ॥ चन्दन चित्र तरंग, सिंधुराज यह जानिये॥ बहुत वाहिनी संग, मुक्तामाल विशाल उर ॥ २८ ॥ दोहा ॥ सिगरे राजसमाजके, कहे गोत्रगुणग्राम ॥ देश सुभाव प्रभाव अरु, कुल बल विक्रम नाम ॥ २९ ॥ घनाक्षरी ॥ पावक पवनमणि पन्नग पतंग पितृ जेते ज्योतिवंत जग ज्योतिषिन गाये हैं । असुर प्रसिद्ध सिद्ध तीरथसहित सिंधु केशव चराचर जे वेदन बतायेहैं ॥ अजर अमर अज अंगी औ अनंगी सब बराणि सुनावै ऐसे कोने गुण पाये हैं । सीताके स्वयंवरको रूप अवलोकिविको भूपनको रूप धरि बिश्वरू-

प आये हैं ॥ ३० ॥ सोरठा-कह्यो विमति वह टेरि, सकल सभा हि सुनाइकै ॥ चहू ओर कर फेरि, सबहीको समुझाइकै ॥ ३१ ॥ गीतिकाछंद ॥ कोइ आजु राजसमाजमें बल शंभुको धनु कर्षि है । पुनि श्रवणके परिमाण तानि सोचित्तमें अति हर्षि है ॥ वह राज होइ करंक केशवदास सो सुख पाइ है । नृपकन्यका यह तासुके उर पुष्पमालहि नाइ है ॥३२॥

टी०-सिंधुराज सिन्धुदेश लहावरको राजा और समुद्रचन्दनके चित्रकी तरंग हैं अंगनमें जाके अर्थ चित्रविचित्र चन्दन अंगनमें लाये हैं औ चन्दन वृक्षनसों चित्रविचित्र हैं तरंग जाकी अनेक चन्दन वृक्ष जाकी तरंगनमें बहत हैं ॥ वाहिनी चमू औ नदी मुक्तनकी माला पहिरे हैं औ मुक्तनकी माल पंगति समूहेति सो है उरमें बदनमें जाके ॥ " सिंधुर्वा मधुदेशाब्धिनदे नासरिति स्त्रियाम् ॥ " इति मेदिनी ॥ २८ ॥ बलअंग बल विक्रम बुद्धिबल ॥ २९ ॥ पन्नग सर्प शेषादि पतंग पक्षी गरुडादि असुर दैत्य राक्षस बाणासुर रावणादि सिद्धदेवजाति विशेष । अथवा तपस्वी अजर कहे जरा बुढाई सो रहित देवता अमर हनुमानादि अज ब्रह्मादि अंगी अंगधारी अनंगी कामादि विश्वरूप संसारभरके रूपप्राणी ॥ ३० ॥ ३१ ॥ कर्षि है उठाई है ॥ ३२ ॥

दोहा-नेक शरासन आसनै, तजै न केशव दास ॥ उद्यमकै थाक्यो सबै, राजसमाज प्रकास ॥ ३३ ॥ विमति-सुन्दरी छंद ॥ शक्ति करी नहिं भक्ति करी अब । सो न नयो पल शीश नये सब ॥ देख्यो मैं राजकुमारनके वर । चाप चढ्यो नहिं आप चढे खर ॥ ३४ ॥ विजय ॥ दिक्पालनकी भुवपालनकी लोकपालनकी चैन मातु गई किबै । भांडभये उठि आसनते कहि केशव शम्भुशरासनको छबै ॥ काहू चढायो न काहू नवायो न काहू उठायो न आंगुरहू द्वै । स्वारथ भोन भयो परमारथ आये ह्वै वीर चले वनिता ह्वै ॥३५॥

इति श्रीमत्सकललोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचन्द्रिकायामिंद्रजिद्विरचितायां स्वयंवरसभावर्णनं नाम तृतीयः प्रकाशः ॥ ३ ॥

टी०—जो या धनुषको उठाइ है ताको नृपकन्या व्याहार्थ पुष्पमाला पहिराइ है ऐसे विमतिके वचन सुनि सब राजसमाजसमूह धनुष उठाइबेमें उद्यम कहे उपाय करत भये परन्तु शरासन नेकु आसनकोहू न छोडत भयो अर्थ रंचकहूं ना उठ्यो ॥ ३३ ॥ जब धनुष काहूसों न उठ्यो तब क्रोधयुक्त ह्वै विमति कह्यो धनुष उठाइवेमें राजकुमारन शक्तिबल नहीं कियो धनुषकी भक्ति कियो है काहेकी धनुष बनायो औ पलमात्र सबके शीश नवत भये तौ जाकी जो भक्ति करत है ताको शीश नवावत प्रणाम करत हैं तासों आप खर गर्दभमें चढे अर्थ गर्दभमें चढे प्राणी सब निन्दित भये ॥ ३४ ॥ किनि च्वै गई कहे गर्भ पतन काहे ना भयो ॥ ३५ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजानकीप्रसाद-निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां तृतीयः प्रकाशः ॥ ३ ॥

दोहा ॥ कथा चतुर्थ प्रकाशमें, बाणासुरसंवाद ॥ रावणसों अरु धनुषसों, दशमुखबाणविषाद ॥ १ ॥ सबहीको समुझे उस बन, बलविक्रमपरिमाण ॥ सभामध्य ताही समय, आये रावण बाण ॥ २ ॥ डिल्लाछंद ॥ नर नारि सबै । भयभीत तबै ॥ अचरिज्जु यहै ॥ सब देखि कहै ॥ ३ ॥ दोहा ॥ है राकस दशशीशको, दैयत बाहु हजार॥ कियो सबनिके चित्त रस, अद्भुत भय संसार ॥ ४ ॥ रावण—बिजोहाछंद ॥ शंभुकोदंड दै राजपुत्री कितै ॥ टूक द्वै तीनिकै जाहुँ लंकाहि लै ॥ ५ ॥ विमति—शशिवदनाछंद ॥ दशशिर आवो । धनुष उठावो ॥ कछु बल कीजै । जग यश लीजै ॥ ६ ॥ बाण—गीतिका छंद ॥ दशकंठ रे शठ छाँडि दे हठ बारबार न बोलिये । अब आजु राजसमाजमें बल साज चित्त न डोलिये ॥ गिरिराजते गुरु जानिये सुरराजको धनु हाथ लै । सुख पाय ताहि चढायकै घर जाहि रे यश साथ लै ॥ ७ ॥

टीका—रावणसों बाणासुरको संवाद है ना उठ्यो तासों दशमुख औ बाणको धनुषसों विषाद दुःख है ॥ १ ॥२॥ बाण रावणको देखि सब प्राणी

आश्चर्य ह्वै शब्द कहत भये ॥ ३ ॥ दशशीशको राक्षस औ हजारबाहुको दैत्य सबनके चित्तमें अद्भुत औ भयरसको संसार रच्यो अर्थ अतिआश्चर्य औ भयसों युक्त कियो दश शिर हजार बाहु देखि अद्भुतरस भयो भयानक रूप देखि भय रस भयो ॥ ४ ॥ रावण विमातिसों कह्यो की शंभुको दंड हमको दै कहे दीजिये औ राजपुत्री कहां है ताको बतावो धनुष तोरि राजपुत्री लै लंकाहि जाऊं ॥ ५ ॥ ६ ॥ विमातिसों कहत ऐसे सबनके सर्व वचन सुनि रोषकरि बाण बोलत भये राजसभामें बलको साज पराक्रम करु चित्त करिकै ना डोलु अर्थ मनोरथ ना करु अथवा बलकी साजसों अथवा बल औ साज सैन्यादिसों चित्त ना डोलावो मनोरथ ना करौ अर्थ इहां तुम्हारो बल ना चलि है सुरराज महादेवके गिरिराजते कैलासते सुरराजको धनुष गुरू गरु जानो सुरराजपदको संबंध गिरिराजहूमें है ॥ ७ ॥

मंथनाछंद ॥ बाणी कही बान । कीन्ही न सो कान ॥ अद्यापि आनी न । रे वन्दि कानीन ॥ ८ ॥ बान--मालती छंद ॥ जोपै जिय जोर । तजौ सब शोर ॥ शरासन तोरि । लहौं सुखकोरि॥९॥ रावण--दंडक॥ वज्रको अखर्व गर्व गंज्यो जेहि पर्वतारि जीत्यो है सुपर्व सर्व भाजे लै लै अंगना । खंडित अखंड आशु कीन्हो है जलेशपाश चन्दनसी चन्द्रिकासों कीन्ही चंदबंदना ॥ दंडकमें कीन्हो कालकालहूको मानखंड मानौ कोहू कालही की कालखंडखंडना । केशव कोदंड वीश दंड ऐसे खंडे अब मेरे भुज दंडनकी बडी है विडंबना ॥१०॥

टी०—अति गर्वसों बाणकी बाणी कानमें ना कह्यो अर्थ ना सुन्यौ फेरि विमातिसों कह्यो कि रे कानीन क्षुद्रवंदि अद्यापि राजपुत्रीको ना ल्यायो ॥ ८ ॥ अर्थ राजपुत्री प्राप्तिरूपी सुख शरासन तोरे बिना न पैहै ॥ ९ ॥ जिन भुजदंडन वज्रको जो अखर्व बडो गर्व है ताको गंज्यौ बिदारचो अर्थ इंद्रकी रक्षा औ शत्रुबध करिबेमें वज्रके अमोघताको गर्व रह्यो सो इनमें निष्फल भयो पर्वतारि इन्द्रको इन

जीत्यौ तब सर्व सुपर्व देवता अपनी अपनी स्त्री लैलै भागत भये फेरि अखंड काहूके खंडिबे योग नहीं ऐसो जो जलेश वरुणको पास फांस है ताको आश जल्दी जिन खंड काहूके खंडिवे योग नहीं ऐसो जो जलेश वरुणको पास फांस है ताको आशु जलदी जिन खंडन कियो तोरचौ औ जिनकी वंदना पूजा चन्दनसी चन्द्रिकासों चन्द्र कह्यो अर्थ अति भय मानी चन्द्रमा जिनको सुखद चांदनीसों सुख दियो युद्ध ना कियो औ कालदण्ड यमराजकी आयुधताके यमराज रक्षा शत्रुबध कारिवेको मान गर्व रह्यो ताको खंडन कियो औ काल जे यमराज हैं तिनहींकी खंड खंडना इन ऐसी कियो मानो काल कहे यमके काल ईश्वर कीन्हों अर्थ जैसे यमको काल निर्भय है यमको खंडन करत है तैसे कह्यो यासों या जनायो कि मैं इन भुजदंडनसों इन सबको जीत्यौ है केशवकविको दंड धनुष विसरचो नारी विडंबना निंदा ॥ १० ॥

बान-तुरंगमछंद । बहुत वदन जाके । विविधि वचन ताके ॥ रावण ॥ बहुभुजयुत जोई । सबल कहिय सोई ॥ ॥ ११ ॥ रावण-दोहा ॥ अति असार भुजभारहीं, बली होहुगे बान ॥ मम बाहुनको जगतमें, सुनि दशकंठ विधान ॥ १२ ॥ सवैया ॥ हौं जबहीं जब पूजन जात पितापद पावन पापप्रणासी । देखि फिरौं तबहीं तब रावण सातौं रसातलके जे बिलासी ॥ लै अपने भुजदंड अखंड करौं छितिमंडल छत्रप्रभासी । जानै को केशव केतिक बार मैं शेषके शीश न दीन उसासी ॥ १३ ॥ रावण-कमलछंद ॥ तुम प्रबल जो हुते । भुजबलनि संयुते ॥ पितहि भुव ल्यावते । जगत यश पावते ॥ १४ ॥ बान-तोमरछंद ॥ पितु आनि एकोहि ओक । दिय दक्षिणा सब लोक ॥ यह जानिऐं बनदीन । पितु ब्रह्मके रसलीन ॥ १५ ॥

टी०-रावणके वचनमें काकोक्ति है ॥ ११ ॥ असार बलरहित ॥ १२॥ अखंड संपूर्ण ॥ १३ ॥ १४ ॥ हे रावण ! दीन हमारो पिता ब्रह्म परब्रह्मके रस स्वादमें लीन है तू यह जानि कहे जानु ॥ १५ ॥

सवैया ॥ कैटभसों नरकासुरसों पलमें मधुसों मुरसों ज्याहि मारचो । लोक चतुर्दश रक्षक केशव पूरण वेद पुराण विचारचो ॥ श्रीकमलाकुचकुंकुममंडित पंडित देव अदेव निहारचो । सोकर माँगनको बलिपै करतारहुने करतार पसारचो ॥ १६ ॥ रावण-दोहा ॥ हमैं तुम्हैं नहिं बूझिये, बिक्रम बाद अखंड । अब जो यह कहि देहिगो, मदनकदन-कोदंड ॥ १७ ॥ संयुतछंद ॥ व्रत बाण रावणकी सुन्यो । शिरराजमंडलमें धुन्यो ॥ बिमति ॥ जगदीश अब रक्षा करो । विपरीत बात सबै हरो ॥ १८ ॥ दोहा ॥ रावण बाण महाबली, जानत सब संसार । जो दोऊ धनु कषिहैं, ताको कहा विचार ॥ १९ ॥ बाण-सवैया । केशव औरते और भई गति जानि न जाइ कछू करतारी । शूरनके मिलि कहँ आय मिल्यो दशकंठ सदा अविचारी ॥ बाढिगयो बक-वाद वृथा यह भूलि न भाट सुनावहिं गारी । चाप चढाये कि कीरतिको यह राज करै तेरी राजकुमारी ॥ २० ॥

टी०-जा करने कैटभादि बली दैत्यनको मारचो फेरि चौदहौ लोककी रक्षा करतहैं यों कहि कर कि बडी शक्ति जनायो फेरि श्रीकमलाल क्ष्मीके कुचनमें कुंकुम केशरीके मंडितमें भूषित करै मो अर्थ मकरिका पत्र बनावैमें पण्डित है यासों या जनायो कि जिन विष्णुके लक्ष्मी स्त्री हैं तासों सब पदार्थसों पूरण जानौ जामें ती शक्ति है शारद कर हाथ करता करतार जे ब्रह्मा हैं तिनहुनके करतार जे विष्णु हैं तिन बलिपै मांगिबेको पसारचो ऐसे बली विष्णु बलिपै भिक्षाही मांगि पायो जीतिकै न पाई तासों विष्णुहूंसों अधिक बलि औ दाता जानौ इति भावार्थ ॥ ॥ १६ ॥ १७ ॥ व्रत धनुष उठाइबेकी प्रतिज्ञा ॥ १८ ॥ १९ ॥ विमतिके ऐसे विकल वचन सुनि बाण कह्यो कि हे भाट ! सीताके व्याहिबेको बाण धनुष उठावत है ऐसी जो गारी है ताको भूलिहू ना सुनाउ सीता हमारी माता हैं उनतिसये दोहामें कह्यो है कि सीता मेरी माई है ॥ २० ॥

रावण–मधुछंद ॥ मोकहँ रोकि सके कहि कोरे । युद्ध जुरे यमहूं कर जोरे ॥ राजसभा तिनुका करि लेखों । देखिकै राजसुता धनु देखों ॥ २१ ॥ सवैया ॥ बान कह्यो तब रावणसों अब वेगि चढाउ शरासनको । बाते बनाइ बनाइ कहा कह छोडि दे आसन बासनको ॥ जानत है किधौं जानत नाहिं न तू अपने मद नाशनको । ऐसे हि कैसे मनोरथ पूजत पूजे बिना नृप शासनको ॥ २२ ॥ रावण–बंधुछन्द ॥ बानन बात तुम्हैं कहि आवै ॥ बान ॥ सोई कहौं जिय तोहि जो भावै ॥ रावण ॥ का करिहौ हम योंहीं बरैंगे ॥ बान ॥ हैहयराज करी सो करैंगे ॥ २३ ॥ रावण–दंडक ॥ भौंर ज्यों भवत भूत वासुकी गणेशयुत मानो मकरन्दबुन्द मालगंगाजलकी । उडत पराग पटना लसी विशाल बाहुक कहा कहौं केशोदास शोभा पलपलकी ॥ आयुध सघन सर्वमंगलासमेति सर्व पर्वत उठाइ गति कीन्ही है कमलकी । जानत सकल लोकलोकपाल दिगपाल जानत न बान बात मेरे बाहुबलकी ॥ २४ ॥

टी०–॥ २१ ॥ आसन बिछावने औ बासन वस्त्रनको छोडिये अर्थ मल्लरूप काचि धनुष उठावो आइ अथवा सीताके लेवेकी जे आसा है तिनकी वासना स्मरण छोडिदे अपने मदनाशनको मोको तू जानता कि नहीं जानता जो ऐसी बात कहत हैं कि सीताको बिना धनुष तोरेही वरिहौं अथवा अपने मदनाशनका धनुषको अर्थ यह धनुष तुम्हारे मदको नाश करि है नृपशासन धनुष उठाइबो ॥ २२ ॥ हैहय राजा सहस्रार्जुन ॥ २३ ॥ वासुकी सर्प औ गणेश सहित भूतगण जा पर्वतमें कमलाके भौरसम भँवर भये औ महादेवके शीशको जो गंगाजल गिरयो ताकी माल मकरंद पुष्परस भयो औ उडत ये पार्वती आदिके पटवस्त्र है तेई पराग पुष्पधूलि औ मेरो बाहु जो हैं सो नाल कमलदंड भयो एतेमें या जनायो कि जब मैं कैलाश उठायो तब अतिशीघ्र उठायो तासो शंभुशीशको गंगाजल गिरयो औ वस्त्र उडत भये औ आयुध सघन कहि या जनायो कि तुम एक शंभु धनुष उठाईबो कठिन मानत हो वा पर्वतमें ऐसे अनेक आयुध रहे सर्वमंगला पार्वती ॥ २४ ॥

मधुभारछंद ॥ तानिके सुरारि । रिस चित्त मारि ॥ दश कंठ आनि । धनु छुयो पानि ॥ २५ ॥ विमाति ॥ तुम बल निधान । धनु अति पुरान ॥ पीस जहु अंग । नाहिं होहि भंग ॥ २६ ॥ सवैया ॥ खंडित मानु भयो सबको नृपमंडल हारि रह्यो जगतीको । व्याकुल बाहु निराकुल बुद्धि थक्यो बल विक्रम लंकपतीको ॥ कोटि उपाय किये कहि केशवकेहू न छाँडउ भूमि रतीको । भूरि विभूति प्रभावसु भावहि ज्यों न चले चितयोग यतीको ॥ २७ ॥ पद्धटिका धनु अतिपुरान लंकेश जानि । यह बात बानसों कही आनि ॥ हौं पलकमाँह लेहौं चढाइ । कछु तुमहूँ तौ देखो उठाइ ॥ २८ ॥

टी०-सु कहे सो रारि वाग्विवाद अथवा सुरारि । बाणासुर ॥ २५ ॥ २६ ॥ निराकुल शिथिल बलदेह बल विक्रम उपाय विभूति ऐश्वर्य सुवर्ण रत्न गजादि योग यती योगी ॥ २७ ॥ धनुष मोसों उठन लायक नहीं है यह जानिकै लंकेशरावण अपनो भ्रभर राखि धनुष अति पुरान है ॥ २८ ॥

बाण०-दोहा ॥ मेरे गुरुको धनुष यह, सीता मेरी माय ॥ दुहूँ भाँति असमंजसै, बाण चले सुख पाय ॥२९॥ रावण-तोटकछन्द ॥ अब सीय लिये बिन हौं न टरौं । कहुँ जाहुँ न तौ लगि नेम धरौं ॥ जबलौं न सुनो अपने जनको । अति आरत शब्द हते तनको ॥ ३० ॥ ब्राह्मण-मोदकछंद ॥ काहू कहूँ शरआशर मारिय । आरत शब्द अकाश पुकारिय ॥ रावणके वह कान परयो जब ॥ छोंडि स्वयंवर जात भयो तब ॥ ३१ ॥ दोहा ॥ जब जान्यो सबको भयो, तब ही विधिव्रतभंग ॥ धनुष धरयो लै भवनमें, राजा जनक अनंग ॥ ३२ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां बाणरावणवाग्विवादर्णनं नाम चतुर्थः प्रकाशः ॥ ४ ॥

टीका–॥ २९ ॥ हते कहे बाणादिसों वेधे अर्थ–मेरे दास इहां उहां यज्ञादि विघ्न करत फिरत हैं तिनको जो कोऊ सताइ है तो तिनकी रक्षाको जैहौं ॥ ३० ॥ जब मारीचादिको रामचन्द्र मारचो है तब तिनको आरत पीडित दुःखितेति शब्द सुनि रावण स्वयंवर सभाते गयो भेद कछु ब्राह्मण तौ जानत नहीं तासों संदेह विशिष्ट ह्वै कहत है कि कहूँ बली कहूँ कौन्यौ स्थानमें शर बाणसों आशर कहे काहू राक्षसको मारचो " क्रव्यादोस्रप आसर इत्यमरः " सुदभासुर मारीच कहूं यह पाठ है तौ सुद नामा राक्षसते भा कहे उत्पन्न जो असुर राक्षस है मारीय ताको सुद नाम राक्षसकी स्त्री ताडुका है ताको पुत्रमारीच है औ कहूँ शरमारीच मारिय पाठ है तौ शरसों मारीच नामा राक्षसको मारचो"॥ ३१ ॥ अनंग विदेह ॥ ३२ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानकीप्रसादायजननानकीप्र-
सादनिर्मितायां रागभक्तिप्रकाशिकायां चतुर्थः प्रकाशः ॥ ४ ॥

दोहा ॥ यह प्रकाश पंचम कथा, रामगवन मिथिला-
हि ॥ उद्धारण गौतम घरनि, स्तुति अरुणोदय आहि॥१॥
मिथिलापतिके वचन अरु, धनुभंजन उर धार ॥ जैमाला
दुंदुभि अमर, वर्षन फूल अपार॥ २ ॥ ब्राह्मण--तारकछंद॥
जब आनि भई सबको दुचिताई । कहि केशव काहूपै मेटि
न जाई ॥ सिय संग लिये ऋषिकी तिय आई । इक राजकु-
मार महादुखदाई ॥ ३ ॥ मोहनछंद । सुंदर वपु अति
श्यामल सोहै । देखत सुरनरको मन मोहै ॥ आनि लखी
सियको बरु ऐसो । रामकुमारहि देखिय जैसो ॥ ४ ॥ तोट-
कछंद ॥ ऋषिराज सुनी यह बात जहीं । सुख पाय चले
मिथिला हितहीं ॥ बन राम शिला दरशी जबहीं । तिय
सुन्दर रूप भई तबहीं ॥ ५ ॥ विश्वामित्र–सोरठा ॥ गौत-
मकी यह नारि, इन्द्रदोष दुर्गति भई ॥ देखि तुम्हैं नरकारि,
परम पतितपावन भइ ॥ ६ ॥ कुसुमविचित्राछन्द ॥ तोहि
अति रूरे रघुपति देख्यो । सब गुण पूरे तन मन लेख्यो ॥

यह वर माँग्यो दियो न काहू । तुम मनते कहूं न जाहू ॥ ७॥ कलहंसछन्द ॥ तहँ ताहि दै बरुको चले रघुनाथजू । अति-शूर सुन्दर यों लसैं ऋषि साथ जू ॥ जनु सिंहके सुत दोउ सिद्धि श्रीरये । बन जीव देखत यों सबै मिथिला गये ॥ ८ ॥

टीका-॥ १ ॥ २ ॥ जब धनुष काहुसों ना उठ्यो तब सबके जनकादिके मनमें दुचिताई भई कि सीताको व्याह अब ना ह्वै है ता दुचिताई मेटि-बेके लिये त्रिकालदर्शिनी काहू ऋषिकी स्त्री एक राजकुमार सीताके संग चित्रमें लिखिकै ल्याई कि सीताको या प्रकारको वरु मिलि है आशय कि जब या प्रकारको राजकुमार आवै तब शम्भु धनुष चढाइकै सीताको व्याहै ॥ ३ ॥ सो हे ऋषि ! जैसो इन रामकुमारको देखियत है तैसोई बरु ऋषिकी स्त्री सीताको लिखिल्याई ॥ ४ ॥ ५ ॥ दुर्गति दुर्दशाको गई कहे प्राप्त भई ॥ ६ ॥ रूरे सुंदर ॥ ७ ॥ अति शूर औ सुंदर दुवो राम लक्ष्मण ऋषिके साथमें ऐसे शोभित भये मानो सिद्धि जो तप सिद्धि है ताकी श्री शोभा में रमे कहे अनुराग करे सिंहके सुत पुत्र है सिंहादि बन जीव तपस्विनके वश्य होत हैं यह प्रसिद्ध है औ सिद्ध है श्रीरये पाठ होइ तो सिद्ध स्वाभाविक श्री शोभासों रये युक्त ॥ ८ ॥

दोहा ॥ काहूको न भयो कहूं, ऐसो सगुन न होत । पुर पैठत श्रीरामके, भयो मित्र उदोत ॥ ९ ॥ राम-चौपाई ॥ कछु राजत सूरय अरुन परे । जनु लक्ष्मणके अनुराग भरे ॥ चितवत चित्त कुमुदिनी त्रसै । चोर चकोर चितासो लसै ॥ १० ॥ लक्ष्मण-षटपद ॥ अरुण गात अति प्रात पद्मिनी प्राणनाथ भय । मानहुँ केशवदास कोकनदकोक प्रेममय ॥ परिपूरण सींदूरपूर कैधौं मंगलघट । किधौं शक्रको छत्र मढ्यो मानिकमयूषपट ॥ कै श्रोणितकलित कपाल यह किल कपालिकाकालको । यह लालित लाल कैधौं लसत दिग्भामिनिके भालको ॥ ११ ॥

टी०-अति अनुराग करि पुरमें पैठतही लक्ष्मणके सगुनार्थ उदित भये ताही अनुराग प्रेमसों मानो भरे कहे पूरित हैं अथवा लक्ष्मणको व्याज करि

सगुन समय उदयसों आपने ऊपर सूर्यको प्रेम जनायो यह कहनूति लोकरीति है ॥ १० ॥ पद्मिनीप्राणनाथ सूर्य अरुण तामें तर्क है कोकनद कमलनको फुलावत हैं कोक चक्रवाकको संयोगी करत हैं तासों मानो तिनके प्रेममयी है अर्थ तिन प्रति जो प्रेम है सो ऊपर छाइ रह्यो हैं सिंदूरसों पूर प्रवाह जलेति अर्थ–सिंदूर मिश्रित जलसों भरयो अथवा परिपूर्ण सिंदूरसों पूर कहे पूरित अर्थ सिंदूरहीसों भरयो अथवा सिंदूरसों रँग्यो कै मंगल विवाहादिको घट पूजन कलश है मानिक रत्नकी मयूष किरणि तिनको बीन्यो पटवस्त्र औ कोकिल कहे निश्चय करि यह कपालिकाकालीपै श्रोणित रुधिर कलितकालको कपाल शीश है अथवा कपालिकाको व कालको श्रोणित कलितकपाल है कालीको रुधिर मांसभक्षकतासों कालको सर्वभक्षक तासों 'कालो जगद्भक्षकः' इति प्रमाणात् ॥ ११ ॥

तोटकछन्द ॥ पसरे कर कुमुदिन काज मनो। किधौं पद्मिनिको सुख देन घनो ॥ जनु ऋक्ष सबै यहि त्रास भगे। जिय जानि चकोरफंदान ठगे ॥ १२ ॥ रामचन्द्र–चंचरीछन्द ॥ व्योमभें मुनि देखिये अतिलाल श्रीमुख साजहीं। सिंधुमें वडवाग्निकी जनु ज्वालमाल विराजहीं ॥ पद्मरागनिको किधौं दिवि धूरि पूरित सो भई। शूरवाजिनकी खुरी अतितिक्षता तिनकी हई ॥ १३ ॥ विश्वामित्र–सोरठा ॥ चढ्यो गगन तरु धाइ, दिनकर वानर अरुणमुख ॥ कीन्हों झुकि झहराइ, सकल तारकाकुसुमबिन ॥ १४ ॥

टी०–कुमुदिनि कोईके काज कहे गहिवेको कुमुदिनि भयसों संकोचको प्राप्त होती है तासों ऋक्ष नक्षत्र यहि त्रास कहे फंदाभ्रमके त्रास ॥ १२ ॥ यामें आकाशमें सूर्यकी लाली छाई रही है ताको वर्णन है मुनि विश्वामित्रको संबोधन है ॥ १३ ॥ सूर्योदयसों नक्षत्रास्त भये तामें विश्वामित्रने तर्क कऱ्यो दिनकर सूर्यरूपी जो अरुणमुख वानर है सो गगन आकाशरूपी तरुवृक्षमें धाइकै चढ्यो है सो झुकि कहे रिसायके झहराइ कहे हलाइकै सकल तारका नक्षत्ररूपी जे कुसुम फूले हैं तिन बिन कीन्ही सकल नक्षत्रास्त भयो तासों झुकि पद करयो ॥ १४ ॥

लक्ष्मण दोहा ॥ जहीं बारुणीकी करी, रंचक रुचि द्विज-राज ॥ तहीं कियो भगवन्त बिन, संपति शोभा साज ॥ १५ ॥ तोमरछन्द ॥ चहुँ भाग बाग तडाग । अब देखिये बडभाग ॥ फल फूलसों संयुक्त । अलियों रमै जनमुक्त ॥ १६ ॥ राम-दोहा ॥ तिन नगरी तिन नागरी, प्रतिपद हंसक हीन ॥ जलजहार शोभित न जहँ, प्रगट पयोधर पीन ॥ १७ ॥

टी०-वारुणी पश्चिमदिशा औ मदिरा द्विजराज चन्द्रमा औ ब्राह्मण भगवंत सूर्य औ ईश्वर संपत्ति चांदनी औ द्रव्यशोभा अंग छबि दुवौंमें जानो सूर्योदयसों पश्चिम दिशामें शोभारहित चंद्रबिंब देखि श्लेषोक्तिसों वर्णन करयो जो ब्राह्मण मदिराकी रुचि इच्छा करत है ताको ईश्वर संपत्त्यादिसों हीन करत हैं ॥ १५ ॥ चहुँ भाग चारौं वीरमुक्त साधुजन ॥ १६ ॥ जा जनकदेश गे ते नगरी पुरी औ चरण प्रतिहंसपक्षीने नागरी स्त्री नहीं हैं जे प्रतिपद स्थान स्थान प्रति हंसपक्षी ओक कहे जल औ हंसक बिछुवनसों हीन है औ जहां कहे जिनमें पीन बडे पयोधर वापी कूपतडागादि औ कुचनमें जलज कमल औ मोतिनके हार समूह औ माला नहीं शोभित अर्थ सब नगरिनमें जलाशय जलयुक्त है तिनमें कमल फूले हैं औ हंस बसत हैं औ स्त्री मोतिनके माला औ बिछुवा पहिरे हैं यासों या जनायो कि विधवा नहीं है और अर्थ--जो देश तिन नगरीन औ तिन नागरिनसों युक्त है युक्तेति शेषः । जिनके प्रतिपद कहे मग राजमार्गेति औ पग चिह्न जे धूरिमें अंकित होत हैं तेई हंसपक्षी औ क जल औ बिछुवन करिहीन हैं अर्थ नगरीमें राजमार्ग छोंडि अन्यत्र हंसयुक्त जल शोभित है औ स्त्रिनके पग चिह्नहीमें बिछुवा नहीं हैं औ पगनमें सब बिछुवा पहिरे हैं ओप जहां कहे जिन नगरिनमें औ स्त्रिनमें शोभितन जलज हारन कमल समूहन औ मोतीमालनसों युक्त पीन बडे पयोधर तडागादि औ कुच हैं ॥ १७ ॥

सवैया ॥ सातहु दीपनके अवनीपति हारि रहे जियमें जब जाने । बीस बिसे व्रतभंग भयो सो कहौ अब केशवको धनु ताने ॥ शोककि आगि लगी परिपूरण आइ गये घन-श्याम बिहाने । जानकिके जनकादिकके सब फूलि उठे तरु

पुण्य पुराने ॥ १८ ॥ दोधकछन्द ॥ आइ गये ऋषि-राजहि लीने । मुख्य सतानँद विप्र प्रवीने ॥ देखि दुवौ भये पांयनि लीने । आशिष शीरषवासु लेदीने ॥ १९ ॥ विश्वामित्र-सवैया ॥ केशव ये मिथिलाधिप हैं जगमें जिन-कीरति बेलि बई है । दान कृपानविधातनसों सिगरी वसुधा जिन हाथ लई है ॥ अंग छतासक आठकसों भवती तिहु लोकमें सिद्धि भई है । वेदत्रयी अरु राजसिरी परिपूरण ता शुभ योगमई है ॥ २० ॥

टी०-घनश्याम रामचन्द्र औ सजलमेघ जैसे सजल मेघनके आगमनसों वृक्षनकी दावाग्नि बुझाती है औ हरित ह्वै जात हैं तैसे धनुष काहूसों ना उठ्यो अब सीताको ब्याह ना ह्वै है ऐसे गाढ समयमें हम कछु सहाय ना कियो यह जासों कहै ताको आगि जनकादिके पुण्य वृक्षनमें लगी रहे सो रामागमनसों धनुष उठिबो निश्चय करि बुझानी औ फूलि उठे प्रफुल्लित ह्वै उठे हरित ह्वै उठे इति ॥ १८ ॥ मुख्य जे सतानन्द प्रवीने विप्र ऋषि हैं ते राजा जनकको लीन्हें विश्वामित्रको आगे ह्वै लेवेको आइ गये विश्वा-मित्रको देखि दुवौ सतानन्द औ जनक पांयनमें लीन भये विश्वामित्र शीश सूंघी आशिष दयो ॥ १९ ॥ विश्वामित्र रामादिसों जनककी बडाई करत हैं वेदत्रयी कहे तीनोंवेद ऋग्वेद, सामवेद यजुर्वेद, तिनके अंगसों औ राजश्रीके सात अंगसों औ योगके आठ अंगसों भव जो संसार है तामें तीनीहुँ लोकमें जनककी सिद्धि काज सिद्धि भई है यासों या जनायो षडंग युक्त वेद सप्तांग युक्तराज्य अष्टांग युक्त योग साधन करत हैं वेदांगानि यथा शिक्षा १ कल्प २ व्याकरण ३ निरुक्त ४ ज्योतिष ५ छंद ६ यथोक्तं षट्पंचाशिकायां भट्टोत्पलटीकायां "शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छंदो ज्योतिषमिति" । राज्यांगानि यथा-राजा १ मंत्री २ मित्र ३ खजाना ४ देश ५ कोष ६ सैन्य ७ "स्वाम्यमात्यसुहृत्कोशं राष्ट्रदुर्गबलानिच । राजांगानी-त्यमरः" योगांगानि यथा । यम १ नियम२ आसन ३ प्राणायाम ४ प्रत्या-हार ५ ध्यान ६ धारणा ७ समाधि ८ यथोक्तं प्रबोधचंद्रोदये । यम नियमासनप्राणायामप्रत्याहारध्यानधारणासमाधयश्च ॥ २० ॥

जनक-सोरठा ॥ जिन अपनो तन स्वर्ण, मेलि तपोमय अग्निमें ॥ कीन्हों उत्तमवर्ण, तेई विश्वामित्र ये ॥ २१ ॥

लक्ष्मण-मोहनछंद ॥ जन राजवंत जग योगवंत । तिनको उदोत कैहि भाँति होत ॥ २२ ॥ श्रीराम--विजय ॥ सब छत्रिन आदि दै काहू छुई न छुये बिजनादिक बात उगे । न घटै न बढै निशिबासर केशव लोकनको तम तेज भगै ॥ भवभूषणभूषित होत नहीं मदमत्त गजादि मसी न लगै । जलहूं थलहूं परिपूरण श्रीनिमिके कुल अद्भुतज्योतिजगै॥ २३ ॥

टी०-जब विश्वामित्र जनककी स्तुति करचुके तब जनक अपने मंत्री आदिसों विश्वामित्रकी बडाई करत हैं उत्तमवर्ण ब्राह्मण औ अरुणरंग अर्थ-तपस्याकरि क्षत्रियसों ब्राह्मण भये ॥ २१ ॥ जब विश्वामित्र जनकके राज्य औ योगकी स्तुति कियो तब संदेह युक्त ह्वै लक्ष्मण पूछयो कि, जे जन जगतमें राज्य औ योग दुवौ साधत हैं ते कैसे उदयको प्राप्त होत हैं काहेते राज्य औ योग परस्पर कर्म विरुद्ध हैं ॥ २२ ॥ लक्ष्मण पूछयो कि जे जन राजवंत योगवंत हैं तिनको उदोत कैसे होत है सो सुनिकै कहिबेकी अद्भुत युक्ति मनमें प्राप्त भई तासों विश्वामित्रसों प्रथमही रामचंद्रही उदोतके हेतु कहन लगे उदोत ज्योतिको होत है तालिये ज्योतिरूप करि कहत हैं कि निमि जे जनकके पुरिखा हैं तिनके कुलकी जो ज्योति-प्रकाशकी शिखा है सो अद्भुत जगै कहे जगति है दीपित है है इति अर्थ और दीप ज्योतिके सम नहीं है सो अद्भुतता कहत हैं कि, दीप ज्योतिको और दीप ज्योति छबै सकति है अर्थ समता करि सकति है अर्थ जैसे एक दीपकी ज्योति होति है तैसी सजातीय औरहू दीपकी होती है औ या निमिकुलकी ज्योतिको आदि दै कहे आदिहीसों जबसों प्रगट भई है. अर्थ-जबसों निमिवंश भयो तबसों काहू क्षत्रिन नहीं छुयो अर्थ--समता करचो फेरि कैसी है कि और ज्योति व्यजनादि बातसों डगमगाती है यह ज्योति व्यजनादि बातसों नहीं उगति आदि पदते चामरादि जानौ अर्थ व्यजनादि बात भोगादिको सुख जामें लिप्त नहीं ह्वैसकत फेरि कैसी है कि और दीप ज्योति दिनमें घटतिहै औ यह निशिवासर कहे रात्यौंदिन घटति बढति नहीं है अर्थ--सब प्राणी जा वंशमें बराबर होत जात हैं तासों घटति नहीं औ पूर्णताको प्राप्त है तासों बढति नहीं औ और दीप ज्योतिसों थल मात्रहीको तम अंधकार दूरि होत है यासों कनकोतम तेज कहे अज्ञानको तेज दूरि होत है अर्थ-जिनके उप-

देशसों अथवा गान करेसों अथवा कथा सुनिकै लोकनके प्राणिनको अज्ञान दूरि होत हैं। ज्ञानी होत हैं फेरि कैसी है कि दीप ज्योति भवभूषण जो भस्म है तासों अर्थ गुलसों भूषित होति है औ यह भव जो संसार है ताके जे भूषन कुंडलादि हैं तिनसों नहीं भूषित होती अर्थ कुंडलादि धारण सुखमें नहीं लिप्त होती औ दीप ज्योतिमें मषी जो मसी है कज्जल रतिसों लागति है अरु यामें गजादिरूपी जो मषी है सो नहीं लागति अर्थ गजादि आरोहण सुखभोगमें लिप्त नहीं होती आदि पदते रथाश्वादि जानो औ दीप ज्योति थलहीमें पूरण रहति है औ यह जलहू थलमें परिपूरण है अर्थ-जल थलमें प्रसिद्ध है योगसों जीवन्मुक्त है तासों राज्यसुखमें लिप्त नहीं होत इति भावार्थः ॥ २३ ॥

जनक-तारक ॥ यह कीरति और न देशन सोहै । सुनिदेव अदेवनको मन मोहै ॥ हमको बपुरा सुनिये ऋषिराई । सब गांउं छसातककी ठकुराई ॥ २४ ॥ विश्वामित्र-विजय ॥ आपने आपने गैरानि तौ भुवपाल सबै भुवपालैं सदाई । केवल नामहिके भुवपाल कहावत हैं भुव पालि न जाई ॥ भूपनिकी तुमहीं धरि देह विदेहनमें कल कीरति गाई । केशव भूषणकी भवभूषण भूतनते तनया उपजाई ॥२५॥

टीका-जाप्रकार तुम वरण्यो यह कीरति और बडे राजनमें सोहति है हा लायक हम नहीं हैं ॥ २४ ॥ पतिको धर्म है स्त्रीसों पुत्र कन्या उपजाईबो सो भूमिरूपी स्त्री है तासों और काहू भूपति नहीं उपजायो तासों केवल नामहीके भूपाल भूपतिकी देह कोऊ नहीं धरे औ तुम भव संसारमें भूषणनहूंको भूषण अर्थ जाते भूषण शोभा पावत हैं अति सुन्दरी ऐसी तनया पुत्री भूतन पृथ्वीके तन देहते उपजायो तासों भूपनकी देह केवल तुमहीं धरे हो औ ताहू पर तुम्हारी कल कहे निर्दोष कीरति विदेहनमें गाई है कहावत विदेह हौ यासों या जनायो कि भोग राज्यको करत हौ यश जीवनयुक्त तपस्विनमें गायो है याते तुमसम कोऊ राजा नहीं है॥२५॥

जनक-दोहा ॥ इहिं विधिकी चितचातुरी, तितको कहा अकत्थ ॥ लोकनकी रचना रुचिर, रचिबेको सम-

रत्थ ॥ २६ ॥ सवैया ॥ लोकनकी रचना रचिबेको जहाँ परिपूरण बुद्धि विचारी । ह्वैगई केशवदास तहीं सब भूमि अकाश प्रकाशित भारी ॥ शुद्ध सलाकसमान लसी अति-रोषमई दृग दीठि तिहारी । होत भये तब सूर सुधाधर पावक शुभ्र सुधारंगधारी ॥ २७ ॥ दोहा ॥ केशव विश्वा-मित्रके रोषमई दृग जानि ॥ संध्यासी तिहुँ लोकमें; किहिनि उपासी आनि ॥ २८॥ जनक-दोधकछंद ॥ ए सुत कोनके शोभहि साजे । सुंदर श्यामल गौर विराजे ॥ जानत हौं जिय सोदर दोऊ । के कमलाविमलापति कोऊ ॥ २९ ॥

टी०-जिनके लोक रचना रचिबेकी सामर्थ्य है तिनको वचन रचना करिबो कहा है ॥ २६ ॥ परिपूरण बुद्धि कहे निश्चयबुद्धिसों बुद्धि भूमि औ आकाशमें प्रकाशित भई अर्थ-फैलत भई अथवा भूमि अकाश साहित प्रकाशित भयो प्रगट भई अर्थ सब विषय हस्तामलकवत् देखि पर्‍यो तासमय शुद्ध कहे तीक्ष्ण शलाक बाण समान तिहारी रोषमयी दृष्टि लसी तासों सूर्य सुधाकर चन्द्रमा सरिस भयो औ अग्नि अमृतके रंग भये अर्थ अति भयसो तेजहीन श्वेत भये । शलाका शल्यमदनशारिकाशल्यकीषु च ॥ छत्रादिकाष्ठे शरयोरिति " मेदिनी ॥ २७ ॥ संध्यासम अरुणनेत्र भये तट जैसे तीनों लोकमें सब दोष निवारणार्थ संध्याकी उपासना करत हैं तैसे रोष निवारणार्थ ब्रह्मादि सब उपासना करत भये अर्थ सब आधीन ह्वै स्तुति करत भये ॥२८॥ दुहुनको सम सौंदर्यादि देखि मैं जीमें जानत हौं कि ए दूनों सहोदर सगे भाई हैं औ कोऊ कहे कौनों रूपधारी कमलापति विष्णु विमलापति ब्रह्मा हैं आशय यह कि इनमें विष्णु ब्रह्मासम सौंद-र्यादि गुण हैं ॥ २९ ॥

विश्वामित्र-चौपाई ॥ सुंदर श्यामल राम सुजानों । गौर सुलक्ष्मण नाम बखानों ॥ आशिष देहु इन्हैं सब कोऊ । सूर-जके कुलमंडन दोऊ ॥३०॥ दोहा॥ नृपमणिदशरथ नृपति-के, प्रगटे चारि कुमार ॥ राम भरत लक्ष्मण ललित, अरु शत्रुघ्न उदार ॥३१॥ घनाक्षरी ॥ दानिनके शील परदानके

प्रहारी दीन दानवारिज्यो निदान देखिके सुभायके ॥ दीप दीपहूके अवनीपनके अवनीप पृथुसम केशोदास दास द्विज गायके । आनँदके कंद सुरपालकसे बालक ये परदारप्रिय साधु मन वच कायके । देहधर्मधारीपै विदेहराजजूसे राज राजत कुमार ऐसे दशरथरायके ॥ ३२ ॥

टीका--॥ ३० ॥ ३१ ॥ यामें विरोधाभास है दानी जे हरिश्चन्द्रादि राजा हैं तिनके ऐसे शील सुभाव हैं जिनके अपर जे शत्रु हैं तिनसों दान दंडके प्रहारी लेवैया हैं औ दिन प्रतिदान वारि विष्णुके जैसे सुभाय हैं ऐसे सुभायनके निदान कहे आदिकारण है अर्थ विष्णुके ऐसे शौर्यादि सुभायनको प्रगट करते हैं औ दीपक हैं प्रकाश कहँ दीपकहूके अर्थ अति कांति युक्त हैं औ अवनीपनके अवनीप राजा हैं अथवा दीप दीपके अवनीपनके अवनीप राजा हैं अर्थ सातौं द्वीपनके राजनके राजा हैं औ राजा पृथुके समान हैं औ गो ब्राह्मणके दास हैं तौ एते बडे राजाको अतिदीन गो ब्राह्मणकी सेवा विरोध है अविरोध यह गो ब्राह्मणकी सेवा क्षत्रीको उचित है परदार लक्ष्मी अथवा पृथ्वी विदेह राजकाम अथवा जन वा राजा जनकको संबोधन है दानवारि सम सुभाव कहि औ लक्ष्मी प्रिय कहि जनकको जनायो कि ये विष्णु अवतार हैं अथवा ऐसे जे दशरथराय हैं तिनके एं कुमार राजत हैं सुरपाल कैसे हैं बालकहीते ये दशरथराय जिनको वर्णन करियत हैं ॥ ३२ ॥

सोरठा ॥ जबते बैठे राज, राजा दशरथ भूमिमें । सुख सोयो सुरराज, ता दिनते सुरलोकमें ॥ ३३ ॥ स्वागताछंद ॥ राजराजदशरत्थ तनैजू । रामचन्द्र भुव चन्द्र बनैजू ॥ त्यों विदेह तुमहूं अरु सीता ॥ ज्यों चकोरतनया शुभ गीता ॥ ३४॥ तारकछंद ॥ रघुनाथ शरासन चाहत देख्यो । अतिदुष्कर राजसमाजनि लेख्यो ॥ जनक ॥ ऋषि हे वह मंदिर माँझ मगाऊं । गहि ल्यावहिं हौं जनयूथ बुलाऊं ॥३५॥ पद्धटिकाछंद ॥ अब लोग कहा करिबे अपार । ऋषिराज

कही यह बारबार ॥ इन राजकुमारहि देहु जान । सब जानत हैं बलके निधान ॥ ३६ ॥ जनक दंडक ॥ वज्रते कठोर है कैलासते विशाल कालदंडते कराल सब काल काल गावई । केशव त्रिलोकके बिलोकि हारे देव सब छोड चंद्रचूड एक औरके चढावई ॥ पन्नग प्रचंड पति प्रभुकी पनच पीन पर्व तारि पर्वत प्रमान मान पावई ॥ विनायक एकहूपै आवै न पिनाक ताहि कोमल कमल पाणि राम कैसे ल्यावई ॥ ३७ ॥

टी-यासों या जनायो कि इंद्रकी सहाय करत हैं ॥ ३३ ॥ राजनके राजा दशरथके तनय पुत्र श्रीरामचन्द्र जैसे भूतलके चन्द्रमा बने है अर्थ राजनका राजा ऐसो तौ जाको पिता है आपु चन्द्रमा सारिस सबको सुखद हैं औ चांदनी सम यशप्रकाशक है याते बडे भाग्यवान् हैं इति भावार्थः । तैसे हे विदेह ! तुमहूं औ सीता हौ अर्थ तुम राजनके राजा हो औ सीता चकोरतनया सरिस शुभ गीता हैं तौ जाको तुमसो पिता है आपु ऐसे यशको प्राप्त हैं तैसो सीताहू बडी भाग्यवती हैं इति भावार्थः । औ चकोरी-को औ चंद्रहीको प्रेम उचित है तैसे सीताको औ श्रीरामचन्द्रको है है इति व्यंग्यार्थः ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ इनको बलके निधान अर्थ बडे बलवान् सब जानत हैं औ विधान पाठ होइ तौ विधान कहे विधि जहां जा प्रकार चाहिये तहां ता प्रकार बल करवो ॥ ३६ ॥ या प्रकार जाको सब प्राणी काल कालमें कहे समय समयमें गावत हैं अथवा काल जे यम हैं तिनहू-को काल नाश कर्त्ता चन्द्रचूड महादेव प्रचण्ड जे पन्नग सर्पनके पति हैं बडे सर्प तिनहुनके जे प्रभु वासुकी हे तिनहीकी पीन कहे मोटी पनच रोदा है अथवा पन्नग प्रचंड प्रति जे वासुकी हैं तेई प्रभुकी महादेवकी पनच है आशय यह और रोदा जाको बल नहीं सहि सकत औ पर्वतादि इंद्र और जे पर्वतन कि प्रभा सदृश हैं दैत्यादि ते जाके गरुवाईके मान प्रमानको नहीं पावत औ ए कहे अकेले जो विनायक गणेश हू ल्यायो चहै तौ नाहीं आइ सकत ॥ ३७ ॥

मुनि-दोहा ॥ राम हत्यो मारीच ज्यहि, अरु ताडुका सुबाहु ॥ लक्ष्मणको यह धनुष दे, तुम पिनाकको जाहु ॥ ३८ ॥ जनक-त्रिभंगीछन्द ॥ सिगरे नरनायक असुर विनायक राक्ष-

सपति हिय हारि गये। काहु न उठायो थरु न छुडायो टरयो न टारयो भीत भये ॥ इन राजकुमारनि अति सुकुमारनि लै आयो हौं पैजकरे। व्रतभंग हमारो भयो तुम्हारो ऋषि तपते जन जानि परे ॥ ३९ ॥ विश्वामित्र-तोमर ॥ सुनि रामचन्द्र कुमार। धनु आनिये यहि बार ॥ पुनि वेग ताहि चढाव ॥ यश लोक लोक बढाव ॥ ४० ॥

टी०-जनक कोमलपाणि कहेउ ताल ए मारीचादिको वध सुनाइ कठोर पाणि जनायो ॥ ३८ ॥ असुर बाणासुरादि विनायक गणेश अथवा असुरनमें विनायक श्रेष्ठ बाणासुर औ राक्षसपति रावण पैज कहे धनुष उठाइबेमें पराक्रम करिवेको लै आये हैं अथवा पैज कहे श्रमको करिकै तुम इन्हैं ल्याये हौ अथवा पैज प्रतिज्ञा ॥ ३९ ॥ ४० ॥

दोहा ॥ ऋषिहि देखि हरषै हियो, राम देखि कुम्हिलाइ ॥ धनुष देखि डरपै महा, चिन्ता चित्त डोलाइ ॥ ४१ ॥ स्वागताछन्द ॥ रामचन्द्र कटिसों पटु बांध्यो। लीलयैव हरका धनु साध्यो ॥ नेकु ताहि करपल्लवसों छै ॥ फूल मूल जिमि टूक करयो द्वै ॥ ४२ ॥ सवैया ॥ उत्तम गाथ सनात जबै धनु श्रीरघुनाथजु हाथ कै लीनो। निर्गुणते गुणवंत कियो सुख केशव संत अनंत न दीनो ॥ ऐंचो जहीं तबहीं कियो संयुत तिच्छ कटाक्ष नराच नवीनो। राजकुमार निहारि सनेहसो शंभुको सांचो शरासन कीन्हो ॥ ४३ ॥ प्रथम टंकोर झुकि झारि संसार मद चंड कोदंड रह्यो मंडि नव खंडको। चालि अचला अचल घालि दिगपाल बल पालि ऋषिराजके वचन परचंडको ॥ सोधु दै ईशको बोधु जगदीशको क्रोध उपजाइ भृगुनंद बरिबंडको। बांधि वर स्वर्गको साधि अपवर्ग धनुभंगको शब्द गयो भेदि ब्रह्मंडको ॥ ४४ ॥

टी०-॥ ४१ ॥ कटिसों कहे कटिमें फूल मूलपोनारी लीलहिसों हरको धनु साध्यो यहौ पाठ है ॥ ४२ ॥ उत्तम गाथ कहे गान जिनको औ सनाथ

विश्वामित्र सहित गुणवन्त रोदायुक्त औ धनुष खैंचतमें तिरछी दृष्टि परति है सोई नराच बाण हैं तासों संयुत कियो राजकुमार जे रामचन्द्र हैं ते स्नेहसहित निहारिकै शंभुको शरासन सांचो " कीन्हो शरान् अस्याति क्षिपतीति शरासनः" अर्थ धन्वी शरनको चलावत है जासों तासों शरासन कहावत है सो कटाक्षरूपी शरयुक्त करि सत्य कियो ॥ ४३ ॥ धनुभंगको जो शब्द है सो चण्ड कहे प्रचण्ड जो कोदण्ड धनुष है ताको जो प्रथम टंकोर खैंचिवेको शब्द है ताके साथ ही इति शेषः ॥ यासो प्रथम टंकोर-हीके संग धनुष टूटिबो जनायो झुकि कहे कुद्ध ह्वै अर्थ क्रूरताको प्राप्त ह्वैकै संसारको मद झारिकै अर्थ संसारके सब प्राणिनको कादर कारकै नौहू खंडमें मंडि कहे छाइ रह्यो औ फेरि अचला जो पृथ्वी है औ अचल पर्व-तनको चालि कहे चलाइकै औ दिग्पाल इंद्रादिकनके बलके घालिकै अर्थ विह्वल करिकै औ रामचंद्र धनुष उठाइ हैं यह वचन विश्वामित्रको जनक प्रति रह्यो ताको पालिकै औ ईश महादेवको सोधु कहे खोज संदेश इति दैकै औ क्षीरसागरमें सोवत जे जगदीश विष्णु हैं तिन्हैं बोधि कहे जगाइ-कै औ भृगुनंदन परशुरामके क्रोध उपजायकै औ स्वर्गको बांधिकै कहैं स्वर्ग मरेमां व्याप्त ह्वैकै औ बाँधि पाठ होइ तौ स्वर्गको बाधा करिकै अर्थकी बेधिकै अथवा स्वर्गके प्राणिनको विह्वल करिकै या प्रकार ब्रह्मांडको वेधि-कै मुक्तिको साधि साधन करिकै गयो अर्थ ब्रह्मांड फोरि विष्णुलोकको प्राप्त भयो ऐसो उच्च शब्द भयो इति भावार्थः । औ रामचन्द्रके करस्पर्श-सों याही विधि सबको मुक्ति मिलति है इति व्यंग्यार्थः ॥ ४४ ॥

जनक-दोहा ॥ सतानंद आनंदमति, तुम जो हुते उन साथ॥
बरज्यो काह्य न धनुष जब, तोरचो श्रीरघुनाथ ॥ ४५ ॥
सतानंद-तोमर ॥ सुनु राजराज विदेह । जब हौं गयो वहि गेह ॥ कछु मैं न जानी बात । कब तोरियो धनु तात ॥४६॥
दोहा॥सीताजू रघुनाथको, अमल कमलकी माल ॥ पहिराई जनु सबनकी, हृदयावलि भूपाल ॥ ४७॥

टी०-॥ ४५ ॥ ४६ ॥ सीतामें सब भूपालनके हृदय लगे रहैं तिनको बेधि माल बनाइ मानौं रामचन्द्रकोंपहिरायो हृदयको कमल सदृश वर्णन है तासों ॥ ४७ ॥

चित्रपदा छंद ॥ सीय जहीं पहिराई । रामहि माल सुहाई ॥ दुंदुभि देव बजाये । फूल तहीं बरसाये ॥ ४८ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां धनुर्भंगवर्णनं नाम पंचमः प्रकाशः ॥ ५ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां पंचमः प्रकाशः ॥ ५ ॥

दोहा ॥ छठै प्रकाश कथा रुचिर, दशरथ आगम जानि ॥ लगनोत्सव श्रीरामको, व्याह विधान बखानि ॥ १ ॥ सतानंद-तोटकछंद ॥ विनती ऋषिराजकि चित्त धरौ । चहुँ भैयनके अब व्याह करौ ॥ अब बोलहु बेगि बरात सबै । दुहिता समदौ सुख पाइ अबै ॥ २ ॥ दोहा ॥ पठई तबहीं लगन लिखि, अवधपुरी सब बात ॥ राजा दशरथ सुनतहीं, चाह्यो चली बरात ॥ ३ ॥ मोटक छंद ॥ आये दशरत्थ बरात सजे । दिगपाल गयंदनि देखि लजे ॥ चार्‌यों दल दूलह चारु बने । मोहे सुर औरनि कोन गनै ॥ ४ ॥

टी०-॥ १ ॥ दशरथकी प्रभुता सुनि औ रामचन्द्रको पराक्रम देखि जनक चारौं सुतनके व्याह करिबेको विश्वामित्रसों बिनती कीन्ही सो सतानंद विश्वामित्रको समुझावत हैं कि, हे ऋषिराज ! जनककी बिनती चित्तमें धरौ समदौ । विवाहौ । २ ॥ राजा दशरथके लगनपत्री सुनतही चारौं बरातैं चलीं अर्थ चारौं बरातैं साजि राजा दशरथ व्याहिबेको चले ॥ ३ ॥ ४ ॥

तारकछंद ॥ बानि चारि बरात चहूँ दिशि आई । नृप चारि चमू अगवान पठाई ॥ जनु सागरको सरिता पगु धारी । तिनके मिलिवे कहँ बाहँ पसारी ॥ ५ ॥ दोहा ॥ बारोठेको चार करि, काहि केशव अनुरूप । द्विज दूलह पहिराइयो, पहिराये सब भूप ॥ ६ ॥ त्रिभंगीछंद ॥ दश-

रत्थ संघाती सकल बराती बनि मंडपमाहँ गये । आकाश-विलासी प्रभाप्रकाशी जलजगुच्छ जनु नखत नये ॥ अति सुंदर नारी सब सुखकारी मंगल गारी देन लगीं । बाजे बहु बाजत जनु घन गाजत जहां तहां शुभ शोभ जगीं ॥७॥ दोहा ॥ रामचन्द्र सीतासहित, शोभत हैं त्याहिं ठौर । सुवरणमय मणिमय खचित, शुभ सुंदर शिर मौर ॥ ८॥

टीका--एकही दिशासों चारौं बरातें आवतीं तौ एक एक बरातकी अगवानीमें बेर होती व्याहकी लगन टरिजाती तासों एकहि बार अगवानी होवेके लिये चारौं बरातें चारों दिशा ह्वै आईं सागरसरिस राजा जनक हैं सरिता सरिस चारों बरातें हैं बाँह सरिस अगवानीकी चारों चमू हैं॥ ५ ॥ बारोठेको चार कहे द्वारपूजा अनुरूप यथोचित पहिराइ यो पदते भूषण वस्त्र पहिराइयो जानो ॥ ६ ॥ बारोठेको चार करि जनवासमंदिरको गये इति कथाशेषः । जनवास मंदिरते भांवरि करिबेके लिये मंडप कहे मौंडवमें गये सो मंडप कैसो है आकाशविलासी कहे आकाशको ऐसो है विलास कौतुक जाको अर्थ अति दीर्घ अति उच्च है औ आकाशमें नक्षत्र हैं इहां झालरनमें लगे प्रभाप्रकाशी कहे अति शोभायुक्त जे जलजमोतिनके गुच्छ हैं तेई नये नवीन नक्षत्र हैं ॥ ७ ॥ खचित कहे चित्रित ॥ ८ ॥

षट्पद ॥ बैठे मागध सूत विविध विद्याधर चारण । केशव दास प्रसिद्ध सिद्ध शुभ अशुभ निवारण ॥ भरद्वाज जाबालि अत्रि गौतम कश्यप मुनि । विश्वामित्र पवित्र चित्रमति वामदेव पुनि ॥ सब भांति प्रतिष्ठित निष्ठमति तहँ वाशिष्ठ पूजत कलश । शुभ सतानंद मिलि उच्चरत शाखो-च्चार सबै सरस ॥ ९ ॥ अनुकूलछंद ॥ पावक पूज्यो समिध सुधारी । आहुति दीनि सब सुखकारी ॥ दै तब कन्या बहु धन दीन्हों । भाँवरि पारि जगत यश लीन्हों ॥ १० ॥ स्वागताछन्द ॥ राजपुत्र कानिसों छबि छाये । राजराज सब डेरहि आये ॥ हीर चीर गज बाजि लुटाये । सुंदरीन

बहु मंगल गाये ॥ ११ ॥ सोरठा ॥ वासर चौथे याम, सतानंद आगू दिये ॥ दशरथ नृपके धाम । आये सकल विदेह बनि ॥ १२ ॥ भुजंगप्रयातछंद ॥ कहूँ शोभना दुंदुभी दीह बाजैं । कहूँ भीम भंकार कर्नाल साजैं ॥ कहूँ सुंदरी बेनु बीना बजावैं । कहूँ किन्नरी किन्नरी लै सुगावैं ॥ १३ ॥ कहूं नृत्यकारी नचैं शोभ साजैं । कहूँ भांड बोलैं कहूँ मल्ल गाजैं ॥ कहूँ भाट भाट्यो करैं मान पावैं । कहूँ लोलिनी बेडिनी गीत गावैं ॥ १४ ॥ कहूँ बैल भैंसा भिरैं भीम भारे । कहूँ एण एणीनके हेत कारे ॥ कहूँ बोक बाँके कहूँ मेष शूरे । कहूं मत्त दंती लरैं लोह पूरे ॥ १५ ॥

टीका—मागध वंशावली वर्णन करैया सूत स्तुति करैया चारण प्रेष्य ए भाटकी जाति हैं शुभ अशुभ निवारण कहे शुभमें अशुभके निवारण मेटनहार निष्ठमति कहे उत्तम मति ॥ ९ ॥ सामिध होमकी लकरी ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ वासरके चौथे याम कहे तीनि पहर दिन बीतेके उपरांत दशरथके धाम कहे जनवासमंदिरमें विदेह कहे जनकके गोत्री ॥ १२ ॥ तीनि छंदको अन्वय एक है राजा दशरथके फौजमें ऐसो कौतुक देखत भये किन्नरी सारंगी ऐनी हरिणीनसों हेत करियत हरिण परस्पर भिरत हैं भिरत पदको अनुषंग एतहूमें है मेष भेडा लोह पूरे जंजीरहूको पहिरे अथवा वीरतासों युक्त ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

दोहा ॥ आगे ह्वै दशरथ लियो, भूपति आवत देखि ॥ राज राज मिलि बैठियो, ब्रह्म ब्रह्मऋषि लेखि ॥ १६ ॥ सतानंद शोभनाछंद ॥ सुनि भरद्वाज वाशिष्ठ अरु जाबालि विश्वामित्र । सबै हौ तुम ब्रह्मऋषि संसार शुद्ध चरित्र ॥ कीन्हों जो तुम या वंशपै काहि एक अंशन जाइ । स्वाद कहिवेको समर्थ न गूँग ज्यों गुर खाइ ॥ १७ ॥ अन्यच्च—सुखदाछंद ॥ ज्यों अतिप्यासो पावै मगमें गंगाजलु ॥ प्यास न एक बुझाई बुझै त्रैताप बलु ॥ त्यों तुमते हमको न

भयो अब एक सुख ॥ पूजैं मनके काम जो देख्यो राममुख ॥ १८ ॥

टी०-राजर्षि दशरथादि राजर्षि जनकादिकनसों मिलिकै बैठे ब्रह्मर्षि वशिष्ठादि ब्रह्मर्षि सतानन्दादिकनसों मिलिकै बैठे ऋषिपदकी अनुषंग-राजपद हम है ॥ १६ ॥ संसारमें शुद्ध है चरित्र जिनको अथवा संसारको शुद्ध कर्त्ता है चरित्र जिनको अर्थ जिनके चरित्र कहि सुनि संसारके प्राणी शुद्ध होतहैं ॥ १७ ॥ जैसे मगमें अति प्यासो प्राणी जलमात्रको चाहत है औ वह भाग्ययोगते गंगाजल पावै तौ वाकी एक प्यासही नहीं बुझाति दैहिक दैविक भौतिक जे तीनों ताप हैं तिनको बल बुझात है अर्थ त्रयताप दूरि होत हैं तैसे केवल धनुष चढावै ताहीको ब्याह करिये हमारी इतनी प्रतिज्ञा पूर्वक इच्छा रही सो तुमते हमको केवल व्याह इच्छा पूर्ण रूपही सुख नहीं भयो रामचन्द्रको मुख देखि रूप बल विद्या कुलादिके काम अभिलाष पूजे पूर्ण भये ॥ १८ ॥

जनक-सवैया ॥ सिद्धसमाज सजैं अजहूँ न कहूं जग योगिन देख न पाई । रुद्रके चित्त समुद्र बसै नित ब्रह्मदुपै बरणी जो न जाई ॥ रूप न रंग न रेषविशेष अनादि अनन्त जो वेदन गाई । केशव गाधिके नन्द हमैं वह ज्योति सो मूरतिवंत देखाई ॥ १९ ॥ अन्यच्च तारकछंद ॥ जिनके पुरिषा भुव गंगहि ल्याये । नगरी शुभ स्वर्ग सदेह सिधाये ॥ जिनके सुत पाहनतें तिय कीनी । हरको धनुभंग भ्रमें पुर तीनी ॥ २० ॥ जिन आपु अदेव अनेक सँहारे । सब काल पुरन्दरके रखवारे ॥ जिनकी महिमाहि अनंत न पायो । हमको बपुरा यश वेदनि गायो ॥ २१ ॥ बिनती करिये जन जो जिय लेखो । दुख देख्यो जो कालिह त्यों आजहु देखो । यह जानि हिये ढिठई मुख भाषी । हम हैं चरणोदकके अभिलाषी ॥ २२ ॥

टी०-रुद्र महादेवके चित्तरूपी समुद्रमें जो बसति है अर्थ जाको महादेव आराधन करते हैं ॥ १९ ॥ तीनि छंदको अन्वय एक है भगीरथ-

सगरके सुतनके तारिबेको गंगाको ल्याये हैं औ हरिश्चन्द्र नगरी अयोध्यासहित स्वर्गको गये दुवै कथा प्रसिद्ध हैं औ जिनके सुत रामचन्द्र गौतिमीको पाहनसों स्त्री कीन्हों औ हरका धनुष भंग कीन्हों जा धनुषमें तीनि पुर कहे तीनि लोक भ्रमें अर्थ जा धनुषको तीनों लोकके प्राणिन उठायो ना उठ्यो तब भ्रमें कहे संदेहको प्राप्त भये अथवा ऐसी अवस्थामें ऐसो धनुष तोर्‌यो यासों तीनहुं लोक भ्रमें औ आपु कैसे हैं कि जिन अनेक अदेव दैत्यनको मार्‌यो है औ सदा पुरन्दर इन्द्रकी रक्षा करतहौ यासों या जनायो कि ऐसे उद्धत कर्म करिबेको तुम्हारे घरकी परम्पराकी रीति है अनंतशेष औ जिनकी महिमा महि अंत न पायो पाठ होई तौ महीभरेके प्राणिन जिनकी महिमाको अंत नहीं पायो यह विनती करियत है हमको अपने जन सेवकके समान जियमें लेखो कहे जानौं औ जैसे कालिह हमारे इहां बास करि दुःख देख्यो है तैसे आजहूं देखो अर्थ आजहू बास करौ हम चरणोदक कहे चरण जलके अभिलाषी हैं तासों एती ढिठाई मुखसों भाख्यो है यह तुम जीमें जानि कहे जानौं चरणोदकके अभिलाषी कहि या जनायो कि हमारे घरमें चलि भोजन करौ जाते हम चरण धोइ चरणोदक लेईं जाते हमारे गृहादि पवित्र होईं या भांति निमंत्रण दियो ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

तामरसछन्द ॥ जब ऋषिराज विनय करि लीनों । सुनि सबके करुणारस भीनों ॥ दशरथराय यहै जिय जानी । यह वह एक भई रजधानी ॥ २३ ॥ दशरथ–दोहा ॥ हमको तुमसे नृपतिकी, दासी दुर्लभ राज । पुनि तुम दीनी कन्यका, त्रिभुवनकी शिरताज ॥ २४ ॥ भारद्वाज-तामरछंद ॥ सुखदुख आदि सबै तुम जीते । सुरनरकी बपुरा बल रीते ॥ कुलमहँ होहिं बडो लघु कोई । प्रतिपुरुषानि बडो सो बडोई ॥ २५ ॥

टी०–ऋषि सतानन्द राजा जनक ॥ २३ ॥ २४ ॥ अतिबली जे दुःख सुखादि हैं आदि पदने काम क्रोधादिहू जानौं तिनहींको तुम जीते हौ अर्थ दुःख सुखादिके वश्य नहीं हौ तौ बल करिकै रीते कहे खाली बपुरा कहे दीन जे सुर औ नर हैं ते तुमको जीतिबेको कहे कहा है औ कुलमें चाहौ प्रतापादि करि बडो होइ चाहै छोटोई जो प्रति पुरुषन बडो होत

है सो बडोई रहत हैं यासों या जनायो कि जो प्रति पुरुष बडो है ताके कुलमें लघुहु होइ तौ बडो है औ तुमप्रति पुरुषानहूं बडे हौ औ तुम्हारे दुःख सुखादि जीतिबेकी सामर्थ्य है तासों तुम समान कोऊ नहीं है अथवा और कोई अपने कुलमें बडो लघु होत है अर्थ कोऊ प्राणी बडो भयो कोऊ छोटो भयो औ कोई कहे जनक प्रति पुरुषान बडो सो बडो कहे बडेते बडे हैं अर्थ इनके कुलमें क्रमसों एकते एक बडे होत आवत हैं ॥ २५॥

वशिष्ठ-विजयछंद ॥ एक सुखी यहि लोक विलोकि ये हैं वहि लोकनि रै पगु धारी । एक इहां दुख देखत केशव होत वहां सुरलोकविहारी ॥ एक इहांऊ उहां अतिदीन सो देत दुहूं दिशिके जन गारी । एकहि भाँति सदा सब लोकनि है प्रभुता मिथिलेश तिहारी ॥ २६ ॥ जाबालि-विजयछंद ॥ ज्यों मणिमय अति ज्योति हुती रवितें कछु और महाछवि-छाई । चंद्रहि बंदत हैं सब केशव ईशते वंदनता अति पाई ॥ भागीरथी हुति पै अतिपावन बावनते अति पावन-ताई । त्यों निमि वंश बडोई हतो भइ सीयसँयोग बडीय बडाई ॥ २७॥ विश्वामित्र-मालिनीछन्द ॥ गुणगणमणि-माला, चित्तचातुर्यशाला ॥ जनकसुखद गीता, पुत्रिका पाइ सीता ॥ अखिलभुवनभर्त्ता, ब्रह्मरुद्रादि कर्त्ता ॥ थिर चर अभिरामी, कीय जामातृ नामी ॥ २८ ॥ दोहा ॥ पूजि राजऋषि ब्रह्मऋषि; दुंदुभि दीन्हि बजाइ । जनक कमकमन्दिर गये, गुरुसमेत सुख पाइ ॥ २९ ॥

टी०-॥ २६ ॥ ईश महादेव ॥ २७ ॥ जनक संबोधन है गुणगजरूपी जे मणिमुक्तादि हैं तिनकी माला है अर्थ अनेक गुणनसों युक्त है औ चित्तको जो चातुर्य चातुरी है ताकी शालादार है अथवा चित्त है चातु-र्यको शाला जाको अथवा चित्तकी चातुर्यसे शाला कहे गृह्यो है औ सुखद है गीता गान जाको अर्थ जाको गान करे सुने सबके सुख होत हैं ऐसी सीता नामा पुत्रिकाको पाइकै अथवा ये तीनों लक्ष्मीके विशेषण हैं विशेषण नहीं सो लक्ष्मी जनायो कि ऐसी जो लक्ष्मी हैं ताको

सीता नामा पुत्रिका पाइकै आखिल सम्पूर्ण भुवन कहे चौदहों भुवनक भर्त्ता पोषक औ ब्रह्म रुद्रादिके कर्त्ता औ थिर वृक्षादि चर मनुष्यादि सबमें आभिरामी कहे बास कर्त्ता अथवा शोभा औ नामी कहे यशी ऐसो जामातु तुम कीय कहे करचो जैसे तीनों विशेषणनसों लक्ष्मी जनायो तैसे चारचों विशेषणनसों बिष्णु जानो तो लक्ष्मीजीकी पुत्रिका भई औ विष्णु जामातु भये तासों अति भाग्यवान् हौ इति भावार्थः । अथवा विश्वामित्र कहते हैं कि जनक सुखद जे ईश्वर हैं जिन करिके गीता कहे गाई अर्थ जाको बिष्णुहू गान करत हैं यासों लक्ष्मी जनायो और अर्थ एकहि है ऐसी जो सीता नामा तुम्हारी पुत्रिका है ताको हम पायो आ सों जामातु तुम कीय कहे करचो यासों या जनायो कि दोनों तरफ बडा लाभ भयो ॥ २८ ॥ २९ ॥

चामरछंद ॥ आसमुद्रके क्षितीश और जाति को गने । राजभौम भोजको सबै जने गये बने ॥ भाँति भाँति अन्न पान व्यंजनादि जेंवहीं । देत नारि गारि पूरि भूरि भूरि भेवहीं ॥ ३० ॥ हरिगीतकाछंद ॥ अब गारि तुम कह देहिं हम काहि कहा दूलह रामजू । कछु बाप प्रिय परदार सुनियत करी कहत कुवामजू ॥ को गने केतने पुरुष कीन्हें कहत सब संसारजू । सुनि कुँवर चितदे वराणि ताको कहिय सब व्योहारजू ॥ ३१ ॥

टी०--औ समुद्र कहे पर्यंतके अर्थ पृथ्वीभरेके भूरि भूरि भेवहीं कहे अनेक भेदसों ॥ ३० ॥ सात हरिगीतछंदको अन्वय एक है यामें श्लेषसों आशीर्वादात्मक व्याजस्तुति है परदार कहे परस्त्री उत्कृष्ट दार कुवाम कुत्सित वाम औ कु कहे पृथ्वीरूपवाम व्योहार कहे संबन्ध मित्रता इति कुवाम पक्ष रत्नाकर कहे अनेक रत्नयुक्त पृथ्वी ये छः समुद्र शीश पश्चिमहूकरिकै औ पांय पूरुब करिके प्रलयकालके उपरांत जब शेषके फणि कहे फणनिकी मणिमाला मणिसमूहकी पलिका अथवा शेष जे फणि कहे सर्प है तिनकी मणिमालाकी पलिकामें परति पौढति है तब अनेक पुरुषनके युद्धादि कराई ग्रहण त्यागरूप प्रबन्ध कियो करति है गात है सहजेही सुगंध युक्त जाके 'गंधवती पृथ्वीति न्यायशास्त्रोक्तत्वात् ।' ज्या प्रबंधसो हिरण्याक्षादि जो पुरुषकरचो सो क्रमही गनायो सरवस कहे सब सार कहे रसस्वादेति औ द्रव्यभ्रमि कहे भूलिहूकै ज्यों कहे जाते और पतिको मुख

न निरखै त्यो कहे ता प्रकारसों तुम ताको राखियो जा स्त्रीको दशरथ राख्यो ताको तुम राखियो यह परिहास है औ ताही पृथ्वीकी रक्षा तुम करियो यह आशीर्वाद है ॥ ३१ ॥

बहु रूपसों वनयों बना बहु रत्नमय वपु मानिये । पुनि वंश रत्नाकर बन्यो अति चित्त चंचल जानिये ॥ शुभ शेष फणिमणिमाल पालिका परति करति प्रबंधजू । करि शीश पश्चिम पाँय पूरब गात सहज सुगंधजू ॥ ३२ ॥ वह हरी हठि हरिनाक्ष दैयत देखि सुंदर देहसों । बरबीर यज्ञवराह बरही लई छीनि सनेहसों ॥ ह्वैगई विह्वल अंग पृथु फिरि सजे सकल शृँगारजू । पुनि कछुक दिन वश भई ताके लियो सरवस सारजू ॥ ३३ ॥ वह गयो प्रभु परलोक कीन्हों हिरणकश्यप नाथजू । तेहि भाँति भाँतिन भोगयो भ्रमि पल न छोंड्यो साथजू ॥ वह असुर श्रीनरसिंह मारयो लई प्रबल छडाइकै । लैदई हरि हरि चंदराजहिं बहुत जो सुख पाइकै ॥ ३४ ॥ हरिचन्द्र विश्वामित्रको दइ दुष्टता जिय जानिके । तेहि बरो बलि बरिबंड बरहीं विप्र तपसी जानिके ॥ बलि बांधि छल बल लई बावन दई इंद्रिहि आनिके । तेहि इंद्र तजि पति करयो अर्जुन सहसभुज-को जानिके ॥ ३५ ॥ तब तासु मद छबि छक्यो अर्जुन हत्यो ऋषि जमदग्निजू । परशुराम सो सकुल जारयो प्रबल बलकी अग्निजू । तेहि बेर तबहीं सकल क्षत्रिन मारि मारि बनाइकै । इक बीस बेरा दई विप्रन रुधिर जल अन्ह-वाइकै ॥ ३६ ॥ वह रावरे पितु करो पत्नी तजी विप्रन थूंकिकै । अरु कहत हैं सब रावणादिक रहे ताकहँ ढूँढिकै ॥ यहि लाज मरियत ताहि तुमसों मयो नातो नाथजू । अब आरै मुख निरखैं न ज्यों त्यों राखियो रघुनाथजू ॥ ३७ ॥ सोरठा ॥ प्रात भये सब भूप, बनि बनि मंडपमें गये ॥ जहाँ

रूप अनुरूप, ठौर ठौर सब शोभिजैं ॥३८॥ नाराचछन्द ॥ रची विरंचि वाससी निथम्बराजिका भली । जहाँ तहाँ बिछावने बने घने थली थली ॥ वितान श्वेत श्याम पीत लाल नीलका रँगे । मनो जहूँ दिशानके समान बिम्बसे जगे ॥३९॥

टी०—॥३२॥ ३३॥ ३४॥ ३५॥ ३६॥ ३७॥ रूप जो सौंदर्य है ताके अनुरूप सदृश अर्थ अति सुंदर ॥ ३८ ॥ जा मंडपमें विरञ्चि जे ब्रह्मा है तिनके बासगृहकी ऐसी निथंभ कहे थंभनकी राजिका पंगति रची है अर्थ ब्रह्माके मंदिर सदृश मंडप बन्योहै विचित्रबाससीनि पाठ होइ तौ विचित्र वाससीनि कहे विचित्र वस्त्रन करिकै अर्थ परदान करिकै थंभराजिका रची है बनी है अर्थ अनेक रंगके परदा लगे हैं वितान चँदोवा श्याम कहे बैंजनी नीलिका जो लील है तासों रंगे हरिण जानो मानो भू आकाश जे दूनो दिशा हैं तिनके परस्पर समान बिंब कहे प्रतिबिंबसे जने हैं अर्थ भूमें जे बिछाबने हैं तिनके प्रतिबिंब आकाशमें जगे हैं औ आकाशमें बितानहैं तिनके प्रतिबिम्ब भूमें जगे हैं यासों या जानो जहाँ जा रंगको बितान तन्यो है तहां ताही रंगके बिछावने हैं "बिंबन्तु प्रतिबिम्बेपि" इति मेदिनी ॥ ३९ ॥

पद्धटिकाछन्द ॥ गजमोतिनकी अवली अपार । तहँ कलशनपर उर मति सुढार । शुभ पूरित रति जनु रुचिर धार । जहँ तहँ अकाशगंगा उदार ॥ ४० ॥ गजदन्तनकी अवली सुदेश । तहँ कुसुमराज राजत सुवेश ॥ शुभ नृपकुमारिका करति गान । जनु देविनके पुष्पकविमान ॥ ४१ ॥ तामरसछन्द ॥ इत उत शोभित सुन्दरि डोलैं । अर्थ अनेकनि बोलनि बोलैं ॥ सुखमुखमंडल चित्तनि मोहैं । मनहुँ अनेक कलानिधि सोहैं ॥ ४२ ॥ भ्रुकुटिविलास प्रकाशित देखे । धनुष मनोज मनोमय लेखे ॥ चरचित हास चन्द्रिकनि मानो । सुखमुखवास निवासित जानो ॥ ४३ ॥

टी०—मण्डपकी रति कहे प्रीतिसों पूरिब मानों रुचिर धार कहे प्रबाहन करिकै मण्डपमें जहां तहां उदार सुन्दर आकाशगंगा है अर्थ

गजमोतिनकी माला हैं ते मानो अनेक धारा ह्वै मण्डपमें आकाशगंगा राजती हैं ॥ ४० ॥ गजदन्त जे टोडा हैं तिनकी अवली सुदेश कहे सुन्दर रौसयुक्त बनी हैं आकाशमें वर्त्तमान विमान सदृश गजदन्तके रौसहैं देवी सारस नृपकुमारिका है ॥ "नागदन्तो हस्तिदन्ते गेहान्निःसृतदारुणि" इत्यभिधानचिन्तामणिः ॥ ४१ ॥ कलानिधि चन्द्रमा ॥ ४२ ॥ मानो मनोजमय कहे मनोज प्रधान मनोज जो कन्दर्प है सोई है प्रधान देवता जिनके ऐसे धनुष हैं अर्थ मानो कामके धनुष हैं यह लेखे कहे ठहरायो है अथवा मनोमय कहे अनेक मनन करिकै युक्त अर्थ सुन्दरतासों जिनमें अनेक मन बसे हैं ऐसे मनोजके धनुष हैं चर्चित पूजित युक्तेति सुख कहे स्वाभाविक ॥ ४३ ॥

दोहा ॥ अमल कपोलै आरसी, बाहू चम्पक मार ॥
अवलोकनै विलोकियें, मृगमदमय धनसार ॥ ४४ ॥
गतिको मार महावरे, अंग अंगको भार ॥ केशव नख
शिख शोभिजै, शोभाई शृंगार ॥ ४५ ॥ सवैया ॥ बैठे
जराय जरे पलिका पर राम सिया सबको मन मोहै ।
ज्योतिसमूह रहे मढिकै सुर भूलि रहे बपुरो नर को है ॥
केशव तीनिहुँ लोकनकी अवलोकि वृथा उपमा कवि टोहै ।
शोभन सूरज मंडल मांझ मनो कमला कमलापति सोहै ॥ ४६ ॥ दोहा ॥ गंगाजलकी पाग शिर, सोहत
श्रीरघुनाथ ॥ शिवशिर गङ्गा जल किधौं, चन्द्र चन्द्रिका
साथ ॥ ४७ ॥ तोमरछन्द ॥ कछु भ्रुकुटि कुटिल सुवेश ।
अति अमल सुनिल सुदेश ॥ विधि लिख्यो शोधि सुतंत्र
जनु जयाजयके मंत्र ॥ ४८ ॥

टी०—॥ ४४ ॥ ४५ ॥ टोहैं कहे खोजत हैं ॥ ४६ ॥ गंगाजल कपरा पश्चिममें प्रसिद्ध है तो बडे लोग व्याह समयहीमें पीत पाग बांधत हैं औ यह बिदाके रोजको वर्णन है तासों श्वेत पाग कह्यो अथवा चौदहवें प्रकाशमें कह्यो है कि ॥ " समुझ न सूरप्रकाश । आकाशबलित विलाश ॥ पुनि ऋक्षलक्षनि संग । जनु जलधिगंग तरंग ॥" औ पन्द्रहवें प्रकाशमें कह्यो है

कि, "बीच बीच हैं कपीश बीच बीच ऋक्षजाल । लंक कन्यका गरे कि पीत नील कण्ठमाल ॥" तौ पीत बानरनको गंग तरंगसम कह्यो तैसे ह्याँऊं पीत पागको गंगाजल सम कह्यो तासों श्वेत पीतकी औ हरित श्यामकी कहूं समता करत हैं यह कविनियम है ॥ ४७ ॥ सुमिल चिक्कण सुदेश सुन्दर सुतंत्र कहे स्वच्छंद जे विधि हैं तिन लिख्यो है अथवा सुष्ठु जो तंत्रशास्त्र है तासों शोधिकै ढूँढिकै अथवा शुद्ध करिकै मानो विधातैं जाके पास होइ ताके जयको शत्रुके अजयको मंत्र लिख्यौ है अथवा जायके अर्थ अजय कहे काहूके जीतिवे योग्य नाहीं ऐसे जे श्रीरामचन्द्र हैं तिनको जय कहे जीतिको मंत्रविधि लिखि दियो है जासों रामचन्द्र सबको जीतत है वश्य करत है अथवा जया जो पार्वती हैं तिनहूंके जयको जीतिवेको लिख्यो है यासों या जनायो पतिव्रतमें अग्रगणनीय जे पार्वती हैं तेऊ जिनको देखि वश्य होयँ तो और स्त्री पुरुषकी कहाँ बात है आशय कि अति सुन्दर हैं " जयाजयन्तीतिथिमित्यथोमा तत्सखीषु च । " इति मेदिनी ॥ ४८ ॥

दोहा ॥ यदपि भ्रुकुटि रघुनाथकी, कुटिल देखियत ज्योति ॥ तदपि सुरासुर नरनकी, निरखि शुद्ध गति होति ॥ ४९ ॥ श्रवण मकरकुण्डल लसत, मुखसुखमा एकत्र ॥ शशि समीप सोहत मनो, श्रवण मकरनक्षत्र ॥ ५० ॥ पद्धटिका छन्द ॥ अति वदनशोभ सरसी सुरंग । तहँ कमल नयन नासा तरंग॥जनु युवति चित्त विभ्रम विलास । तेइ भ्रमर भँवत रस रूपआस ॥ ५१ ॥

टी०--मानो शशिके समीप कहे दोनों ओर निकट उदित है श्रवण नक्षत्रमें है मकरराशि शोभित हैं नक्षत्र पदको सम्बध श्रवणमो है अथवा श्रवणमो मकरराशि स्वरूपके नक्षत्र कहे तारा मकरराशि स्वरूपेति शोभित हैं युक्ति यह कि, उत्तराषाढ श्रवण धनिष्ठा तीनि नक्षत्रनमें मकरराशिको वास है सो मानो श्रवणहीमें वर्त्तमान है शशिके दुवौ ओर शोभित है श्रवण नक्षत्रकी औ कर्णकी शब्दसाम्य है औ मकरराशिकी औ कुण्डलको रूप साम्य है शशि सदृश मुख है ॥ ४९ ॥ ५० ॥ सरसी तडाग सुरंग निर्मल रामचन्द्रके नेत्रशोभामें भ्रमते हैं विलास कौतुक

जिनको ऐसे जे युवतिनके चित्त हैं तेई भ्रमर भँवत हैं रस मकरन्दरूपी जो रूप शोभा है ताकी आशासों अर्थ जैसे मकरन्दकी आश करि तडागमें भँवर भँवत हैं तैसे रूपकी आश करि रामचन्द्रके मुखपर स्त्रीनके चित्त भ्रमत हैं ॥ ५१ ॥

निशिपालिका छन्द ॥ शोभि जति दन्तरुचि शुभ्र उर आनिये । सत्य जनु रूप अनुरूपक बखानिये ॥ ओंठ रुचि रेख सविशेष शुभ श्रीरये । शोधि जनु ईश शुभ लक्षण सबै दये ॥ ५२ ॥ दोहा ॥ ग्रीवा श्रीरघुनाथकी, लसति कम्बु वर वेष॥साधु मनो बच कायकी, मानो लिखी त्रिरेष॥५३॥ सुन्दरीछन्द ॥ शोभन दीरघ बाहु विराजत । देव सिहात अदेवते लाजत ॥ बैरिनको अहिराज बखानहुँ ॥ है हितकारिनकी ध्वज मानहुँ ॥ ५४ ॥ यों उरमें भृगुलात बखानहुँ । श्रीकरको सरसीरुह मानहुँ ॥ साहात है उरमें मणि यो जनु । जानकीको अनुरागि रह्यो मनु ॥ ५५ ॥ दोहा ॥ सोहत जन रत राम उर, देखत जिनका भाग ॥ आइ गयो ऊपर मनो, अन्तरको अनुराग ॥ ५६ ॥

टीका-शुभ्र श्वेत सत्य कहे निश्चय जानो रूपसुन्दरताके अनुरूपक कहे प्रतिमा बखानियत है अथवा जानो सत्य जो पदार्थ है ताके रूपके अनुरूपक प्रतिमा है सत्यको रूप श्वेत है ॥ ५२ ॥ कंबु शंख मनसा वाचा कर्मणा करिकै जो रामचन्द्र साधु हैं तिन तीन्योंकी मानों बिधातैं तीनि रेखा लिखि दियो है निश्चय बातको रेखा खींचि काहिबेकी रीति लोकमें प्रसिद्ध है ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ रामचन्द्रके उरमें लक्ष्मी वास किये हैं ताके करको मानो कमल है मणि कौस्तुभ मणि अनुरागकी मन सदृश कह्यो तासों अरुण जाना ॥ ५५ ॥ ताही मणिकी फेरि उत्प्रेक्षा करत हैं जन जे दास हैं तिनमें रत कहे संलग्न जो अनुराग रामचन्द्रके उरमें शोभित है सो बाढिकै उर अन्तरतें मानो ऊपर आइ गयो है ताको जे देखत हैं तिनको बडो भाग है ॥ ५६ ॥

पद्धटिकाछन्द ॥ शुभ मोतिनकी दुलरी सुदेश । जनु वेदनके अक्षा सुवेश ॥ गजमोतिनकी माला विशाल । मन-मानहुँ सन्तनके मराल ॥५७॥ विशेषकछन्द ॥ श्याम दुवौ पग लाल लसै द्युति यों तलकी । मानहुं सेवति ज्योति गिरा यमुनाजलकी ॥ पाट जटी अति श्वेतसों हीरनकी अवली । देवनदीकन मानहुँ सेवत भाँति भली ॥५८॥ दोहा ॥ को विरणै रघुनाथछबि केशव बुद्धि उदार ॥ जाकी किरपा शोभि जति, शोभा सब संसार ॥ ५९ ॥ दण्डक ॥ को है दमयन्ती इन्दुमती रति राति दिन होहि न छबीली छबि इन जो शृंगारिये । केशव लजात जलजात वेद ओप जात रूप बापुरे बिरूप सीता जो निहारिये ॥ मदननि रूप मनि रूप मनि रूपननि रूप भयो चन्द्र बहु रूप अनुरूप के विचा-रिये । सीताजूके रूप पर देवता कुरूप को हैं रूपहीके रूपक तौ वारि वारि डारिये ॥ ६० ॥

टीका—मरालहंस ॥ ५७ ॥ या प्रकार मानो त्रिवेणी रामचन्द्रके चरण सेवित है पाठ पदश्लेष है रेशम औ दुवौ कूलको अंतर ॥ ५८ ॥ बद्धितुसार पाठ हो तौ बुद्धि है तुसार हेवार सम क्षण भंगुर जाकी ॥ ५९ ॥ दमयन्ती नलकी स्त्री इन्दुमती अजकी स्त्री रति कामकी स्त्री इनको राति दिन शृंगारिये तौ सीताकी छबि समान इनकी छबि ना होइ जातवेद अग्नि जातरूप सुवर्ण निरूपम कहे जाके ऊपमा कोऊ नहीं अर्थ अति सुन्दर जो मदन है सो सीताजूके रूप समताके निरूपणमें निर्णयमें लाजसों निरूप कहे निःस्वरूप निर्देहोति भयो औ घटि बाढिकै अनेक रूपको धर्ता जो चन्द्र है ताको अनुक्रमकै कहे असदृशै विचारियत है रूप जो सौंदर्य है ताहीके रूपक कहे साम्यको वारिवारि डारियत है ॥ ६० ॥

गीतिका छन्द ॥ श्री शोभिजे सखि सुन्दरी जनु दामिनी वपु मंडिकै । घनश्यामको जनु सेवहीं जड मेघ ओ घन छंडि-

के ॥ यक अंग चर्चित चारु नन्दन चन्द्रिका तजि चन्दको ।
जनु राहुके भयसे वही रघुनाथ आनँदकंदको ॥ ६१ ॥ मुख
एक है नत लोल लोचन लोग लोचनकी हरे । जनु जानकी
सँग शोभिजै शुभ लाज देहनको धरे ॥ तहँ एक फूलनके
विभूषण एक मोतिनके किये । जनु क्षीरसागर देवतातन
क्षीरछीटनिको छिये ॥ ६२ ॥ सोरठा ॥ पहिरे वसन सुरंग,
पावक युत स्वाहा मनो ॥ सहज सुगन्धित अंग, मानो देवी
मलयकी ॥ ६३ ॥ चामर छंद ॥ मत्त दन्तिराजराजि बाजि
राजराजिकै । हेम हीरमुक्त चीर चारु साज साजिकै ॥ वेष
वेष बाहिनी अशेष वस्तु सोधि यो । दाइ जो विदेहराज भाँति
भाँतिको दियो ॥ ६४ ॥ वस्त्र भौनस्यो वितान आसने
बिछावने । अस्त्र शस्त्र अंगनात्र भाजनादिको गने ॥ दास
दास बासि बास रोमपाटके कियो । दाइ जो विदेहराज
भांति भांतिको दियो ॥ ६५ ॥

टी०-बपुमंडिक यह चंद्रिकाहूमें जानौ ॥ ६१ ॥ एकनके मुख नत कहे लाजसों नीचेको नये हैं ते लोल लोचन करिकै लोक लोचननको हराति हैं ॥ ६२ ॥ स्वाहा अग्निकी स्त्री पावक सम वस्त्र है स्वाहा सम स्त्री है ॥ ६३ ॥ मत्त जे दंतिराज गजराज हैं तिनकी राजि कहे समूह औ बाजिराज घोडेनकी राजिका कहे समूह और जे देबेके उचित वस्तु हैं तिन्हैं शोधियो कहे दीबेके लिये ढूँढि ढूँढि मँगाइयो ॥ ६४ ॥ बितान कहे चँदोवा सामियानेति आसन भूपासन गद्दीति बिछावने फरससो कहे सहित वस्त्र भौन कहे पाल डेरा इति दियो अंगत्राण बख्तर भाजन सुवर्णादिके पात्रबासि सुगंधसों युक्त करिकै रोमबसी उत्तम कंबलादि पाठ बास पीतांबरादि दियो ॥ ६५ ॥

दोहा ॥ जनकराज पहिराइयो, राजा दशरथ साथ ॥ छत्र
चमर गज बाजि दै, आसमुद्र क्षितिनाथ ॥ ६६ ॥ निशि

पालिकाछन्द ॥ दान दिय राज दशरथ सुख पाइकै । शोधि ऋषि ब्रह्मऋषि राजनि बोलाइकै ॥ तोषि याचक सल दादुर मयूरसे । मेघ जिमि वर्षि गज वाजिय मयूरसे ॥ ६७ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्राजिद्विरचितायां सीतारामविवाहवर्णनं नाम षष्ठः प्रकाशः ॥ ६॥

टी०—राजा दशरथके साथ जे आसमुद्रके क्षितिनाथ रहे तिन्हैं राजा दशरथके साथ जनकराज बरतौनी पहिरायो बिदा समयकी पहिरावनि बरतौनी नाम करि पश्चिममों प्रसिद्ध है ॥ ६६ ॥ बरतौनीकी पहिरावनिके बादि जनकपुरवासिनको राजा दशरथय थोचित दान दियो ऋषिराज तपस्वी ब्रह्म ऋषिराज ब्राह्मणराज पदको अनुषंगऋषिहू मोहै ॥ ६७ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां सीतारामविवाहवर्णनं नाम षष्ठः प्रकाशः ॥ ६ ॥

दोहा ॥ या प्रकाश सप्तम कथा, परशुरामसंवाद॥ रघुवरसों अरु रोष त्यहि, भंजन मान विषाद ॥ १ ॥ विश्वामित्र बिदा भये, जनक फिरे पहुँचाइ ॥ मिले आगिली फौजको, परशुराम अकुलाइ ॥ २ ॥ चंचरीछन्द ॥ मत्त दन्ति अमत्त होगये देखि देखिन गज्जहीं । ठौर ठौर सुदेश केशव दुन्दुभी नहिं बज्जहीं। डारिं डारि हथ्यार शूरज जीव लै लै भज्जहीं॥ काटिकै तनत्राण एकै नारि वेषत लज्जहीं॥३॥ दोहा ॥ वामदेव ऋषिसों कह्यो, परशुराम रणधीर । महादेवको धनुष यह, को तोरेउ बलबीर ॥ ४॥ वामदेव ॥ महादेवको धनुष यह, परशुराम ऋषिराज । तोरेउ रा यह कहतहीं, समुझेउ रावणराज ॥ ५ ॥ परशुराम ॥ अति कोमल नृपसुतनकी, ग्रीवा दली अपार ॥ अब कठोर दशकंठके, काटहुँ कंठ कुठार ॥ ६ ॥ परशुराम—विजयछन्द ॥ बाँधिकै बाँध्यो जो बालि बली पलना पर लै सुतको हित ठाढे । है यह राज लियो गहि केशव आयो हो छुद्र जो छिद्रनि डाढे । बाहेर

काढि दियों बलि दासिन जाइ परेउ जो पतालके बाढे । तोको कुठार बडाई कहा कहि ता दशकंठके कंठनकाढे ॥ ७ ॥

टी०-या प्रकाशमें परशुरामसों औ रघुवरसों सम्वाद है ताही रघुवरके रोष करिकै परशुरामके मानको औ आपने सैन्यके विषादके दुःखको मंजन है ॥ १ ॥ २ ॥ यामें परशुरामके तेजको वर्णन है कि जिन परशुरामको देखि भयसों दशरथ चमूमें या दशा भई सूरय कहे शूरनके पुत्र अर्थ परम्पराके शूर अथवा सूरय सूर्यवंशी ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ बाध्यो कहे मारचो सुत जो अंगद है ताको पलना परसों अंकमें लैकै ताको हित कौतुक रावणमें ठाढचो अर्थ रावणको बालखेल बनायो सो कथा प्रसिद्ध है बालको अंकमें लैकै कौतुक देखाइबो लोकरीति है क्षिद्रनिको डाढे कहे देखे अर्थ समय बिचारिकै हैहयराज सहस्रार्जुनपैं युद्ध करिबेको आयोहो आयो रहै अथवा जाको हैहयराजा गहि लियो सो क्षुद्र क्षिद्रनिको डाढे अर्थ या समय जनकपुरमें परशुराम नहीं है एस अवसरको बिचारिकै आयो रहे ताके कण्ठ जो तू न काटै तौ तोको कहा बडाई है अथवा ताके कण्ठनको जो तू काटै तौ तोको कहा बडाई है जाकी वालि आदि ऐसी दुर्दशा करी ताको कण्ठ काटिबो सहज है इति भावार्थः ॥ ७ ॥

सोरठा ॥ यद्यपि है अतिदीन, मोहितऊ खल मारने ॥ गुरु अपराधहि लीन, केशव क्यों करिछाँडिये ॥ ८॥ चन्द्रकला छन्द ॥ वर बाण शिखीन अशेष समुद्रहि सोखि सखा सुखही तारिहौं । पुनि लंकहि औटि कलंकित कै फिरि पंककतंकहिकी भारि हौं । भल भूजिकै नेक सखा कसके दुख दीरघ देवनको हारिहौं। शित कंठके कंठनको कटुलादश कंठके कंठनका करिहौं ॥ ९ ॥ परशुराम-संयुताछन्द ॥ यह कौनको दल देखिये । वामदेव ॥ यह रामको प्रभुलेखिये ॥ परशुराम ॥ कहि कौन राम न जानियो ॥ वामदेव ॥ शर ताडका जिन मारियो ॥ १० ॥ परशुराम-विनयछन्द ॥ ताडका संहारी तिय न विचारी कौन बडाई ताहि हने ।

वामदेव ॥ मारीचहुते संगप्रबल सकल खल अरु सुबाहु काहू न गने ॥ करि क्रतु रखवारी गुरु सुखकारी गोतमकी तिय शुद्ध करी । जिन रघुकुल मंडयो हरधनु खंड्यो सीय स्वयम्बरमांझ बरी ॥ ११ ॥

टी०—जो ऐसो दीन है ताको मारिबो अनुचित है ता लिये कहत हैं ॥ ८ ॥ शिखिन कहे अग्नि सो सखा कुथारको सम्बोधन है मुखही कहे सहजही ॥ ९ ॥ १० ॥ गुरु जे विश्वामित्र हैं तिनको सुखकारी क्रतु जो यज्ञ है ताको रखवारी करिकै ॥ ११ ॥

दोहा ॥ हरहू होतो दंड द्वै, धनुष चढावत कष्ट ॥ देखो महिमा कालकी, कियो सो नर शिशु नष्ट ॥ १२ विजय ॥ बोरों सबै रघुवंशठाकुरकी धारमें वारन बाजि सरत्थहि । बाणकी वायु उडाइकै लक्षन लक्षि करौं अरिहा समरत्थहि ॥ रामहिं वाम समेत पठै बन कोपकै भारमें भूंजो भरत्थहि । जो धनु हाथ धरै रघुनाथ तौ आजु अनाथ करौं दशरत्थहि ॥ १२ ॥

टी०—सरस्वती उक्तार्थ-स कहे सहित वै कहे निश्चय अर्थ निश्चय करि रघुवंशके जे कुठार शत्रु हैं तिन्हैं बारन बाजिरथ सहितकी कहे समुद्रादि जलाशयकी धारप्रवाहमें बोरों 'कंजलमस्मिन्नस्तीति' की अर्थ जामें जल रहै सो की कहावै वंशपद श्लेष है बांसहूको नाम है ता कुठारपद कह्यो बारनबाजि सरथ कहि या जनायो कि जामें उनको चिह्नऊ न रहै औ लक्षण कहे लाखन जे रघुवंशके शत्रु हैं तिन्हैं बाणकी वायुसों उडाइकै हा कहे हाइहाइ जो शब्द है ताहीमें समरत्थ लक्ष कहे निशाना करों अर्थ ऐसी बाणवृष्टि करों जामें केवल हाइहाइ करै और पराक्रम करिबे लायक ना रहै औ जयरामहि कहे केवल रामचन्द्रहीसों बाम कहे कुटिलता समेति हैं अर्थ जे रामहीके शत्रु हैं तिन्हैं बनको पठै देऊँ औ जे भरत्थहि बाम समेति हैं अर्थ भरतके शत्रु हैं तिन्हैं शोकके भारमें भूँजौ औ जो धनुषको रघुनाथ हाथमें लियो कहे उठायो तौ आजु दशरथको अनाथ कहे जाको नाथ कोऊ नहीं अर्थ सबको नाथ करौं कहे करि मानो तौ सबके नाथ जे विष्णु हैं तिनहींके शंभु धनुष तोरिवेकी सामर्थ्य है ताते तेई विष्णु रामरूप है दश-

के पुत्र भये यह निश्चय करि दशरथको सर्वोपरि मानो इति वार्थ ॥ १२ ॥ १३ ॥

सोरठा ॥ राम देखि रघुनाथ, रथतें उतरे वेगि है ॥ गहे भरतको हाथ, आवत राम विलोकियो ॥१४॥ परशुराम-दंडक ॥ अमल सजल घनश्याम वपु केशवदास चंद्रहूते चारु मुख सुखमाको ग्राम है ॥ कोमल कमलदल दीरघ विलोचनानि सोदर समान रूप न्यारो न्यारो नाम है। बालक विलोकियत पूरण पुरुष गुण मेरो मत मोहियत ऐसो एक याम है ॥ वैर मानि वामदेवको धनुष तोरो इन जानत हौं बीसविशे राम वेष काम है ॥१५॥ भरत-गीति-काछन्द ॥ कुश मुद्रिका समिधैं स्रुवा कुश औ कमंडलको लिये। करमूल शर घन तर्कसी भृगुलातसी दरशै हिये ॥ धनु बाण तिक्ष कुठार केशव मेखला मृगचर्मसों। रघुवीरको यह देखिये रस वीर सात्त्विक धर्मसों ॥ १६ ॥ राम-नाराचछन्द ॥ प्रचंड हैहयाधिराज दंडमान जानिये। अखंड कीर्त्ति लेय भूमि देय मान मानिये ॥ अदेव देव जे अभीत रक्षमान लेखिये। अमेय तेज भर्गभक्त भार्गवेश देखिये ॥ १७ ॥

टी०—राम परशुराम ॥ १४ ॥ पूरण पुरुष विष्णु याम पहर वामदेव महादेव ॥ १५ ॥ कुश मुद्रिका कहे पैंतीसामिधैं होमकी लकडी। करमूल कहे कांधामें हैं शरघन घने बानसों पूरित तरकस जाके मेखला कटिभूषण धनुर्बाण धारणादि वीररसको धर्म है औ कुश मुद्रिका धारणादि सात्त्विक प्राणीको धर्म है ॥ १६ ॥ प्रचंड जे हैहयादि सहस्रार्जुनादि राजा हैं तिनके दंडकर्त्ता हैं अर्थ सहस्रार्जुनादिकनको नाश इनहिंने कियो है औ अखण्ड कहे पूर्ण कीर्त्तिके लेयमान लेवैया हैं औ अखंड भूमिके 'देय-मान कहे देवैया हैं अखण्ड पदको संबंध भूमिहूंमें है अदेव दैत्य औ देवनके जेयमान जीतनहार हैं मानपदको संबंध लेय जेयहूमें है औ भीत जे भययुक्त हैं तिनके रक्षमान रक्षक हैं अमेय कहे अपरिमान बडो इति

है तेज जिनको औ भर्ग महादेवके भक्त हैं औ भार्गव जे भृगुवंशी हैं तिनके ईश हैं अर्थ भृगुवंशमें ये बडे ऐश्वर्ययुक्त हैं ॥ १७ ॥

तोमरछन्द ॥ सह भरत लक्ष्मण राम ॥ चहुँ किये आनि प्रणाम ॥ भृगुनन्द्र आशिष दीन। रण होहु अजय प्रवीन ॥ ॥ १८ ॥ परशुराम ॥ सुनि रामचन्द्र कुमार । मन वचन कीर्ति उदार ॥ राम ॥ भृगुवंशके अवतंश । मनवृत्ति है क्यहि अंश ॥ १९ ॥ परशुराम ॥ मदिराछन्द ॥ तोरि शरासन शंकरको शुभ सीय स्वयंवर मांझ बरी । ताते बढ्यो अभिमान महा मन मेरीयो नेक न शंक करी ॥ राम ॥ सो अपराध परो हमसों अब क्यों सुधरै तुमहूं धौं कहो । बाहु दै दोउ कुठारहि केशव आपने धामको पंथ गहो ॥ २० ॥

टी०-अजय कहे जाको कोऊ न जीति सकै ॥ १८ ॥ हमारे वचन सुनो औ उदार कीर्ति सुनो अथवा कीर्ति है उदार जिनकी ऐसे हमारे वचन सुनो अथवा कीर्ति उदार रामचंद्रको संबोधन है तुम्हारो मन वृत्तिके केहि अंश कहे भाग मोहै अर्थ मनोभिलाष कहा है जो होइ सो कहौ ॥ १९ ॥ सरस्वती उक्तार्थः । अनेक राजा जामें हारि गये ता शरासनको तोरचो स्वयम्वरके मध्यमें सीताको बरचो तासों तुम्हारे बडो अभिमान बाढचो है सो उचितही है जो एतो पराक्रम करै ताके अभिमान बाढचोई चाहै औ सकल क्षत्रिनको नाशकर्ता जो मैं हौं ताहूकी शंका तुम ना करी। तासों तुम्हारे बलको समुझि हमारे भय भयो है तासों सकल क्षत्रिनके नाशको हमारो दोष क्षमा करि हमारे दोऊ बाहु औ हमारो कुठार आपनो करि हमको दैकै आपने घरको जाउ इनहीं कारणसों याही कुठारसों क्षत्रिनको क्षय कह्यो है तासों तुम करिकै बाहु कुठार खंडिवेकी शंका है सो तुम वचन करि हमको दैकै निर्भय करौ इति भावार्थः । अथवा या कुठारको दोउ बाहँ दैकै आपने धामको जाउ बाहँ बीर देवेकी रीति लोकमें प्रसिद्ध है कुठारको बडो दोष है तासों दोऊ बाहँ देवे कह्यो ॥ २० ॥

राम-कुंडलिया ॥ टूटै टूटनहार तरु वायुहि दीजत दोष। त्यों अब हरके धनुषको हमपर कीजत रोष ॥ हमपर

कीजत रोष कालगति जानि न जाई । होनहार ह्वैरहै मिटै मेटी न मिटाई ॥ होनहार ह्वै रहै मोह मद सबको छूटै ॥ होई तिनूका वज्र वज्र तिनुका ह्वै टूटै ॥ २१ ॥ परशुराम-विजयछन्द ॥ केशव हैहय राजको मास हलाहल कौरन खाइ लियो रे । ता लगि मेद मही पनको घृत घोरि दियो न सिरानो हियो रे । खीर षडाननको मद केशवसों पलमें करि पान लियो रे । तौलों नहीं सुख जौलहुं तू रघुवंशको शोन सुधा न पियो रे ॥ २२ ॥

टी०-हैहयराजको मासरूपी जो हलाहल विष है मेद चरवी खीर दूध षडानन स्वामिकार्तिक या युक्तिसो आपनो सकल बल कृत सुनाय भय देखायो सरस्वती उक्तार्थः ॥ हे कुठार ! यद्यपि तू ऐसे ऋतु करचो है परंतु जबलग स्ववश जे रामचंद्र हैं तिनको सो कहे तिनको ऐसो न कहे स्तुत्य मधुर इति सुधासरिस वचन नहीं पियो तौलौं तोको सुख नहीं है इहां सुधा नहीं है इहां सुधा जो उपमान है ताके उच्चारसों मधुर वचन उपमेयको ग्रहण कियो तू सकल क्षत्रिनको क्षय करचो है औ ये आति बलवान् क्षत्रवंशमें उत्पन्न भये सो बैर समुझि तेरो नाश करिवेको समर्थ हैं ताते ये जबलौं मधुर वचनसों तेरो दोष क्षमा नहीं करत तौलौं तोको सुख नहीं है इति भावार्थः । "नः पुमान्सुगते बंधे द्विरण्डे प्रस्तुतेपि च ।" इति मेदिनी २१॥२२॥

भरत-तंत्रीछन्द ॥ बोलत कैसे भृगुपति सुनिये सो कहिये तन मन बनि आवौ । आदि बडे हो बडपन राखौ जाते तुम सब जग यश पावौ ॥ चन्दनहूंमें आति तन घरिये आगि उठे यह गुण सब लीजै । हैहय मारे नृपति संहारे सो यश लै किन युग युग जीजै ॥ २३ ॥ परशुराम-नाराचछंद ॥ भली कही भरत्थतैं उठाय आगि अंगतैं । चढाउ चोपि चाप आप बाण ले निषंगते ॥ प्रभाउ आपनो देखाउ छोडि बाल भाइके । रिझाउ राजपुत्र मोहिं राम लै छुडाइके ॥ २४ ॥ सोरठा ॥ लियो चाप जब हाथ, तीनिहु भैयन रोष करि ॥

बरज्यो श्रीरघुनाथ, तुम बालक जानत कहा ॥ २५ ॥ रा०-दोहा ॥ भगवन्तनसों जीतिये, कबहुँ न कीने शक्ति ॥ जीति एकै बातमें, केवल कीने भक्ति ॥ २६ ॥ हरिगीत-छंद ॥ जब हयो हैहयराज इन बिन क्षत्र क्षितिमण्डल करचो । गिरिवेध षण्मुजखीतितारक नंदको जब ज्यों हरचो ॥ सुत मैं न जायो रामसों यह कह्यो पर्वतनंदिनी । वहरेणुका तिय-धन्य धरणीमें भई जगवंदिनी ॥ २७ ॥

बी०-सो बात कहौ जो तनमन्सों बनि आवै अर्थ करत बनि परै यासों या जनायो कि जो कहत हौ सो तुमका मनहूंसों करिवेको दुर्लभ है ॥ ॥ २३ ॥ भरत कह्यो है कि घसत घसत चंदनहूमें आगि उठत हैं तासों परशुराम कह्यो कि अंगसों आगि उठावो सरस्वती उक्तार्थः ॥ कि हमारे संग परशुरामसों रामचन्द्र लरि हैं यह जो रामचन्द्र प्रति तुम्हारो लै कहे चोप है ताको छिडाइ कहे त्यागिकै तुम हमका आपनी कृत देखायकै रिझाउ कहे प्रसन्न करो अर्थ रामचन्द्रको भरोसो छोडि हमसों तुम लरौ तौ हम लरैं रामचन्द्रसों लरिबे लायक हम नहीं हैं ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ क्रौंचनामा जो गिरि है ताके वेधनहार जे षण्मुख कहे स्वामिकार्तिक हैं तिनको जीतिकै तारकासुरको जो नंदन पुत्र है ताको ज्यों हत्यो मारचो ऐसे ऐसे इनके कृत्य देखिकै पार्वती कह्यो कि ऐसो पुत्र हमारे न भयो तब रेणुका परशुरामकी माता जगवंदिनी भई औ धन्य भई ऐसो पराक्रम परशुराम देखिकै रेणुकाको सब जगवंदना करिकै कह्यो धन्य है रेणुका जाके ऐसो पुत्र भयो या प्रकार रामचन्द्र परशुरामकी स्तुति कियो ॥२७॥

परशुराम-तोमरछन्द ॥ सुनु राम शीलसमुद्र । तव बंधु हैं अतिक्षुद्र ॥ मम वाडवानल कोप । अगु कियो चाहत लोप ॥ २८ ॥ शत्रुघ्न-दोधक ॥ हौं भृगुनंद बली जगमाहीं । राम बिदा करिये घर जाहीं ॥ हौं तुमसों फिरि युद्धहि माडौं ॥ क्षत्रिय वंशको वैर लै छांडौं ॥ २९ ॥ तोटकछंद ॥ यह बात सुनी भृगुनाथ जबै । कहि रामहिं लै घर जाहु अबै ॥ इनपै जग जीवत जो बचिहो । रण हौं तुमसों फिरिकै

रचिहौ ॥ ३० ॥ दोहा ॥ निज अपराधी क्यों हतौं, गुरु अपराधी छांडि । ताते कठिन कुठार अब, राम हिंसारण मांडि ॥ ३१ ॥

टीका०-बडवानलरूपी जो हमारे कोप है सो इनको लोप भस्म कियो चाहत है ॥ २८'॥ २९॥ शत्रुघ्नजीकी यह बात सुनि भरतसों कह्यो कि तुम रामचन्द्रको लैकै घर जाहु इनपै शत्रुघ्नपै युद्ध करि जो जीवित बचि है तब तुमसों रण करि हौं ॥ ३० ॥ गुरु अपराधी रामचन्द्र निज अपराधी शत्रुघ्न सरस्वती उक्तार्थः । निज ते अपनाते हमते इति है अपरा कहे अन्य अधिक इति है बुद्धि जिनकी इहां बुद्धि उपलक्षणमात्र है बुद्धि पदते बुद्धि बल विद्यादि जानों ऐसे जे रामचन्द्र हैं तिनको कैसे मारौं अर्थ इनके मारिवेको समर्थ नहीं हौं फेरि कैसे हैं गुरु जे शिव हैं तिनहुँनते अपराधी कहे बल विद्यादि करि अधिक हैं जिनको शिवहू ध्यान करत हैं ताते मारिवेकी आज्ञा करि छांडिक हे कठिन कुठार रामचन्द्रहीको सो रन कहे स्तुतिसों रनसों मांडि कहे युक्त करौ अर्थ रामचन्द्रकी स्तुति करो जो कहौ कुठार तौ बोलत नहीं कैसे स्तुति करि है तो सबमें अभिमानी देवता रहत है ता करिकै स्तुति करिबको समर्थ है जैसे समुद्रको अभिमानी देवता रामचंद्रकी स्तुति करचो है औ लंका हनूमानको रोक्यो है ॥ ३१ ॥

परशुराम-विजयछंद ॥ भूतलके सब भूपनको मद भोजन ता बहु भांति कियोई । मोदसों तारक नंदको मेद पछ्यावरि पान सिरायो हियोई । खीर षडाननको मद केशवसो पलमें करि पान लियोई ॥ राम तिहारेइ कंठको श्रोणित पानको चाहै कुठार कियोई ॥ ३२ ॥ लक्ष्मण-तोटक ॥ जिनका अनुग्रह वृद्धि करै । तिनको किमि निग्रह चित्त परै ॥ जिनको जग अच्छत शीश बरै । तिनको तन सक्षत कौन करै ॥ ३३ ॥ राम-मदिराछन्द ॥ कंठ कुठार यशै अब हार कि फूल अशोक सशोक समूरो ॥ के चित्र सारि चढै कि चिता तन चन्दन चित्र कि पावक पूरो ॥ लोकमलोक बडो अपलोक सुकेशव दास जो

होउ सो होऊ । विप्रनके कुलको भृगुनन्दन सूरजके कुल शूर न कोऊ ॥ ३४ ॥

टी०—पछ्यावारि शिखरनिको भेद है । खीर दूध सरस्वती उक्तार्थः । हे राम ! तिहारे कंठको कहे शब्दको अर्थ मधुर वचन पानि कै सो कुठार नितहीं पियो पान करयो चाहतेहैं अर्थ सुन्यो चाहत है ॥ "कंठो गले सन्निधौ नेध्वनौ मदनपादपे" इति मेदिनी ॥३२॥ जिन ब्राह्मणनको अनुग्रह कृपा सबको वृद्धि करत है तिनको निग्रह दंड हमारे चित्तमें कैसे परै कहे आवै औ जिनके शीशमें जग अक्षत धरत है अर्थ पूजन करत है तिनको तन साक्षात् कहे खंडित को करे या जनायो ब्राह्मण अवध्य है तासो तुमको नहीं मारते ॥ ३३ ॥ चह अशोक सुख चहै शोक दुख फूलो होइ लोक यश अपलोक अयश ॥ ३४ ॥

परशुराम—विशेषकछन्द ॥ हाथ धरे हथियार सबे तुम शोभतहौ । मारनहारहि देखि कहा मन क्षोभत हौ ॥ क्षात्रियके कुलह्वै किमि बैन नदीन रचौ । कोटि करो उपचारन केसेहु मीच बचौ ॥ ३५ ॥ लक्ष्मण ॥ क्षत्रियह्वै गुरुलोगनके प्रतिपाल करैं । भूलिहुतौ तिनके गुण औगुण जी न धरैं । तौ हमको गुरु दोष नहीं अब एक रती । जो अपनी जननी तुमहीं सुख पाइ हती ॥ ३६ ॥

टी०—लक्ष्मण औ रामचंद्रके नम्र वचन सुनिके भययुक्त जानि परशु राम कह्यो कि,मारनहार जो मैं हूं ताको देखिकै कहा क्षोभत डरात हो सरस्वती उक्तार्थः । सबै कहे चारों भाई तुम हाथनमें हथियार धरे ऐसे शोभत हौ कि, मारनहार जे यमराज है तिनहुनको देखिके कहा क्षोभत डरात हौ अर्थ तुम यमराजहूको नहीं डरात हौ औ क्षत्रियके कुलमें ह्वैके किमि कहे काहे दीन बैन हमसों ना रचो ब्राह्मणसों क्षत्रियको अधीन रहि बोई उचित धर्म है कछू भयसों तुम दीनबचन नहा कहत काहेते कि कोटि उपचार यत्न करौ कहे करै अर्थ ब्रह्मादिहूकी शरणमें जाइ औ तुम मीचको मारौ चाहौ तौ कैसेहू न बचो कहे बचें ॥ ३५ ॥ जो तुमही अपनी जननी माताको सुख पाइकै मारयो तुमको कछू गुरु दोष ना भयो तौ तुम्हारे मारेसों हमहूंको रत्तिहू भरि गुरुदोष नहीं है जननीको

बधजनाइ या जनायो कि तुमने ऐसे स्त्रीबधादि पराक्रम करचो है अथवा गुरुद्रोषी जनायो ॥ ३६ ॥

परशुराम-विजयछन्द ॥ लक्ष्मणके पुरिषान कियो पुरुषारथ सो न कह्यो परई । वेष बनाइ कियो बनितानको देखत केशव ह्यो हरई । क्रूर कुठार निहारि तजै फल ताकी यहै जो हियो जरई । आजुते केवल तोको महा धिक क्षत्रिनपै जो दया करई ॥ ३७ ॥ गीतिकाछन्द ॥ तब एक विंशति बर मैं बिन क्षत्रकी पृथिवी रची । बहु कुंड श्रोणितसो भरे पितृतर्पणादि क्रिया सची ॥ उबरे जे क्षत्रिय शुद्र भूतल शोधि शोधि संहारिहौं । अब बाल वृद्ध न ज्वान छाँडहु धर्म निर्दय पारि हौं ॥ ३८ ॥

टी०-सरस्वतीउक्तार्थः । लक्ष्मणके पुरिखान बडेन जो पुरुषारथ कियो है सो कह्यो नहीं परत कहा पुरुषारथ करचो जिन बनितनको बेष बनायो अर्थ वनितारच्यो गौतमकी स्त्रीको पाथरसों स्त्री बनायो जाको देखतहियो हरिजात है अर्थ अति सुंदरी बनायो तौ या जनायो सृष्टि करिबे को समर्थ है याही विधि दशरथ भगीरथादिके कृत गंगा ल्याइबो आदि जानो सो हे क्रूरकुठार ! तिनको निहारिकै तजै कहे छोडे अर्थ इनके समीपते अन्यत्र जाइ तौ ताको इनके वियोगको यहै फल है जो हृदय जरई कहे जरत है अर्थ अति सुंदररूप जे ये हैं तिनके बियोगसों हृदय जरत है इनके योगको यहै फल है तासों जो तेरो इनको वियोग ह्वै है तो तैसे हियो जरिहे सो आज केवल कहे एक तोको महा अधिक कहे महा उत्तम है जो क्षत्रिनके ऊपर दया करु आजुतक क्षत्रिनको बध करचो तो क्षत्रवर्णनमें ये ऐसे रूप गुण बलादि पूरित भये तासों अब क्षत्रवर्णकी रक्षा करिबो तोहिं उचित है तिनके निकट रहि सहायता करि क्षत्रीवर्ण तोकों रक्षणीय है ॥ ३७ ॥ सची कहे करी ॥ ३८ ॥

राम-दोहा ॥ भृगुकुलकमलदिनेश सुनि, ज्योतिसकल संसार ॥ क्यों चलिहै इन शिशुनपै, डारतहौ यश भार ॥ ३९ ॥
परशुराम-सोरठा ॥ रामसुबन्धु सँभारि, छोडत हौं शर शर प्राणहर ॥ देहु हथ्यारन डारि, हाथ समेति न बेगि दै ॥ ४० ॥

राम-पद्धटिकाछंद ॥ सुनि सकल लोकगुरु जामदग्नि। तपविशिष अशेषनकी जो अग्नि ॥ सब विशिष छाँडिं सहि-हौं अखंड। हरधनुष करचो जिन खंड खंड ॥ ४१ ॥परशु-राम-सवैया ॥ बाण हमारेनके तनत्राण विचारि विचारि विरंचि करेहैं। गोकुल ब्राह्मण नारि नपुंसक जे जग दीन सुभाव भरेहैं ॥ राम कहा करिहौ तिनको तुम बालक देव अदेव धरेहैं। गाधिके नंद तिहारे गुरू जिनते ऋषिवेष किये उबरे है॥ ४२ ॥

टी०-सकल संसारको जीतिकै जो यश एकत्र करचो है सो इनसों लरिकै हारिकै ता यशको बोझ इन बालनपै डारत हौ इनसों कैसे चलिहै इनसों लरिहौ तौ हारि जैहौ इति भावार्थः ॥ ३९ ॥ रामचन्द्रके सतर्क वचन सुनि परशुराम कोप करि बोले सो अर्थ खुलो है सरस्वती उक्तार्थः॥ हे हर महादेव ! इनके शर करिकै मैं प्राण छोडतहौं अर्थ ये बाणसों मेरे प्राण हरचो चाहतहैं तासों बन्धुसहित जो कोपयुत रामचन्द्र हैं तिनको तुम सँभारि कहे सम्हारौ ये अब तुम्हारेई सँभारन लायक हैं जासों ये हाथनसौ समेतन कहे सबन हथ्यारनको डारि देहिं जबतक ये हाथमें हथ्यार धरे रहिहैं तबतक हमारे भय बन्यो है तासों तुम इनको कोप शांत करि हथ्यार उतरावो आगे महादेव आय ऊबे भये हैं ॥ ४० ॥ तपके जे अशेष विशिष बाण हैं विशिष पदते शाप जानौ तिनकी अग्नि औ और सब बाणनको छाँडौ ते अखंड कहे निर्विघ्न सहिहौं अर्थ हमारे ऊपर शाप औ बाण दुवो चलाओ हम सहि हैं ॥ ४१ ॥ सरस्वती उक्तार्थः ॥ हे राम ! तिन बाणनको तुम कहा करिहौ अर्थ कहा कियो चाहत हौ अर्थ इनको प्रभाव लोप कियो चाहतहौ तुम कैसेहौ बालक ताहीमें देव औ अदेव तुमको डरे हैं ॥ ४२ ॥

श्रीराम-षट्पद ॥ भगन भयो हरधनुष शाल तुमको अब शालै। वृथा होइ विधि सृष्टि ईश आसनते चालै ॥ सकल लोक संहरहु शेषशिरते धर डारैं। सप्त सिंधु मिलि जाहि होहिं सबही तम भारैं॥ अति अमल ज्योति नारायणी काहिं

केशव बुडि जाहि बरु । भृगुनंद सँभारु कुठार मैं कियो शरासनयुक्त शरु ॥ ४३ ॥ स्वागताछंद ॥ राम राम जब कोप करचोजू ॥ लोक लोक भये भूरि भरचो जू ॥ वामदेव तब आपुन आये । रामदेव दोऊ समुझाये ॥ ४४ ॥ दोहा ॥ महादेवको देखिकै, दोऊ रामविशेष ॥ कीन्हों परम प्रणाम उन, आशिष दियो अशेष ॥ ४५ ॥ महादेव-चतुष्पदी॥भृगुनंदन सुनिये मनमहँ गुनिये रघुनंदन निर्दोषी । निज ये अविकारी सब सुखकारी सबही विधि संतोषी ॥ एक तुम दोऊ और न कोऊ एकै नाम कहायो । आयुर्बल खूट्यो धनुष जो टूटचो मैंन नमन सुख पायो ॥ ४६ ॥ महादेव--पद्धटिका छंद ॥ तुम अमल अनंत अनादि देव । नहिं वेद बखानत सकल भेव ॥ सबको समान नहिं बैर नेह । सब भक्तन कारन धरत देह ॥ ४७ ॥

टी०-जब गुरुजे बिश्वामित्र हैं तिनकी निंदा करचो तब रामचन्द्र कोप करिकै बोले ईश महादेव आसन योगासनते चालै कहे चले सबही कहे सर्वत्र अर्थ चौदहों लोकमें ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ निर्दोषी हैं अर्थ धनुष तोरनेमें इनको कछू दोष नहीं है औ अविकारी कहे माया कृत विकाररहित हैं यासों या जनायो कछू द्रोहादिसों धनुष नहीं तोरचो औ संतोषी कहि या जनायो कि इनके कछू इच्छा नहीं है दुवो गुणनसों या जनायो ईश्वर हैं ॥ ४६ ॥ द्वै छंदको अन्वय एक है महादेव परशुरामसों कहत हैं कि तुम अमल कहे माया विकाररहित औ अनंत जाको अन्त नहीं है कि ये तौ है औ अनादि कहे जाकी आदि नहीं कोऊ जानत कि कबसों है ऐसे देव हौ अर्थ परब्रह्म हौ औ तुम्हारी सब भेद कहे भेद बेद नहीं बखानि सकत अर्थ वेदहू नहीं जाको प्रमाण यावत् सब प्राणिनको समान हौ काहूको स्वाभाविक वैर औ स्नेह तुम्हारे नहीं है केवल प्रह्लादादि जे भक्त हैं तिनके हेतु देह धरि दुःख दूरि करत हौ यासों भक्तवत्सलता जनायो आपनपौ पहिंचानिकै कि हम औ ये एकही हैं यह जानिकै इनके हाथसों होनहार जो रावणादि वध आगिलो काज है ताको करौ तब महा-

[वके वचनसों जानि कहे य नारायण हैं यह जानिकै नारायणको धनुष परशुरामपै रह्यो सो रामचंद्रको दियो ॥ ४७ ॥

अब आपनपौ पहिंचानि विप्र । सब करहु आगिलो काज क्षिप्र ॥ तब नारायणको धनुष जानि । भृगुनाथ दियो रघुनाथ पानि ॥ ४८ ॥ मोटनकछंद ॥ नारायणको धनु-बाण लियो । ऐंच्यों हँसि देवन मोद कियो ॥ रघुनाथ कहेउ अब काहि हनो । त्रैलोक्य कँप्यो भय मानि घनो ॥ ४९ ॥ दिग्देव दहे बहु बात बहे । भूकम्प भये गिरिराज ढहे ॥ आकाश विमान अमान छये । हाहा सबहीं यह शब्द रये ॥ ॥ ५० ॥ परशुराम-शशिवदनाछंद ॥ जग गुरु जान्यो । त्रिभुवन मान्यो ॥ मम गति मारो । हृदय विचारो ॥ ५१ ॥

टी०-॥ ४८ ॥ द्वै छंदको अन्वय एक है ॥ ४९ ॥ ५० ॥ त्रिभुवनमें मान्यो अर्थ जाको तीनों भुवन मानत हैं पूजत हैं औ जगतके गुरु जा ईश्वर हैं सो हम तुमको जान्यो अर्थ तुम ईश्वर हौ ताते और सबको निर्दोष हमको सदोष विचारि हमारि सुरपुरकी गति मारो ॥ ५१ ॥

दोहा ॥ विषयी कीज्यों पुष्प शर, गतिकों हनत अनंग ॥ रामदेव त्योंही कियो, परशुराम गति भंग ॥ ५२ ॥ चतुष्पदीछंद ॥ सुरपुर गति भानी शासन मानी भृगुपतिको सुख भारो । आशिष रस भीने सब सुख दीने अब दशकंठहि मारो ॥ ५३ ॥ दोहा ॥ सोवत सीता नाथके, भृगुमुनि दीन्हीं लात । भृगुकुलपतिकी गति हरी, मनो सुमिरि वह बात ॥ ५४ ॥ मधुभारछन्द ॥ दशरथ जगाइ । संभ्रम भागइ ॥ चलि रामराइ । दुंदुभि बजाइ ॥ ५५ ॥ सवैया ॥ ताडका मारि सुबाहु सँहारिकै गौतमनारिके पातक टारे । चाप हत्यो हरको हँसिकै सब देव अदेव हुते सब हारे ॥

सीताहि व्याहि अभीत चल्यो गिरि गर्व चढे भृगुनंद उतारे ।
श्रीगरुडध्वजको धनु लै रघुनन्दन औधपुरी पगु धारे ॥ ५६ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचंद्रचंद्रिकाया-
मिन्द्रजिद्विरचितायां परशुरामसंवादवर्णनं नाम सप्तमः प्रकाशः ॥७॥

टी०-॥ ५२ ॥ सब जे देवऋषि आदि हैं तिनका सुख दीन अब दश-कंठको मारौ ऐसी जो परशुराम कृत आशिष है ताके रसमें भीने ॥ ५३ ॥ ॥ ५४ ॥ परशुरामके भयसों मूर्च्छाको प्राप्त जे दशरथ हैं तिनको जगाइके औ परशुराम हारिकै गये यह कहि संभ्रम भगाइकै ॥ ५५ ॥ गर्बके गिरि-पर चढे रहे तासों उतारयो अथवा गर्वका गिरि सोई परशुराम पर चढो रहै सो उतारो ॥ ५६ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसाद-
निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां सप्तमः प्रकाशः ॥ ७ ॥

दोहा ॥ यह प्रकाश अष्टम कथा, अवधप्रवेश बखानि ।
सीता वरण्यो दशरथहि, और बंधु जन मानि ॥ १ ॥ सुमु-
खीछन्द ॥ सब नगरी बहु शोभ रये । जहँ तहँ मंगल चार
ठये ॥ बरणत हैं कबिराज बने । तन मन बुद्धि विवेकसने
॥ २ ॥ मोटनकछन्द ॥ ऊंची बहु वर्ण पताक लसैं । मानो
पुरदीपतिसी दरसैं ॥ देवगण व्योम विमान लसैं । शोभै
तिनके मुख अंचलसैं ॥ ३ ॥ दोहा ॥ कलभन लीने कोट-
पर, खेलत शिशु चहुँ वोर । अमल कमल ऊपर मनो,
चंचरीक चितचोर ॥ ४ ॥ कलहंस छंद ॥ पुर आठ आठ
दरबार विराजैं । युत आठ आठ सैनापति राजैं ॥ रहैं चारि
चारि घटिका परिमानै । घर जाहिं और जब आवत जानै ॥५॥

टी०-मंगलाचार बंदनवारादि ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ कलभ छोटे हाथी कमल सदृश कह्यो तासों पद्माख्य कोट जानो ताको भेद आगे कहिहैं ॥ ४ ॥ पुर

कहे अग्रभाग जे पुरीके आठ हैं ॥ तिनमें आठ दरबार कहे सभा बिराजत हैं अर्थ आठ प्रकारके कोट होते हैं यथा नरपतौ । " अतिदुर्ग कालवर्म चक्रावर्तं च डिंबुरम् । तटावर्तं च पद्माख्यं यक्षभेदं च सार्वरम् । कोटचक्रं प्रवक्ष्यामि विशेषादष्टधा च तत् " ॥ सो जैसे एक और पद्माख्य कोटदेख्यो तैसे पुरीके आठहू ओर शहरपनाहमें आठहू प्रकारके कोट बने हैं तिनमें राजाके आठ मंत्री हैं यथा वाल्मीकीये " धृष्टिर्जयंती विजयः सिद्धार्थोऽत्यर्थसाधकः । अशोको मंत्रपालश्च सुमंतश्चाष्टमो महान् । " ते मंत्री तिन कोटनमें आठहू दिशनके प्रजान संग सभा करत हैं अर्थ तिनमें बैठि आठहू दिशनको मामलो करत हैं अथवा दरबार कहे मुख्यद्वार पुरद्वार इति अर्थ–पुरीके शहरपनाहमें आठहू दिशनमें आठ द्वार बने हैं यथा कविप्रियायां । " नीके कै केवार देहौं द्वारद्वार दरबार केशोदास आस पास शूर जौन छावैगो । " ॥ ५ ॥

दोहा ॥ आठों दिशिके शीलगुण, भाषों वेष विचार ॥ वाहन वसन विलोकिये, केशव एकहि बार ॥ ६ ॥ कुसुमविचित्राछंद ॥ अति शुभ बीथी रज परिहरे । चंदन लीपी पुष्पनि धरे ॥ दुहुँ दिशि दीसत सुवरणमये । कलश बिराजत मणिमय नये ॥ ७ ॥ तामरसछंद ॥ घर घर घंटनके रव बाजैं । बिच बिच शंखजु झालरि साजैं ॥ पटह पखाउज आवझसोहैं । मिलि सहनाइनसों मन मोहैं ॥ ८ ॥ हीरकछंद ॥ सुंदरि सब सुंदर प्रति मंदिर पर यों बनी । मोहन गिरिशृंगन पर मानहुँ महिमोहनी ॥ भूषनगन भूषित तन भूरि चितन चोरहीं । देखति जनु रेखति तनु बान नयनकोरहीं ॥ ९ ॥ सुंदरीछंद ॥ शंकर शैल चढी मन मोहति । सिद्धनकी तनया जनु सोहति ॥ पद्मन ऊपर पद्मिनि मानहुँ । रूपन ऊपर दीपति जानहुँ ॥ १० ॥

टी०–॥ ६ ॥ यामें चौकीदार सेनापतिनकी रीति कहत हैं कि आठों दिशिके चौकीदारनके शील कहे स्वभाव गुण शूरता आदि औ भाषा कहे बोली चौकी समयकी चौकीदारनकी बोली भिन्न है औ वेष कहे

देहकी उच्चता स्थूलता आदि औ विचार औ बाहन गज अश्व रथादि वसन श्याम श्वेत पीतादि एकहि बार कहे एकहि तरह विलोकियत है जा बेषसों जा पहरकी चौकी जैसे सेनापतिकी है तैसी आठहू ओरकी है इति भावार्थः । अथवा जा पुरीमें आठौं दिशिके शील आदि एकही बार एकही समय विलोकियत हैं यासों या जनायो कि आठौं दिशिके राजा जा पुरमें हाजिर रहत हैं औ आठौं दिशिके प्राणी जा पुरमें बसत हैं बीथी गली ॥ ७ ॥ ८ ॥ प्रतिमंदिर कहे अपने अपने मंदिरन पर बरातको कौतुक देखिवेकों सुंदरी कहे स्त्री चढी हैं मोहनारि सदृश कहि अति सुंदर मंदिर जनायो जब देखती हैं तब बाणसम जे नयन कोर हैं तिनसों मानों तनको देखती हैं कहे वेधती हैं ॥ ९ ॥ सिद्धदेव योनिविशेष हैं पद्मिनी कमलिनी रूप सौंदर्य कैलास औ रूप सम गेह है सिद्धतनया कमलिनी दीपति सम स्त्री हैं ॥ १० ॥

कीरति श्री जय संयुत सोहति । श्रीपतिमंदिरको मन मोहति ॥ ऊपर मेरु मनो मन रोचन । स्वर्णलता जन रोचति लोचन ॥ ११ ॥ विशेषकछंद ॥ एक लिये कर दर्पण चंदन चित्र करे । मोहति है मन मानहुँ चांदनि चंद धरे ॥ नैन विशालनि अंबर लालनि ज्योति जगी । मानहुँ रागनि राजति है अनुरागरँगी ॥ १२ ॥ नील निचोलनको पहिरे एक चित्त हरे । मेघनकी द्युति मानहुँ दामिनि देह धरे ॥ एकनके तन सूक्षम सारि जराय जरी । सूरकरावलिसी जनु पद्मिनि देह धरी ॥ १३ ॥ तोटकछंद ॥ बरषै कुसुमावलि एक घनी । शुभ शोभन कामलतासि बनी ॥ बरषै फल फूलन लायककी । जनु है तरुणी रतिनायककी ॥ १४ ॥

टी०-कि जय संयुत कीर्ति है जयसम गेह कीर्ति सम स्त्री है कि पतिके विष्णुके मंदिरमें श्रीलक्ष्मी है कि मन रोचन कहे सुंदर अनेक मेरु सुमेरु पर स्वर्णलता हैं रोचति कहे नीकी लागति हैं लोचन-निकी ॥ ११ ॥ मानो चन्द्रमाके मनको चांदनी मोहती है चंद्र सरिस दर्पण है चांदनी सरिस चंदन चर्चित स्त्री हैं नयन विशाल जिनके ऐसी जे स्त्री हैं तिनके अंबर वस्त्र लालनकी शोभा जगी है रागिनी सम स्त्री हैं

अनुराग प्रेम सम वस्त्र हैं प्रेमको रंग अरुण ॥ १२ ॥ मेघ द्युति सम श्यामवस्त्र हैं दामिनी सम स्त्री हैं पद्मिनी कमालिनी सम स्त्री हैं सूरक-रावलि सम जरायजरी सारी हैं ॥ १३ ॥ फल पूगीफलादि ॥ १४ ॥

दोहा ॥ भीर भये गजपर चढे, श्रीरघुनाथ विचारि ॥ तिनहिं देखि बरणत सबै, नगर नागरी नारि ॥ १५ ॥ तोटक छंद ॥ तमपुंज लियो गहि भानु मनो । गिरि अंजन ऊपर शोभ-भनो ॥ मनमत्थ विराजत शोभ तरे । जनु भासत लोभहि दान करे ॥ १६ ॥ मरहट्टाछंद ॥ आनंदप्रकासी सब पुरवासी करत ते दौरादौरी । आरती उतारैं सरवस वारैं अपनी अपनी पौरी ॥ पढि मंत्र अशेषनि करि अभिषेकनि आशिष दै सवि-शेष । कुंकुम कर्पूरनि मृगमदचूरनि वर्षाति वर्षा वेष ॥ १७ ॥ आभीरछंद । यहि विधि श्रीरघुनाथ । गहे भरतको हाथ ॥ पूजत लोग अपार । गये राजदरबार ॥ १८ ॥ गये एकही बार । चारों राजकुमार ॥ सहित वधूनि सनेह । कौशल्याके गेह ॥ १९ ॥ त्रिभंगीछंद ॥ बाजे बहु बाजैं तारनि साजैं सुनि सुर लाजैं दुख भाजैं । नाचैं नव नारी सुमन शृँगारी गति मनुहारी सुख साजैं ॥ बीनानि बजावैं गीतनि गावैं मुनिन रिझावैं मन भावै । भूषण पट दीजै सब रस भीजै देखत जीजे छबि छावै ॥ २० ॥

टीका-ताही क्षण गजपर चढे राम ऐसे शोभित भये तमपुंज मानो भानु सूर्यको गहि लियो अथवा तम पुंजहीको मानो भानु गहि लियो जानो लोभहि तरे करे दान भासत है तरे पदको संबंध याहूमें हैं औ कहूं यह पाठ है जनु राजत काम शृंगार तरे तौ शृंगार है तरेजाके ऐसो मानो काम राजत है भानु औ चंद्रमा औ शोभा औ दान सम रामचन्द्र हैं तम पुंज औ अंजनगिरि औ मन्मथ औ लोभसम गज है ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ तार कहे उच्च स्वरको साजत है ॥ " तारो निर्मलमौक्तिके मुक्ता-मुद्भावुच्चनादे " इत्यभिधानचिंतामणिः ॥ रस कहे प्रेममें भीजे जे सब पुर

वासी हैं तिन करिकै भूषण पट दीजै कहे दीजियत है अर्थ प्रेमसों युक्त सब भूषण पटदान करत हैं ॥ २० ॥

सोरठा ॥ रघुपति पूरण चंद, देखि देखि सब सुख मढै ॥
दिन दूने आनंद, ता दिनि ते तेहि पुर बढै ॥ २१ ॥

इति श्रीमत्सकललोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचान्द्रिकायामिंद्रजिद्विरचितायां रामस्यायोध्यानगरप्रवेशो नामाष्टमः प्रकाशः॥ ८ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानकीप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रागभक्तिप्रकाशिकायामष्टमः प्रकाशः ॥ ८ ॥

दोहा ॥ यह प्रकाश नवमें कथा, राम गमन वन जानि ॥
जनकनंदिनीको सुकृत, वर्णन रूप बखानि ॥ १ ॥ रामचंद्र लक्ष्मण सहित, घर राखे दशरत्थ ॥ बिदा कियो ननसारको, सँग शत्रुघ्न भरत्थ ॥ २ ॥ तोटकछंद ॥ दशरत्थ महामन-मोद रये । तिन बोलि वशिष्ठहिं मंत्र लये ॥ दिन एक कहो शुभ शोभ रयो । हम चाहत रामहिं राज दयो ॥ ३ ॥ यह बात भरत्थकी मात सुनी । पठऊं बन रामहिं बुद्धि गुनी ॥ तेहि मंदिरमें नृपसो विनयो । वर देहु हतो हमको जो दयो ॥ ४ ॥ नृप बात कही हँसि हेरि हियो । वर मांगि सुलोचनि मैं जो दियो ॥ कैकेयी नृपता सुविशेशि भरत्थ लहैं । बरषै वन चौदह राम रहैं ॥ ५ ॥

टीका-॥ १ ॥ २ ॥ शोभ रयो राजाको विशेषण है ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥

पद्धटिकाछंद ॥ यह बात लगी उर वज्र तूल । हिय फाट्यो ज्यों जीरण दुकूल ॥ उठि चले विपिनकहँ सुनत राम । तजि तात मात तिय बंधु धाम ॥ ६ ॥ हरिलीलाछंद ॥ छूटे सबै सबनिके सुख क्षुत्पिपास । विद्वद्विनोद गुण गीत विधान

ब्रह्मादि अंत्यज न अंत अनंत लोग । भूले अशेष सविशे-
षनि राग भोग ॥ ७ ॥ मौक्तिकदामछंद ॥ गये तहँ राम
जहां निज मात । कही यह बात किहौं बन जात ॥
कछू जानि जो दुख पावहु माइ । सो देहु अशीष
मिलौं फिरि आइ ॥ ८ ॥ कौशल्या ॥ रहौ चुप ह्वै सुत
क्यों बन जाहु । न देखि सकै तिनके उर दाहु ॥ लगी अब
बाप तुम्हारेहि वाई । करैं उलटी विधि क्यों कहि जाइ ॥९॥
राम-ब्रह्मरूप कछंद ॥ अन्न देइ सीख देइ राखि लेइ प्राण
जात । राज बाप मोल लै करै जो दीह पोषि गात ॥ दास
होइ पुत्र होइ शिष्य होइ कोइ माइ । शासना न मानई तौ
कोटि जन्म नर्क जाइ ॥ १० ॥

टी०--जीर्ण कहे पुरानी तजि चले पदते इहां मानसिक त्याग जानो ॥६॥ क्षुत् कहै क्षुधा विद्वद्विनोद कहे शास्त्रार्थ गुणशास्त्र विद्यादि गीतविधान गाइबो वास घर अथवा वस्त्र ब्रह्महि आदि देअौ अंत्यज जे चांडाल हैं तिन पर्यन्त जे अनंत लोग हैं तिनको अशेष राग प्रेम औ भोग सविशेषण भूले अर्थ अत्यन्त भूले यद्यपि रामवन गमनसों ब्रह्मादि देवनको रावण वधादि हित कार्य ह्वै है परन्तु अनवसर विलोकि तिनहूँको दुःख भयो ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ९ ॥ अन्नदाता औ शिषदाता औ कहूँ प्राण जात होइ ता भयसों रक्षक औ राजा औ बाप औ जो मोल लेकै पोषिकै गा कहे बडे करै अर्थ जो मोल लै पालन करै ई जे छः हैं तिनके दास औ पुत्र औ शिष्य औ कोइ कहे और है कोऊ होइ अर्थ अन्नग्राहक प्राण रक्षित औ प्रजा जे छः हैं न आज्ञाको ना मानैं तो कोटि जन्म तक नरक जाइँ या जनायो कि एक तौ राजा है दूसरे पिता हैं तासों विशेषिकै आज्ञा मानि हमको वन जैबो उचित है ॥ १० ॥

कौशल्या-हरनीछंद ॥ मोहिं चलौ वन संग लियैं । पुत्र
तुम्हैं हम देखि जियैं ॥ अवधपुरीमहँ गाज परै । कै अब
राज भरत्थ करै ॥ ११॥ राम-तोमरछंद ॥ तुम क्यौं चलो
वन आजु । जिन शीश राजत राजु ॥ जिय जानि ये पति-

देव । करि सर्व भांतिन सेव ॥ १२ ॥ पति देइ जो अति दुःख । मन मानि लीजै सुःख ॥ सब जक्त जानि अमित्र । पति जानि केवल मित्र ॥१३॥ अमृतगतिछंद ॥ नित पति पंथहि चलिये । दुख सुखको दलु दलिये ॥ तन मनसे वहु पतिको । तब लहिये शुभ गतिको ॥ १४ ॥ स्वागताछंद ॥ योग याग व्रत आदि जो कीजै । न्हान गान गन दान जो दीजै ॥ धर्म कर्म सब निष्फल देवा । होहिं एक फलके पति सेवा ॥ १५ ॥

टी०—तुम क्यों चलौ बन इत्यादि दश छंदनमें पातिव्रत धर्म सुनाइ रामचन्द्र माताको बोध करत हैं राज कहे राजा दशरथ अथवा राजस्त्रिन करिकै केवल पतिहीको देव जानिये कहे जानो चाहिये ॥ ११ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ पतिही स्त्रिन करिकै नित्यप्रति पथ कहे सुराह शास्त्रोक्त पतिव्रतनकी रीति इति तामें चलिये या प्रकार सुख औ दुःखके दल कहे समूहको दलिये कहे बिताइये औ तन औ मनसों केवल पतिहीको सेवहु कहे सेवन करिये तब शुभ गतिको पाइये कबू सुख दुख परै तामें स्त्रीको पतिहीकी सेवा करिबो उचित है और उपाय करिबो उचित नहीं है इति भावार्थः ॥ १४ ॥ देव कहे देवता अर्थ देवपूजा ॥ १५ ॥

तात मातु जन सोदर जानौं । देवर जेठ सगे सो बखानौं ॥ पुत्र पुत्रसुत श्रीछबि छाई । है विहीन भरता दुखदाई ॥१६॥ कुंडलिया ॥ नारी तजै न आपनो, सपनेहूं भरतार । पंगु गुंगु बौरा बधिर, अंध अनाथ अपार ॥ अंध अनाथ अपार वृद्ध बावन अतिरोगी । बालक पंडु कुरूप सदा कुवचन जड योगी ॥ कलही कोढी भीरु चोर ज्वारी व्यभिचारी । अधम अभागी कुटिल कुपति पति तजै न नारी ॥ १७ ॥ पंकजवाटिकाछंद ॥ नारि तजै न मरे भरताराहि । ता संग सहति धनंजय झाराहिं ॥ जीकेहूं करतार जिआवत । तौ

गान विन मान विन हास विन जीवहीं । तप्त नहिं खाइ जल शीतल न पीवहीं॥ तेल तजि खेल तजि खाट तजि सोवहीं । शीत जल न्हाइ नहिं उष्ण जल जो वहीं ॥ १९ ॥

टी०–पुत्रसुत पौत्र ॥ १६ ॥ पंडु पिंडरोगी योगी विरक्त भीरु कादर कुपति निर्लज्ज अथवा नपुंसक ॥ १७ ॥ धनंजय कहे अग्निकी झार सहति है अर्थ सती होति है जो काहू प्रकार कर्तार जिआवै अर्थ पतिके संग ना जरचो जाइ तौ तिन स्त्रिनके लिये यह बात है सो हम तुमको सुनावत हैं सो गान बिन इत्यादि द्वै छंदमों आगे कहत हैं ॥ १८ ॥ द्वैछंदको अन्वय एक है जल शीतल न पीवहीं अर्थ सीरो करिके जल न पीवैं जैसो होइ तैसो पीवैं शीत जलमें न्हाइ या जनायो कि गरम जल करि स्नान ना करै जा समय जैसे पीवै तैसे मैं स्नान करें काय मन वाचा सब धर्म करिबो करैं अर्थ ये जे सब धर्म हैं तिनको मनसा वाचा कर्मणासे करैं अथवा और जे सब धर्मदानादि हैं तिनहुंनको करे कृच्छ्र उपवास कृच्छ्रचांद्रायणादिसों जबलौं तनको अतीत कहे छोडैं अर्थ मरैं तबलों पुत्रकी शिषमें लीन रहै पुत्रकी आज्ञामें रहै यामें त्रिकाल दर्शी जे रामचंद्र हैं तिन अपने वियोगसों पिताको मरण निश्चय करि पतिव्रतनको धर्म सुनाय माताको बोध करि युक्तिसों विधवा स्त्रीको उचित धर्म सिखायो ॥ १९ ॥

खायँ मधुरान्न नहिं पाय पनहीं धरैं । काय मन वाच सब धर्म करिबो करैं ॥ कृच्छ्र उपवास सब इंद्रियनि जीतहिं । पुत्र शिष लीन तन जौलगि अतीतहीं ॥ २० ॥ दोहा ॥ पतिहित पितुपर तनु तज्यो, सती साखि दै देव ॥ लोकलोक पूजित भई, तुलसी पतिकी सेव ॥ २१ ॥ मनसा वाचा कर्मणा, हमसों छाँडो नेहु । राजाको, विपदा परी, तुम तिनकी सुधि लेहु ॥ २२ ॥ पद्धटिकाछंद ॥ उठि रामचन्द्र लक्ष्मण समेत । तब गये जनकतनया निकेत ॥ सुनु राजपुत्रिके एक बात । हम वन पठये हैं नृपति तात ॥ २३ ॥ तुम जननि सेवकहैं रहहु बाम । कै जाहु आजुही जनक धाम ॥ सुनि चन्द्रवदनानि गजगमनि ऐनि । मन रुचै सो कीजै जलज-

नैनि ॥ २४ ॥ सीताजू-नाराचछंद ॥ नहौं रहौं न जाहुजू विदेहधामकों अबै । कही जो बात मातुपै सो आजु मैं सुनी सबै ॥ लगै क्षुधा हिमा भली बिपत्तिमांझ नारिये । पियास त्रास नीर बीर युद्धमें सम्हारिये ॥ २५ ॥

टी०-॥ २० ॥ सतीकी औ तुलसीकी कथा प्रसिद्ध है ॥ २१ ॥ २२ ॥ ॥ २३ ॥ जनानि कौशल्या ऐनि कहे हे सुन्दरि ॥ २४ ॥ कि स्त्रीको पतिहि कि सेवा उचित है यह बात जो मातासों तुम कह्यो है सो हम सब सुन्यो है यासों या जनायो कि तुम्हारी सेवा छाँडि हम कैसे घरमें रहैं क्षुधामें माता भली लगतिहै पोषण करिबो मुख्य धर्म माताको है तासों यथा कवि प्रियायां माता जिमि पोषति पिता जिमि प्रतिपाल करैं औ विपत्तीमें नारिये कहे स्त्रीही भली लागति है जो अनेक प्रकारसों शुश्रूषा करि मनको वहरावति है औ पियासकी त्रास समय नीर भलो लागतहै औ युद्धमें वीर जो योद्धा है तिनको सँभारिये यहै भलो लागत है अर्थ अनेक वीरनको संभारिबो एकत्र करिवो अथवा सावधान करिबोई भलो लागत है यह कहि या जनायो कि यह तुम्हारो विपत्तिको समय है तासों तुम्हारे संग हमको चलिवो विशेषि है ॥ २५ ॥

लक्ष्मण-सुप्रियाछंद ॥ वनमहँ विकट विविध दुख सुनिये । गिरि गह्वर मग अगमके गुनिये ॥ कहुँ अहि हरि कहुँ निशिचर चरहीं । कहुँ दव दहन दुसह दुख दरहीं ॥ २६ ॥ सीताजू-दंडक ॥ केशो दास नींद मूख प्यास उपहास त्रास दुखको निवास विष मुखहू गह्यो परै । वायुको वहन दिन दावाको दहन बडी वाडवा अनल ज्वालजालमें रह्यो परै ॥ जीरन जनम जात जोर जुर घोर परिपूरण प्रकट पारिताप क्यों कह्यो परै । सहिहौं तपन ताप पतिके प्रताप रघुवीरको विरह वीर मोसों न सह्यो परै ॥ २७ ॥

टी०-दवदहन कहे दावाग्नि ॥ २६ ॥ दुखको निवास जो विष है सो मुखमें गह्यो परत है अर्थ विष खायो जात है जीर्ण कहे जर्जर अर्थ थोडी है मर्यादा जाकी ऐसो जो जन्म है सो जातु कहे जाउ अर्थ कि मृत्यु होय और घोर जो ज्वर है औ परिपूर्ण कहे दैहिक दैविक भौतिक तीनों प्रकारकी जो

परिताप है कैसी परिताप कि क्यों कह्यो परै अर्थ जो काहू विधिसों नहीं कह्यो जात अति बडो इति ये सब पतिके प्रतापसों सहिहौ जो परके प्रताप पाठ होय तौ पर जे शत्रु हैं तिनके प्रताप सहिहौ अर्थ शत्रुकृत दुःख सहिहौं ॥ २७ ॥

राम-विशेषक छंद ॥ धाम रहौ तुम लक्ष्मण राजकि सेव करो । मातनिके सुनि तातसो दीरघ दुःख हरो ॥ आइ भरत्थ कहाधौं करै जिय भाय गुनौ । जो दुख देइँ तौ लै उरगौ यह बात सुनौं ॥ २८ ॥ लक्ष्मण-दोहा ॥ शासन मेटी जाय क्यों, जीवन मेरे हाथ ॥ ऐसी कैसे बूझिये, घर सेवक बन नाथ ॥ २९ ॥ द्रुतविलंबितछंद ॥ विपिन मारग राम विराजहीं । सुखद सुन्दरि सोदर भ्राजहीं ॥ विविध श्रीफल सिद्धि मनो फल्यो । सकल साधन सिद्धिहि लै चल्यो ॥ ३० ॥ दोहा ॥ राम चलत सबपर चल्यो, जहँ तहँ सहित उछाह ॥ मनो भगीरथ पथ चल्यो, भागीरथी प्रवाह ॥ ३१ ॥ चंचलाछंद ॥ रामचन्द्र धामते चले सुने जबै नृपाल । बातको कहे सुने सो ह्वै गये महाविहाल ॥ ब्रह्मरंध्र फोरि जीव यों मिल्यो विलोकि जाइ । गेह चूरि ज्यों चकोर चंद्रमें मिले उडाइ ॥ ३२ ॥

टी०-उरगौ कहै बितावो अथवा हे भाइ ! जो भरत तुमको दुःख दैहै तौ लै कहे अंगीकार करिकै उरमें गुनौं अर्थ समय पाय ताको फल देबेके लिये समुझि राखौंगौ यह बात सुनौ अर्थ गौकी जो यह बात है सो सुनो ॥ २८ ॥ यामें या जनायो कि जो मैं इहां रहिबोऊ करौं तो जीव तुम्हारे संग जैहै ॥ २९ ॥ विपिन कहे बन भ्राजहीं कहे शोभहीं विविध कहे अनेक प्रकारकी श्रीफल कहे शोभा फलकी जो सिद्ध कहे वृद्धि है "सिद्धिः स्त्रीयोगनिष्पत्तिपादुकांतर्द्धिवृद्धिषु ।" इति मेदिनी ॥ तासों फल्यो जो सिध्य है सिद्धति शेषः सकल साधन कहे ध्यानादि औ सकल सिद्धि कहे अणि मादिकनको लैकै चल्यो है तौ जप योगते बडी शोभाको प्राप्त सिद्धरूप रामचंद्र है सकल साधनरूप लक्ष्मण हैं अष्टसिद्धि रूप सीता

हैं औ कहूं सिद्धि मनो फल्यो पाठ है सो अर्थ खुल्यो है ॥ ३० ॥ उछाह जो आनंद है तेहिते सब पुर चल्यो कहे सब पुरवासी चले तो या जानो पुरीमें उछाहहू रामहींके साथ चलो गयो ॥ ३१ ॥ गेहु कहे पिंजरा॥ ३२ ॥

चित्रपदाछंद ॥ रूपहि देखत मोहैं । ईश कहौ नर को हैं ॥ संभ्रम चित्त अरूझै । राम हियों सब बूझै ॥ ३३ ॥ चंचरी-छंद ॥ कौन हौ कितते चले कित जात हौ केहि कामजू । कौनकी दुहिता बहू काहि कौनकी यद बामजू ॥ एक गाँवउ रहौ कि साजन मित्र बंधु बखानिये । देशके परदेशके किधौं पंथकी पहिचानिये ॥ ३४ ॥ जगमोहनदंडक ॥ किधौं यह राजपुत्री बरहीं वयोहै किधौं उपधि बरचो है यहि शोभा अभिरत हौ । किधौं रति रतिनाथ जप साथ केशोदास जात तपोवन शिववैर सुमिरत हौ ॥ किधौं मुनिशापहत किधौं ब्रह्मदोषरत किधौं सिद्धियुत सिद्ध परम विरतहौ । किधौं कोऊ ठगहौ ठगोरी लीन्हे किधौं तुम हरि हर श्री हौ शिवा चाहत फिरतहौ ॥ ३५ ॥

टी०-सब मगके प्राणी तिनहुनकी सुंदरता देखिकै मोहत हैं सो मनमें कहत हैं कि हे ईश ! हे भगवन् ! ये कौ हैं या प्रकार संभ्रममें सबके चित्त अरुझत हैं तब रामहींसों या प्रकार सब बूझै कहे पूंछत हैं सो आगे कहत हैं ॥ ३३ ॥ बहू पुत्रवधू साजन कहे स्वामी ॥ ३४ ॥ कि यह जो स्त्री है सो राजपुत्री है ताको बरहीं कहे जबरईसों बरचो है कहे विवाह्यो है अथवा यह जो राजपुत्री है ताहीं माता पिताकी आज्ञा मेटिकै अपनी इच्छासों तुमको जबरई बरचो है कि तुम याको उपधि कहे छलसों बरयो है ॥ " कपटोस्त्री व्याजदम्भोपधयश्छद्मकैतवे" इत्यमरः ॥ ऐसी शोभासों अभिरत कहे युक्त हौ काहेते कि जो तुमको तपस्वी जानि राजा अपनी इच्छासों विवाह दे तौ तुम्हारे आश्रमपर्यन्त आपने लोग संग करि देते सो नहीं हैं तासों यह जानि परत है कि ताही राजाके भयसों बनको भागे जात हौ इति भावार्थः । जब संसार जीत्यो है ताको यश रूप लक्ष्मण हैं शिवजी नयनकी आगिसों जारचो ता वैरको सुमिरतको शिवसे लरिबेको जात हौ अथवा शिवके वैरको सुमिरत हौ तासों तपोवन-

में तप करिबेको जात हौ जासों बडो तप करि तपोबलसो शिवको जीतै कि सिद्धि तप सिद्धि अथवा मुक्ति तासों युक्त तुम परम विरत सिद्ध हौ परम विरत कहि या जनायो कि संसारसों अति विरक्त ह्वै अति बडो तप करचो है यासों देह धरि सिद्धि तुम्हारे संग संग फिराति है ॥ "सिद्धिस्तु मोक्षे निष्पत्तियोगयोः ॥" इत्यभिधानाचिन्तामणौ ॥ कि हरि औ हर औ श्रीलक्ष्मी हौ शिवा जो पार्वती हैं तिन्हैं चाहत कहे ढूंढत फिरत हौ ॥ ३५ ॥

मत्तमातंगलीलाकरनदंडक । मेघ मंदाकिनी वारु सौदा-
मिनी रूप रूरे लसैं देहधारी मनो । भूरि भागीरथी भारती
हंस जा अंशके हैं मनो भाग भारे मनो ॥ देवराजा लिये
देवराती मनो पुत्र संयुक्त भूलोकमें सोहिये । पक्ष दूसंधि-
संध्या सधी है मनो लक्षिये स्वच्छ प्रत्यक्षही मोहिये ॥ ३६ ॥

१०-मेघ औ मंदाकिनी आकाशगंगा औ सौदामिनी कहे बिजुली ये तीनौं देहधारी मानो रूरे कहे सुंदर रूप कहे वेषसो लसत हैं अथवा रूरे कहे विमल जो रूप सौंदर्य है तेहि करिकै देहधारी लसै कहे शोभित हैं यासों या जनायो कि मेघादिक तीनों जब सुंदरतासों मिलिकै रूप धरैं तब रामादिकनके रूपसम होइ कि मानो भागीरथी गंगा औ भारती सरस्वती औ हंसजा यमुना तिनके ज हैं भूरि कहे संपूर्ण अंश कहै भाग तिनहिनके भारे भाग कहे भाग्य मनौ कहे कहियत है अर्थ भागीरथी भारती हंसजाके अंशनके बडे भाग हैं जिन ऐसे सुन्दर रूप पाये हैं भागीरथीके पूर्णांशावतार रूप लक्ष्मण हैं भारतीके पूर्णांशावतार रूप सीता हैं यमुनाके पूर्णांशावतार रूप रामचन्द्र हैं देवराजको पुत्र जयंत औ की दू कहे दूनौ कृष्णपक्ष तिनकी संधिमें स्वच्छ संध्या सधी है स्थित है जाको प्रत्यक्षही लक्षिये कहे देखियत है औ शोभासों मोहियत है कृष्णपक्षरूप राम हैं शुक्लपक्ष रूप लक्ष्मण है संध्यारूप सीता हैं अथवा दूनों जे पक्ष हैं तिनमें संधि कहे मध्य है तौ शुक्लादि गणनासों दुवौ पक्षनको मध्य पूर्णिमा है तौ संधिपदते पूर्णिमा जानौ याहूमें पूर्णिमारूप सीता हैं दुवौ पक्षरूप राम लक्ष्मण हैं औ तीनों संध्या परस्पर सधी हैं अर्थ कि एकत्र हैं प्रातःसंध्या रक्त है मध्याह्न संध्या शुक्ल है सायंसंध्या श्याम है यथा सामसंध्यायाम् ॥ " पूर्वसंध्या तु गायत्री रक्तांगी रक्तवाससा ॥

मध्याह्ने तु या संध्या श्वेतांगी श्वेतवाससा ॥ अपराह्ने तु या संध्या कृष्णांगीकृष्णवाससा ॥" कतहूं संध संध्या संधी या पाठ है तौ दुवौ पक्षनके संध कहे साथ संध्या संधी है सो जानो ॥ ३६ ॥

अनंगशेखरदंडक ॥ तडाग नीरहीन ते सनीर होत केशोदास पुंडरीक झुंड भौंर मंडलीन मंडहीं । तमाल वल्लरी समेति सूखि सूखिके रहे ते बाग फूलि फूलिकै समूल शूल खंड हीं ॥ चिते चकोरनी चकोर मोर मोरनी समेत हंस हंसिनी समेत शारिका सबै पढैं । जहीं जहीं विराम लेत रामजू तहीं तहीं अनेक भांतिके अनेक भोग भागसों बढैं ॥ ३७ ॥

टी०-पुंडरीक कमल भाग सो कहे भाग्यसों अथवा द्विगुण चतुर्गुणादि भाग कहे हींसासों ॥ ३७ ॥

सुंदरीछंद ॥ घामको राम समीप महाबल । शीतहि लागत है अति शीतल ॥ ज्यों घनसंयुत दामिनि केतन । होत हैं पूषन केकर भूषन ॥ ३८ ॥ मारगकी रज तापित है अति । केशव सीतहि शीतल लागति ॥ ज्यों पदपङ्कज ऊपर पाँयनि । दै जो चलै तोहिते सुखदायनि ॥ ३९ ॥

दोहा ॥ प्रति पुर औ प्रति ग्रामकी, प्रति नगरनकी नारि ॥ सीताजूको देखिके, वर्णत हैं सुखकारि ॥ ४० ॥

जगमोहनदंडक ॥ वासों मृग अङ्क कहैं तोसों मृगनैनी सब वह सुधाधर तुहूं सुधाधर मानिये । वह द्विजराज तेरे द्विजराजि राजैं वह कलानिधि तुहूं कलाकलित बखानिये ॥ रत्नाकरके हैं दोऊ केशव प्रकाश कर अंबर विलास कुवलय हित मानिये । बाके अतिशीतकर तुहूं सीता शीतकर चंद्रमासी चंद्रमुखी सब जग जानिये ॥ ४१ ॥

टी०-घामको जो महाबल कहे अति तेज है सो रामके समीपमें सीताको अति शीतल लागत है जैसे घन जे मेघ हैं तिनते युक्त जो दामिनी बिजुली है ताके तनुमें पूषण जे सूर्य हैं तिनके कर किरण भूषण होतहैं सूर्यकी किरणें मेघनमें परतीहै तब इंद्रधनुष होतहै सोई दामिनीको भूषण सम है ॥ ३८ ॥

हेतु यह कि पृथ्वीकी सीता पुत्री हैं रामचन्द्र जामातु हैं तासों पृथ्वीकी रज तिनको सुख दियोई चहै तामें युक्ति यह कि पंकजपर पांउँ धारिकै चलै तौ शीतलई लागत है ॥ ३९ ॥ ४० ॥ या प्रकार कोऊ स्त्री सीतासों कहतिहै कि वह जो चंद्रमा है जाको मृग अंक सब कहत हैं मृगा जो शशा है सो है अंकमें गोदमें मध्य इति जाके अथवा मृगको अंक कहे चिह्न है जाकै औ तोहूंको मृगनैनी कहतहैं औ वह सुधाधर है सुधा अमृतको धरे है औ तुहूं सुधाधर है सुधासम हैं अधर ओष्ठ जाके औ वह द्विजराज कहावत है तेरेहू द्विज जे दंत हैं तिनकी राजि कहे पंगति राजति है औ वह षोडशकलनको निधि है औ तुहूं अनेक जे नेत्र विक्षेपादि कला हैं अथवा चौसठि कला तिनसों कलित है औ वह रत्नाकर जो समुद्र है ताको प्रकाशकर कहे बढावनहार है पूर्णमासीके चन्द्रमाके उदयसों समुद्र बाढत है प्रसिद्ध है औ तू भूषणनके रत्ननको जो आकार समूह है ताको प्रकाश शोभा करता है अर्थ तेरी छबिसों भूषणनके रत्न शोभा पावत हैं औ चन्द्रको अंबर आकाशमें बिलास है सीताको अंबर वस्त्रमें औ चन्द्रमा कुबलयको हित है औ सीता कुबलय कहे पृथ्वीमंडलको हितकरे अतिप्रिय लागतिहै अर्थ सौंदर्यादिक गुण सीतामें ऐसे हैं जासों सबको प्रिय है औ वाके चन्द्रमाके अति शीत है कर कहे किरणि औ हे सीता तुहूं शीतकर है जो तो को देखत हैं ताके लोचन शीतल हैं तौ जौन जौन जिह्वगुण चंद्रमामो हैं ते तोहूंमें हैं याते हे चंद्रमुखी ! सब जग करिकै तोकों चन्द्रमा सम जानियत है अर्थ सब जग तोकों चन्दमा सम जानत हैं॥४१॥

अन्यच्च ॥ कलित कलंक केतु केतु अरिसेतु गात भोग योगको अयोग रोगहीको थलसों । पून्योईको पूरन पै प्रति दिन दूनो दूनो क्षण क्षण क्षीण होत छीलरकी जलसों ॥ चंद्रसों जो बरणत रामचंद्रकी दोहाई सोई मतिमंद कविकेशव कुशलसों । सुंदर सुवास अरु कोमल अमलअति सीताजूको मुख सखि केवल कमलसों ॥ ४२ ॥

टी०—दूसरी स्त्री ताको मत खंडिकै आपनो मत कहति है कलंक कि जो केतु कहे पताका है अर्थ पताका सम जाको कलंक प्रसिद्ध है औ केतुको अरि शत्रु है राहु केतु एकइके खंड हैं तासों अक्षर मैत्रीके लिये केतु कह्यो औ स्त्री आदिके जे भोग हैं तिनको जो योगसंयोग रेताको

अयोग असमर्थ है गुरुशापसों क्षयरोग युक्त है क्षण क्षण क्षीण होत जो छीलर कहे दीना अथवा अंजलिको जल है तासम प्रतिदिन दूनो क्षीण होत हैं ॥ ४२ ॥

अन्यच्च ॥ एके कहैं अमल कमल मुख सीताजूको एक कहैं चन्द्र सम आनंदको कंदरी । होइ जो कमल ता रयनि मैन सकुचै री चंद जो तौ बासरन होइ द्युति मंद री ॥ बासरही कमल रजनीहीमें चंद्रमुख बासरहू रजनि विराजै जगबंद री । देखे मुख भावै अनदेखेई कमलचंद तात मुख मुखै सखी कमलैन चंद री ॥ ४३ ॥ दोहा ॥ सीतानयन चकोर सखि, रविवंशी रघुनाथ ॥ रामचंद्र सिय कमल मुख, भलो बन्यो है साथ ॥ ४४ ॥ विजयछंद ॥ बहुबाग तडाग तरंगनि तीर तमालकी छांह बिलोकि भली । घटिका यक बैठत हैं सुख पाय बिछाय तहां कुश काश थली ॥ मगको श्रमश्री पति दूरि करैं सियको शुभ वा कल अंचलसो । श्रमतेऊ हरैं तिनको कहि केशव चंचल चारु दृगंचलसों ॥ ४५ ॥ सोरठा ॥ श्रीरघुबरके इष्ट, अश्रुबलित सीतानयन ॥ सांची करी अदृष्ट, झूँठी उपमा मीनकी ॥ ४६ ॥

टी०—तीसरी स्त्री दुवौको मत खंडि आपनो कहति है कमलचंद्रके देखेहू पर मुख भावत है औ कमलचन्द्रमुखके अनदेखे ही भावत है जब या मुखेको देखो तब कमलचंद्रके देखबेकी इच्छा नहीं होति जब उत्तम वस्तु देखो तब अनुत्तम वस्तु देखे अच्छी नहीं लागति है ॥ ४३ ॥ सूर्यको औ चकोरको औ चंद्रको औ कमलको स्वाभाविक विरोध है सो इहाँ भलो कहे अद्भुत साथ बन्यो है ॥ ४४ ॥ दृगंचल दृगकोर ॥ ४५ ॥ श्रीरघुबरके इष्ट कहे प्रिय अश्रु आनंदाश्रु करिकै वलित युक्त जे सीताके नयन हैं तिन मीनकी जो झूठी उपमा अदृष्ट रही है ताको सांची करी अर्थ मीन जलमें रहते हैं नयन जलमें नहीं रहत समतामें यह भेद रह्यो है सो आनंदाश्रु जलमें बूडिकै सीताके नयन सांची करी ॥ ४६ ॥

दोहा ॥ मारग यों रघुनाथजू, दुख सुख सबही देत ॥ चित्रकूट पर्वत गये, सोदर सियासमेत ॥ ४७ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रि-
कायामिन्द्रजिद्विरचितायां रामस्यचित्रकूटगमनं
नाम नवमः प्रकाशः ॥ ९ ॥

टी०-दर्शनसों सुख देत वियोगसों दुख देत ॥ ४७ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसाद-
निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां नवमः प्रकाशः ॥ ९ ॥

दोहा ॥ यह प्रकाश दशमें कथा, आवन भरत सुनाम ॥ राजमरण अरु तासुको, बसिवो नंदिग्राम ॥ १ ॥ दोधकछंद ॥ आनि भरत्त पुरी अवलोकी । स्थावर जंगम जीव सशोकी ॥ भाट नहीं विरदावलि साजैं । कुंजर गाजैं न दुंदुभि बाजैं ॥ २ ॥ राजसभा न विलोकिय कोऊ । शोक गहे तब सोदर दोऊ ॥ मंदिर मातुविलोकि अकेली । ज्यों बिन वृक्ष विराजति वेली ॥ ३ ॥ तोटकछंद ॥ तब दीरघ देखि प्रणाम कियो । उठिकै उन कण्ठ लगाइ लियो ॥ न पियो जल संभ्रम भूलि रहे । तब मातुसों बात भरत्थ कहे ॥ ४ ॥

टी०-नाम कहे प्रसिद्ध ॥ १ ॥ २ ॥ राजसभामें कोऊ न देख्यो तब शोकको गहे औ माताके मंदिरमें जाइकै माताको अकेली देख्यो तब शोक गहे ॥ ३ ॥ ४ ॥

विजयाछंद ॥ मातु कहां नृप तात गये सुरलोकहि क्यों सुत शोक लये । सुत कौन सुराम कहां हैं अबै वन लक्ष्मण सीय समेत गये ॥ बन काज कहा काहि केवल मो सुख तोकों कहा सुख यामें भये । तुमको प्रभुताधिक तोकों कहा अपराध

बिना सिगरेई हये ॥ ५॥ दोहा ॥ भर्त्ता सुत विद्वेषिनी, सबहीको दुखदाइ ॥ यह कहि देखे भरत तब, कौशल्याके पाइ ॥ ६ ॥ तोटकछंद ॥ तब पायन जाइ भरत्थ परे । उन भेंटि उठाइक अंक भरे ॥ शिर सूंघि विलोकि बलाइ लई । सुत तो विनया विपरीत भई ॥ ७ ॥ भरत-तारकछंद ॥ सुनु मात भई यह बात अनैसी । जु करी सुतभर्तृविनाशिनि जैसी ॥ यह बात भई अब जानत जाके । द्विजदोष परै सिगरे शिर ताके ॥ ८ ॥ जिनके रघुनाथ विरोध बसै जू । मठ धारिनके तिन पाप ग्रसैजू ॥ रस राम रस्यो मन नाहिं न जाको । रणमें नित होइ पराजय ताको ॥ ९ ॥ कौशल्या ॥ जनि सौंह करो तुम पुत्र सयाने । अति साधु चरित्र तुम्हैं हम जाने ॥ सबको सबकाल सदा सुखदाई । जिय जानति हौ सुत ज्यौं रघुराई॥ १० ॥ चंचरीछंद ॥ हाइ हाइ जहां तहां सब ह्वै रही सिगरी पुरी । धाम धामनि सुन्दरी प्रगटीं सबै जे हुती दुरी ॥ लै गये नृप नाथका सब लोग श्रीसरयूतटी । राजपत्निसमेति पुत्रनि विप्र लाय गढा रटी ॥ ११ ॥

टीका-॥ ५ ॥ ६ ॥ लघूको शिर सूँघिवो बडेनकी प्रीति रीति है रोगबलाइ लीबो स्त्रीनके प्रसिद्ध हैं ॥ ७ ॥ ८ ॥ शिव आदि देवनके मठकी जे पूजा लेत हैं ते मठधारी कहावत हैं रस कहे प्रेम अंगरागादौ " विषे वीर्ये द्रवे रागे गुणे रसः" इत्यमरः । रस्यो भीज्यो युक्त इति ॥९ ॥ १० ॥ विप्रलाप जे हैं अनर्थ वचन अथवा कैकेयी प्रति विरोध वचन तिनकी गढी कहे समूह रढी कहत भये कि कैकेयीहीके करत ऐसी विघ्न भयो तासों याको मुखदेखिवो उचित नहीं है इत्यादि वचन सब कहत हैं । "विप्रलापो विरोधोक्तावनर्थकवचस्यपि " इत्यभिधानचिन्तामणिः ॥११॥

सोमराजीछंद ॥ करी अग्नि अर्चा । मिटा प्रेतचर्चा ॥ सब राजधानी । भई दीनवानी ॥ १२ ॥ कुमारललिताछंद ॥

क्रिया भरत कीनी । वियोग रस भीनी ॥ सजी गति नवीनी । मुकुंदपद लीनी ॥ १३ ॥ तोटकछंद ॥ पहिरे वकला सुजटा धरिकै । निज पाँयनि पंथ चले अरिकै ॥ तरि गंग गये गुह संग लिये । चित्रकूट विलोकत छाँडि दिये ॥ १४ ॥

टी०—जब भरत अग्निसों अर्चा पूजा करी अर्थ चितामें अग्नि दियो तब प्रेतचर्चा मिटी अर्थ सब अयोध्यावासी परस्पर अनेक प्रेतवार्ता करत रहे ताको छोंडि दीन वाणी भये अर्थ करुणा स्वर करिकै रोये मरणसमयमों औ दाहभूमिमें लैजातमों औ दाह होतमों अधिक अधिक तर वियोग मानि रोइबेकी रीति सिद्ध है अथवा अग्नि करी कहे चितामें अग्नि दियो तबते अशुद्धिसो अर्चा कहे देवपूजा मिटी औ प्रेतचर्चा भई इति शेषः ॥ १२ ॥ क्रिया षोडशी आदि भरत नीकी करत भये ताके बादि मुकुंद रामचन्द्रके वियोगरसमें भीनी नवीनी गति कहे दशावल्कल वसनादि साजी औ मुकुंदपद लीनी कह ज्ञान बुद्धि इति सजी अर्थ पिताकी क्रिया पूर्ण करि रामचन्द्रके चरणनमें मनु लगायो गति पद श्लेष है एक पक्ष दशा जानो एक पक्ष बुद्धि जानौ " गतिस्त्रीमार्गदशयोर्ज्ञाने यात्राभ्युपाययोः " इति मेदिनी ॥ १३ ॥ अरिकै कहे हठ करिकै गंगा उतरिकै गुहको संग कहे ज्ञातिसमूह सुधी मार्ग बताइवेके लिये गये जब चित्रकूट देख्यो तब तिन्हैं छोडिदियो ॥ १४ ॥

मदनमोदकछंद ॥ सब सारस हंस भये खग खेचर बारिद ज्यों बहु बारन गाजे । बनके नर वानर किन्नर बालक लै मृग ज्यों मृग नायक भाजे ॥ तजि सिद्ध समाधिनके सब दीरघ दोरि दरीनमें आसन साजे । भूतल भूधर हाले अचानक आइ भरत्थके दुंदुभि बाजे ॥ १५ ॥ दोहा ॥ रामचन्द्र लक्ष्मण सहित, शोभित सीता संग । केशव दास सहास उठि, चले धरणिधर शृंग ॥ १६ ॥ लक्ष्मण—मोहनछन्द ॥ देखहु भरत चमू सजि आये । जानि अबल हमको उठि धाये ॥ हींसत हय बहु वारण गाजे । जहँ तहँ दीरघ दुंदुभि बाजे ॥ १७ ॥ तारकछंद ॥ गजराजनि ऊपर पाखर सोहैं ।

अति सुंदर शीश शिरोमणि मोहैं ॥ मणि घूंघुर घंटनके रव बाजैं । तडितायुत मानहुँ वारिद गाजैं ॥ १८ ॥ विजयछंद ॥ युद्धको आजु भरत्थ चढे धुनि दुंदुभिकी दशहूँ दिशि धाई । प्रात चली चतुरंग चमू वरणी सो न केशव कैसेहुँ जाई ॥ यों सबके तन त्राननिमें झलकी अरुणोदयकी अरुणाई । अंतरते जनु रंजनको रजपूतनकी रज ऊपर आई ॥ १९ ॥

टी०-सारस हंस औ और जे खग पक्षी हैं ते खेचर कहे आकाशगामी भये जैसे मृगनायक सिंह जौन ग्रीवादि अंग पकरि पायो सोई अंग गहि मृगको लै भाग्यो ताही प्रकार अतिभयसों अपने अपने बालकनको लै किन्नरादि भागे ॥ १५ ॥ किन्नरादिकी या दशा देखि हास्यपूर्वक कारण देखिबेको धराणिधर शृंगमें चढे ॥ १६ ॥ हींसत बोलत ॥ १७ ॥ पाखर झूल ॥ १८ ॥ रजनको क्षत्र धर्ममें रंजित करिबेको मानौं रजपूतनकी रज रजोगुण रजपूती इति ऊपर कहि आये हैं ॥ १९ ॥

तोटकछंद ॥ उठिकै धर धूरि अकाश चली । बहु चंचल बाजि खुरी न दली ॥ भुव हालति जाहि आकाश हिये । जनु थंभित ठौरनि ठौर किये ॥ २० ॥ तारकछंद ॥ रण-राज कुमार अरूझहिंगे जू । अति सन्मुख घायनि जूझहिंगे जू ॥ जनु ठौरनि ठौरनि भूमि नवीने । तिनके चढिबे कहँ मारग कीने ॥ २१ ॥ सीताजू--तोटकछंद ॥ रहि पूरि विमा-ननि व्योम थली । तिनको जनु टारन धूरि चली ॥ परिपूरि अकाशहि धूरि रही । सुगयो मिटि शूर प्रकाश सही ॥ २२ ॥ दोहा ॥ अपने कुलको कलह क्यों, देखहिं रवि भगवंत ॥ यहै जानि अंतर कियो, मानो मही अनंत ॥ २३ ॥ तोटक-छंद ॥ बहुतामह दीह पताक लसै । जनु धूममें अग्निकी ज्वाल बसै ॥ रसना किधौं काल कराल घनी । किधौं मीचु नचै चहुँ ओर बनी ॥ २४ ॥ दोहा ॥ देखि भरतकी चल ध्वजा, धूरिनमें सुख देत ॥ युद्ध जुरनको मनहुँ प्रति, योधन बोले लेत ॥ २५ ॥

लक्ष्मण-दंडकछंद ॥ मारि डारौं अनुजसमेत यहि खेत आजु मेटि परौं दीरघ बचन निज मुरको । सीतानाथ सीता साथ बैठे देखि छत्रतर यहि सुख शोषौं शोक सबहीके उरको ॥ केशवदास विलास वीस विस्वे वास होइ कैकेयीके अंग अंग शोक पुत्र ज्वरको ॥ रघुराजजूको साज सकल छिडाइ लेउँ भरतहि आजु राज देउँ यमपुरको ॥ २६ ॥

टी०-सैन्यके भयसों अथवा बालसों हालत जानिकै थंभित कहे थांभ-खंभा इति ॥ २० ॥ सन्मुख घाव जूझिकै वीर स्वर्गको जात हैं सो मानो राजकुमारनके स्वर्ग जाइबेको भूमि मार्ग कहे राह कीन्हें हैं ॥ २१ ॥ विमान आकाशगामी रथ व्योमयान 'विमानोऽस्त्रीत्यमरः' ॥ २२ ॥ मही जो पृथ्वी है तेहि अनंत कहे अनेक अंतर कियो अनेक धूरिके तुंग उठत हैं तेई अंतर व्यवधान हैं अथवा अनंत लक्ष्मणको संबोधन है ॥ २३ ॥ रसना जिह्वा ॥ ॥ २४ ॥ २५ ॥ पुत्र ज्वर कहे पुत्रमरण चौबीसवें प्रकाशमें कह्यो है कि जरा जब आवै ज्वराकी सहेली तहां ज्वराशब्द मृत्युको वाची है रघुराज-जूकी साज अर्थ गजरथादि राज साज राज्य रामचन्द्रको है जाको लै ताके सब साज भरत सजे हैं तिन्हें छडाइ रामचन्द्रमें साजिकै राज्यमें बैठारिये इत्यर्थः ॥ २६ ॥

दोहा ॥ एक राजमें प्रगट जहँ, द्वै प्रभु केशव दास ॥ तहां बसत है रैन दिन, मूरतिवंत विनास ॥ २७ ॥ कुसुमविचित्राछंद ॥ तब सब सेना बहि थल राखी । मुनिजन लीन्हे सँग अभिलाषी ॥ रघुपतिके चरणन शिर नाये । उन हँसिके गहि कंठ लगाये ॥२८॥ भरत-दोधकछंद ॥ मातु सबै मिलिबे कहँ आईं । ज्यों सुतकी सुरभी सुलवाईं ॥ लक्ष्मणस्यो उठिके रघुराई । पाँयन जाय परे दोउ भाई ॥ २९ ॥ मातनि कंठ उठाय लगाये । प्राण मनो मृत देहनि पाये ॥ आइ मिली तब सीय सभागी । देवर सासुनके पग लागी ॥३०॥

टी०-पिताने भरतको राजा कियो है तासों भरतको राज्यपदभ्रष्ट होइ तौ पिताको वचन निष्फल होइ या हेतु भरतको राज्य देउँ जामें रामचन्द्र

सुचित्त ह्वै अयोध्यामें राज्य करैं इति भावार्थः ॥ २७ ॥ अभिलाषी जे मुनि जन हैं अथवा मुनिजन संग लीन्हें औ और रामदर्शनको अभिलाषी हैं तिन्हैं लीन्हें रामचन्द्रके हँसिवेके हेतु लक्ष्मणके बचन हैं ॥ २८ ॥ थोरे दिनकी बियानी गाय लवाई कहावति है ॥ २९ ॥ भरतके वचन सुनिकै भरत शत्रुघ्नको सीताके पास राखि लक्ष्मण मातनके मिलिबेको आये ताके पीछे सीता जो सभागी हैं सोऊ देवर जे भरत शत्रुघ्न हैं तिन सहित सासुनको आइमिलीं प्राप्त भईं औ सासुनके पग लागीं ॥ ३० ॥

तोमरछंद ॥ तब पूछियो रघुराइ । सुख हैं पिता न माइ ॥ तव पुत्रको मुख जोइ । क्रमते उठीं सब रोइ ॥ ३१ ॥ दोधक-छंद ॥ आंशुनसों सब पर्वत धोये । जंगमको जड जीवन रोये ॥ सिद्धवधू सिगरीं सुनि आईं । राजवधू सबई समुझाईं ॥ ३२ ॥ मोहनछंद ॥ धरी चित्त धीर । गये गंगतीर ॥ शुचि ह्वै शरीर । पितृ तर्पि नीर ॥ ३३ ॥ भरत-तारकछंद ॥ घरको चलिये अब श्रीरघुराई । जनहौं तुम राज सदा सुख-दाई ॥ यह बात कही जलसो गल भीन्यो । उठि सोदर पाइ परे तब तीन्यों ॥ ३४ ॥ श्रीराम-दोधकछंद ॥ राज दियो हमको बन रूरो । राज दियो तुमको अब पूरो ॥ सो मह्यं तुमह्यं मिली कीजै । बापको बोलु न नेक हु छीजै ॥ ३५ ॥ दोहा ॥ राजाको अरु बापको, बचन न मेटै कोइ । जौन मानिये भरत तौ, मारेको फल होइ ॥ ३६ ॥ भरत-स्वागताछंद ॥ मद्य पानरत स्त्रीजित होई । सन्निपातयुत बातुल जोई ॥ देखि देखि तिनको सब भागै । तासु बात हति पाप न लागै ॥ ३७ ॥

टी०-राम वनगमन दशरथमरण भरतागमनादि कथा क्रमसों कहत सब रोवत भईं ॥ ३१ ॥ सिद्ध तपस्वी अथवा देवयोनिविशेष ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ भरथ लक्ष्मण शत्रुघ्न तीनों पांयन परे कि घरको चलिबो उचित है ॥ ३४ ॥ रूरो सुन्दर ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ स्त्रीजित कहे जो स्त्री करिकै जीतो गयो है अर्थ स्त्रीके वश्य है औ बातुल जो बहुत बातैं कहै ॥ ३७ ॥

ईश ईश जगदीश बखान्यो । वेद वाक्य बलते पहिचान्यो॥ ताहि मेटि हठिकै रहिहौं तौ । गंगतीर तनको तजि हौं तौ ॥ ३८ ॥ दोहा ॥ मौन गही यह बात कहि, छोंडो सबै विकल्प ॥ भरत जाइ भागीरथी, तीर करचो संकल्प॥३९॥ इन्द्रवज्राछंद ॥ भागीरथीरूप अनूपकारी । चंद्राननी लोचनकंजधारी ॥ वाणी बखानी मुख तत्त्व सोध्यौं । रामानुजे आनि प्रबोध बोध्यौ ॥ ४० ॥ उपेन्द्रवज्राछंद ॥ अनेक ब्रह्मादि न अंत पायो । अनेकधा वेदन गीत गायो ॥ तिन्हैं न रामानुज बंधु जानौ । सुनौं सुधि केवल ब्रह्म मानौ॥४१॥ निजेक्षया भूतल देहधारी । अधर्म संहारक कर्मचारी ॥ चले दशग्रीवहि मारिबेको । तपी व्रतीके बल पारिबेको ॥ ४२ ॥ उठो हठी होहु न काज कीजै । कहैं कछू राम सो मानि लीजै ॥ अदोष तेरी सुत मातु सोहै । सो कौन माया इनको न मोहै ॥ ४३ ॥

टी०—ईश जे विष्णु हैं औ ईश जे महादेव हैं और जगदीश जे ब्रह्मा हैं न यह बात बखान्यो है कि स्त्रीजितादिकनके वचन मेटे सों पातक नहीं । सो हम वेदवाक्य बलसों पहिचान्यो हैं अर्थ वेदमें तीन्यो देवके ऐसे न हैं ते हम सुन्यो है अथवा तीनों देवन बखान्यो है औ वेदवाक्य हूंसों पहिचान्यो अर्थ वेदहू यहै कहत है ॥ ३८ ॥ विकल्पविचार गीरथी मंदाकिनी ॥ ३९ ॥ तत्त्व कहे सारांश सोध्यो कहे ढूँढचो तांश युक्त मुखसों वाणी बखानी अथवा ऐसी वाणी बखानी जामें तत्त्व राम कथा तत्त्व है ता करिकै अपने मुखको सोध्यो शुद्ध कऱ्यो औ मानुज जे भरत हैं तिनको प्रबोध कहे उत्तम ज्ञान आनि कहे ल्याइकै यो बोध करचो पद कहि या जनायो कि रामचन्द्रप्रति बन्धु बुद्धिरूपी ामें सोवत रहैं तामें जगायो ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ सुत भरतको धन है यासों या जनायो कि इनकी मायामें मैं मोहिकै तुम्हारी माता को वनगमन चाह्यो ॥ ४३ ॥

दोहा ॥ यह कहिकै भागीरथी, केशव भई अदृष्ट ॥ भरत

कह्यो तब रामसों, देहु पादुका इष्ट ॥ ४४ ॥ उपेंद्रवज्राछंद ॥ चले बली पावन पादुका लै । प्रदक्षिणा राम सियाहुको दै॥ गये ते नंदीपुर बास कीनों । सबंधु श्रीरामहि चित्त दिनों ॥ ४५ ॥ दोहा ॥ केशव भरतहि आदि दै, सकल नगरके लोग ॥ बनसमान घर घर बसे, सकल विगत संभोग ॥ ४६ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां भरतस्य चित्रकूटागमनं नाम दशमः प्रकाशः ॥ १० ॥

टीका--पादुकारूपी इष्ट कहे स्वामी देहु आशय यह कि राज्यपर स्वामी चाहिये ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां दशमः प्रकाशः ॥ १० ॥

दोहा ॥ एकादशै प्रकाशमें, पंचवटीको वास ॥ शूर्पणखाके रूपको, रघुपति करिहैं नाश ॥ १ ॥ भरतोद्धताछंद ॥ चित्रकूट तप रामजू तज्यो । जाइ यज्ञथल अत्रिको भजो ॥ राम लक्ष्मण समेत देखियो । अपनो सफल जन्म लेखियो ॥२॥

टी०-॥ १ ॥ भज्यौ कहे प्राप्त भये ॥ २ ॥

चन्द्रवर्त्मछंद ॥ स्नान दान तप जाप जो करियो । शोधि शोधि पन जो उर धरियो ॥ योग याग हम जालगि गहियो । रामचन्द्र सबको फल लहियो ॥ ३ ॥ वंशस्थाछंद ॥ अनेकधा पूजन अत्रिजू करचो । कृपालु ह्वै श्रीरघुनाथजू थरचो ॥ पतिव्रता देवि महर्षिकी जहां । सुबुद्धि सीता सुखदाई तहां ॥ ४ ॥ दोहा ॥ पतिव्रतनकी देवजा, अनुसूया शुभ गात ॥ सीताजू अवलोकियो, जरा सखीके साथ॥५॥ चतुष्पदी छंद ॥ शिर श्वेत विराजैं कीरति राजै जनु केशव तप बलकी । तनु वलित पलित जनु सकल वासना निकरि गई थल थलकी ॥ कांपति शुभ ग्रीवा सब अँग सींवा देखत

चित्त भुलाहीं। जनु अपने मन प्रति यह उपदेशति या जगमें कछु नाहीं ॥ ६ ॥ प्रमिताक्षराछंद ॥ हरवाइ जाइ सिय पाइ परी। ऋाष नारि सूंघि शिर गोद धरी ॥ बहु अंगराग अँग अंग रये। बहु भाँति ताहि उपदेश दये ॥ ७ ॥ स्रग्वि-नीछंद ॥ राम आगे चले मध्य सीता चली ! बंधु पाछे भये सामसोमै भली ॥ देखि देही सबै कोटि धाके भनो। जाव जीवेशके बीच माया मनो ॥ ८ ॥

टी०--मनको शोधि शोधि शुद्ध करि करि गुनकी जो उर विशष धरचो है अर्थ तुम्हारो ध्यान करचो है अथवा मनहीको शुद्ध करिकै जो उरमें धारण करचो अर्थ मनकी जो चंचलता है ताहि छोडाइ अपने वश्य करचो है सो हे रामचन्द्र ! ताको सबको फल जो तुम्हारे दर्शन हैं ताको पायो ॥३ ॥ ४ ॥ जरा कहे बुढाईरूपी जो सखी है ताके साथ देख्यो ॥५॥ तन वलित कहे युक्त है पलित कहे ढिलाइसों अर्थ वृद्धतासों त्वचामें सिकुरा परिगये हैं सो मानों थलथलकी अंगअंगकी वासना विषयवासना निकरि गई है ताहीते अंग अंग सिकुरि गये हैं सीवा मर्यादा ॥ ६ ॥ हरवाइ कहे हरबराईकै ॥ ७ ॥ बनो कहे कह्यो जीवेश ईश्वर ॥ ८ ॥

मालती छंद ॥ विपिन विराध बलिष्ठ देखियो। नृपतन-या भयभीत लेखियो ॥ तब रघुनाथ बाणकै ह्यो। निज निर्वाण पंथको ठ्यो ॥९ ॥ दोहा ॥ रघुनायक सायक धर, सकल लोके शिरमौर ॥ गये कृपा करि भक्ति वश, ऋषि अगस्त्यके ठौर ॥१०॥ वसंततिलकाछंद ॥ श्रीराम लक्ष्मण अगस्त्य सनारि देख्यो। स्वाहासमेत शुभ पावकरूप लेख्यो ॥ साष्टांग क्षिप्र अभिवंदन जाइ कीन्हों। सानंद आशिष अशेष ऋषीश दीन्हों ॥ ११ ॥ बैठारि आसन सबै अभिलाष पूजे। सीतासमेत रघुनाथ सबन्धु पूजे ॥ जाके निमित्त हम यज्ञ यज्यो सो पायो। ब्रह्माडमंडन स्वरूप जो वेद गायो ॥ १२ ॥

टी०-निर्वाण जो मोक्ष है ताके पंथ कहे राहमें ठयो कहे युक्त करचो अर्थ मुक्ति दियो ॥ ९ ॥ सकल लोक शिरमौर जे रघुनाथ हैं ते सायक जे बाण है तिनको धरे अगस्त्यके ठौरमें गये अथवा रघुनायक भक्तिके वश कृपाकरिकै अगस्त्यके ठौर गये तहां सकललोक शिरमौर जे अपने सायक हैं तिन्हैं धरे धारण करचो विष्णुके धनुर्बाण अगस्त्य के यहां धरे रहे हैं ते रामचंद्रको अगस्त्य दियो है यह कथा वाल्मीकीय रामायणमें है अथवा सकललोक शिरमौर जो विष्णु हैं तिनके सायक धरे धारण करचो अथवा रघुनायकके सकल लोक शिरमौर अगस्त्यके ठौर धरे हैं तालिये औ भक्ति वश कृपाकरि अगस्त्यके ठौर गये ॥ १० ॥ स्वाहा अग्निकी स्त्री ॥ ११ ॥ सबै आपने अभिलाष पूजे पूर्ण करे ब्रह्माण्डको मंडन भूषण जो यह रावरो स्वरूप है ताहीके मिलिबेके लिये हम यज्ञ यज्यो होम्यो करचो इति सो यह स्वरूप पायो ॥ १२ ॥

पद्धटिकाछंद ॥ ब्रह्मादि देव जब विनय कीन । तट क्षीर-सिन्धुके परम दीन ॥ तुम कह्यो देव अवतरहु जाइ । सुत हौं दशरथको होतु आइ ॥ १३ ॥ हम तबते मन आनन्द मानि । मन चितवत तव आगमन जानि ॥ ह्यौं रहिजे करिजे देवकाजु । मम फूलि फल्यो तपवृक्ष आजु ॥ १४ ॥ श्रीराम-पृथ्वीछंद ॥ अगस्त्य ऋषिराजजू बचन एक मेरो सुनौ । प्रशस्त सब भाँति भूतल सुदेश जीमें गुनौ ॥ सनीर तरु-खंड मंडित समृद्ध शोभा धरैं । तहां हम निवासकी बिमल पर्णशाला करैं ॥ १५ ॥ अगस्त्य--पद्मावतीछंद ॥ यद्यपि जग कर्त्ता पालक हर्ता परिपूरण वेदन गाये । अति तदपि कृपा करि मानुष वपु धरि थल पूछन हमसों आये ॥ सुनि सुरवर नायक राक्षस घायक रक्षहु मुनिजन यज्ञ लोज । शुभ गोदावरितट विशद पंचवट पर्ण कुटी तहँ प्रभु कीजै ॥ १६ ॥ दोहा ॥ केशव कहे अगस्त्यके, पंचवटीके तीर ॥ पर्णकुटी पावन करी, रामचन्द्र रणधीर ॥ १७ ॥ त्रिभंगीछंद ॥ फल फूलन पूरे तरुवर रूरे कोकिलकुल

कलरव बोलैं। अतिमत्त मयूरी पियरस पूरी बन बन प्रति नाचति डोलैं॥ सारा शुक पंडित गुणगण मण्डित भावनिमें अरथ बखानै। देखहु रघुनायक सीय सहायक मदन रति मधु जानै॥ १८॥

टी०—॥ १३ ॥ तव कहे तुम्हारो ॥ १४ ॥ प्रशस्त नीको सुदेश सम उच्च नीच रहितेति सनीर सजल औ तरु जे वृक्ष हैं तिनको जो खण्ड समूह है तासों मण्डित युक्त औ समृद्ध कहे वर्द्धमान अधिक इति शोभाको धरै धारण करे होइँ निवासको कहे वसिवेकी ॥ १५ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ रामचन्द्रके आगमनसों दंडकारण्यमें रूरे कहे सुन्दर जे तरु वृक्ष हैं ते फल औ फूलनसों पूरे युक्त भये अथवा रूरेजे फल औ फूल हैं तिनसों तरुवर पूरे औ कोकिलके जे कुलजाति समूह हैं ते कल कहे अव्यक्त मधुररव शब्दको बोलत हैं ॥ " काकली तु कले सूक्ष्मे ध्वनौ तु मधुरा स्फुटे ॥ कलो मंद्रस्तु गंभीरे तारोत्युच्चैस्त्वयस्विषु ॥ " इत्यमरः ॥ औ अतिमत्त जे मयूरी हैं ते पिय जे मयूर हैं तिनके रसमें प्रेममें पूरी बनबन प्रति नाचत डोलती हैं अर्थ जहाँ जहाँ मोर नाचत हैं तहाँ तहाँ संग मयूरी डोलती हैं औ सारो सारिका औ शुक जे गुणगणसों मंडित पंडित प्रवीण- हैं अर्थ अनेक गुणनमें पंडित हैं ते भाव नियम कहे अनेक भाव अभि- प्राय युक्त गानके अर्थको बखानत हैं अथवा नृत्यके जे अनेक भाव चेष्टा हैं तिनमें अर्थको बखानत हैं जब जैसी चेष्टा देखत हैं तब तैसे अर्थके प्रयोजनको बखान करत हैं तामें तर्क करत हैं कि रघुनायक रामचन्द्र औ सीता औ सहायक जे लक्ष्मण हैं तिनको इन वृक्षादिकन देख्यो है सो मानो मदन काम और रतिसहित मधुवसन्त जानत हैं तौ वसंतहूके आगमनमें ये कौतुक होत हैं, तासों उत्प्रेक्षा करयो औ युक्ति यह कि वसंत वनको प्रभु हैं सो प्रभुकी अवाईमें अनेक वितान बिछावने नृत्यादि रचना सब करत हैं सो रतिसहित मदन जो मित्र है तासों युक्त वसंतको आवत देखि बन करयो प्रफुल्लित जे अनेक कुंज हैं तेई वस्त्र भवन औ वितान हैं औ गिरे जे पुष्प हैं तेई पुष्प विछावने हैं कोकिल गावत हैं मोर नाचत हैं सारो शुक बखान करत हैं वेश्यादि नृत्य कारिनहूमें बखान कर्त्ता एक रहत है ॥ १८ ॥

लक्ष्मण—सवैया ॥ सब जाति फटी दुखकी दुपटो कपटी न रहै जहँ एक घटी। निघटी रुचि मीच घटीहू घटी जग

जीवय तीनकी छूटी तटी । अघओघकी बेरी कटी बिकटी निकटी प्रकटी गुरुज्ञानगटी । चहुँ ओरन नाचति मुक्तिनटी गुण धूरजटी वनपञ्चवटी ॥ १९ ॥

टी०--दुपटी द्वै पाटको ओढिवेको वस्त्र सो जहाँ जा पंचवटीके निकट सब फाटि जाति है नेकहू नहीं रहाति अर्थ सब दुःख जहां नशि जात हैं औ कपटी जीव जहां एक घडी नहीं रहत यासों या जनायो कि जहाँ जातही कपटीको कपट दूरि होत है औ जाकी शोभा निरखि जगके जे यती तपस्वी जीव हैं तिनकी तटी कहैं ध्यान स्थितिसो छूटि औ मीचुकी रुचि घटीहू घटी कहैं घरी घरीमें निघटी घटत भई अर्थ यती जीवनको मरेते मुक्ति होति है परन्तु जा स्थानकी शोभा निरखि मुक्तिहूकी इच्छा नहीं करत अघ पाप ओघ समूह बेरी बंधन जंजीरसो ऐसी जो पंचवटी है सो धूर्जटी जो महादेव हैं तिनके गुणनसों जटी कहे युक्त है येई दुःख नाशनादि गुण महादेवहूमों हैं अथवा ये जे दुःख नाशनादि गुण हैं तिनसों औ धूर्जटी जे महादेव हैं तिनसों जटी कहे युक्त है पंचवटी ॥ १९ ॥

डाकलिकाछन्द ॥ शोभत दण्डककी रुचि बनी । भाँतिन भाँतिन सुन्दर घनी ॥ सेव बडे नृपकी जनु लसै । श्रीफल भूरि भाव जहँ बसै ॥ २० ॥ बेर भयानकसी अति लगे । अर्कसमूह जहाँ जगमगै ॥ नैननको बहु रूप न ग्रसै । श्रीहरिकी जनु मूरति लसै ॥ २१ ॥

टी०--दण्डकनाम राजा रहे हैं तिनको राज्य शुक्रके शापसों बन ह्वै गयो है तासों दंडकारण्य कहावत है रुचि शोभा श्रीफल बेल औ लक्ष्मीको फल बडे राजाकी सेवामें बहुत द्रव्य पाइयत है ॥ २० ॥ भयानक बेर प्रलयकाल अर्क मदार औ सूर्य प्रलय कालहूमो बारहों आदित्य उगत हैं नैननको अनेक रूपकरि ग्रसत हैं यासों या जनायो कि क्षणमें अधिक अधिक नवीन शोभा धरत है ऐसी विष्णुकी मूर्तिहू है तासों समता करचो सुंदरताको याही प्रकार वर्णन है यथा माघकव्ये ॥ " दृष्टोपि शैलः स मुहुर्नरारेरपूर्ववद्विस्मयमाततान ॥ क्षणेक्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः " ॥ २१ ॥

राम-दोधकछंद ॥ पांडवकी प्रतिमा सम लेखो । अर्जुन भीम महामति देखो ॥ हैं सुभगा सम दीपति पूरी । सिंदुरकी तिल

कावलि रूरी ॥ २२ ॥ राजति है यह ज्यों कुलकन्या । धाइ विराजति है संग धन्या ॥ कोलिथली जनु श्रीगिरिजाकी । शोभ धरे शितकंठप्रभाकी ॥ २३ ॥ मनहरनछंद ॥ अति निकट गोदावरी पापसंहारिणी । चलतरंगतुंगावलि चारुसंचारिणी ॥ अलि कमल सौगंधलीला मनोहारिणी । बहु नयन देवेश शोभा मनो धारिणी ॥ २४ ॥

टी० प्रतिमा चित्र अर्जुन ककुभवृक्ष औ पांडुपुत्र ॥ "अर्जुनः ककुभे पार्थे" इति मेदिनी॥ औ भीम अम्लवेतस वृक्ष औ भीमसेन ॥ "भीमो वृकोदरे घोरे शंकरेप्यम्लवेतसे" इत्यभिधानचिंतामणिः ॥ जो कहौ रामावतार प्रथम भयो है अर्जुनादि कृष्णावतार समयमो रहे हैं पूर्वापर विरोध है तो सब कल्पनमें दशौं अवतार होते हैं सो अनेक रामावतार कृष्णावतार भये हैं तासों दोष नहीं है यथा—तुलसीकृत रामायणमें कहा है ॥ 'कल्प कल्प प्रति प्रभुअवतारा ।' सुभगा सौभाग्यवती स्त्री सधवा इति ताके सम शोभा पूरी है दंडककी रुचि सिंदुरक जो है वृक्ष विशेष औ तिलक वृक्ष करिकै रूरी सुन्दर है॥ 'सिन्दूरस्तरुभेदेस्यात्' इति मेदिनी॥ "तिलको द्रुमरोगाश्वभेदे च तिलकालके" इति मेदिनी ॥ औ सुभगा सिन्दूरक जो सेंदुर है ताके तिलकंकी अवली करिके रूरी है अथवा सिन्दुरक करिकै और और जे सुवर्ण माणि आदिके तिलक हैं तिनकी अवली करिकै रूरी सुंदर है ॥ २२ ॥ कुलकन्या पदसों बडेकी कन्या जानो धाइ वृक्षविशेष औ उपमाता स्तन दूध पिआवति है गिरजा पार्वती शितकण्ठ मयूर औ महादेव ॥ २३ ॥ जा पर्णकुटीके अति निकट पापसंहारिणी गोदावरी नाम नदी है फेरि कैसी है गोदावरी चल चंचल ज तरंग हैं तिनके जे तुंग समूह हैं तिनकी ज अवली पांती हैं तिनकी चारु कहे अच्छी भाँति संचारिणी चलावनहारी है अर्थ अनेक तरंगैं उठायो करति है अथवा तरंग तुंगावलिन करिकै चारु संचारिणी चलनहारी है अलि भ्रमर युक्त जे कमल हैं तिनके सौगंध करिकै लीला है मनोहारिणी जाकी औ अलियुक्त कमलन करिकै बहुनयन जे देवेश इंद्र हैं तिनकी शोभा की मानो धारिणी धारण कर्त्री है इंद्रके सहस्रनेत्र हैं यहाँ नेत्र सदृश अलि युक्त कमल है ॥ २४ ॥

दोधकछन्द ॥ रीति मनो अविवेककी थापी । साधुनकी गति पावत पापी । कंजजकी मतिसी बडभागी । श्रीह-

रिमंदिरसों अनुरागी ॥ २५ ॥ अमृतगतिछंद ॥ निपट पतिव्रत धरणी । जग जनकै दुखहरणी ॥ निगम सदागति सुनिये । अगति महापति गुनिये ॥ २६ ॥

टी०-कंजज ब्रह्मा ब्रह्माकी मतिहूको अनुराग हरि मंदिर वैकुण्ठमें है औ गोदावरीहूको है काहेते जो कोऊ स्नान करत हैं ताको आपनो जानि वैकुण्ठ पठावति है ॥ २५ ॥ यामें विरोधाभास है सदा पति जो समुद्र हैं तामें लीन रहतिहै तोसों निपट पतिव्रत धरणी कह्यो विरोध पक्षमें दुख काम पीडा अविरोधमें पापजनित दुःख दरिद्रादि निगम जे वेद हैं तिनमें सदागति कहे सदा है गति मुक्ति जासों ऐसी सुनियत है अर्थ जो कोऊ स्नान करत हैं ताको मुक्ति देतिहैं औ पति जो समुद्र है ताहीको अगति सुनियत है अर्थ ताको गति मुक्ति नहीं देति यह विरोधार्थ है अविरोधहू-की अगति गमनरहित समुद्रको जल वहत नहीं ॥ २६ ॥

दोहा ॥ विषमें यह गोदावरी, अमृतनको फल देति ॥ केशव जीवनहारको, दुख अशेष हरि लेति ॥ २७ ॥ त्रिभंगी छंद ॥ जब जब धरि वीना प्रगट प्रवीना गुणलीना सुख सीता । पिय जियहि रिझावै दुखनि भजावै विविध बजावै गुण गीता ॥ तजि मति संसारी विपिनविहारी दुख सुखकारी घिरि आवै । तब तब जग भूषण रिपुकुलदू-षण सबको भूषण पहिरावै ॥ २८ ॥ तोटकछंद ॥ कबरी कुसुमालि सिखीन दई । गजकुंभनिहारनि शोभमई ॥ मुकुताशुक सारिक नाक रचे । कटिकेहरि किंकिणि शोभ सचे ॥ २९ ॥ दुलरी कल कोकिल कंठबनी ॥ मृगखंजन अंजन भाँति ठनी ॥ नृपहंसनि नूपुर शोभ भिरी । कलहंसनि कंठनि कंठसिरी ॥ ३० ॥

टी०-याहूमें विरोधाभास है विषमय कहै जलमय ॥ " विषन्तु गरले तोये" इति मेदिनी । औ जैसे अमृत अमर करत है तैसे याहू मुक्तकै अमर करतिहै विरोध पक्षमें जीवन जीव अविरोधमें जल दुःख प्यास दुःख अथवा

विषयमें कहे टेढी है अमृत जे देवता हैं तिनके फलको देति है अर्थ शुद्ध गतिको देति है औ जीवनहार जे यमराज हैं तिनको दुःख कहे तिनकृत दुःख यमयातना इति । ताको अशेष कहे संपूर्ण हरिलेति है ॥ २७ ॥ सुख कहे सुखसों गुण सीता रामचंद्रकी गुणगीता दुःखकारी व्याघ्रादि सुखकारी कोकिलादि जे बिपिनबिहारी कहे वन बिहारी हैं ते संसारी मति कहे भेद भय मतिको तजिकै मनुष्यके समीपम वन जीवनको आपहीसों आइबो आश्चर्य है सो आवत हैं याही संसारी मतिको त्याग जानो ॥ २८ ॥ तीनि छंदनमें एक वाक्यता है शिखी मोर कबरी कहे केशपाश ॥ २९ ॥ नृप हंसराजहंस ॥ ३० ॥

मुखबासनि वासित कीन तबै । तृण गुल्म लता तरु शैल सबै ॥ जलहू थलहू यहिरीति रमैं । बन जीव जहां तहँ संग भ्रमैं ॥ ३१ ॥ दोहा ॥ सहज सुगंधि शरीरकी, दिशि विदिशन अवगाहि ॥ दूती ज्यों आई लिये, केशव शूर्पनखाहि ॥ ३२॥ मरहट्टाछंद ॥ यक दिन रघुनायक सीय सहायक रतिनायक अनुहारी । शुभ गोदावरी तट विमल पंचवट बैठे हुते मुरारी ॥ छबि देखतहीं मन मदन मथ्यो तनु शूर्पणखा तेहि काल । अति सुंदर तनु करि कछु धीरज धरि बोली वचन रसाल ॥ ३३ ॥

टी०—मुखवासन कहे मुखके सुगंधनसों तृण कुशादि गुल्म गुलाब आदि लता लवंगादि तरु आम्रादि औ याही रीतिसों अर्थ जैसे सीताजूके गावतमें रमत हैं तैसेही सौंदर्यादिहूके वश ह्वै रामचन्द्रके समीपमें जलजीव हंसादि औ थलजीव मयूरादि जे बन जीव कहे दंडकारण्यके जीव हैं ते रमत हैं औ जहाँ तहाँ रामचंद्रके संग भ्रमत हैं अर्थ जहाँ रामचन्द्र जात हैं तहां संग संग भ्रमत फिरत हैं तीनहू छंदनमें युक्ति यह कि जा जीवको जो अंग वर्ण्य है ताकेही अपने पहिरायो अथवा जाके जा अंगमें रामचंद्र जो भूषण पहिरायो ताको तौन अंग सुंदरताको प्राप्त ह्वै वर्ण्य भयो औ काहू काहू जीवके अबपर्यंत ताको चिह्न बन्यो है ॥ ३१ ॥ जैसे दूती ढूँढिकै स्त्रीको पुरुषके पास लै जाति है तैसे रामचन्द्रके शरीरकी जो सहज स्वाभाविक सुगंधि है सो दिशि विदिशनमें अवगाहिकै ढूँढिकै शूर्पनखाको रामचन्द्रके पास ल्याई रामचंद्रके अंगनको सहज

सुगंध जो बनमें वायु योगसों फैलि रह्यो है ताको आघ्रानकै ताके अनुसार शूर्पणखा रामचंद्रके पास आई इति भावार्थः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

शूर्पणखा-सवैया ॥ किन्नरहो नररूप बिचक्षण यच्छकी स्वच्छ शरीरनि सोहौ । चित्तचकोरके चंद किधौं मृगलोचन चारु बिमाननि रोहौ ॥ अंग धरे कि अनंग हौ केशव अंगी अनेकनके मन मोहौ । बीरजटानि धरे धनु बाण लिये बनिता बनमें तुम को हौ ॥ ३४ ॥ राम-मनोरमाछंद ॥ हम हैं दशरत्थ महीपतिके सुत । शुभ राम सुलक्ष्मण नामन संयुत ॥ यह शासन दै पठये नृप कानन । मुनि पालहु मारहु राक्षसके गन ॥ ३५ ॥ शूर्पणखा ॥ नृप रावणकी भगिनी गनि मोकहँ । जिनकी ठकुराइति तीनहु लोकह ॥ सुनिजै दुख मोचन पंकज लोचन । अब मोहिं करो पतिनी मन रोचन ॥ ३६ ॥ तोमर छंद ॥ तब यों कह्यो हँसि राम । अब मोहिं जानि सबाम ॥ तिय जाय लक्ष्मण देखि । सम रूप यौवन लेखि ॥ ३७ ॥ शूर्पणखा-दोधकछंद ॥ राम सहोदर मो तन देखो । रावणकी भगिनी जिय लेखो ॥ राजकुमार रमो सँग मेरे । होहिं सबै सुख संपति तेरे ॥ ३८ ॥ लक्ष्मण ॥ वै प्रभु हों जन जानि सदाई । दासि भये महँ कौनि बडाई ॥ जौ भजिये प्रभु तौ प्रभुताई ॥ दासि भये उपहास सदाई ॥ ३९ ॥

टी०-विचक्षण प्रवीण चित्तरूपी जो चकोर है ताके चंद्रमाही जैसे चन्द्रमा चकोरको सुख देत है तैसे तुम चित्तको सुख देत हौ चंद्रमा मृगनके विमान रथको रोहत है अर्थ चढत है तुम मृगरूपी जे लोचन हैं तिनहीके विमानको रोहतहौ अर्थ जो तुमको कोऊ देखत है ताके नयननमें ऐसे बसि जात हौ कि उतरत नहीं ॥ ३४ ॥ शासन आज्ञा ॥ ३५ ॥ हे मन ! रोचन अर्थ मेरे मनको तुम अति रुचत हौ ॥ ३६ ॥ आपने रूप औ यौवन संग इन्हैं लेखि कहे जानु अर्थ जैसी रूप यौवन तेरो है तैसो इनहूंको है ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ सदाई जन हौं कहि ।या जनायो कि कबहूं प्रभुता ह्वेवेकी आशा नहीं है ॥ ३९ ॥

मल्लिकाछंद ॥ हासके विलास जानि। दीहमान खंड मानि ॥ भक्षिवेको चित्त चाहि। सामुहे भई सियाहि ॥ ४० ॥ तोमरछंद ॥ तब रामचन्द्र प्रवीन। हँसि बंधु त्यों हग दीन ॥ गुनि दुष्टता सह लीन। श्रुति नासिका बिनु कीन ॥ ४१ ॥ दोहा ॥ शोन छिंछि छूटत बदन, भीमभई तेहि काल ॥ मानो कृत्या कुटिलयुत, पावक ज्वाल कराल ॥ ४२ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिंद्रजिद्विरचितायां शूर्पणखाश्रवणनासिकाछेदनं नामैकादशः प्रकाशः ॥ ११ ॥

टी०—जब जान्यौ कि ये मोसों रमिहैं नहीं केवल मोसों हासके बिलास उपहास करत हैं तब दीह कहे बडी आपनो मानखंड कहे अपमान मानिकै ॥ ४० ॥ ४१ ॥ कराल पावक ज्वालसों युक्त है वदन जाको ऐसी मानो कृत्यानामा देवी है ॥ " कृत्याक्रियादेवतयोः । " इति नेदिनी ॥ ४२ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसाद निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायामेकादशः प्रकाशः ॥ ११ ॥

दोहा ॥ या द्वादशे प्रकाश खर, दूषण त्रिशिरा नाश ॥ सीताहरण विलाप सु,-ग्रीवमिलन हरि त्रास ॥ १ ॥

टी०—त्रास जो भय है ताको हरिकै सुग्रीवको मिलन हैं अर्थ बालिको बध निश्चय करि सुग्रीवको त्रास हरि रामचन्द्र मित्रता करि हैं ॥ १ ॥

तोटकछंद ॥ गइ शूर्पणखा खर दूषणपै। सजि ल्याइ तिहूँ जगभूषणपै ॥ शर एक अनेक ते दूरि किये। रविके कर ज्यों तमपुंज पिये ॥ २ ॥ मनोरमाछंद ॥ वृषके खर दूषण ज्यों खरदूषण। तब दूरि किये रविके कुलभूषण ॥ गदशत्रु त्रिदोष ज्यों दूरि करै वर। त्रिशिराशिर त्यों रघुनंदनके शर ॥ ३ ॥ भजि शूर्पणखा गइ रावणपै तब । त्रिशिरा खर दूषण नाश कहे सब ॥ तब शूर्पणखा मुख बात सबै सुनि।

उठि रावण गो मारीच जहाँ मुनि ॥ ४ ॥ मनोरमाछंद ॥ रावण बात कही सिगरी त्यों । शूर्पणखाहिं विरूप करी ज्यों ॥ एकहि राम अनेक संहारे । दूषणस्यों त्रिशिरा खर मारे ॥ ५ ॥ तू अब होहि सहायक मेरो । हौं बहुते गुण मानि हौं तेरो ॥ जो हरि सीतहि ल्यावन पैहैं । वे भ्रमि शोकनहीं मरि जैहै ॥ ६ ॥ मारीच ॥ रामहिं मानुषके जनि जानो । पूरण चौदह लोक बखानो ॥ जाहुँ जहाँ तिय ल सुन देखो । हौं हरिको जलहू थल लेखो ॥ ७ ॥

टी०-रामचन्द्रकी आज्ञासों लक्ष्मण सीताको लैकै गुफामें राख्यो है यह कथा शेष जानो ॥ २ ॥ वृष राशिके रवि जे शेखर कहे तृणके दूषण होत है सुखाइ डारत हैं तैसे रविके कुलके भूषण जे रामचन्द्र हैं तिन खर औ दूषण नाम राक्षसको दूरि कियो कहे मारचो औ गदेशत्रु जो वैद्य है सो जैसे त्रिदोष कहे कफ पित्त वात तीनोंको दोष एकही बार दूरि करत है तैसे रघुनंदनके शर त्रिशिराके शिरनको एकही बार दूर करचो ॥ ३ ॥ ४ ॥ स्यौ कहे सहित ॥ ५ ॥ सीताको ढूँढत भूतलमें भ्रमि कहे घूमिकै अथवा संदेहको प्राप्त ह्वैकै ॥६॥ चौदहों लोकमें पूर्ण कहे व्याप्त॥७॥

रावण-सुन्दरीछंद ॥ तू अब मोहि सिखावत है शठ । मैं वश जगत कियो हठही हठ ॥ बेगि चलै अब देहिन ऊतरु । देव सबै जज एक नहीं हरु ॥ ८ ॥ दोहा ॥ याचि चल्यो मारीच मन मरण दुहूं विधि आसु ॥ रावणके कर नरक है, हरि कर हरिपुर बासु ॥ ९ ॥ राम-सुंदरीछंद ॥ राजसुता इक मंत्र सुनो अब । चाहत हौं भुव भार हरेउ सब ॥ पावकमें निज देहहि राखहु । छाय शरीर मृगहि अभिलाषहु ॥ १० ॥ चामरछंद ॥ आइयो कुरंग एक चारु हेम हीरको । जानकी समेति चित्त मोहि राम वीरको ॥ राज पुत्रिका समीप साधु बंधु राखिकै । हाथ चाप बाण लै गये गिरीश नां घिकै ॥ ११ ॥

१ सूर्य. २ रोग.

दोहा ॥ रघुनायक जबहीं हन्यो, सायक शठ मारीच ॥
हा लक्ष्मण यह कहि गिरेउ, श्रीपतिके स्वर नीच ॥ १२ ॥
निशिपालिकाछंद ॥ राजतनया तबहिं बोल सुनि यों कहेउ । जाहु चलि देवर न जात हमपै रहेउ ॥ हेममृग होहि नहिं रैनिचर जानिये । दीन स्वर राम केहि भाँति मुख आनिये ॥ १३ ॥

टी०—एक हर महादेवको छोडिके और सब देवता मेरे जन कहे सेवक हैं ॥ ८ ॥ आशु कहे जल्दी ॥ ९ ॥ छाया शरीरसों मृग कहे चलिवेको अभिलाष करो अर्थ छाया शरीर आलंब्य रहो अथवा छाया शरीरमों या सुवर्णमृगको अभिलाषी ॥ १० ॥ हेम सुवर्ण औ हीरनको कुरंग हरिण बनि मारीच आयो ॥ ११ ॥ जैसो रामचन्द्रको स्वर कहे शब्द है ताही स्वरसों हा लक्ष्मण यह कहिके गिरयो नीच मारीचको विशेषण है ॥ १२ ॥ यह कोऊ राक्षस है हरिणको रूप धरिकै आयो है ताने रामचन्द्रको मारयों तासों हा लक्ष्मण ऐसो दीनस्वर रामचन्द्र कह्यो इति भावार्थः ॥१३॥

लक्ष्मण ॥ शोच अति पोच उर मोच दुख दानिये । मातु यह बात अवदात मम मानिये ॥ रैनिचर छद्म बहु भाँति अभिलाषहीं । दीन स्वर राम कबहूं न मुख भाषहीं ॥ १४॥
चंचलाछंद ॥ पक्षिराज यक्षराज प्रेतराज यातुधान । देवता अदेवता नृदेवता जिते जहान ॥ पर्वतारि अर्व खर्व सर्व सर्वथा बखानि । कोटि कोटि सूर चन्द्र रामचन्द्र दास मानि ॥१५॥
चामरछन्द ॥ राजपुत्रिका कह्यो सो औरको कहै सुनै । कान मूंदि बार बार शीश बीसधा धुनै ॥ चापकीय रेख खाँचि देव साखि दै चले । नांघि हैं ते भस्म होहिं जीव जे बुरे भले ॥ १६ ॥

टी०—अति पोच कहे निषिद्ध जो दुःखदानि शोच है ताको उरसों मोचु कहे त्याग करो छद्म कपट ॥ १४ ॥ पक्षिराज गरुड यक्षराज कुबेर प्रेतराज यमराज यातुधान राक्षस देवता औ अदेवता दैत्य नृदेवता राजा औ पर्वतारि इंद्रते ये सब अर्व खर्व संख्या परिमित औ अर्व खर्व सर्वकहे

महादेव अर्वखर्वको संबंध सर्वपदहूमों है तिन्हैं सर्वथा कहे सब प्रकार बखानि कहे कहौं औ कोटि सूर्य औ चन्द्रमा हैं तिन सबको रामचन्द्रके दास कहे सेवक मानौ रामचन्द्रके मारिबे लायक ये कोऊ नहीं हैं इति भावार्थः ॥ १५ ॥ लक्ष्णको राजपुत्रिकाने जे कटुवचन कहे तिन्हैं और और कौन कहे औ कौन सुने अर्थ अतिकटुवचन कहे जे काहूके कहिबे सुनिवे लायक नहीं हैं औ जो थोरो सुनिबोहू करै तौ जामें आगे और ना सुनिपरै तालिये कान मूंदिकै बिन सुने वचननके शोकसों बीसधा अर्थ अनेक प्रकारसों शीश धुनै अथवा सीताही कान मूँदिके शीश धुनत भई कान मूँदिवेको हेतु यह जामें लक्ष्मणके ये बोध वचन न सुनि परै तौ लक्ष्मण बातै ना कहैं रामचन्द्रके पास जाइ अथवा जामें कटु वचन ना सुनि परैं तालिये लक्ष्मणहीं कानको मूंदिकै बारबार शीश धुनत भये॥१६॥

छिद्र ताकि क्षुद्र राज लंकनाथ आइयो । भिक्षु जानि जान-
कीसो भीषको बोलाइयो ॥ शोच पोच मोचिके सकोच
भीम वेषको । अंतरिक्षहीं करी ज्यों राहु चंद्ररेखको ॥ १७॥
दण्डक ॥ धूमपुरके निकेत मानों धूमकेतुकी शिखाकी
धूमयोनि मध्य रेखा सुधाधामकी । चित्रकीसी पुत्रिकाकी
रूरे बय रूरे मांह शम्बर छोडाइ लई कामिनिकी कामकी ॥
पाखंडकी श्रद्धाकी मठेश वश एकादशी लीन्हीं कै श्वपच
राजशाखा शुद्ध सामकी । केशव अदृष्ट साथ जीव जीति
जैसी तैसी लंकनाथ हाथ परी छाया जाया रामकी ॥१८॥

टी०-क्षुद्रनको राज जो लंकनाथ है सो छिद्र कहे अवसर ताकि भिक्षुक कहे दंडीरूप धरिकै सीतापै आयो शूर्पणखाकी नासिका काटेको जो पोच करे बुरो शोच है सीता हरण निश्चय करि ताको मोचिकै छोडिकै अथवा पोच रावणको विशेषण है औ भीमवेषको जो संकोच सिकोरनो रह्यौ ताको मोचिकै अर्थ जो लघु शरीर करचो रहे ताको बडाइकै अंत-रिक्ष आकाश ॥ १७ ॥ धूमपुरके निकेत कहे घरमें अर्थ धूमसमूहमें धूम-केतु जो अग्नि है ताकी शिखाज्योति है कि धूमयोनि जे मेघ हैं तिनके मध्यमें सुधाधाम जो चन्द्रमा है ताकी रेखा कहे कला है कि रूरे कहे बडे बय रूरे कहे बौंडर वायु ग्रंथि करिकै प्रसिद्ध है तामें चित्रपुत्रिका है कि शंबरनामा जो दैत्य है सो कामको शत्रु है तेहि कामकी

कामिनी रतिको छँडाइ लीन्ही है कि पांखडके वशमों अद्धापरी है यह कथा विज्ञानगीतामें प्रसिद्ध है कि मठपतिके वश एकादशी परी कि श्वपचराजु चांडालनको राजा शुद्धसामवेदकी शाखा लीन्होहै अदृष्ट कर्मके साथमें जैसी जीव ज्योति परी है तैसी छाया कृत जो राम की जाया सीता है सो लंकनाथके हाथमें परी ॥ १८ ॥

सीताजू-हरिलीलाछंद ॥ हा राम हा रमन हा रघुनाथधीर। लंकाधिनाथ वश जानहुँ मोहिं वीर ॥ हा पुत्र लक्ष्मण छोडावहु बेगिमोहिं। मार्तंडवंश यशकी सब लाज तोहिं ॥ १९॥ पक्षी जटायु यह बात सुनत धाइ। रोंक्यो तुरंत बल रावण दुष्ट जाइ ॥ कीन्हों प्रचंड रथ छत्र ध्वजा विहीन। छोडचो विपक्ष तब भो जब पक्षहीन ॥ २० ॥ संयुताछंद ॥ दशकंठ सीतहि लै चल्यो। अतिवृद्ध गीध हियो दल्यो ॥ चित जानकी अधकों कियो। हरि तीनि द्वै अवलोकियो ॥ २१ ॥ पदपद्मकी शुभ घूंघरी। मणि नील हाटकसों जरी ॥ जनु उत्तरीय विचारिकै। शुभ डारि दीय गठारिकै ॥ २२ ॥ दोहा ॥ सीताके पदपद्मको, नूपुर पट जनि जानु ॥ मनहुँ करचो सुग्रीव घर, राजश्री प्रस्थानु ॥ २३ ॥ यद्यपि श्रीरघुनाथजू, सम सर्वग सर्वज्ञ ॥ नर कैसी लीला करत, जेहि मोहत सब अज्ञ ॥ २४ ॥ राम-सवैया ॥ निज देखों नहीं शुभ गीतहि सीतहि कारण कौन कहौ अबहीं। अति मोहितकै वनमांझ गई सुरमारगमें मृग मारचो जहीं ॥ कटु बात कछू तुमसों कहि आई किधौं तेहि त्रास डेराइ रहीं। अब है यह पर्णकुटी किधौं और किधौं वह लक्ष्मण होइ नहीं ॥ २५ ॥

टी०-॥ १९ ॥ प्रचंडपद जटायु रावण रथ तीन्योंको विशेषण ह्वै सकते है विपक्ष शत्रु रावण ॥ २० ॥ तीनि औ द्वै कहे पांच अथवा द्वै तीनि कहिबेकी रीति सुभावोक्ति है हरि वानर ॥ २१ ॥ उत्तरीय ओढिबेको वस्त्र ॥ २२ ॥ जब प्रस्थान भयो तब आप आयोई चाहै ॥ २३ ॥ सम कहे महा एक रस रहत हैं औ सर्वग कहे सर्वत्र व्याप्त हैं औ सर्वज्ञ कहे सब

जानत हैं ॥ २४ ॥ जो हमारे स्वरसों हा लक्ष्मण यह कहिके मृग मरयो है सो हमारो शब्द जानि ताही स्वरके मार्ग ह्वै हमारे बडे हितसों बनके मध्यमें गई है कि हे लक्ष्मण ! यह पर्णकुटी है कि कछू औरई वस्तु है औ कि वह पर्णकुटी नहीं है औरई पर्णकुटी है ॥ २५ ॥

दोधकछन्द ॥ धीरजसों अपनो मन रोक्यो । गीध जटायु परयो अवलोक्यो ॥ छत्र ध्वजा रथ देखिकै बूझेउ । गीध कहौ रण कौनसो जूझेउ ॥ २६ ॥ जटायु ॥ रावण लै गयो राघव सीता । हा रघुनाथ रटै शुभ गीता ॥ मैं बिन छत्र ध्वजा रथ कीन्हों । ह्वै गयो हौं बल पक्ष विहीनो ॥ २७ ॥ मैं जगमें सबते बडभागी । देहदशा तव कारण लागी ॥ जो बहु भांतिन वेदन गायो । रूपसों मैं अवलोकन पायो ॥ २८ ॥ राम ॥ साधु जटायु सदा बडभागी । तो मनमों बपुसों अनुरागी ॥ छूट्यो शरीर सुनी यह बानी । रामहिमें तव ज्योति समानी ॥ २९ ॥ तोटकछंद ॥ दिशि दक्षिणको करि दाह चले । सरिता गिरि देखत वृक्ष भले ॥ बन अंध कबंध बिलोकत हीं । दोउ सोदर खैंच लिये तबहीं ॥ ३० ॥ जब खैबेहिको जिय बुद्धि गुनी । दुहुँ बाणनि लै दोउ बाहि हनी ॥ वहँ छाडिकै देह चल्यो जबहीं । यह व्योममें बात कह्यो तबहीं ॥ ३१॥ तोटकछंद ॥ पीछे मघवा मोहिं शाप दई । गंधर्वते राक्षसदेह भई ॥ फिरिकै मघवा सह युद्ध भयो । उन क्रोधकै शीशमें वज्र हयो ॥ ३२ ॥

टी०-॥ २६ ॥ २७ ॥ दशा अवस्था अर्थ यह देह गृध्रकी औ यह वृद्धावस्था तुम्हारे कछू उपकारके लायक नहीं रही तासों तुम्हारो उपकार भयो औ ऐसो जो तुम्हारो रूप है ताकों देख्यो तासों जगमें मैं सबसों बडभागी हौं ॥ २८ ॥ अर्थ सायुज्य मुक्ति पायो ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ बाहु दई पर्यन्त तीनि छंद छेपक हैं पीछे कहे पूर्वहीं ॥ ३२ ॥

दोहा ॥ गयो शीश गडि पेटमें, परयो धरणिपर आय ॥
कछु करुणा जियमो भई, दीन्ही बाहु बढाय ॥ ३३ ॥

बाहु दई द्वै कोशकी, आवै तेहि गहि खाउँ ॥ रामरूप सीता हरण, उधरहु गहन उपाउ ॥ ३४ ॥ सुरसरिते आगे चले, मिलिहैं कपि सुग्रीव ॥ देहैं सीताकी खबरि, बाढै सुख अति जीव ॥ ३५ ॥ तोटकछंद ॥ सरिता एक केशव सो भरई । अवलोकि तहां चकवा चकई ॥ उरमें सिय प्रीति समाइ रही । तिनसों रघुनायक बात कही ॥ ३६ ॥ अवलोकत हौं जबहीं जबहीं । दुख होत तुम्हैं तबहीं तबहीं ॥ वह बैर न चित्त कछू धरिये । सिय देहु बताइ कृपा करिये ॥ ३७ ॥ शशिके अवलोकन दूरि किये । जिनके मुखकी छवि देखि जिये ॥ कृत चित्तचकोर कछूक धरौ । सिय देहु बताय सहाय करौ ॥ ३८ ॥

टी०—॥ ३३ ॥ करुणा करिकै द्वै कोशकी बाहु दई औ यह वर दियो कि जो इन बाहुनके मध्यमें आवै ताको खाहु जब सीताहरण ह्वै है तब रामचन्द्र या मग अइहैं तिनके गहन उपायसों उद्धरहु कहे तुम्हारो उद्धार होई अर्थ जब रामचन्द्रको इन बाहुनसों गहि है तब तेरो उद्धार ह्वै है ॥३४॥ सुरसारि गोदावरी ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ जब सीताको तुम अवलोकत रहे कहे देखत रहौ तब अपनसों अधिक सुन्दर सीताके कुच देखि तुम्हारे दुख होत रहै अथवा हमको संयोगी देखत तासो तुम्हारे दुःख होत रह्यो ॥३७॥ शशि जो अति सुन्दर जिनके मुखको देखि शशिकी ओर विलोकिबो छोडि केवल जिनके मुखकी छाबिको देखिकै जियत रहेहौ अथवा शशिके अवलोकन दर्शन दूरि किये पर अर्थ जब कृष्णपक्षमें चन्द्रमा अपनो दर्शन दृष्टिसों दूरि कियो ना देखि परयो तब चंद्रसम केवल जिनके मुखकी छाबिको देखि जियत रहे हौ वह कृत कहे उपकार कछू चित्तमें धरिकै सीताको बताई देउ ॥ ३८ ॥

सवैया ॥ काहि केशव याचकके अरि चंपक शोक अशोक अशोक लिये हरिकै । लखि केतक केतकि जाति गुलाबते तीक्षण जानि तजे डरिकै ॥ सुनि साधु तुम्हैं हम बूझन आये रहे मन मौन कहा धरिकै । सियको कछु सोधु कहौ

करुणामय सो करुणा करुणा करिकै ॥ ३९ ॥ नाराचछंद॥ हिमांशु सूरसो लगै सो बात वज्रसो बहै। दिशा लगैं कृशानु ज्यों विलेप अंगको दहै ॥ विशेषि कालरातिसो कराल राति मानिये। वियोग सीयको न काललोक हार जानिये॥ ४० ॥

टी०-रामचन्द्र करुण वृक्षसों कहत हैं कि चम्पक जे हैं ते याचकके अरि शत्रु हैं पुष्पनको याचक जो भ्रमर है ताको निकट नहीं आवन देत चंपकमें भ्रमर नहीं बैठत यह प्रसिद्ध है ता भयसों चंपक सो सीताको सोधु नहीं जांचे अशोक जे वृक्ष हैं तिनके शोकको हारिकै छोडिकै अशोक यह जो नाम है ताको लीन्हों है तासों जिनहूको तज्यो है कि जिनके शोक हैही नहीं ते हमारो दुःख देखि दुःखी ह्वै कृपा करि सीताको सोधु काहेको बताई है केतक केबरा औ केतकी औ गुलाब इनकी जाति जे और कंटक वृक्ष हैं कमलादि तिन्हैं तीक्ष्ण कहे कंटकित जानिकै डरिकै तज्यो है सो हे करुणा कहे करुण वृक्ष ! करुणा कहे दीनतामय जे हम हैं तिनसों सीताको कछू सोधू कहौ ॥ ३९ ॥ रामचन्द्र लक्ष्मणसों कहत हैं कि हिमांशु जो चन्द्रमा है सो हमको सूर्य सम तप्त लागत है औ वायु बज्र-सम बहति है औ दशों दिशा अग्निके समान तप्त लगति है औ तुम जो शीतलताके अर्थ हमारे अंगनमें विलेप करत हौ सो अंगनको जारत है औ राति काल राति सम कराल लागति है औ सीताको वियोग लोक हर-काल संहार कालसम लागत है ॥ ४० ॥

पद्धटिकाछन्द ॥ याहि भाँति विलोके सकल ठौर। गये शबरीपै दोउ देव मौर ॥ लिये पादोदक त्याहि पद पखारि। पुनि अर्घ्यादिक दीन्हें सुधारि ॥ ४१ ॥ हर देत मंत्र जिनको विशाल। शुभ काशीमें पुनि मरणकाल ॥ ते आये मेरे धाम आज। सब सफल करन जप तप समाज ॥ ४२ ॥ फल भोजनको तेहि धरे आनि। भये यज्ञपुरुष अति प्रीति मानि ॥ तिन रामचन्द्र लक्ष्मण स्वरूप। तब धरे चित्त जगजोतिरूप ॥ ४३ ॥ दोहा ॥ शबरी पावक पंथ तब, हरखि गई हरिलोक ॥ बनन विलोकित हरि गये, पंपातीर सशोक ॥ ४४ ॥ तोटकछंद ॥ अति सुन्दर शीतलसों

भवसै। जहँ रूप अनेकनि लोभ लसै॥ पंकज पक्षि विराजत हैं। रघुनाथ विलोकत लाजत हैं ॥ ४५ ॥ सिगरी ऋतु शोभित सुभ्र जरी। लहे ग्रीषम पैन प्रवेश सही ॥ नव नीरज नीर तहाँ सरसैं। सियके शुभ लोचनसे दरसैं ॥ ४६ ॥

टी०—॥ ४१ ॥ मंत्र राम तारक तप औ जप समाजके सफल करन कहे सफल कर्त्ता अर्थ जो कोऊ जप तप करत है ताको फल रामचंद्र ही देत हैं॥ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ जीबतही अग्निमों जरिकै ॥ ४४ ॥ कैसो है पंपासर अति सुंदर है औ अति शीतल है जहां शोभा जो है सदा आय बास करति है औ जहां कहे स्थानमें जातही प्राणिनके अनेक रूप सो लोभ बसत है अर्थ जहां जातही प्राणिनके रहिबेको लोभ बाढत है औ बहुत पंकज कमल औ हंसादि पक्षी बिराजत हैं ते रामचन्द्रको देखिकै लज्जित होत हैं जा अंगको जो उपमान है ता अंगको निरखि अपनामों अधिक जानि लजात हैं॥ ४५॥४६॥

विजयछंद ॥ सुन्दर सेत सरोरुहमें करहाटक हाटककी द्युति कोहै। तापर भौंर भल मनरोचन लोकविलोचनकी रुचि रोहै ॥ देखि दई उपमा जलदेविन दीरघ देवनके मन मोहै। केशव केशवराय मनो कमलासनके शिर ऊपर सोहै॥ ४७ ॥ लक्ष्मण—सवैया ॥ मिलि चक्रिन चंदन बात बहै अतिमोहतन्याय नहीं मतिको । मृगमित्र विलोकब-चित्त जरै लिये चन्द निशाचरपद्धतिको ॥ प्रतिकूल शुका-दिक होहिं सबै जिय जानै नहीं इनकी गतिको । दुख देत तडाग तुम्हैं न बनैं कमलाकर ह्वै कमलापतिको ॥ ४८ ॥

टी०—सरोरुह कमलकरहाटक शिफाकंद हाटक सुबर्ण लोकके लोचनकी रुचि कहे इच्छाको रोहे कहै धारण करत है अथ जिनको देखि सबके लोचननमें सदा देखिवेकी इच्छा होतिहै अथवा लोकके लोचननकी रुचि शोभा रोहत है अर्थ लोचन सम शोभतहै केशवराय विष्णु कमलासन ब्रह्मा श्वेत कमल सोई ब्रह्माको आसन कमल सम है करहाटक ब्रह्मासम पीतवर्ण है भ्रमर विष्णुसम है॥ ४७ ॥ पंपासर सो लक्ष्मण कहत हैं कि चन्दन बात जो इनकी मतिको मोहत है मूर्च्छित करत है सो न्याय यहीसों कहेते

चंदन वृक्षमें लपटे जे अनेक चक्री सर्प हैं तिनसों मिलिकै स्पर्श करिकै बहत है सो सर्पनके संगको फल है सर्पहू जाको काटत हैं ताको मूर्च्छित करत हैं अति पतिसों मृगके अंकमें धरे हैं तासों मृग मित्रपद कह्यो सों संग मित्र जो चंदहै ताको विलोकि इनको चित्त जरत है सोऊ न्यायही है काहेते निशाचरकी पद्धति परिपाटीको लिये है निशाचर राक्षसहू हैं चंदहू है सो निशाचरनकी राक्षसनकी परिपाटीको लिये है राक्षसनहूंको देखतही चित्त जरत है औ मृगमित्र कहि या जनायो कि पशुनको मित्र है प्रतिकूल दुःखद जो शुकादिक होत हैं सोऊ न्यायही है काहेते वे पक्षी पशु हैं इनकी गतिको नहीं जानत कि ये ईश्वर हैं कमलाकरपद श्लेष है कमलनके आकर समूहसों युक्त औ कमला लक्ष्मीके उत्पन्नकर्ता युक्ति यह कि ये तुम्हारे जामातु हैं इनको दुःख देना तुम्हें न चाहिये ॥ ४८ ॥

दोहा ॥ ऋष्यमूकपर्वत गये, केशव श्रीरघुनाथ ॥ देखे वानर पंच विभु, मानो दक्षिण हाथ ॥ ४९ ॥ कुसुमविचित्राछंद ॥ तब कपिराजा रघुपति देखे। मन नर नारायण सम लेखे ॥ द्विजवपु धरि तहँ हनुमत आये। बहु विधि आशिष दै मन भाये ॥ ५० ॥ हनुमान ॥ सब विधि रूरे बनमहँ को हौ। तन मन सूरे मनमथ मोहौ ॥ शिरसि जटा वकला वपु धारी। हरि हर मानहुँ विपिन बिहारी ॥५१॥ परम वियोगी समरस भीने। तन मन एकै युगतन कीने ॥ तुम को हौ कालगि वन आये। क्यहि कुल हौ कौने पुनि जाये ॥ ५२ ॥ राम-चंचरीछंद ॥ पुत्र श्रीदशरथके वन राज शासन आइयो। सीय सुन्दरि संगही बिछुरी सो सोधन पाइया ॥ राम लक्ष्मण नाम संयुत सूरवंश बखानिये। रावरे बनको न हौ क्यहि काज क्यों पहिचानिये ॥५३ ॥

टी०-सुग्रीव हनुमान नल नील सुषेण ये पांच जे बानर हैं बिभु कहे प्रतापी तिन सहित ऋष्यमूकको देख्यो मानों सो पृथ्वीको दक्षिण हाथ है पृथ्वी इति शेषः। अथवा मानों अपनो दक्षिण हाथही देख्यो है मित्रको औ भ्राताको दक्षिण बाहुसम कहिबेकी रीति है ॥ ४९ ॥ नर नारायणके द्वै रूप

१ दामाद।

हैं ॥५०॥ रूरे सुन्दर ॥५१॥ परम वियोगी हौ अर्थ तुम्हारी चेष्टाते जानि परत है कि काहू बडे हितको वियोग भयो है औ जटा वल्कलादिसों शान्तरसमें भीने जानि परतहौ ॥ ५२ ॥ शासन आज्ञा ॥ ५३ ॥

हनुमान-दोहा ॥ या गिरिपर सुग्रीव नृप, ता सँग मंत्री चारि ॥ वानर लई छँडाइ तिय, दीन्हो वालि निकारि ॥ ॥ ५४ ॥ दोधकछंद ॥ वा कहँ जो अपनो करि जानौ । मारहु वालि विनै यह मानौ ॥ राज देहु जो वाकी तियाको । तो हम देहिं बताय सियाको ॥ ५५ ॥ लक्ष्मण ॥ आरतके प्रभु आरत टारौ । दीन अनाथनको प्रतिपारौ ॥ स्थावर जंगम जीव जो कोऊ । सन्मुख होत कृतारथ सोऊ ॥ ५६ ॥ वानर ह्वै हनुमान सिधारेउ । सूरजको सुत पाँयनि पारेउ ॥ राम कह्यो उठि वानरराई । राजसिरी सखिस्यो तिय पाई ॥ ५७ ॥ दोहा ॥ उठे राजसुग्रीव तब, तन मन अति सुख पाइ ॥ सीताजूके पटसहित, नूपुर दीन्हे आइ ॥ ५८ ॥ तारकछंद ॥ रघुनाथ जबै पट नूपुर देखे । कहि केशव प्राणसमानहिं लेखे ॥ अवलोकत लक्ष्मणके कर दीन्हे । उन आदरसों शिर मानिकै लीन्हे ॥ ५९ ॥ राम-दंडक ॥ पंजरकी खंजरीट नैननको किधौं मीन मानसको केशोदास जलु है कि जालु है । अंगकोकि अंगराग गेडुआकी गल-सुई किधौं कटि जेबहीको उर कोकिहारु है ॥ बंधन हमारो कामकेलिको कि ताडिबे कोता जनों विचारको कीचमर विचारु है । मानकी जमनिकाकी कंजमुख मूंदिबेको सीता-जूको उत्तरीय सब सुख सारु है ॥ ६० ॥

टी०-वानर वालिको विशेषण है ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ कृतार्थ कहे कृत है अर्थ प्रयोजन जाको ॥ ५६ ॥ अर्थ वालिको मारिकै राज्य श्रीसहित तुम्हारी स्त्री हम तुमको दैहैं ऐसा निश्चय वचन रामचंद्र सुग्रीवको दियो॥ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ शिर मानिकै कहे शिरपर राखिकै ॥ ५९ ॥ रामचंद्र

कहत हैं कि हमारे खंजरीट कहे खंडरिचरूपी जे नयन हैं तिनको पंजर पिंजर है जामें परिनयन कै कढन नहीं पावत औ कि मीनरूपी जो मानस मन है ताको जल है कि जालु है जैसे मीन जलसों नहीं कढति तैसे मन यासों नहीं कढत औ जालको औ पंजरको हेतु एकही है अंगनको कि अंगराग कहे चंदनादिको लेप है कि गेरुआ तकिया है कि गलसुई छोटी तकिया है अथ स्पर्शते अंगनको अंगरागादि सम सुखद है औ कि कटि-जेब कहे क्षुद्रघंटिका है औ किहीको जेब कहे धुकधुकी है जेबपदको संबंध याहूमें है औ कि उरको हार है औ कि कामकेलि समयको हमारो बंधन फांस है औ कि कामकेलि समयको हमारे ताडिबेको ताज नोकसा है कोडा इति अर्थ कामकेलिमें अति चंचल कर्ता है औ कि कामकेलिका जो विचार कहे विगत चार चलन है रतांत इति ताको रत भ्रमहर चमर कहे बाल व्यजन है यहां चमर पदते व्यजन जानौं अथवा हमारे विचारको चमर है अर्थ विचारको शोभाकर्त्ता है अर्थ प्रकाश कर्ता है ऐसो हमारो विचार अनुमान है औ कि सीताजूके मानकी जमनीका कनात है अर्थ याहीकी आडमें सीताजूको मान रहत रह्यो औ कि सीताजूको कंज-मुख मूँदिबेको सब सुखसार उत्तरीय है याही विधि उत्तरीयको वर्णन हनुमन्नाटकमें है । " द्यूते पणः प्रणयकेलिषु कंठपाशः क्रीडापरिश्रमहरं व्यजनं रतांते । शय्यानिशीथसमये जनकात्मजाया प्राप्तं मया विधिवशादिह चोत्तरीयम् " ॥ ६० ॥

स्वागताछंद ॥ वानरेन्द्र तब यों हँसि बोल्यो । भीतभेद जियको सब खोल्यो ॥ आगि बारि परतक्ष करी जू । रामचन्द्र हँसि बाँह धरीजू ॥ ६१ ॥

टी०—जब निश्चय मित्र जान्यो तब आपनो भीतभेद कहे बालिकृत भयको सब भेद खोल्यो कहे कह्यो मित्रसों अंतःकरणको सब भेद कह्यो चाहिये ६१॥

सुरपुत्र तब जीवन जान्यो । वालिजोर बहु भाँति बखान्यो ॥ नारि छीनि जेहि भाँति लई जू । सो अशेष बिनती विनई जू ॥ ६२ ॥ एक बार शर एक हनौ जो । सात ताल बलवंत गनो तो ॥ रामचन्द्र हँसि बाण चलायो । ताल बेधि फिरिकै कर आयो ॥ ६३ ॥

१ खञ्जन या खंडरीच ।

सुग्रीव–तारकछंद ॥ यह अद्भुत कर्म औरपै होई । सुर सिद्ध प्रसिद्धनमें तुम कोई ॥ निकरा मनते सिगरी दुचिताई । तुमसों प्रभु पाय सदा सुखदाई ॥ ६४ ॥ विजयछंद–बावनको पद लोकनमा पिज्यों बावनके वपुमाँह सिधायो । केशव सूरसुताजल सिंधुहि पूरिकै सूरहिको पद पायो ॥ रामके बाण त्वचा सब वेधिकै कामपै आवत ज्यों जग गायो । रामको शायक सातहु तालनि बेधिकै रामहिके कर आयो ॥ ६५ ॥ सोरठा ॥ जिनके नाम विलास, अखिल लोक बेधत पतित ॥ तिनको केशवदास, सात ताल बेधत कहा॥६६॥ राम–तारकछंद ॥ अति संगति बानरकी लघुताई । अपराध बिना वध कौनि बडाई ॥ हति वालिहि देउ तुम्हैं नृपशिक्षा । अब है कछु मो मन ऐसिय इच्छा ॥ ६७ ॥

टी०–॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ बालिके शीघ्र वधमें आपने अंतर निश्चयको प्रकट करत मित्रताधिक्यको दिखावत रामचन्द्र परिहासपूर्वक सुग्रीवसो कहते हैं कि हे सुग्रीव ! वानरकी संगति अति लघुता है काहेते अपराध विना वधमें कछु बडाई नहीं है लघुताई ही है परंतु हमारे मनमें अब यहै इच्छा है कि वालिको मारि तुमको नृपशिक्षा दीजै अर्थात् राजा कीजिये यह केवल बानरसंगतिको प्रभाव है बिन काज अकाज करिबो सब बानरको स्वभाव होतहै तिनकी संगतिते तैसौ स्वभाव भयो चाहै ॥ ६७ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचंद्रचंद्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां सीताहरणरामसुग्रीवमैत्रीवर्णनं नाम द्वादशः प्रकाशः ॥ १२ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां द्वादशः प्रकाशः ॥ १२ ॥

या तेरहे प्रकाशमें, बालि वध्यो कपिराज ॥ वर्णन वर्षा शरदको, उदधि उलंघन साज ॥ १ ॥ पद्धटिकाछंद ॥

रविपुत्र वालिसों होत युद्ध । रघुनाथ भये मनमाहँ क्रुद्ध ॥ शर एक हन्योउर मित्रकाम । तब भूमि गिरयो कहि राम राम ॥ २ ॥ कछु चेतभये तेहि बलनिधान । रघुनाथ विलोके हाथ बान ॥ सुभ चीरजटा शिर श्याम गात । वनमाल हिये उर विप्रलात ॥ ३ ॥ वालि ॥ तुम आदि मध्य अवसान एक । जग मोहत हौ वपुधारि अनेक ॥ तुम सदा शुद्ध सबको समान । केहि हेतु हत्यो करुणानिधान ॥ ४ ॥ राम ॥ सुनि वासवसुत बुधिबलनिधान । मैं शरणागतहित हते प्रान ॥ यह सांटो लै कृष्णावतार । तब हैं हौं तुम संसार पार ॥ ५ ॥

टी०—॥ १ ॥ मित्र जे सुग्रीव हैं तिनके काम कहे अर्थ वालिके वधमें केवल सुग्रीवहीको हित है रामचन्द्रको कछु हित नहीं है ॥ २ ॥३॥ जगको आदि कहे उत्पत्ति मध्य कहे प्रतिपाल अकसान कहे संसार कर्त्ता एक तुमही हौ अर्थ ब्रह्मारूप ह्वै तुमही सृष्टि करते हो बिष्णु रूप ह्वै प्रतिपाल करते हौ रुद्र रूप ह्वै संहार करतेहौ सो अनेक वपुशरीर धरिकै जगको मोहत हौ अर्थ दशरथके पुत्र रामचन्द्र हैं इत्यादि मोह बढावत हौ ॥ ४ ॥ सांटो कहे बदलो ॥ ५ ॥

रघुवीर रंकते राज कीन । युवराज बिरद अंगदहि दीन ॥ तब किष्किधा तारासमेत । सुग्रीव गये अपने निकेत ॥६॥

दोहा ॥ कियो नृपति सुग्रीव हति, बालि बली रणधीर ॥ गये प्रवर्षण अद्रिको, लक्ष्मण श्रीरघुवीर ॥ ७ ॥

त्रिभंगीछंद ॥ देख्योशुभ गिरिवर सकल सोभधर फूल बरन बहु फलनि फरे । संग सरभ ऋक्ष जन केशरिके गण मनहु धरणि सुग्रीव धरे ॥ सँग शिवा विराजै गजमुख गाजै परवभृते लै चित्त हरे । शिरशुभ चन्द्रकधर परम दिगंबर मानो अहिराज धरे ॥ ८ ॥

टी०—रामचंद्र सुग्रीवको रंक कहे दरिद्री ते राजा कीन्हो सुग्रीव पदको संबंध रंक राज पदहूमें है विरद पदवी ॥ ६ ॥ प्रवर्षण नामा जो अद्रि

पर्वत है तामें जाइ वास करचो ॥ ७ ॥ रामचंद्र कैसो पर्वत देखत भये कि फूल हैं बरन बहु कहे अनेक रंगके औ बहुत फलनसों फरे बहुपदको संबंध फलनहूंमें है आगे श्लेषोरक्षाकारि वर्णत हैं शरभ वानर नाम विशेष है औ पशुजाति विशेष ॥ "शरभस्तु पशौ भिंदिकरभे वानरे भिदि" इति मेदिनी। ऋक्ष पर्वतहूमें है सुग्रीवहूके संग जाम्बवंतादि हैं केशरी कहे सिंह ताके गण समूह औ केशरी नामा वानर हनूमानके पिता तिनके गण सैन्य समूह शिवा पार्वती औ शृगाली गजमुख गणेश औ हस्ती आदि और बनजीव आदि पदते गैंडा आदि जानौं पर कहे बडे जे भूतसेवक हैं नंदिकेश्वरादि औ कोकेलचंद्रक चंद्रमा औ कपूर अर्थ कदली वृक्षनमें कपूर होतहै ते कदली जामें बहुत हैं अथवा जल अनेक वाप्यादिकनमें भरचो है अथ चंद्रकधर मोर ॥ "चंद्रः कर्पूरको कांपिल्यसुबाणबारिषु।" इति मेदिनी। दिगंबर नग्न दुवौ पच्छमें एकै है अहिराज वासुकी औ बडे सर्प ॥ ८ ॥

तोमरछंद ॥ शिशुसो लसै सँग धाइ । वनमालज्यों सुर राइ ॥ अहिराजसो यहि काल । बहु शीश शोभनि माल ॥ ९ ॥ स्वागताछंद ॥ चंद्रमंदद्युति वासर देखौ । भूमिहीन भुवपाल विशेषौ ॥ मित्र देखि यह शोभत है यौं । राजसाज बिनु सीतहि हौं ज्यौं ॥ १० ॥ दोहा ॥ पतिनी पति बिनु दीन अति, पति पतिनीबिनु मंद ॥ चंद्रबिना ज्यौं यामिनी, ज्यौं विन यामिनि चंद ॥ ११ ॥ स्वागताछंद ॥ देखि राम बरषाऋतु आई । रोम रोम बहुधा दुखदाई ॥ आस पास तमकी छबि छाई । राति दिवस कछु जानि न जाई ॥१२॥ मंद मंद धुनिसों घन गाजैं । तूरतार जनु आवझ बाजैं ॥ ठौर ठौर चपला चमकै यौं । इंद्रलोक तिय नाचति हैं ज्यौं॥१३॥ मोटनकछंद॥सोहैं घन श्यामल घोर घनैं । मोहैं तिनमैं बकपांति मनैं ॥ शंखावलि पी बहुधा जलसों । मानी तिनको उगिलै बलसों ॥ १४ ॥ शोभा अतिशक्र-

शरासनमें । नाना द्युति दीसति है घनमें ॥ रत्नावलिसी दिवि द्वारभनो । वर्षागम बांधिय देव मनो ॥ १५ ॥

टी०-शिशु बालक धाइ जो माताते अन्य आपनो स्तन दूध पिआवति है औ वृक्षविशेष सुरराइ कहे विष्णु ते बनमाल पहिरे हैं पर्वतमें बनकी माला पंगतिसमूहेति है अथ बडो बडा है बहु शीश सहस्र शिर औ बहुतशी-शसो सोहैं वृक्ष ॥ ९ ॥ दिनमें द्युतिहीन चंद्रमाको देखि रामचंद्र लक्ष्मण-सों कहतहैं मित्र । सूर्य अथवा मित्र लक्ष्मणको संबोधन है ॥ १० ॥ ११ ॥ एकादश छंदनमों जैसो वर्णन करचो है ऐसी वर्षाऋतु आई देखिकै राम-चंद्र कलहंस कलानिधि खंजन कंज याते इसयें छंदमें जे वचन हैं ते कहत भये इति शेषः ॥ १२ ॥ तूर नगारे तार उच्चस्वर ॥ १३ ॥ १४ ॥ दिवि द्वार कहे आकाशके द्वारमें रत्नावलि पदते रत्ननके वन्दनवार जानौ बडेकी अवाईमें बंदनवार बांधिबेकी रीति प्रसिद्ध है ॥ १५ ॥

तारकछंद ॥ घन घोर घने दशहूं दिशि छाये । मघवा जनु सूरजपै चढि आये ॥ अपराध बिना क्षितिके तन ताये । तिन पीडन पीडित ह्वै उठि धाये ॥ १६ ॥

टी०--तीनि छंदको अन्वय एक है ग्रीष्म ऋतुमें अति तेजसों सूर्य क्षिति पृथ्वीके तन ताये तप्त करचो है जो कोऊ काहूको बिन दोष दुःख देई ताको दंड करिबो राजनको उचित है इंद्र देवनके राजा हैं तासों सूर्यको उचित दीर्घ दंड कियो जासों ऐसो अब ना करै उत्प्रेक्षा करि यह राज-नीति प्रगट देखायो अथबा पृथ्वीको अशरण जानिकै अशरणको सहाय करिबो बडेनको उचित है तासों अथवा पृथ्वीको स्त्री जानिकै स्त्रीकी रक्षा करिबो बडेनको उचित है तासों दुंदुभि कहे जे गजादि वाहन पर चमूके आगे नगारे बाजत हैं निर्घात कहे जाको वज्र शब्द सब कहत हैं सो नहीं है सबै कहे जे ते निर्घात होत हैं तेते पवि कहे वज्रके पात गिरिबो बखानो कहे कहत हैं अर्थ जै बार निर्घात होत है सो निर्घात नहीं है बार बार इंद्र सूर्यको वज्र चलावत हैं ताहीको शब्द होत है सम कहे बराबरि अर्थ जैसे अत्रिकी स्त्रीके उरमें देख्यो तैसे याके उरमें देख्यो है गोरमदाइनी कहे इंद्र धनुष नहीं है प्रत्यक्ष धनुष है गोरमदाइनि इंद्र धनुष-को नाम पश्चिममों प्रसिद्ध है औ बर्नना तुसारहूसों प्रगट होत है कहूँ गोरसदायन नहीं पाठ है तौ गो जे किरणें हैं ते रसद कहे

मेघनके अयन कहे घरमें मध्यमें इति नहीं है प्रत्यक्ष धनुष सूर्यकी किरणें मेघनमें परि इंद्रधनुष होत है यह प्रसिद्ध है खड्ग कहे तरवारि द्युतिवंत चन्द्रशुक्रादि तौ एकही चूकमों जातिमात्रको दंड बडे कोपको जनावत है चन्द्रबन्धू वीरबहोटी रसराजमें कह्यो है नवल बधू उर लाजे इन्द्र-बधूसी होई ॥ १६ ॥

अति गाजत बाजत दुंदुभि मानो । निरघात सबै पविपात बखानो ॥ धनु है यह गोरमदाइनि नाहीं । शरजाल बहै जलधार वृथाहीं ॥ १७ ॥ भट चातक दादुर मोरन बोलै । चपला चमकैं न फिरै खग खोलै ॥ द्युतिवंतनको विपदा बहु कीन्हीं । घरनीकहँ चंद्रवधू धरिदीन्हीं ॥ १८ ॥ तरुनी यह अत्रिऋषीश्वरकीसी । उरमें हम चन्द्रकलासम दीसी ॥ वरषान सुनै किलकै किल काली । सब जानत हैं महिमा अहिमाली ॥ १९ ॥ घनाक्षरी ॥ भौहैं सुरचाप चारु प्रमुदित पयोधर भूखन जराय जोति तडित रलाईहै । दूरि करी सुख मुख सुखमा शशीकी नैन अमल कमलदलदलित निकाई है ॥ केशोदास प्रबल करेनुकागमनहर मुकुत सुहसक सबद सुखदाई है । अंबर वलित मति मोहै नीलकंठजूकी कालिका कि वरखा हरखि हिय आई है ॥ २० ॥

टी०—॥ १७ ॥ १८ ॥ सम कहे बराबरि अर्थ जैसे अत्रिकी स्त्रीके उर देख्यो है तैसे याके उरमें देख्यो है अनसूयाको पातिव्रत देखि ब्रह्म विष्णु महेश पुत्र होवेकी इच्छाकरि गर्भमें आय चन्द्रमा दत्तात्रेय दुर्वासा-रूप यथाक्रम अवतार लियो है कथा पुराणनमें प्रसिद्ध है अहिमाली महादेव औ सर्पनकी माला वर्षागमनमें सर्प अति प्रसन्न होत हैं ॥ १९ ॥ कैसी है वर्षा कि जामें अनेक ग्रहपतन चौरादिके भौ कहे डर हैं औ सुरचाप कहे इन्द्रधनुष हैं चारु सुन्दर औ प्रमुदित कहे प्रसन्न हैं पयोधर मेघजामें औ भू कहे पृथ्वी औ ख कहे आकाशमें नजराइ कहे देखि परति है ज्योति जाकी ऐसी तडित जो बिजुली है ताकी तरलता है औ दूरि कीन्हों है मुख

कहे सहजही मुखकी सुखमा शोभा शशि कहे चन्द्रमाकी अर्थ चन्द्रप्रकाश नहीं होन पावत औ नै जे नदी हैं ते न कहे नहीं हैं अमल निर्मल अर्थ नदीनको जल म्लान ह्वै जात है औ कमलनको दल समूह दलित होत है औ निकाई कहे काईसों रहित है अथवा कमलदलकी दलित है निकाई जामें केशवदास कहत हैं कि रेणुका जो धूरि है ताको गमनहर प्रबल है क कहे जल जामें अर्थ ऐसो जल चारों ओर भयो है जासों धूलि नहीं उडति औ मुकुत कहे त्यक्त है हंसक जे हंस हैं तिनको सुखदाई शब्द जामें वर्षामें हंस उडजात हैं यह प्रसिद्ध है औ अम्बर जो प्रकाश है तामें वलित कहे युक्त नीलकण्ठ जे मोर हैं तिनकी मतिको मोहै कहे प्रसन्न करति है कालिका कैसी है कि भौंहैं हैं सुरचाप इन्द्रधनुषहूते चारु जाकी औ प्रमुदित कहे उन्नत हैं एयोधर स्तन जाके भूषणनमें जराइ कहे जराऊ जो ज्योति है तामें तडित जो बिजुली है ताकी तरलाई चंचलता है अथवा भूषणमें जडाऊकी जो ज्योति है सो जटित समरलाई कहे योजित है अर्थ भूषणनमें रत्ननकी ज्योति बिजुली सम दमकति है रत्नजाडित भूषण जडाऊ कहावत हैं औ दूरि कीनी है सुख मुख कहे सहज मुखही सो शशि जो चन्द्र है ताकी सुखमा शोभा अर्थ सहजमुख ऐसो छबिवान् है जामें चन्द्र द्युति मंद होति है औ अमल कहे स्वच्छ जे नयन हैं तिन करिकै कमलदलकी निकाई दलित है अर्थ जिनके नयनके आगे कमलनकी छबि दलि जाति है औ केशवदास कहत हैं कि प्रबल कहे नीको जो करेनुका हास्तिनीको गमन है ताकी हरणहारी है औ मुकुत कहे छुट्यो अर्थ उच्चरित जो हंसक कहे बिछुवान को शब्द है सोहै सुखदाई जाको अर्थ जाके चलतमें सुखदायक अनेक रंगको बिछुवानको शब्द होतहै औ अम्बर जो वस्त्र हैं तामें वलित युक्त नीलकण्ठ जे महादेव हैं तिनकी मतिको मोहन है यहाँ काली पदते पार्वती जानो ॥ २० ॥

तारकछन्द ॥ अभिसारिनिसी समुझैं परनारी । सतमारग मेटनको अधिकारी ॥ मतिलोभ महामद मोह छयीहै । द्विजराज सुमित्र प्रदोष मयीहै ॥२१॥ दोहा ॥ वर्णत केशव सकल कवि, विषम गाढ तम सृष्टि ॥ कुपुरुषसेवा ज्यों भई, संतत मिथ्यादृष्टि ॥ २२ ॥ चंद्रकलाछंद ॥ कलहंस कला निधि खंजनकंज कछू दिन केशव देखि जिये । गति आनन-

लोचन पायनके अनुरूप कसे मन मानि लिये ॥ यहि काल करालते शोधि सबै हठिके बरषा मिस दूरि किये । अबधौं बिन प्राणप्रिया रहिहैं कहि कौन हितू अवलम्बि हिये ॥ २३ ॥

टी०—सत कहे उत्तम मार्ग यथोचित कुलांगननकी रीति औ राजमार्गादि ग्रामते ग्रामांतरकी राह इति कि लोभ औ महामद औ मोहसों छई मति बुद्धि है वर्षा द्विजराज चन्द्रमा औ सुमित्र सूर्य तिनके दोषमयी है अर्थ चंद्र सूर्यको उदय नहीं होन पावत औ मति द्विजराज ब्राह्मण औ सुष्ठु मित्र इनके दोषमयी है यासों या जानों लोभ मद मोहयुक्त प्राणी मित्र द्विजदोष करत नहीं डरत ॥ २१ ॥ विषम कहे भयानक जो गाढ तम अन्धकार है ताकी सृष्टि कहे वृद्धिमें मिथ्या दृष्टि भई जैसे कुपुरुषकी सेवामें होति है तैसी सकल कवि वर्णत है अर्थ जब कुपुरुष सेवा कोऊ करत है तब वाहि यह देखि परतहै कि कछु पाय हैं जब कछु ना पायो तब पूर्ण दृष्टि मिथ्या होत भई तैसे जा दृष्टिसों सब विषय पदार्थ देखि परत हैं ताही दृष्टिसों वर्षाधकारमें निकटगत वस्तु नहीं देखियत पूर्ण दृष्टि मिथ्या होति है ॥ २२ ॥ अनुरूपक कहे प्रतिमें जा वस्तुके वियोगसों विकलता होति है ताकी प्रतिमा देखि कछु बोध होतहै यह जो हमारो कराल कहे भयानक काल कहे समय है जामें सीयवियोगादि दुःख भये ताही काल वर्षाको व्याज करि हमको दुःख देबेको तिनहुन कलहंसादिकनको दूरि कीन्हों ॥ २३ ॥

दोहा ॥ बीते वर्षा काल यों, आई शरद सुजाति ॥ गये अँध्यारी होति ज्यों, चारु चांदनी राति ॥ २४ ॥ मोटनछंद ॥ दंतावलि कुन्द समान गनो । चंद्रानन कुन्तल चौंर घनो ॥ भौंहैं धनु खंजन नैन मनो । राजीवनि ज्यों पदपानि भनो ॥ २५ ॥ हारावलिनीरजही परमैं । हैं लीन पयोधर अम्बरमैं ॥ पाटीर जोन्हाइहि अंग धरे । इसी गति केशव चित्त हरे ॥ २६ ॥ श्रीनारदकी दरशे मतिसी । लोपै तमता

---

१ सुंदर. २ सदृश.

अपकीरतिसी ॥ मानौ पतिदेवनकी रतिको । सतमारगकी समुझै गतिको ॥ २७ ॥

टी०-सुजाति कहे उत्तम ॥ २४ ॥ द्वै छंदको अन्वय एक है शरदको स्त्री रूप करि कहत हैं कुंदके जे पुष्प हैं तेई दंतनकी अवली पंगति है कुन्द शरत्कालमें फूलत हैं यह कविनियम है औ चन्द्रमा जो है सोई आनन मुख है चन्द्रमा वर्षाके मेघनमें मूंद्यो रहत है शरत्कालमें प्रकाशित होतहै औ सब राजा शरत्कालमें पूजन करि धनुष चामरादि धारण करत हैं सो चौंर जे हैं तेई कुन्तल केशपाश हैं घनो कहे अति सघन औ धनुष जे हैं तेई भौंहैं हैं औ शरत्कालमें खंजन आवत है तेई नयन हैं औ राजीव कहे कमल फूलत हैं तेई पद औ पाणि कहे कर हैं औ स्वातीनक्षत्रकी वर्षासों नीरज मोती होतहैं तिनकी हारावलि हृदयमें है जाके औ पयोधर जे मेघ हैं ते अम्बर कहे आकाशमें लीन हैं मिले हैं स्त्री पक्ष पयोधर कुच अम्बर वस्त्रमें लीन हैं औ जोन्हाई जो है सोई पाटीर कहे चन्दन लेप हैं शरत्पक्षहंसी गति कहे हंसनकी गति स्त्रीपक्ष हंसनकी ऐसी गति इन सब करिकै सबके चित्तको हरे है वश्य करे है ॥ २५ ॥ २६ ॥ तमता अंधकार औ तमोगुण नारद सत्त्वगुणी हैं पतिदेव जे पतिव्रता हैं तिनकी रति प्रीतिको मानौ कहे जानौ अर्थ शरत्काल नहीं है पतिव्रतनकी प्रीति है प्रीति कैसी है पतिसेवा आदि जे सत कहे उत्तम मार्ग हैं तिनकी गति कहे तिनविषे गमन समुझति कहे जानाति हैं शरत्कैसी है सत कहे उत्तम जे मार्ग राह हैं तिनकी गति कहे प्रभावको समुझै कहे जानति है अर्थ वर्षा करिके बिदारित जे सतमार्ग हैं तिनको प्रकट करति है ॥ २७ ॥

दोहा ॥ लक्ष्मण दासी वृद्धसी, आई शरद बजाति ॥ मनहुँ जगावनको हमहिं, बीते वर्षा राति ॥ २८ ॥ कुंडलिया ॥ ताते नृप सुग्रीवपै, जैये सत्वर तात । कहियो वचन बुझाइकै, कुशलन चाहो गात ॥ कुशलन चाहो गात चहतहौ बालिहि देखो । करहु न सीता शोध कामवश राम न लेखो ॥ राम न लेखो चित्त चही सुख संपतिजाते । मित्र कह्यो गहि बाहँ कानि कीजत है ताते ॥ २९ ॥ दोहा ॥ लक्ष्मण किष्किंधा गये, वचन कहे करि क्रोध ॥ तारा तब

समुझाइयो, कीन्हों बहुत प्रबोध ॥ ३० ॥ दोधकछंद ॥ बोलि लये हनुमान तबैजू । ल्यावहु वानर बोलि सबैजू ॥ बार लगै न कहू बिरमाहीं । एक न कोउ रहै घरमाहीं ॥ ३१ ॥ त्रिभंगीछंद ॥ सुग्रीव संघाती मुखदुति राती केशव साथहि सूर नये । आकाशबिलासी सूरप्रकाशी तबहीं वानर आइ गये ॥ दिशि दिशि अवगाहन सीतहि चाहन यूथप यूथ सबै पठये । नल नील ऋच्छपति अंगदके सँग दक्षिण दिशिको बिदा भये ॥ ३२ ॥

टी०—जैसे वृद्धदासीके शुक्ल रोमन करिके सर्वांग शुक्ल होत है तैसे याहू शुक्ल है तासों वृद्ध दासी सम कह्यो लक्ष्मण संबोधन है ॥ २८ ॥ सत्वर कहे शीघ्र चित्त चही कहे मनमानी ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ साथहि कहे लक्ष्मणके साथहि रामचन्द्रके पास आइ गये लक्ष्मण इति शेषः । सूरप्रकाशी कहे सूर्यको ऐसो है प्रकाश जिनको ॥ ३२ ॥

दोहा ॥ बुद्धि विक्रम व्यवसाय युत, साधु समुझि रघुनाथ । बल अनंत हनुमंतके, मुँदरी दीन्हीं हाथ ॥ ३३ ॥ हीरक-छन्द ॥ चण्डचरण छण्डि धरणि मंडि गगन धावहीं । तत्क्षणहूय दक्षिण दिशि लक्ष्य नहीं पावहीं ॥ धीर धरन बीर वरण सिंधुतट सुभावहीं । नाम परम धाम धरम राम करम गावहीं ॥ ३४ ॥

टी०—बुद्धि पद सो दान उपाउ जानौं काहेते बुद्धिवान हठ नहीं करते समय विचारि दान उपाइसों कार्य साधत हैं औ विक्रम कहे अति बल "विक्रमस्त्वतिशक्तिता' इत्यमरः । यासों दंड उपाउ जानौं बली अति-बलसों दंडकरि कार्य साधत है व्यवसाय कहे यत्नसों भेद उपाउ जानौं पत्नी पुरुष अनेक यत्न करि मंत्र्यादिकनसों भेद करिकै कार्य साधत हैं औ साधु पदते साम उपाउ जानौ साधु प्राणी मिलापहीसों कार्य साधत हैं सो यासों समयोचित चारिहू उपाइ करि कार्यसाधिबेको लायक हनुमानको समुझिकै बल कहे सैन्य अनन्त है ताके मध्यमें हनुमंतके हाथमें रामचन्द्र मुँदरी दीन्ही ॥ ३३ ॥ तत्क्षण कहे जब रामचन्दकी आज्ञा पायो ताही क्षण चंड कहे प्रचंड चरणनसों धरणि पृथ्वीको छाँडिकै अर्थ अति जोरसों

कूदिकै गगन कहे आकाशको मंडिकै भूषित करिकै अर्थ अति आकाश मार्ग ह्वैकै धावत है सीताको लक्ष्मण कहे खोज नहीं, पावत धीरके धरन हार जे वीर वरण स्वरूप सब हैं ते सिंधुके तटमें स्वभाव ही साधरमको परम कहे बडो धाम जो रामनाम है औ कर्म वालिबधादि तिन्हैं गावत हैं धीरधरण कहि या जनायो कि यद्यपि खोज नहीं सीताको पायो परन्तु धीरको धरे हैं अधीर नहीं भये तौ जहां ताई खोज पाइहैं तहां ताई ढूंढि हैं औ स्वभावही कहि या जनायो कि कछु भय मानिकै रामनामको नहीं गावत ॥ ३४ ॥

अंगद-अनुकूलछंद ॥ सीय न पाई अवध विनासी । होहु सबै सागर तटवासी ॥ जो घर जैये सकुच अनंता । मोहि न छोंडै जनकनिहंता ॥ ३५ ॥ हनूमान ॥ अंगद रक्षा रघुपति कीन्हों । साधन सीता जल थल लीन्हों ॥ आलस छांडौं कृत उर आनौं । होहु कृतघ्नी जनि शिख मानौं ॥ ३६ ॥ अंगद दंडक ॥ जीरण जटायु गीध धन्य एक जिन रोंकि रावण बिरथ कीन्हों सहि निज प्राणहानि । हुते हनुमंत बलवंत तहां पांच जन दीने हुते भूषण कछू करन रूप जानि ॥ आरत पुकारतही राम राम बार बार लीन्हों न छंडाई तुम सीता आति भीति मानि । गाइ द्विजराज तियकाजन पुकार लागै भोगवै नरक घोर चोरको अभयदानि ॥३७॥ दोहा ॥ सुनि संपाति सपक्ष ह्वै, रामचरित सुख पाय ॥ सीता लंका मांझ हैं, खगपति दई बताय ॥३८॥ दंडक ॥ हरिकै सो वाहनकी बिधि कैसो हेमहंसलीकसी लिखत भयाहनके अंकको। तेजको निधान राममुद्रिका विमान कैधौं लक्ष्मणको बाण छूट्यो रावणनिशंकको ॥ गिरि गजगंडते उडान्यो सुवरण अलि सीतापदपंकज सदा कलंक रंकको । हवाईसी छूटी केशोदास आसमानमें कमान कैसो गोला हनुमान चल्यो लंकको ॥३९॥

टी०-मास दिवसकी अवधि दियो है । यथा वाल्मीकीये ॥" अधिगम्य ॥ वैदेही निलयं रावणस्य च । मासे पूर्णे निवर्तध्वमुदयं प्राप्य पर्वतम् ॥ १ ॥

ऊर्द्धमासान्न वस्तव्यं वसन्वध्यो भवेन्मम" ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ जीरण वृद्ध ॥ ३७ ॥ चन्द्रमा ऋषिको आशीर्वाद रह्यो है कि सीताके खोजको वानर ऐ हैं तिन्हैं मिले पच्छ तेरे जामि हैं तुलसीकृत रामायणमों प्रसिद्ध है ॥ ३८ ॥ सदा कलंकहीको रंक कहे दरिद्र अर्थ कलंकरहित जो सीता-पदपंकज हैं कमान तोपको नाम पश्चिममों प्रसिद्ध है औ गोलाके साहचर्यसों अति निश्चित है यथा भूषणकविः। "छूटत कमाननके गोली तीर बाननके मुसकिल जात मुरचानहूंके ओटमें। तांही समैं शिवराज दाब करी पैंडापर दै सुरंग हलाको हुकुम करचो गोटमें ॥ भूषण भनत कहौं कि मति कहांलों देसी हिम्मति इहांलों शर जाके भटजोटमें। ताउ देदै मोछन कंगूरनमैं पाउं दैदै घाउ दैदै अरु मुख कूदे जाय कोटमें" ॥ ३९ ॥

दोहा ॥ उदधि नाकपतिशत्रुको, उदित जानि बलवंत ॥ अंतरिक्षहीं लक्षि पद, अच्छ छुयो हनुमंत ॥ ४० ॥ बीच गये सुरसा मिली, और सिंहिकानारि ॥ लीलि लियो हनुमंत तेहि, कढे उदरकहँ फारि ॥ ४१ ॥

टी०—उदधि जो समुद्र हैं तामें नाकपति जे इन्द्र हैं तिनको शत्रु मैनाक ताको उदित कहे अपने विश्रामके लिये उठ्यो जानिकै अंतरिक्षही कहे आकाशहीसों लक्षि कहे देखिकै बलवंत जे हनुमंत हैं तिन ता मैनाकके बोधके लिये अच्छ कहे स्वच्छ जो पद है तासों छुयो स्पर्शमात्र करचो काहेते वाल्मीकीयरामायणमें लिख्यो है कि हनुमान मैनाकसों अपनी प्रतिज्ञा कह्यो है कि मध्यमें विश्राम न करिहौं। यथा—"त्वरते कार्यकालो मे अहश्चाप्यनिवर्तते। प्रतिज्ञा च मया दत्ता न स्थातव्यमिहांतरा ॥" अथवा पदके सदृश अच्छसो छुयो अर्थ जैसे पदसों स्पर्श करि लघुविश्राम करनो रहै तैसे केवल दृष्टिसों स्पर्श करि विश्राम कियो ॥ ४० ॥ सिंहिकाने हनुमंतको लीलिलियो ॥ ४१ ॥

तारकछंद ॥ कछु राति गये करि दंश दशासी। पुरमांझ चले बन राजविलासी ॥ जबहीं हनुमंत चले तजि शंका। मग रोंकि रही तिय ह्वै तब लंका ॥ ४२ ॥ लंका ॥ काहि मोहिं उलंघ्य चले तुम का हौ। अति सूक्ष्म रूप धरे मन मोहो ॥ पठये कयहि कारण कौन चले हो। सुर हा किधौं कोऊ सुरेश भले हो ॥ ४३ ॥ हनूमान ॥ हम बानर हैं

रघुनाथ पठाये । तिनकी तरुणी अवलोकन आये ॥ लंका॥ हति मोहिं महामति भीतर जैये । हनूमान ॥ तरुणीहिं हते कबलों सुख पैये ॥ ४४ ॥ लंका ॥ तुम मारेहिपै पुर पैठन पेहौ । हठ कोटि करौ घरही फिरि जैहौ ॥ हनुमंत बली तोहि थापर मारी । तजि देह भई तबही वर-नारी ॥४५॥ लंका-चौपाई ॥ धनदपुरी हौं रावण लीन्ही । बहुविधि पापन करे सभीनी ॥ चतुरानन चित चिंतन कीन्हों । बरु करुणा करि मोकहँ दीन्हों ॥ ४६ ॥ जब दशकंठ सिया हरि लैहैं । हरि हनुमंत विलोकन ऐहैं ॥ जब वह तोहि हतै तजि शंका । तब प्रभु होइ विभीषण लंका ॥४७॥ चलन लगों जबही तब कीजो । मृतक शरीरहि पावक दीजो ॥ यह काहि जात भइ वह नारी । सब नगरी हनुमंत निहारी ॥ ४८ ॥

टी०-दंश कहे डास यामें कोऊ कोऊ संदेह करत हैं कि दंश रूप धरिकै गये मुद्रिका कैसे लैगये ता लिये और अर्थ करि दंश कहे सिंह " करिणं हस्तिनं दशतीति करिदंशः । " ताको रूप करि चले तो सिंहको औ श्वानको रूप एक होता है ताही सों श्वानको नाम ग्रामसिंह है श्वानको ग्राममें जैबो साधारण रहत है तासों श्वानको रूप धरिकै गये ॥ ४२ ॥ सूक्ष्म कहे लघु श्वानके अर्थमें सूक्ष्म कहे तुच्छ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ धनद कुबेर ॥ ४६ ॥ हरि बानर ॥ ४७ ॥ मृतक शरीर कहे पुरी रूप मृतक शरीर लंकाने या प्रकारको बर मांग्यो है ताही लिये हनुमान लंकापुरीको जारि है ॥ ४८ ॥

तब हरि रावण सोवत देख्यो । मणिमय पालिककी छबि लेख्यो ॥ तहँ तरुणी बहु भाँतिन गावैं । बिच बिच आवझ बीन बजावैं ॥ ४९ ॥ मृतकचितापर वानहुँ सोहैं । चहुँदिशि प्रेतवधू मन मोहैं ॥ जहँ जहँ जाइ तहाँ दुख दूनो । सिय बिन है सिगरो पुर सूनो ॥ ५० ॥ भुजंगप्रयातछंद ॥ कहूं किन्नरी किन्नरी लै बजावैं । सुरी आसुरी बांसुरी गीत गावैं॥

कहूं याक्षिणी पाक्षिणी ले पढावैं। नगी कन्यका पन्नगीको नचावैं ॥ ५१ ॥ पियैं एक हाला गुहैं एक माला। बनी एक बाला नचै चित्रशाला ॥ कहूं कोकिला कोककी कारिकाको। पढावै सुआले शुकी शारिकाको ॥ ५२ ॥ फिरयो देखिकै राजशाला सभाको। रह्यो रीझिकै बाटिकाकी प्रभाको ॥ फिरयो बीर चौंहूं चितै शुद्ध गीता। बिलोकी भली सिंसिपामूल सीता ॥ ५३ ॥

टी०-॥ ४९ ॥ ५० ॥ किन्नरी सारंगी बाँसुरीमें गीत गावती हैं अथवा बाँसुरी सम गीत गावती हैं ॥ ५१ ॥ हाला मदिरा सुष्ठु जे आलय घर हैं तिनमें शुकी औ शारिका मैना कोकिला जे हैं ते कोकशास्त्रकी कारिका पढावती हैं अथवा स्त्री कोकिला सम पढावती हैं ॥ ५२ ॥ या प्रकार सब स्थानमें फिरयो सो ऐसी राजशाला सभा कहे राजभवनमें स्त्रीनकी सभाको देखिकै रीझि रह्यो अथबा या प्रकार राजशाला औ राजसभाको देखिकै रीझि रह्यो जब सीताको तहां न देख्यो तब बाटिकाकी प्रभाको फिरयो अर्थ बाटिकाको गमन करयो शुद्ध गीता सीताको विशेषण है शिंशुपा सीसौ अथवा " अगुरु पिच्छिलागुरु शिंशुपा " इति विश्वः ॥ ५३ ॥

धरे एकबेनी मिली मैलसारी। मृणाली मनो पंकसों काढि डारी ॥ सदा रामनामै ररै दीन बानी। चहूँ ओर हैं एकसी दुःखदानी ॥ ५४ ॥ ग्रसी बुद्धिसी चित्त चिंतानि मानों। कियो जीभ दंतावली मैं बखानो ॥ किधौं घेरिकै राहु नारनि लीनी। कलाचंद्रकी चारु पीयूष भीनी ॥ ५५ ॥ किधौं जीवको जोतिमाया न लीनी। अविद्यानके मध्य विद्या प्रवीनी ॥ मनो सर्व इस्त्रीनमें कामवामा। हनूमान ऐसी लखी रामरामा ॥ ५६ ॥ तहाँ देवद्वेषी दशग्रीव आयो। सुन्यो दोवि सीता महादुःख पायो ॥ सबै अंग लै अंगहीमें दुरायो। अधो दृष्टिकै अश्रुधारा बहायो ॥ ५७ ॥ रावण ॥ सुनो दोवि मोपै कछू दृष्टि दीजे। इतो शोच तो

रामकाजै न कीजे ॥ बसैं दंडकारण्य देखै न कोऊ । जो देखै महाबावरा होय सोऊ ॥ ५८ ॥

टी०-पंकसदृश मैल सारो है कहूं पंक शोकाधिकारी पाठ है तौ मानो पंक युक्त मृणाली है शोकाधिकारी कहे अति शोक युक्त दुहुनको विशेषण है ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ संसार विषे कीनी बुद्धि अविद्या है ईश्वर विवेकिनी बुद्धि विद्या है रामा स्त्री ॥ ५६ ॥ अति लाज भयसों अंग सिकोरिके बैठी ॥ ५७ ॥ चारि छंदको अन्वय एक हैं रावण कहत है कि देवि ! ऐसे जे रामचंद्र हैं तिनको शोच ना करो हम जे तुम्हारे सदा दास हैं तिनपै कृपा काहे नाहि करियत जासों अदेवी दैत्य स्त्री देवांगना तिनकी रानी होय औ वाणी सरस्वती औ मघौनी इंद्राणी मृडानी पार्वती तुम्हारी सेवा करैं औ किन्नरी सारंगी लिये किन्नरी किन्नरकन्या तुम्हारे समीप गीत गावैं औ सुकेशी औ उर्वशी नाचैं तुमसों मान कहे आदर पावैं यामें आपनो प्रभाव देखायो कि ए सब इंद्रादि मेरी आज्ञाकर हैं रामचन्द्र कैसे हैं दंडकारण्यमें बसत हैं अर्ध वनवासी हैं औ ऐसे छिपे रहत हैं जिनको कोऊ कबहूं देखत नहीं औ जो देखत है औ सो महा बावरो आपने तनकी औ भवनादिकी सुधि भूलि जात है यासों या जनायो कि बावरा होत है ताहीको संग्रह कोऊ नाहीं करत औ वे ऐसे हैं जिनको देखत औरऊ बावरो होत है तासों सोच करिबे लायक नहीं है अनाथके अनुसारी कहे अनुगामी हैं अर्थ यह कि काहू बडेके अनुगामी नहीं हैं ' तुम्हैं देवि दूषे हितू ताहि मानै ' इत्यादि दुवौ वचन भेद उपायके हैं सरस्वती उक्तार्थः ॥ ह देवि ! हे जगदंब ! हमपर कछु कृपादृष्टि दीजै अर्थ तुम्हारी नेक कृपादृष्टिसों हमारो भलो होत है औ रामचन्द्रके काज येतो शोच काहेको करती हौ रामचन्द्र शोचनीय नहीं हैं काहेते वे ऐसे प्रतापी हैं कि निर्जन दंडकारण्यमें बसते हैं आशय कि अति निर्भय हैं औ देखै न कोऊ अर्थ अनेक ध्यानादि उपाय योगी जन जिनके देखिबेको करत हैं ताहूपर दर्शन नहीं पावत सो छठे प्रकाशमें कह्यो है कि " सिद्धसमाधि सजैं अजहूं न कहूं जग योगिन देख न पाई । " औ जो देखतहै अर्थ जाको दर्शन होत है सा महा बावरो होत है अर्थ बावरे सम संसार सुखको त्यागकारि जीवन्मुक्त ह्वै जात है अथवा बावरे सम देहकी सुधि नहीं रहति जैसे सुतीक्ष्णको भयो अथवा महा बावरो महादेव होई अर्थ महादेव सम प्रभावको प्राप्त होइ ॥ ५८ ॥

कृतघ्नी कुदाता कुकन्याहि चाहै ॥ हितू नग्न मुंडी नहीं को सदाहै ॥ अनाथै सुन्यो मैं अनाथानुसारी । बसैं चित्त दंडी जटी मुंडधारी ॥ ५९ ॥

टी०—कृत जो कर्म हैं ताके हंता नाशकर्त्ता हैं अर्थ शुभाशुभ कर्म बन्धन तोरि दासनको मुक्त करत हैं औ कु जो पृथ्वी है ताके दाता हैं अर्थ पूर्ण पृथ्वीके दाता हैं बावनरूप ह्वै बलिसों ले इंद्रको दियो औ कु जो पृथ्वी है ताकी कन्या चैत्रमहौ तिन्हैं चाहत हैं औ नग्न औ मुण्डी जे तप स्त्री हैं तिनके हितू हैं औ अनाथ कहे जिनको नाथ स्वामी कोऊ नहीं है आशय कि आपही सबके नाथ हैं औ अनाथ कहे अशरण जे मानी हैं तिनके अनुसारी आगामी हैं जाको रक्षक कोई नहीं है ताकी रक्षा करिबेको पाछे पाछे आपु फिरत हैं जैसे गज प्रह्लादकी रक्षा करचो औ दण्डी औ जटी औ मुण्डधारी जे तपस्वी हैं तिनके चित्तमें बसत हैं अर्थ राजाको सदा ध्यान करत हैं अथवा दंडी औ जटी औ मुण्डधारी ऐसे जे महादेव हैं तिनके चित्तमें बसत हैं औ द्रव्यरूप लक्ष्मीको जे दूषत हैं औ उदासीन रहत हैं ते दास विष्णुको अतिप्रिय हैं औ निर्गुणी कहे प्राकृत गुणन करि रहित हैं अर्थ अति उत्कृष्ट गुण हैं जिनके । यथा वायुपुराणे ॥ "सत्त्वादि-गुणहीनत्वान्निर्गुणी हरिरीश्वरः ॥" औ ता नाम कहे ताको नाम ऐसो है जाकरिकै नहीं लीजियत अर्थ जाके नामको शिव आदि देव सब जपत हैं अथवा महानिर्गुणी कहे रज सत्त्व तमोगुण करि रहित हैं ताको नाम नहीं लीजियत है अर्थ जाके नामका जप नहीं है ऐसी जो ब्रह्मज्योति है सो है अथवा हे देवि ! जे तुम्हैं दूषत हैं तिन्हैं कहा हितू मानत हैं अर्थ हितू नहीं मानते जो तुम्हारी रंचकऊ विरोधी है ताही रामचन्द्र परम विरोधी मानत हैं जयंतादि ते जानौ औ तोसों उदासीन है ताहूको कहा हितू मानत है अर्थ ताहूको आपनो परम हितूहू होइ पै बिरोधही जानत हैं सीय खोजको वानर पठाइवेमें सुग्रीव उदासीनता करचो प्रेमकरि आपुहीसों वानर न पठयो तब कोपकरि लक्ष्मणसों विरोधी सम वचन कहि पठावनादिसों जानौं औ महानिर्गुणी कहे उत्कृष्ट गुणन करि युक्त जे रामचन्द्र हैं तिनको नाम कहा ना लीजै अर्थ यह कि लीजे ताहीके नामसों मुक्ति प्राप्ति होती है ॥ मैं तुम्हारो सदा दास हौं मोपै कृपा कोहे नाहीं कीजत सेवकपर कृपा करिवो स्वामीको उचित है अदेवीनकी रानी होहु इत्यादि वचन आशीर्वादात्मक हैं कि तुम ऐसे सुखको प्राप्त होहु ॥ ५९ ॥

तुम्हैं देवि दूषै हितू ताहि माने । उदासीन तोसों सदा ताहि जाने ॥ महानिर्गुणी नाम ताको न लीजै । सदा दास मोपै कृपा क्यों न कीजै ॥ ६० ॥ अदेवी नृदेवीनकी होहु रानी । करैं सेव वानी मघौनी मृडानी ॥ लिये किन्नरी किन्नरी गीत गावैं । सुकेशी नचैं उर्वशी मान पावैं ॥ ६१ ॥ मालिनीछंद ॥ तृण बिच दै बोली सीय गंभीर वानी । दशमुख शठ को तू कौनकी राजधानी ॥ दशरथसुतद्वेषी रुद्रब्रह्मा न भासै । निशिचर वपुरा भू क्यों नश्यो मूल नासै ॥ ६२ ॥ अति तनु धनुरेखा नेक ना कीन जाकी । खल शर खरधाए क्यों सहै तिच्छ ताकी । बिडकन घनघूरे भक्षि क्यों बाज जीवै । शिव शिर शशि श्रीको राहु कैसे सो छीवै ॥ ६३ ॥

टी०—॥ ६० ॥ ६१ ॥ पतिव्रतनको परपुरुषसों संभाषण अनुचित है तासों तृण कहे खरको अंतरकरयो यह लोकमर्यादा है अथवा तृण अंतरमें करि या जनायो कि हम प्राणनको तृण समान समुझे हैं जो तू स्पर्श करि है तौ प्राण तृण समान छोडि देहैं अथवा रावणको जनायो कि तू तृणसमान है काहेते गंभीरवाणी बोली याते कछु भय नहीं सूचित होत कोऊ कोऊ तृणअंचलहूको कहत हैं तौ अंचल ओट सों बोली या जानौं तेरो तो मूल तबही नशिगयो रहै जब हमको हरिल्यायो रहै तामें कछु लग्यो है ताको ऐसी बातें कहि अवनीकी भाँतिसों काहेको नाशत है ॥ ६२ ॥ तनु कहे सूक्ष्म बिट पुरीष तेरो राज्यसुख बिडकन सदृश हैं हम बाज सदृश हैं औ हम शिवशिरशशिसदृश हैं तू राहु सदृश है ॥ ६३ ॥

उठि उठि शठ ह्यांते भागु तोलौं अभागे । मम वचन बिसयौं सर्प जोलौं न लागे ॥ विकल सकुल देखौं आसुही नाश तेरो । निपट मृतक तोकौं रोष मारै न मेरो ॥ ६४ ॥ दोहा ॥ अवधि दई द्वै मासकी, कह्यो राक्षसिन बोलि ॥ ज्यों समुझे समुझाइयो, युक्ति छुरीसों छोलि ॥ ६५ ॥ चामरछंद ॥ देखि देखिके अशोक राजपुत्रिका कह्यो ॥ देहिं मोहिं आगितैं जो अंग आगि ह्वै रह्यो ॥ ठौर पाइ पवनपुत्र डारि मुद्रिका दई । आसपास देखिके उठाय हाथके

लई ॥ ६६ ॥ तोमरछंद ॥ जब लगी सियरी हाथ । यह आगि कैसी नाथ ॥ यह कह्यो लषि तब ताहि ॥ मणिजटित मुँदरी आहि ॥ ६७ ॥ जब बांचि देख्यो नाउ । मन परचो संभ्रम भाउ ॥ आबालते रघुनाथ । यह धरी अपने हाथ ॥६८॥ बिछुरी सो कौन उपाउ । केहि आनियो यहि ठाउ ॥ सुधि लहौं कौन उपाउँ। अब काहि बूझन जाउँ ॥६९॥ चहुँ ओर चितै सत्राश । अवलोकियो आकाश ॥ तहँ शाख बैठो नीठि । तब परचो वानर डीठि ॥ ७० ॥

टी०–हमारे वचनमें विप्रशरण शील जे सर्प हैं इहां सर्प पदते सर्प शाप जानो ते जबलों तेरे अंगनमें नहीं लागे अर्थ जैसे सर्पके काटतही प्राण छूटते हैं तैसे हमारे शापसों तेरो प्राण छूट जैहैं अथवा हमारे बचनहीं जे विसर्पी कहे प्रसरणशील सर्प हैं ते जबलौं तेरे अंगनमें नहीं लागे ॥ ६४ ॥ ॥६५॥ अरुणपत्र युक्त अशोक वृक्ष विरहसों दाहक अग्नि सम देखि परत हैं तासों सीताजू कह्यो कि तिहारो सर्वाङ्ग आगि सम ह्वै रह्यो है सो हमको आगि तू देहु जामें जारिकै दुसह रामवियोग ताप मिटाइये इति भावार्थः॥६६॥ सियरी शीतल ॥ ६७ ॥ आबालते कह्यो लडिकाईहींसों ॥ ६८ ॥ सुधि कहे खबरि ॥ ६९ ॥ नीठि कहे मरुमरुकै ॥ ७० ॥

तब कह्यो को तू आहि । सुर असुर मो तन चाहि ॥ कै पक्ष पक्ष विरूप । दशकंठ वानररूप ॥ ७१ ॥ कहि आपनो तू भेद । नतु चित्त उपजत खेद ॥ कहि बेग वानर पाप । नतु तोहिं देहौं शाप ॥ तब वृक्षशाखारूमि । कपि उतरि आयो भूमि ॥ ७२ ॥ पद्धटिकाछंद ॥ कर जोरि कह्यो हौं पवनपूत । जिय जननि जानु रघुनाथदूत ॥ रघुनाथ कौन दशरत्थनंद । दशरत्थ कौन अजतनय चन्द ॥ ७३ ॥ केहि कारण पठये यहि निकेत । निज देन लेन संदेश हेत ॥ गुण रूप शील शोभा सुभाउ । कछु रघुपतिके लक्षण बताउ ॥७४॥ अति यदपि सुमित्रानंदभक्त । अति सेवक हैं अति शूर शक्त ॥ अरु यदपि अनुज तीन्यों

समान । पै तदपि भरत भावत निदान ॥ ७५ ॥ ज्यों नारायण उर श्री वसंति । त्यों रघुपति उर कछु द्युति लसंति ॥ जगति तनेहैं सब भूमि भूप । सुर असुर न पूजैं रामरूप ॥७६॥ सीताजू-निशिपालिकाछंद ॥ मोहिं परतीति यहि भाँति नहिं आवई । प्रीति काहिधों सुनर वानरनि क्यों भई ॥ बात सब वर्णि परतीति हरि त्यों दई । आशु अन्हवाइ उर लाइ मुँदरी लई ॥ ७७ ॥ दोहा ॥ आशु वरषि हियरे हर-षि, सीता सुखद सुभाय । निरखि निरखि पिय मुद्रिकहि, वरणतिहैं बहु भाय ॥ ७८ ॥

टी०- पच्छ जो है ज्ञाति वर्ग तासों विरूप कहे अन्य रूप ॥ ७१ ॥ खेद डर पाप छल छंद छः चरणको है तासों गाथा जानो यथा वृत्तरत्नाकरे ॥ "शेषं गाथास्त्रिभिः षड्भिश्चरणैश्चोपलक्षिताः" ॥ माघको दूसरो छंद छःचरण को है ॥ ७२ ॥७३॥ कछू कहे गुणादिकनमों काहूको लक्षण कहौ ॥ ७४ ॥ शक्त समर्थ ॥ ७५ ॥ न पूजे कहे समता नहीं करत ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ भाई कहे अभिप्राय ॥ ७८ ॥

पद्धटिकाछंद ॥ यह सूर किरण तमदुःखहारि । शशिक-ला किधौं उर श्रीतकारि ॥ कलकीरतिसी शुभ सहित नाम । करौ ज्यश्री यह तजी राम ॥ ७९ ॥ कै नारायणउर सम लसंति । शुभअंकन ऊपर श्रीवसंति ॥ वर विद्यासी आनंद दानि । युत अष्टापद मन शिवा मानि ॥ ८० ॥ जनु माया अच्छरसहित देखि । कै पत्री निश्चय दानि लेखि ॥ प्रिय प्रतीहारनीसी निहारि । श्रीरामोजय उच्चार कारि ॥ ८१ ॥ पिय पठई मानौ सखि सुजान । सज भूषणको भूषण निधान ॥ निज आई हमको शीष देन । यहि किधौं हमारो मरम लेन ॥ ८२ ॥

टी०-हमारो तम अंधकार सदृश जो दुःख है ताकी हरनहारी है ताते कैधौं सूर्यकी किरण है कल कहे अविघ्न मुद्रिकामें रामनाम लिख्यो है औ कीरतिहू जा प्राणीकी होति है ताके नामके साथही रहति है प्रथम ताको

नाम कहि कीरति कही जाति है राज्यश्रीहूको रामचंद्र छोंड्यो है आ याहूको छोंड्यो है॥७९॥ नारायणके उरमें अंक जो गोद है तापर श्री बसति है अथवा अंक कहे श्रीवत्सादि चिह्न पर श्री वसति है मुद्रिकामें श्रीरामो जयति लिख्यो है तहां रामो जयति इन अंकनके ऊपर श्रीअंक लिख्यो है शिवा पार्वती पक्ष अष्टापद कहे पशु पशुपदते सिंह अथवा वृषभ जानौ। "चामीकरं जातरूपं महारजतकांचने ॥ रुक्मं कार्तस्वरं जाम्बूनदमष्टापदोऽस्त्रियामिमू॥" इत्यमरः। मुद्रिका पद सुवर्ण ॥८०॥ अक्षर विष्णु औ अंक पिय जे रामचन्द्र हैं तिनकी प्रतिहारिणी चोबदारिनी हैं यामें श्रीरामो जयति लिख्यो है प्रतिहारको नामोच्चार करिबो धर्म है ॥ ८१ ॥ सखी कैसी है जगके जितने भूषण गहने हैं तिनको जो भूषण कहे भूषिबो है ताको निधान भांडा है अर्थ अनेक प्रकारसों भूषण पहिराइबेमें चतुर है औ मुद्रिका कैसी है जग भूषण जे रामचन्द्र हैं तिनको भूषणनको निधान कह भांडा है अर्थ जब याको रामचन्द्र पहिरत हैं तब अनेक भूषण पहिरे सम अपनेको मानत हैं अथवा जब या मुद्रिकाको धारण करत हैं तब अनेक भूषण पहिरे समान छबि होति है अथवा जगके जे भूषण गहने हैं तिनको जो भूषण है सो माताको निधान कहे भांडा है कोहेते मोहर है सब राज्यको व्यवहार मोहरके अंकनसों सही होतहै ॥८२॥

दोहा ॥ सुखदा शिखदा अर्थदा, यशदा रसदातारि ॥ रामचन्द्रकी मुद्रिका, किधौं परम गुरुनारि ॥ ८३॥ बहु बरणा सहजप्रिया, तमगुनहरा प्रमान॥ जगमारग दरशावनी, सूरज किरण समान ॥ ८४ ॥

टी०—परम गुरुनारि कैसी है कोमल भाषणादि करिकै सुखदा है औ शिखदाता है कि कुलांगननको ऐसो करिबो उचित है सो करौ औ अर्थ जो प्रयोजन है ताकी दाता है कि स्त्रियनको पतिव्रतसों देवलोक गमन होत हैं यह पतिव्रतमें देवलोक गमनरूप जो प्रयोजन है ताको देति है औ पतिव्रत साधव करार यश देति है औ अनेक वचन चातुर्यादि रस कहे गुण देति है औ मुद्रिका दर्शनसों सुखदा है औ शिख दाता है कोहेते शिक्षा दियो कि धीरज धरौ औ अर्थ प्रयोजनकी दाता है कोहेते रामचन्द्रको संदेशरूप हमारो प्रयोजन रह्यो ताको दियो अथवा अर्थ जो ज्ञान है ताको दाता है औ अतिमूल्याधिक्य सो जाके पास रह ताको यश दाता है औ रस कहे प्रेमकी दाता है अर्थ रामचन्द्र प्रतिप्रेम बढावनहारी है ।

"शृंगारादौ विषे वीर्ये गुणे रागे द्रवे रसः । " इत्यमरः ॥ ८३ ॥ बहुबरणा कहे बहुत हैं बरण रंग अक्षर जिनके और सहज प्रिया दुवौ हैं तमगुण अंधकार औ अज्ञान सूरज किरण जगके मारग राह देखावत हैं औ मुद्रि काहू जगमारग दरशावनी है काहेते जहाँ रामचंद्र हैं तहांकी राह देखायो जा मारग ह्वै हमारो मन रामचंद्रके निकट गयो दोहा क्षेपक है ॥ ८४ ॥

दोहा-श्रीपुरमें वन मध्यहों, तू मग करी अनीति ॥ कहि सुँदरी अब तियनकी, को करिहै परतीति ॥ ८५ ॥ पद्धटिकाछंद ॥ कहि कुशल मुद्रिके रामगात । पुनि लक्ष्मणसहित समान तात ॥ यह उत्तर देति न बुद्धिवंत । केहि कारण धौं हनुमंत संत ॥ ८६ ॥ हनूमान-दोहा ॥ तुम पूंछत कहि मुद्रिके, मौनेहा तियहि नाम ॥ कंकनकी पदवी दई, तुम बिन याकहँ राम ॥ ८७ ॥ दंडक ॥ दीरघ दरीन बसैं केशोदास केशरी ज्यों केशरीको देखि बन करी ज्यों कपतहैं । बासरकी संपति उलूक ज्यों न चितवत चकवा ज्यों चंद चितै चौगुनों चपत हैं ॥ केका सुनि व्याल ज्यों बिलात जातघनश्याम घननके घोरन जवासो ज्यों तपत हैं । भँवर ज्यों भवतवन योगी ज्यों जगत रैनि साक तज्यों रामनाम तेरोई जपतहैं ॥ ८८ ॥

टी०-श्री जो राज्यश्री है तेहि पुरमें अयोध्यामें रामचंद्रको छोडिदियो औ बनके मध्यमें हम छाँडचो राम हमैं तू छाँडचो सो हे सुन्दरी ! कहौ तियनको अब को परतीति करि है अर्थ कोऊ ना करि है ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ तुम्हारे बिरहसों रामचन्द्र ऐसे दुर्बल भये हैं जासों याको कंकनके स्थानमों पहिरत है इति भावार्थः ॥ ८७॥ सीताजूसों हनुमान कहतहैं कि हे सीता ! तुम्हारे बिरहसों रामचंद्र ऐसी दशाको प्राप्त हैं कि दीरघ दरीनमें केशरी जो सिंह है ताकें समान बसत हैं जैसे सिंह भूमिहीमें सोवत बैठत है कछु सेजादि सुखकी इच्छा नहीं करत तैसे रामचंद्र हैं औ केशरी पदश्लेष है करी कहे हस्ती पच्छ सिंह जानौ रामपक्ष केशरी केशरी उदीप कहे तासों औ बासर जो दिन है ताकी संपति कहे लक्ष्मी शोभा इति ताको उलूक जो घूघू पक्षी विशेष है ताके समान नहीं देखत घूघूको

दिनको देखि नहीं परत औ रामचन्द्रको अनेक वस्तु देखि विरह उदीपन होतहै तासों दिनमें इतउत नहीं निरखत औ चंद्रमाको देखि चक्रवाक समान जपत हैं चन्द्रमा बिरह उद्दीपन है तासों औ केका जो मोर-वाणी है ताको सुनि व्याल जो सर्प हैं ताके समान बिलात जात हैं सर्प भक्षनके भयसों रामचन्द्र विरह बर्द्धन भयसों ॥ "केका वाणी मयूरस्य" इत्यमरः ॥ औ घनश्याम कहे सजल जे घन मेघ हैं तिनको जो घोर शब्द है तासों जवाँसे सम तपत हैं जवासे जल वृष्टिसों निज जरिवो जानिकै औ रामचन्द्रके बिरहाग्नि ज्वलित होति है तासों औ वनमें ठौर ठौर भौंरसम भँवत रहत हैं औ जैसे योगी ध्यान धारणादि करत राति बितावत हैं तैसे तुम्हारे वियोगसों बिकल जे रामचंद्र हैं तिनको रात्रिहूमें निद्रा नहीं आवती औ जैसे शाक्त कहे देवीको उपासक देवीको नाम जपत है तैसे राम तिहारोई नाम रात्रि दिन जपत हैं ॥ ८८ ॥

हनुमान-वारिधरछंद ॥ राजपुत्रि यक बात सुनौ पुनि। रामचन्द्र मनमांह कही गुनि ॥ राति दीह यमराज जनी जनु। यातनानि तन जान तकै मनु ॥ ८९ ॥

टी०-दीह कहे बडी जो राति है सो जानो यमराजकी जनी कहे किंकरी है ता राति करिकै कृत जो यातना पीडा है ताको हि हमारो तन जानत है कि मन जानत है जापै बीतति है अर्थ कहिबे लायक नहीं है अति बडी है औ यमाकिंकरन हूं करिकै कृत यातना कहिबे लायक नहीं होति अति कठोर होती है तासों यमाकिंकरी सम कह्यो ॥ ८९ ॥

दोहा ॥ दुख देखे सुख होहिगो, सुक्ख न दुःखविहीन। जसे तपसी तप तपै, होत परम पद लीन ॥ ९० ॥ वरषा वैभव देखिकै, देखी शरद सकाम। जैसे रणमें कालभट, भेंटि भेंटियत बाम ॥ ९१ ॥ दुःख देखिकै देखिहौ, तव मुख आनँदकंद। तपन ताप तपि द्योस निशि, जैसे शीतल चन्द ॥ ९२ ॥ अपनी दशा कहा कहौं, दीपदशासी देह। जरत जाति बासर निशा, केशव सहित सनेह ॥ ९३ ॥ सुगति सुकेसि सुनैनि सुनि, सुमुखि सुदंजि सुश्रोणि। दरशावेगो बेगिही, तुमको सरसिजयोनि ॥ ९४ ॥ हरिगीत-

छंद ॥ कछु जनानि दे परतीति जासों रामचन्द्रहि आवई ।
शुभ शीशकी मणि दई यह कहि सुयश तव जग गावई ॥
सब काल ह्वैहौं अमर अरु तुम समर जयपद पाइहौ ।
सुत आजुते रघुनाथके तुम परम भक्त कहाइहौ ॥ ९५ ॥

टी०-तुमको हमारे विरह कृत जो दुःख है ताके अनन्तर मिलापरूप सुख ह्वै है इति भावार्थः ॥ ९० ॥ वैभव ऐश्वर्य जैसे वर्षा बिताई शरदको भेट्यो तैसे रावणादिकनको मारि तुमको भेंटिहैं इति भावार्थः ॥ ९१ ॥ ॥ ९२ ॥ और अपनी दशा कहा कहिये तुम्हारे स्नेह प्रेमसहित, जो देह है सो स्नेह तैल सहित दीपदशा कहे दीपकी बाती सम बासर निशा कहे रातोंदिन जरत जाति है ॥ ९३ ॥ सुन्दर है श्रोणि कहे कटि जाकी ॥ "कटि-श्रोणीककुद्मती" इत्यमरः ॥ सरसिजयोनि ब्रह्मा तुमको मोहिं दरशावैगो मोहि इति शेषः ॥ ९४ ॥ ९५ ॥

कर जोरि पग परि तोरि उपवन कोरि किंकर मारियो ।
पुनि जंबुमाली मंत्रिसुत अरु पंच मंत्रि संहारियो ॥ रणमारि
अक्षकुमार बहु बिधि इंद्रजीतसों युद्धकै । अति ब्रह्म शस्त्र
प्रमाण मानि सो वश्य भो मन शुद्धकै ॥ ९६ ॥

इति श्रीमत्सकललोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिंद्र-जिद्विरचितायां हनूमद्बंधनं नाम त्रयोदशः प्रकाशः ॥ १३ ॥

टी०-जंबुमाली प्रहस्तनामा मंत्रीको पुत्र है यथा वाल्मीकीये ॥ स दृष्टो राक्षसेंद्रेण प्रहस्तस्य सुतो बली ॥ जम्बुमाली महादंष्ट्रो निर्जगाम धनुर्द्धरः ॥ १ ॥पुनः पंचमंत्रिणउक्ताः वाल्मीकीये ॥ सविरूपाक्षयूपाक्षौ दुर्द्धर्ष चैव राक्षसम् । प्रघसं भासकर्णं च पंच सेनाग्रनायकान् ॥ ९६ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनज्ञानकीप्रसाद-निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां त्रयोदशः प्रकाशः ॥ १३ ॥

दोहा ॥ या चौदहें प्रकाशमें ह्वैहै लंकादाह ॥ सागरतीर
मिलान पुनि, करिहै रघुकुलनाह ॥ १ ॥ रावण--विजयछंद ॥
रे कपि कौन तु अक्षको घातक दूत बली रघुनंदनजीको ।
को रघुनंदन रे त्रिशिरा खर दूषण दूषण भूषण भूको ॥

सागर कैसे तर्‌यो जैसे गोपद काज कहा सिय चोरहि देखो ।
कैसे बँधायो जो सुंदरि तोरि छुई दृग सोवत पातक लेखो ॥ २॥
रावण–चामरछंद ॥ क्रोरि क्रोरि यातना निफोरि फारि
मारिये । काटि कोटि फारि माँसु बांटि बांटि डारिये ॥ खाल
खैंचि खैंचि हाड भूजि भूजि खाहु रे । पौरि टांगि रुंड मुंड
लैउ मद्र जाहुरे ॥ ३ ॥ बिभीषण ॥ दूत मारिये न राजराज
छोडि दीजई । मंत्रि मित्र पूँछिकै सो और दंड कीजई ॥ एक
रंक मारि क्यों बडो कलंक लीजई । बुंदसो कि गोकुहा महा-
समुद्र छीजई ॥ ४ ॥

टी०–मिलान कहे विश्राम ॥ १ ॥ हम तेरी स्त्रीको सोवतमें दृगसों छुयो अर्थ देख्यो ता पातकसों बांधे गये तू रामचन्द्रकी स्त्रीको हरि ल्यायो है तेरी अतिदुर्गति ह्वै है इति भावार्थः ॥ २ ॥ हनूमानके कठोर वचन सुनि कोप करि रावण राक्षसनसों कहत है क्रोरि क्रोरि कहे करोरि करोरि जे यातना बाधा हैं नखदंतता जन दंडघातादिसों फोरि फोरि कहे जामें चर्म फोरि रुधिर कढि आवै या प्रकारसों मारि डारो कहूँ ताजनानि पाठ हैं तौ ताजन कहे चाबुक औ खाल खैंचै रोमांचिके कुठारादिसों हाडनके स्थानमें काटिकै औ छुरिकादिसों फारिकै ताको मांस बांटि बांटि डारिये कहे आपनो आपनो भाग करि लीजिये औ हाड खैंचिके कहे निकारिकै भूजि भूजिकै खाय डारो रुण्ड रुण्डकी पदते रुंडकी खाल जानो अर्थ यह कि रुण्डकी खालमें तृणादि भरिकै सबके देखिबेके लिये पौरिमें कहे पुरद्वारमें टांगि देहु औ मुंडको लैके उडाइ कहे उडिकै राम पास जाउ रामपास इति शेषः । जासों मुण्ड चीन्हि रामचन्द्र दूतको मार्‌यो जानि दुःख पावै इति भावार्थः ॥ ३ ॥ ४ ॥

तूल तेल बोरि बोरि जोरि जोरि बाससी । लै अपार रार ऊन
दून सूतसों कसी ॥ पूछ पवन पूतको संवारि वारि दीजहीं ।
अंगको घटाइकै उडाई जात भो तहा ॥ ५ ॥ चंचरीछंद ॥
धाम धामनि आगिकी बहु ज्वाल माल विराजहीं । पवनके
झकझोरते झँझरी झरोखन भ्राजहीं ॥ वाजि वारण शारिका
शुक मोर जो रण भाजहीं । क्षुद्र ज्यों विपदाहि आवत छोडि

जात न लाजहीं ॥ ६ ॥ भुजंगप्रयातछंद ॥ जटी अग्नि ज्वाला अटासे तहै ज्यों । शरत्कालके मेघसंध्या समै ज्यों ॥ लगी ज्वाल धूमावली नील राजैं । मनो स्वर्णकी किंकिणी नाग साजैं ॥ ७ ॥ लसे पीत क्षत्री मठी ज्वाल मानौ । ठके ओढनी लंकवक्षोज जानौ ॥ जरे जूह नारी चढी चित्रसारी । मनो चेटकामें सती सत्य धारी ॥ ८ ॥ कहूँ रैनिचारी गहे ज्योति गाढे । मनो ईशरोषाग्निमें काम डाढे ॥ कहूं कामिनी ज्वाल-मालानि भौरैं । तजैं लाल सारी अलंकार तौरैं ॥ ९ ॥

टी०-तूलरुई बाससी वस्त्र ॥ ५ ॥ झँझरीके जे झरोखा कहे छिद्र हैं तिनमें भ्राजहीं कहे शोभित हैं जैसे छुद्र प्राणी जाके पास रहत है ताको कछू विपत्ति परै तो सहाय नहीं करत ताको छोडिके भागत है लजात नहीं है तैसे अग्निदाहकी जो विपत्ति है तामें बारणादि सब भागत भये ॥ ६ ॥ नाग कहे हाथी ॥ ७ ॥ वक्षोज कुचसम पीत क्षत्रिय हैं ओढनी सम अग्निज्वाला है ॥ ८ ॥ भोरे कहे भ्रमसों अलंकार स्वर्ण भूषण ॥ ९ ॥

कहूं भौन राते रचे धूमछाहीं । शशी सूर मानों लसैं मेघ-माहीं ॥ जरै शस्त्रशाला मिली गंधमाला । मिले अद्रि मानौ लगी दावजाला ॥ १० ॥ चली भागि चौहूं दिशा राजधानी । मिली ज्वालमाला फिरै दुःखदानी ॥ मनो ईश बानावली लाल लोलैं । सबै दैत्यजा यानके संग डोलैं ॥ ११ ॥ सवैया ॥ लंक लगाइ दई हनुमंत विमान बचे अति उच्च रुखी ह्वै । याचि फटैं उचटैं बहुधा मनि रानी रटैं पानी पानी दुखी ह्वै ॥ कंचनकोप बिल्यो पुर पूर पयोनिधिमें पसरेति सुखी ह्वै । गंग हजार मुखी गनि केशो गिरा मिली मानौ अपार मुखी ह्वै ॥ १२ ॥

टी०-शशि कहे श्री जो प्रताप है त्यहिसहित प्रतापरहित सूर्यको रंग श्वेत है प्रतापसहित अरुण है तासों शशि कह्यो अथवा कि शशि कहे चन्द्रमा सहित मानों सूर्य लसत हैं अर्थ चन्द्रयुक्त सूर्य होते हैं तब सूर्य

ग्रहण होत है सो मानो ग्रहणसमयमें सूर्य शोभित हैं इत्यर्थः । औ कि मानो सूर्य मेघनमें शोभित हैं यथा सिद्धांतरहस्ये 'छादयत्यर्कमिन्दुरिति'। सर्पसम शस्त्र हैं चन्दन गंधसम गंध है ॥ १० ॥ महादेव त्रिपुरका भस्म करिबेको बाण चलायो है ते बाण दैत्य जाया जे दैत्यस्त्री हैं तिनके भागतमें तनुमें लागे भस्म करचोहै मानो तेई हैं बाणावली सम ज्वाला माला हैं दैत्यजाया सम राक्षसी हैं ॥ ११ ॥ पाचि कहे पन्नामाणि अथवा पाचि कहे पाकिकै फटै कहे फूटती हैं ते मणि बहुधा उचटती हैं कहे उछरती हैं गंगको सहस्रमुखी कहे सहस्रधारा है समुद्रको मिलीं, गुणिके गिरा जो सरस्वति हैं सो मानो अति सुखी है कै अपार कहे अगन्यमुखी है कै समुद्रको मिली हैं सुवर्णद्रव सरस्वतीके जल समहै ॥ १२ ॥

दोहा ॥ हनुमत लाई लंक सब, बच्यो बिभीषण धाम ॥
ज्यो अरुणोदयबेरमें, पंकज पूरब याम ॥ १३ ॥ संयुताछंद ॥
हनुमंत लंक लगाइकै । पुनि पूछ सिंधु बुझाइकै ॥ शुभ
देखि सीतहि पाँ परे । मनि पाय आनँद जी भरे ॥ १४ ॥
रघुनाथपै जबही गये । उठि अंक लावनको भये ॥ प्रभु मैं
कहा करणी करी । शिर पायकी धरणी धरी ॥ १५ ॥ दोहा ॥
चिन्तामणिसी मणि दई, रघुपति कर हनुमंत ॥ सीताजूको
मन रँग्यो, जनु अनुराग अनंत ॥ १६ ॥

टी०—हनुमान करिकै लाई कहे जारी जो जरति सब लंका है तामें बच्यो जो बिभीषणको धाम है सो ज्वालमध्य कैसे शोभित है जैसे पूर्व याम कहे प्रथम पहर अरुण जे सूर्य हैं तिनके उदयके बेरमें कहीं समयमें पङ्कज कमल शोभित है जैसे कमल रात्रिको मुकुलित रहत है प्रातही सूर्योदय होत अति प्रफुल्लित है प्रकाशको प्राप्त होत है तैसे रावणको प्रभावरूपी जो रात्रि है तामें बिभीषणको धाम उदासीन रह्यो सो लङ्कामें रामप्रतापरूपी सूर्योदय सों घाम सम जो अग्नितेज है तामें शोभित भयो पूर्वयाम कहि या जानियो कि ज्यों ज्यों सूरज सम प्रताप अधिक उदयको प्राप्त है है त्यों त्यों कमल सम बिभीषणको घर अधिक प्रकाशको प्राप्त है है। इति भावार्थः। पूर्वयाम यासों कह्यो कि मेघादि करिकै आच्छादित है मेघनसों कहि तृतीयादि पहरहूमें उदित कहावत है ॥ १३ ॥ वाल्मीकीय रामायणमें कह्यो है कि, लंक दाहिकै हनुमान पश्चात्ताप करचो है कि यामें सीताहू जारि

गई है है तासों फेरि सीताके पास जाइ सीताको शुभ कहे सकुशल देखिकै मणिसम पाइकै आनन्द जीमें भरत भये जैसे क मणि रत्न पाये आनन्द होत है तैसे भयो ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

दोधकछंद ॥ श्रीरघुनाथ जबै मणि देखी । जीमहँ भाग दशा सम लेखी ॥ फूलि उठ्यो मनु ज्यों निधि पाई । मानहुँ अंध सो दीठि सोहाई ॥ १७ ॥ तारकछंद ॥ मणि होहि नहा मनु आहि सियाको । उरमें प्रगट्यो तनु प्रेम दियाको ॥ सब भागि गयो जो हुतो तम छायो । अब मैं अपने मनको मत पायो ॥ १८ ॥ दरशै हमको बनही दरशाये । उर लागति आइब स्याइ लगाये ॥ कुछ उत्तर देति नहीं चुप साधी । जिय जानति है हमको अपराधी ॥ १९ ॥ हनुमान ॥ कछु सीय दशा कहि मोहिं न आवै । चरका जड बात सुने दुख पावै ॥ सरसो प्रतिवासर वासर लागै । तन घाव नहीं मन प्राणन खागै ॥ २० ॥

टी०-भाग्यकी दशा कहे अवस्था ॥ १७ ॥ प्रिया प्रियके मनसों मन मिले अति प्रेम प्रगट होत है यह प्रसिद्ध है सो रामचन्द्र कहत हैं कि ता मणिको देखि प्रेमरूपी जो दिया कहे दीपक है ताको तनु कहे स्वरूप ज्योति इति हमारे उरमें प्रगट भयो तासों यह सीताको मन है जा दीपके प्रगट भये सो हमारे मनमें जो तम अन्धकार छायो रहै सो सब भागि गयो तो इहां तम पदते अज्ञान अथवा वियोग दुःख जानौं ता तमसे हमारे मनको रावण वचन रूप अथवा कर्त्तव्य वस्तु विचार रूप जो मत हिरानो रहै ताको पायो ॥ १८ ॥ अब यह दरशा येहू कहे हमारी ओर निहारो यह कहे हू पर हमको नही दरशै कहे देखति अर्थ हमारी ओर नहीं निहारति औ जब बरिआई कहे जबरई अपने हाथनसों उरमें लगाइयत है तब लागति है आपनी ओरसों नहीं लागति ॥ १९ ॥ चर कहे जंगम मनुष्यादि जड वृक्षादि प्रतिवासर कहे रोज रोज अर्थ निरन्तर वासर जो दिन है अथवा रागभेद जो रावणके मंदिरनमें नित्य राग होत है सो सीताके शर कहे बाण सम लागत है सो शरके लागे तनुमें घाव होत है वा शरके लागे तनमें घाव नहीं होत औ मन औ प्राणनमें खागै कहे लपटात है अर्थ मन औ प्राणनको छेदत है " वासरो रागभेदेऽह्नि " इत्यभिधानाचिन्ताभाणिः ॥ २० ॥

प्रति अंगनके सँगही दिन नाशैं । निशिसों मिली बाढति दीह उसासैं ॥ निशि नेकहु नींद न आवति जानौं । रविकी छबि ज्यों अधरात बखानौं ॥ २१ ॥ घनाक्षरी ॥ भौंरनी ज्यों भ्रमत रहति बन वीथिकानि हंसिनी ज्यों मृदुल मृणालिका चहति है । हरिणी ज्यों हेर तिनके शरीरके काननहिं केका सुनि व्याली ज्यों बिलानहीं चहति है ॥ पीउ पीउ रटत रहति चित चातकी ज्यों चंद चितै चकई ज्यों चुप ह्वै रहति है । सुनहु नृपति राम विरह तिहारे ऐसी सूरति न सीताजूकी मूरति गहति है ॥ २२ ॥

टी०--शरद् ऋतुसों शिशिर पर्यंत दिनमान घटत है रात्रि मान बाढत है सो हनूमान शरद्ऋतुमें गये सो लंका जारिकै शरदमों अथवा हेमन्तमों रामचन्द्रके पास आये ह्वै हैं सो रामचन्द्रसों कहते हैं कि जैसे या समयके दिन मर्याद करिकै नाशत कहे घटत हैं तैसे सीताके सब अंग घटत हैं दूबरे होत हैं औ ज्यों ज्यों निशा बाढति है त्यों त्यों दीह उसास बाढति है दूसरो अर्थ खुलो है अधरातिमों जैसे रविकी छबि नेक नहीं रहति तैसे सीताको रातिकै नींद नहीं आवति अधरात कहे अति विनिद्रता जनायो जैसे तुलसीकृतमों कह्यो है कि । "सिरिस कुसुभ कहुं बेधत हीरा" ॥ २१॥ भौंरनी सम बन अशोक वाटिकाकी बीथिकानिमें कहे गलिनमें भ्रमत रहति है अथवा मन करिकै बन बीथिकानिमें भ्रमति रहति है तुम्हारो वियोग वनहीमों भयो है तासों सीताको मन बन बन भ्रम्यो करत है हंसिनी सुखभावसे सीता शीतलताके लिये केशरी सिंह औ कुंकुम हरिणी बधभयसों सीता बिरहोद्दीपन भयसों ॥ २२ ॥

सीताजूसंदेश–दोहा ॥ श्रीनृसिंह प्रह्लादकी, वेद जो गावत गाथ ॥ गये मास दिन आशुही, झूँठी ह्वैहै नाथ ॥ २३ ॥ आगम कनककुरंगके, कही बात सुख पाइ ॥ कोपानल जरि जाय जनि, शोकसमुद्र बुडाइ ॥ २४ ॥

टी०–नृसिंहरूप ह्वै खंभको फारि निकासि प्रह्लादकी रक्षा करयो यह जो गाथा वेद गावत हैं सो हम प्रति रावणकृत जे अवधि मासके दिन हैं तिनके गये कहे बीते आशुही कहे थोरेही दिनमों झूँठी ह्वै है अवधि दिन

बीते रावण हमको मारि डारि है तब सब कहि हैं कि साक्षात् स्त्री सीताकी रक्षा रावणसों न करयो तो असंबंधी प्रह्लादकी रक्षा कहा करयो है है इति भावार्थः । जे बनकृत अवधि दिन तेरहें प्रकाशमें कह्यो है । अवधि दई है मासकी । सो जानो अथवा मास दिन कहे एक महीना गये कहे बीते अर्थ एक महीनाके बाद हम प्राण छोडिदे हैं बाल्मीकीयमें कह्यो है । "इदं ब्रूयाश्च मे नाथं शूरं रामं पुनः पुनः । जीवितं धारयिष्यामि मासं दशरथात्मज । ऊर्ध्वं मासान्न जीवेयं सत्येनाहं ब्रवीमि ते" ॥ २३ ॥ "राजसुता यक मंत्र सुनो अब । चाहत हौं भुव भार हरयो सब ॥ पावकमें निज देहहि राखहु । छायाशरीर मृगै अभिलाषहु ॥" या प्रकार राक्षसनको मारि भुवभार हारिबो कह्यो रहै सो बातको या अनलमें जरन न पावे औ शोकरूपी समुद्रमें डूबन न पावे ता बातकी रक्षा तुमको नीके प्रकारसों करिबे है ॥ २४ ॥

राम-दंडक ॥ सांचो एक नाम हरि लीन्हे सब दुःख हरि और नाम परिहरि नरहरि ठायेहौ । वानरनहीं हौ तुम मेरे बाण रोष सम बली मुखशूर बलीमुख निज गाये हौ ॥ शाखामृग नाही बुद्धि बलनके शाखमृग कैधौं वेदशाखा मृग केशवको भाये हो । साधु हनुमन्त बलवंत यशवंत तुम गये एक काजको अनेक करि आये हौ ॥ २५ ॥ हनूमान-तोमरछंद ॥ गइ मुद्रिका लै पार । मनि मोहिं ल्याई वार ॥ कह करयो मैं बल रंक । अतिमृतक जारी लंक । २६ ॥

टी०-सीताको संदेश दैकै हमारो सब दुःख तुम हरिलीन्हों ताते हरि यह जो तुम्हारो नाम है सो सांचो है 'हरति दुःखमिति हरिः' अर्थ जो दुःखको हरे सो हरि कहावै सो तुम नरहरि कहे नृसिंह हौ और नाम जो नर है ताको परिहरि कहे छोडिकै हरि एते नामसों ठाये कहे युक्त हौ यासों या जनायो कि प्रह्लादके समान तुम हमारा दुःख हरयो है अथवा और जे नाम हैं इन्द्रादिक तिनको परिहरि कहे छोडिकै नरहरि कहे नृसिंह यह जो नाम है ताके सम ठाये हौ अर्थ इन्द्रादिकनकी समता करिबे लायक तुम नहीं हो विक्रमादि करिकै तुम नृसिंहके समान हो मेरे बाणको जो रोष क्रोध है ताके सम हो अर्थ जैसे हमारे बाणको क्रोध निष्फल नहीं होत तैसे तुम निष्फल नहीं होत जो काज करिबो चाहौ सो करिही आवो

अथवा मेरे बाणके सम हौ औ मेरे रोषके सम हौ कहूं बाण रस सम पा है तौ बाणको जो रस कहे बल है ताकें सम हौ अर्थ जैसे हमारे बाणमें बल है तैसे तुम्हारे बल है "शृंगारादौ विषे वीर्ये द्रवे रागे गुणे रसः।" इत्यमरः हे बलीमुख शूर अर्थ बलीमुख जे वानर हैं तिनमें शूर कहे बीरबली जे बलवान् हैं तिनके मुखन करिकै निज कहे निश्चय करिकै गाये हौ अर्थ बडे बडे बलवान् तुम्हारो बखान करत हैं औ शाखा जे वृक्षशाखा हैं तिनके मृग कहे गामी तुम नहीं हौ बुद्धि बलनके जे शाखा हैं तिनके गामी हौ अर्थ अनेक बुद्धि बल करि कारज साधत हौ औ कि वेदकी जे कल आदि शाखा हैं तिनके मृग कहे गामी हौ अर्थ वेदाध्ययनमों प्रवीण हे एक काज सीय खोज अनेक काज लंका दाहादि ॥ २५ ॥ २६ ॥

अति हत्यो बालक अच्छ । लै गयो बांधि विपच्छ ॥ जड वृक्ष तोरे दीन । मैं कहा विक्रम कीन ॥ २७ ॥ तिथि विजय दशमी पाइ । उठि चले श्रीरघुराइ ॥ हरियूथ यूथप संग । बिन पच्छकेति पतंग ॥ २८ ॥

टी०—विपच्छ कहे शत्रु जो मेघनाद है सो म्वहिं बांधि लैगयो ॥ २७ ॥ शरत्कालमें सीताके ढूँढिवेके लिये वानरनको रामचन्द्र पठायो है औ मास दिवसकी अवधि दईहै सो समुद्रतटमें अंगद कह्यो है कि। सीय न पाई अवधि बिताई। तौ शीतकालके मासनों अधिक दिन बीते औ अमरकोषमें कह्यो है कि द्वौ द्वौ माघादिमासौ स्याद्दतुः। या मतसों क्वाँर औ कार्त्तिक द्वै मास शरत्काल जानौ औ क्वाँर शुक्लदशमी विजयदशमी कहावती है ताको रामचन्द्र चले यह बिरोध है तहां और अर्थ दशमी तिथिमों विजयनामा मुहूर्त्तको पाइकै श्रीरामचन्द्र चले दशमी यथा। बाल्मीकीये— अस्मिन् मुहूर्त्ते सुग्रीव प्रयाणमभिरोचय। मुक्तो मुहूर्तो विजया प्राप्ता मध्यं दिवाकरः। कैसे हैं हरियूथ विना पच्छके पतंग कहे पक्षी हैं अर्थ बिन पच्छ पक्षी सम उडत हैं ॥ २८ ॥

समुझै न सूर प्रकाश । आकाश वलित विलाश ॥ पुनि ऋक्ष लक्ष्मण संग । जनु जलधि गंगतरंग ॥ २९ ॥ सुग्रीव-दंडक॥ केशोदास राजचन्द्र सुनौ राजा रामचन्द्र रावरी जबहिं सेन उचकि चलति है। पूरति है भूरि धूरि रोदसिहि आसपास

दिशि दिशि वरषा ज्यों बलनि बलति है ॥ पन्नग पतंग तरु गिरि गिरिराज गजराज मृगमग राजराजनि दलति है। जहां तहां ऊपर पताल पय आइ जात पुरइनिकेसे पात पुहुमी हलति है ३०॥

टी०-बानरनके संगमें लक्षन ऋच्छ हैं सो बानर औ ऋच्छ कैसे शोभित जानौं जलधि औ गंगाके तरंग हैं जलधि तरङ्ग सम ऋच्छ हैं गंगतरंगसम बानर हैं ॥२९॥ रोदसी कहे भू, आकाश "द्यावाभूमी च रोदसी" इत्यमरः बलनि कहे बानरयूथनि औ मेघ समूहनि करि दिशि दिशि कहे दशौं दिशिनिको बलित कहे आच्छादित करति है पन्नग-सर्प, पतंग-पक्षी ॥ ३० ॥

लक्ष्मण ॥ भारके उतारिवेको अवतरे हौं रामचन्द्र किधौं केशोदास भूरि भारत प्रबल दल। टूटत हैं तरुवर गिरे गण गिरिवर सूखे सब सर वरसति ता सकल जल ॥ उचकि चलत हरि दचकनि दचकत मंच ऐसे मचकत भूतलके थल थल। लचकि लचकि जात शेषके अशेष फण भागि गई भोगवती अतल बितलतल ॥ ३१ ॥ गीतिकाछंद । रघुनाथजू हनुमंत ऊपर शोभिये तेहि कालजू। उदयाद्रि शोभन शृंग मानहुं शुभ्र सूर विशालजू ॥ शुभ अंग अंगद संग लक्ष्मण लक्षिये बहु भांतिजू। जनु मेरु मंदर संग अद्भुत चंद्र राजत रातिजू ॥ ३२ ॥ दोहा ॥ बलसागर लक्ष्मण सहित; कपिसागर रण धीर ॥ यशसागर रघुनाथजू, मेले सागरतीर ॥ ३३ ॥

टी०-भोगवती कहे नागपुरी ॥ ३१ ॥ अंगदके ऊपर शुभ अंग जे लक्षण हैं तिन्हें रामचन्द्रके संग बहु भांतिसों लक्षये कहे देखियत है मेरु कहे सुमेरुके शृंगमें कै मंदर कहे मंदराचलके शृंगमें रातिको चंद्र राजत है ॥३२॥ कपिसागर कहे कपिनकी सागर सदृश सेना ॥ ३३ ॥

विजयाछंद ॥ भूतिविभूति पियूषदुकी विष ईशसरोरकि-पाय वियोहै। है किधौं केशव कश्यपको घर देव अदेवनके मन मोहै ॥ संतहियोकि बसै हरि सन्तत शोभ अनन्त कहे कवि को है। चन्दन नीर तरंगित नागर कोउ कि सागर

सोहै ॥ ३४ ॥ गीतिका छंद ॥ जलजालकाल करालमाल तिमिंगिलादिकसों बसै । उरलोभ क्षोभ विमोह सकाम ज्यों खलको लस ॥ बहुसंपदायुत जानिये अतिपातकी सम लेखिये । कोउ मांगनो अरु पाहुनो नहिं नीर पीवत देखिये ॥ ३५ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचान्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां समुद्रतटरामसैन्यनिवेशनं नाम चतुर्दशः प्रकाशः ॥ १४ ॥

टी०—ईश कहे महादेव केशरीपच्छ भूति कहे अधिक है बिभूति कहे भस्मकी औ पियूष कहे अमृतकी अमृत युक्त चंद्रमा धारण करे हैं तासों औ विषको सागर पच्छ भूति कहे उत्पत्ति हैं बिभूति कहे रत्नादि द्रव्य औ पियूष कहे अमृत औ बिषकी जासों दव अदेव कश्यपके पुत्र हैं तासों पिताको घर पुत्रनको लाग्योई चाहे औ समुद्रकी दीर्घता देखि देव अदेव मोहित कहे मूर्छित होत हैं नागर कहे नगर श्रेष्ठ सो चंदनका जो नीर कहे उद्धर है ताके जे तरंग हैं तासों तरंगित चित्रित है अथ अंगनमों नीकी विधि चंदन लेप करे है सागर पच्छ चंदन वृक्ष करिकै नीरके तरंग तरंगित हैं जाके अर्थ जाके तरंगमें चंदन वृक्ष बहत हैं जो कहो अमृतोत्पत्ति औ हरिशयन क्षीरसागरमों है तो इहां समुद्रकी जातिमात्रको वर्णन है लवण क्षीर भेदसों नहीं है सो जानों ॥ ३४ ॥ जा समुद्रके जलको जातिल कहे समूह जो है सो कालहूते कराल जे तिमिंगिल मत्स्यभेद हैं तिन्हैं आदि जे जलजीव हैं तिनसों कहे तिनसहित बसत हैं अर्थ जा जलमें तिमिंगिलादि रहत हैं आदि पदते ग्राहादि जानों सो कैसो शोभित है जैसे लोग औ क्षोभ कहे उर औ बिमोह औ कोह कहे क्रोध औ काम सहित खलको दुष्टको उर लसत है औ बहुत संपत्ति रत्नादिसों युक्त है ताहूपर कोऊ मांगनो कहे याचक अर्थ जे रत्नादि लेनेके लिये जात हैं पाहुनो कहे नातो विष्णु आदि तिनको नीर जल पीवत नहीं देखियत ताते बडे पातकी सम लेखियत है गोवधादि पाप युक्त बडे पातकीहूको जल अति संपत्तिहूके लोभसों कोऊ नहीं पीवत इति भावार्थः ॥ ३५ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां चतुर्दशः प्रकाशः ॥ १४ ॥

दोहा ॥ या प्रकाश दशपंचमें, दश शिर करै विचार ॥
मिलन बिभीषण सेतु रचि, रघुपति जैहैं पार ॥ १ ॥
रावण-गीतिकाछंद ॥ सुरपाल भूतलपाल हौ सब मूल
मंत्र ते जानिये । बहु मंत्र वेद पुराण उत्तम मध्यमाधम
गानिये ॥ करिये जो कारज आदि उत्तम मध्यमाधम
भानिये । उरमध्य आनि अनुत्तमै जे गये ते काज बखा-
निये ॥ २ ॥ स्वागताछंद ॥ आजु मोहिं करनेसो कहौ जू ।
आपुमांह जनि रोष गहौजू ॥ राजधर्म कहिये छबि छाये ।
रामचन्द्र नहिं जौलगि आये ॥ ३ ॥

टी०-सब महोदरादि जे राक्षस हैं तिनसों रावण कहत है कि तुम सब सुरपाल जे इंद्र हैं तिनको जो भूतल स्वर्ग है ताके पालनहार हौ अर्थ इंद्रलोकमें राज्य करचौ है आशय यह कि मंत्रनहींके जोरसों इंद्रको जीति इंद्रलोक अमल्यौ अथवा सुरपाल इंद्र सम भूतपाल हौ इंद्रको ऐसो राज्य करत हौ सो मूलमंत्र कहे सिद्धांतमंत्र अर्थ जिनसों शत्रुकी पराजय आपनो जय होय ऐसे मंत्र जानिये कहे जानत हौ वेद पुराणनमें बहुत जे मंत्र हैं तिन्हैं उत्तम औ मध्यम औ अधम तीनि प्रकारके वेद पुराणन करिकै गाइयत है अर्थ वेद पुराण कहत हैं यथा शास्त्रकी दृष्टिसों अर्थ जैसो शास्त्र कहत हैं ताही विधिसों एक मत ह्वैकै मंत्र ठहरावैं सो मंत्र उत्तम है औ जहां मंत्रीजन अपने मतको मंत्र भिन्न भिन्न कहैं फिरि राजभयादि कारणसों उदासीनतासों एकमत ठहरावैं सो मंत्र मध्यम है औ मंत्री जो आपनेही अपने मनको मत भिन्न भिन्न कहैं एकमत कैसेहू ना होइ सो मंत्र अधम है यथा । वाल्मीकीये । ऐकमत्यमुपागम्य शास्त्रदृष्टेन चक्षुषा । मंत्रिणो यत्र निरतास्तमाहुर्मंत्रमुत्तमम् ॥ १ ॥ बह्वीरपि मतीर्गत्वा मंत्रिणामर्थनिर्णयः ॥ पुनर्यत्रैकतां प्राप्तः स मंत्रो मध्यमः स्मृतः ॥ २ ॥ अन्योन्यं मतिमास्थाय यत्र संप्रतिभाष्यते । नचैकमण्यश्रेयोस्ति मंत्रः सोधम उच्यते ॥ ३ ॥ तिन तीनहूं प्रकारके मंत्रनमें आदि उत्तम जो कारज है ताको करिये अर्थ एक मत ह्वै कारज करिये औ मध्यम औ अधमको मानिये कहे दूरि करो ऐसे समयमें जे अनुत्तम काज व्यतीत ह्वैगये अर्थ आपनेहीं आपने मनकी सब मिलि कह्यो तिन बातनको उरमें आनिकै बखानिये कहे कहत हो अर्थ ऐसे समयमों ऐसी बात कहिबो उचित नहीं है तासों एकमत ह्वै मंत्र करौ ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

प्रहस्त ॥ वामदेव तुमको वर दीन्हो । लोकलोक सिगरे वश कीन्हो ॥ इन्द्रजीत सुतसो जग मोहे । राम देव नर वानर कोहै ॥ ४ ॥ मृत्युपाश भुजोरनि तोरे । कालदंड तुमसों कर जोरे ॥ कुंभकर्ण सम सोदर जाके । और कौन मन आवत ताके ॥ ५ ॥ कुंभकर्ण–चतुष्पदी ॥ आपुन सब जानत कह्यो न मानत कीजै जो मन भावै । सीता तुम आनी मीचु न जानी आन कि मंत्र बतावै ॥ जेहि वर जग जीत्यौ सर्व अतीत्यौ तासों कहा बसाई । अति भूलि गई तब शोच करत अब जब शिर ऊपर आई ॥ ६॥ मंदोदरी–विजयछंद ॥ रामकि वाम जो आनी चोराइ सो लंकमें मीचुकी वेलि बईजू । क्यों रण जीतहुगे तिनसों जिनकी धनुरेख न नांघि गई जू ॥ बीस बिसे बलवन्त हुते जो हुती दृग केशव रूप रईजू । तोरि शरासनशंकरको पिय सीय स्वयंवर क्यों न लईजू ॥ ७ ॥

टी०–वामदेव महादेव सरस्वती उक्तार्थः ॥ रामचन्द्र देव हैं नर और वानर को है इहां देवपदते ईश्वर जानौ अर्थ रामचन्द्र ईश्वर हैं औ सुग्रीवादि वानर सब देवसैन्य हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ वर कहे बल अर्थ तपोबल अथवा शिवादिके वरसों सब अतीत्यौ कहे बीतो तासों कहा बसाइ कहे जोर चलै अर्थ विनाशको समय आयो सोई तुमसों ऐसे सीयहरणादि कार्य करायो है अथवा जेहि शिव औ ब्रह्माके बरसों जगको जीत्यौ सो वरदान सब बीतो काहेते कि यह बर दीन रह्यो कि नर वानरनको छोडिकै औरसों तुमको भय न ह्वै है सो और औ वानरही लरिबेको आवत हैं सो बानरको प्रभाव तौ कछू यामें चलि है नहीं सो तुमको तब कहे सीयहरणादि समयमों यह सुधि भूलि गई कि हमको नर बानरसों भय है जब शिर ऊपर आई है तब शोच करत हौ तौ तासों कहा वसाइ कहे जोर चलै अर्थ अब मृत्युते रक्षाको कछू उपाय नहीं है ॥ ६ ॥ जो तुम्हारो दृगनसों सीतारूप जो सौंदर्य है ता करिके रई कहे बसी रहे ॥ ७ ॥

बालि बली न बच्यो बर खोरिहि क्यों बचिहौ तुम आपनि खोरहि । जालगि क्षीरसमुद्र मथ्यौ कहि कैसे न

बांधिहैं वारिधि थोरहि ॥ श्रीरघुनाथ गनौ असमर्थ न देखि बिना रथ हाथिन घोरहि । तोरचो शरासन शंकरको जेहि सोव कहा तुव लंक न तोरहि ॥८॥ मेघनाद दोहा ॥ मोकों आयसु होइ जो, त्रिभुवनपाल प्रवीन ॥ रामसहित सब जग करौं, नरबानरकरि हीन ॥ ९॥ बिभीषण-मोटनकछंद॥ को है अतिकाय जो देखि सकै । को कुंभ निकुंभ वृथा जो बकै ॥ को है इन्द्रजीत जो भीर सहै । को कुंभकर्ण हथ्यारु गहै १०

टी०-जालगि कहे जा लक्ष्मीरूप जे सीता हैं तिनके लिये ॥ ८ ॥ सरस्वती उक्तार्थः । मेघनाद कहत है कि जो मंत्र कहिबेको हमको आज्ञा होइ तौ हम कहियत है कि त्रिभुवनपाल कहे तीनों लोकके रक्षा करणहार औ प्रवीन कहे विवेकी यासों या जनायो कि केवल समदृष्टिहीसों नहीं प्रतिपाल करत भक्तनपर अतिकृपा शरणागतरक्षण शत्रुनाशादि कर्म यथोचित करत है ऐसे जे रामचन्द्र हैं तिनहीं करिकै साहित सब जग है अर्थ रामचंद्रही सर्वत्र व्याप्त हैं अर्थ कि विष्णु हैं यथावृत्तरत्नाकरे ॥ म्यरस्तजभ्नगैर्लीतैरोभिर्दशभिरक्षरैः ॥ समस्तं वाङ्मयं व्याप्तं त्रैलोक्यमिव विष्णुना ॥ इनको नर औ बानर करिकै हीन करौं कहे कार मानत हौं अर्थ रामचन्द्र विष्णु हैं वानर सब देवता हैं अंगदहू सोरहे प्रकाशमें कह्यो है कि कौन इहां नर वानर कोरे ॥ ९ ॥ १० ॥

देखे रघुनायक धीर रहै । जैसे तरुपल्लव बात बहै ॥ जौ लौं हरि सिंधु तरै इतरै । तौलौं सिय ले किन पाइ परै ॥११॥ जौलौं नल नील न सिंधु तरै । जौलौं हनुमंत न दृष्टिपरै ॥ जौलौं नहिं अंगद लंक ढही । तौलौं प्रभु मानहु बात कही ॥ १२ ॥ जौलौं नहिं लक्ष्मण बाण धरै । जौलौं सुग्रीव न क्रोध करै ॥ जौलौं रघुनाथ न शीश हरै । तौलौं प्रभु मानहु पाइ परै ॥ १३ ॥ रावण-कलहंसछंद ॥ अरिकाज लाज तजिकै उठि धायो ॥ धिक तोहिं मोहिं समुझावन आयो । तजि राम नाम यह बोल उचारचो । शिर मांझ लात पग लागत मारचो ॥ १४ ॥

टी०- अर्थ रघुनाथको देखि अतिकायादिकनके काहूके धीर न रहि है ॥११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ रामनामको तजि कहे छोडु यह बोलु रावण उचारचो

कहे कह्यो सरस्वतीउक्तार्थः। आरि कहे शत्रुके काजसों लाज तजिकै उठि धायेा है अर्थ रामचन्द्रके हाथ मृत्युसों हमारी मुक्ति ह्वै है तामें चाहिये कि तू भाई है सहाय करै सो तू शत्रुता करत है जामें याकी मुक्ति ना होइ यामें तोकों लाज नहीं है भाई ह्वै कै शत्रुकी काम करत है तोकों धिक्क है जो मोहिं समुझावत है कि रामचंद्रसों न लरौ अथवा मोहि कहे मोहबश ह्वै-के रामको नाम जो जपत रह्यो ताको तजिकै यह बोल उचारचो कहे एती कथा कह्यौ यह कहिकै पाँयनमें परत बिभीषणके शिरमें लात मारचौ॥१४॥

करि हाय हाय उठि देह सँभारेउ। लिय अंग संग सब मंत्रिय चारेउ॥ तजि अंध बंधु दशकंध उडान्यो। उर रामचंद्र जगतीपति आन्यो॥१५॥ दोहा॥ मंत्रिन सहित बिभीषण, बाढी शोभ अकाश॥ जनु अलि आवत भावतो, प्रभुपदपद्म निवास॥ १६॥ चौपाई॥ निकट बिभीषण आवत जाने। कपिपतिसों तबहीं गुदराने॥ रघु-पतिसों तिन जाइ सुनायो। दशमुख सोदर सेवहि आयो॥ १७॥ श्रीराम॥ बुधि बलवंत सबै तुम नीके। मत सुनि लीजै मंत्रिनहीके॥ तब जो बिचार परै सोइ कीजै। सहसा शत्रु न आवन दीजै॥ १८॥ अंगद-सुंदरीछंद॥ रावणको यह सांचहु सोदरु। आपु बली बलवंत लिये अरु॥ राकसवंश हमैं हतने सब। काज कहा तिनसों हमसों अब॥ १९॥ वध्य विरोध हमैं इनसों अति। क्यों मिलिहै हमसों तिनसों मति॥ रावण क्यों न तजो तबहीं इन। सीय हरी जबहीं वह निर्घृन॥ २०॥ नल॥ चार पठै इनको मत लीजिय। ऐसेहि कैसे बिदा करि दीजिय॥ राखिय जो अतिजानिय उत्तम। नाहिं तौ मारिय छोडि सबै भ्रम॥ २१॥

टी०-॥ १५॥ १६॥ कपि जे वानर हैं तिनके पति जे सुग्रीव हैं तिनसों गुदराने कहे कहत भये॥ १७॥ १८॥ १९॥ बध्य कहे बध करिबे

लायक निर्घृण कहे निर्दय ॥ 'कारुण्यं करुणा घृणा' इत्यमरः ॥ २० ॥ चार कहे दूत ॥ २१ ॥

नील ॥ सांचेहु जो यह है शरणागत । राखिय राजिव लोचन मो मत ॥ भीत न राखिय तौ अतिपातक । होइ जो मातु पिता कुलघातक ॥ २२ ॥ हनूमान-हरिलीला-छंद ॥ जानौ बिभीषण न राकस रामराज । प्रह्लाद नारद बिशारदबुद्धिसाज ॥ सुग्रीव नील नल अंगद जाम्बवंत । राजाधिराजबलिराज समान संत ॥ २३ ॥ दोहा ॥ कहन न पाई बात सब हनूमंत गुणधाम ॥ कह्यौ बिभीषण आपुही, सबन सुनाइ प्रणाम ॥२४ ॥ सवैया ॥ दीनदयालु कहावत केशव हौं अतिदीन दशा गह्यो गाढो । रावणके अघओघमें केशव बूडत हौं वरहीं गहि काढो ॥ ज्यों गजकी प्रह्लादकी कीरति त्योंहीं बिभीषणको यश बाढो । आरत बंधु पुकार सुनो किन आरत हौं तौ पुकारत ठाढो ॥ २५ ॥

टी०-जो माता औ पिता औ कुलको घात कहूं होय औ भीत ह्वै कै आवै ताको न राखौ तौ बडो पातक है अथवा जो माता पिता औ कुल घातकको पातक होत है सोई पातक जो भीतको ना राखै ताको होत है ॥ २२ ॥ प्रह्लाद औ नारदके समान हैं बिशारद कहे धृष्ट परिपक्व इति बुद्धिकी साज जिनकी अर्थ प्रह्लाद नारद सम तुम्हारो भक्त है ॥ "विशारदः पंडिते च धृष्टे" इति मेदिनी ॥ २३ ॥ २४ ॥ बाढो कहे बाढो ॥ २५ ॥

केशव आपु सदा सह्यो दुःख पै दास न देखि सके न दुखारे । जाको भयो जेहि भाँति जहाँ दुख त्योंहीं तहां तिहि भाँति पधारे ॥ मेरिय बार अबार कहाँ कहुँ नाहिं तु काहुके दोष बिचारे । बूडत हौं महामोहसमुद्रमें राखत काहे न राखनहारे ॥ २६ ॥ हरिलीला छंद ॥ श्रीरामचंद्र अति आरतवंत जानि । लीन्हों बोलाय शरणागत सुख-दानि ॥ लंकेश आउ चिरजीवहि लंक धाम । राजा

कहाउ जग जौंलगि रामनाम ॥ २७ ॥ तोटकछंद ॥ जबहीं रघुनायक बाण लियो । सविशेष विशोषित सिंधु हियो ॥ तबही द्विजरूपसो आइ गयो । नल सेतु रचै यह मंत्र दयो ॥ २८ ॥ दोहा ॥ जहँ तहँ वानर सिंधुमें, गिरिगण डारत आनि ॥ शब्द रह्यो भरि पूरि महि, रावणको दुख दानि ॥ २९ ॥ तोटकछंद ॥ उछलै जल उच्च अकाश चढै । जलजोर दिशा बिदिशान मढै ॥ जनु सिंधु अकाशनदी अरिके । बहु भाँति मनावत पां परिके ॥ ३० ॥

टी०—त्योंहीं कहे तत्कालही मोह कहे दुःख ॥ २६ ॥ २७ ॥ समुद्रतटमें रामचन्द्र तीन दिन डेरा किये रहे जब समुद्र राह नहीं दियो तब समुद्रको शोषिवेके लिये कोपकरि रामचन्द्र बाण लियो इति कथा शेषः ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ समुद्रको जल उछरि आकाशकोचढत है सो मानहू समुद्र पायन परिकै आकाशगंगाको मनावत है ॥ ३० ॥

बहु व्योम विमानते भीजि गये । जलजोर भये अँगराग मये ॥ सुरसागर मानहु युद्ध जये । सिगरे पट भूषण लूटि लये ॥ ३१ ॥ अति उच्छलि छिंछि त्रिकूट छयो । पुर रावणके जलजोर भयो ॥ तब लंक हनूमत लाइ दई । नल मानहु आइ बुझाइ लई ॥ ३२ ॥ लगि सेउ जहां तहँ शोभ गहे । सरितानिके फेरि प्रवाह बहे ॥ पतिदेवनदी रति देखि भली । पितुके घरको जनु रूसि चली ॥ ३३ ॥ सब सागर नागर सेतु रची । बरणै बहुधा युत शक्र शची ॥ तिलकावलिसी शुभ शीश लसै । मणिमाल किधौं उरमें विलसै ॥३४॥ तारक छंद ॥ उरते शिवमूरति श्रीपति लीन्ही । शुभ सेतुके मूल अधिष्ठित कीन्ही ॥ इनके दरशै परशै पग जोई । भवसागरके तरि पार सो होई ॥ ३५ ॥

टी०—जल जोर भये सो बहुत व्योम आकाशमें देवतनके विमान भीजि गये कहे जो अंगनमें लग्यो कुंकुमादि लेप है तासों रये कहे युक्त पट औ भूषण बहि आये हैं सो मानो सुर जे देवता हैं तिनको सागर युद्धमें जीत्यो है सो मानो लूटि लीन्हों है इहां पटभूषणनको बहि आइबो विषय

कहे उपमेय है सो अनुक्त है तासों अनुक्त विषय वस्तूत्प्रेक्षा है ॥ ३१॥३२॥ सेतुमें लगिकै जहाँ तहाँ सोभरयेन जे सरितनके प्रवाह हैं ते फेरि कहे उलटिकै बहन लगे सो पांय परि परि मनावत हैं ऐसी भली कहे बडी रति प्रीति पतिकी समुद्रके देवनदी आकाशगंगामें देखिकै मानों आपने पिताके घरको रूसि चली हैं ॥ ३३ ॥ नागरश्रेष्ठ ॥ ३४ ॥ उरते अर्थ विचारते जो वस्तु करिबो होत है ताको विचार प्रथम मनहिमों आवत है ॥ ३५ ॥

दोहा ॥ सेतुमूल शिव शोभिजै, केशव परम प्रकाश ॥ सागर जगत जहाजको, करिया केशव दास ॥ ३६ ॥ तारकछंद ॥ शुक सारण रावण दूत पठायो । कपिराजसो एक संदेश सुनायो ॥ अपने घर जैयहु रे तुम भाई । यमहूंपहँ लंक लई नहिं जाई ॥ ३७ ॥ सुग्रीव० ॥ भजि जेहौं कहां न कहूं थल देखों । जलहूं थलहूं रघुनायक पेखों ॥ तुम बालि समान सहोदर मेरे । हतिहौं कुलस्यौ तिन प्राण न तेरे ॥ ३८ ॥ सब रामचमू तरि सिंधुहिं आई । छबिऋक्षनकी धर अंबर छाई ॥ बहुधा शुक सारणको जो बताई । फिर लंक मनों वर्षाऋतु आई ॥ ३९ ॥

टी०—संसार सागरको जो जहाज रामनाम है ताके करिया कहे केवट जे शिव हैं जैसे केवट जहाजमें चढाइ समुद्रपार करत हैं तैसे शिव मरणकाल काशीमें रामरूपी तारक मंत्र जहाजपर चढाइ संसारपार करत है ते सेतुके मूलमें परम प्रकाश कहे प्रसन्नतासों शोभित हैं जो जहाजपर चढाइ पार करत है सो आपने प्रभुसों सेतुपर चढाइ पार करिबेको अधिकार पाइ प्रसन्न भयोइ चाहै इति भावार्थः ॥ ३६ ॥३७॥ ता रावणके संदेशमें सुग्रीवको भाई कह्यो ताको जवाब सुग्रीव दियो कि रावणसों कहियो कि, तुम बालिके समान हमारे भाई हौ तासों तुम्हारो वध उचित है ॥३८॥ जा रामचन्द्रको काहुनीके प्रकारसों सुग्रीवादि वीरनको शुकसारण दूतसों बहुधा बहुत प्रकारसो बताइ कहे बतायो रहे अर्थ वर्णन करयो है सो तुलसीकृत रामायणमें रावणसों शुकसारण कह्या है कि ॥ असमैं श्रवण सुना दशकंधर । पदुम अठारह यूथप बंदर ॥ अथवा जा प्रकार सुकसारणको बतायो है सो आगे कवित्तमें वर्णन है सो रामचमू सिंधुको तरि कहे उतरिकै लंकामें आई है सो भू आकाशमें ऋक्ष मेघसम श्याम शोभित है सो मानो फेरि हेमंतऋतुमें वर्षाऋतु लंकामें आई हैं ॥ ३९ ॥

दण्डक ॥ कुंतल ललित नील भ्रुकुटी धनुष नैन कुमुद कटाक्ष बाण सबल सदाई है । सुग्रीव सहित तार अंगदादि भूषण रु मध्यदेश केशरी सुगजगति भाई है ॥ विग्रहानुकूल लक्ष लक्ष ऋक्ष बल ऋक्षराजमुखी मुख केशोदास गाई है । रामचन्द्रजूकी चमू राज्यश्री बिभीषणकी रावणकी मीचु दर कूच चालि आई है ॥ ४० ॥

टी०—रामचन्द्र चमू कैसी है कि कुंतल औ ललित औ नील औ भ्रुकुटी औ धनुष औ कुमुद औ कटाक्ष औ बाण औ सबलई जे वानर हैं ते सदा हैं जामें अथवा बाण पर्यंत इन नामन करिके युक्त औ सदा सबल कहे बलवान् ऐसे जे वानर ऋक्ष हैं ते हैं जामें औ सुग्रीव सहित है औ तार नामा जे वानर हैं तिन सहित है औ अंगदादिक जे भूषण कहे सेनानायक हैं तिनसों युक्त है औ मध्य देशनामा औ केशरीनामा औ सुगजनामा जे वानर हैं तिनकी गति भाई कहे नीकी है जामें औ विग्रहनामा औ अनुकूलनामा औ ऋक्षराजमुख कहे ऋक्षराज जे जाम्बवंत हैं ते हैं मुख कहे मुखिया जामें ऐसो लक्ष लक्ष कहे अनेक लक्ष ऋक्षन ऋक्षनको है बल सैन्य जामें बिभीषणकी राज्यश्री कैसी है कि कुंतल जे केश हैं ते हैं ललित कहे सुंदर औ नील कहे श्याम जाके औ भ्रुकुटी धनुष सम जाकी औ नयन हैं कुमुद कहे कमलसम जाके औ कटाक्ष हैं बाणसम जाके औ सबल कहे सुंदरता सहित सदा है अर्थ जाकी छबि काहू समयमें म्लानि नहीं होति ॥ " बलं गंधरसे रूपे " इति मेदिनी ॥ औ सुष्ठु जो ग्रीवा है सो सहित है तार कहे विमल मुक्तनसों अर्थ मोतिनकी माला पहिरे है । " तारो निर्मलमौक्तिके मुक्ताशुद्धावुच्चनादे " इत्यभिधानचिंतामणिः ॥ औ अंगद जो बिजायठ है तेहि आदि दै जे भूषण हैं तिनसों युक्त है औ मध्यदेश जो कटि है सो सो है केशरी कहे सिंहको ऐसो जाको औ सुष्ठु जो गज है अर्थ जो अति ललित चाल चलत है ताकी ऐसी गति है भाई कहे नीकी जाकी औ विग्रह कहे शरीर है अनुकूल कहे यथोचित सब कहे पूर्ण अर्थ जैसो जौन अंग चाहिये ता अंग तैसोई है अथवा अनुकूल कहे हित हैं सबको अर्थ जे देखत है ताको मन वश ह्वै जात है अथवा अनुकूल कहे व्याधिरहित " गात्रं वपुः संहननं शरीरं वर्ष्म विग्रहः " इत्यमरः ॥ औ लक्ष लक्ष जे ऋक्ष नक्षत्र हैं गन कहे जो बल सौंदर्य है तेहि सहित जो ऋक्षरामचन्द्रमा है ताते सदृश है मुख जाको अर्थ जब अनेक लक्ष

नक्षत्रकी शोभा लैके चन्द्रमा आपु धारण करै तब जाके मुखके सम होय ॥ " ऋक्षस्तु स्यान्नक्षत्राक्षभल्लयोः " इत्यभिधानचिंतामणिः ॥ रावणकी मीचु कैसी है कि कुंत जो बरछी है सो है लालित कहे लचकति जाके अर्थ बरछी हाथमें लिये है अथवा कुंतल जो भाला है सोहै लालित कहे अति तीक्ष्ण जाको अर्थ हथियारको धरे है ॥ " कुंतलो भल्लकेशयोः " इत्यभिधानचिंतामणिः ॥ औ नील कहे श्यामवर्ण है औ भ्रुकुटी भौंह हैं धनुषसम विकराल जाकी इहां कवि क्रूर स्त्री करि वर्णत है तासों भौंहनकी धनुषकी क्रूरता धर्म करि साम्य जानो औ नयन हैं कुमुद कहे कुत्सित है मुद आनंद जिनमें ऐसे हैं जाके अर्थ रावणके वधको आनंद है विभीषणके राज्यलाभादि उत्सवको आनंद नहीं है अथवा नयन हैं कुमुद कहे मुद जो आनंद है प्रसन्नता इति तासों रहित अर्थ अतिकोपसों अरुण अति विकराल हैं प्रशस्त नहीं हैं औ कटाक्ष हैं बाणसम कराल जाके औ सबल कहे बुद्धिबल सहित सदा हैं इहां बलपदते बुद्धिबल जानो अर्थ बुद्धिबलसों सीता हरणादि कार्य कराइ रामचन्द्रसों विरोध कराइ दियो तार कहे उच्चस्वर करिके सहित है सुष्ठु ग्रीवा जाकी सुष्ठु पदको अर्थ यह कि ऐसी उच्चस्वर करिबेकी शक्ति और काहूकी ग्रीवामें नहीं है औ अंगद जो बिजायठ हैं तेहि आदि भूषण कहे नहीं है अर्थ मुंडमालादि क्रूर भूषण पहिरे हैं औ मध्य कहे अधम अनुत्तमोति हैं देश कहे जाके अंग ॥ " मध्यं विलग्नेन स्त्री स्यान्नयाप्येंऽतरेधमेऽपिच । " इति मेदिनी ॥ औ केशरी जो सिंह है ताकी गजपर ऐसी गति भाई है जाको अर्थ जैसे गजके मारिबेको सिंह है चलत है तैसे रावणको मारिबेको चली आवति है औ रामचन्द्रके जो विग्रह विरोध है सोई है अनुकूल हित जाको अर्थ रामचन्द्रके विरोधहीसों है कार्यसिद्धि जाकी औ सब कहे पूर्ण अनेक लक्ष जे ऋक्ष भालु हैं तिनको है बल जाके औ ऋक्षराज जे जाम्बवंत हैं तिनको ऐसो है मुख जाको ॥ ४० ॥

हीरकछंद ॥ रावण शुभ श्यामल तनुमंदिरपर सोहियो ।
मानहु दश शृंगयुत कलिंदगिरि बिमोहियो ॥ राघवशर
लाघवगति छत्र मुकुट यों हयो । हंस सकल अंशसहित
मानहु उडिके गयो ॥ ४१ ॥ लज्जित खल तज्जि सुथल भज्जि
भवनमें गयो । लक्षण प्रभुत लक्षण गिरि दक्षिणपर सो
भयो ॥ लंक निरखि अंक हरषि मर्म सकल जो लह्यो ।

जाहु सुमति रावण वह अंगदसन यों कह्यो ॥ ४२ ॥ चंचलाछंद ॥ रामचन्द्रजू कहंत स्वर्णलंक देखि देखि। ऋच्छ वानरालि घोर ओर चारिहू विशेखि ॥ मंजु कंज गंध लुब्ध भौरभीरसी विशाल। केशोदास आस पास शोभिजै मनो मराल ॥ ४३ ॥

टी०—सबल कहे अनेक रंग मिश्रित हैं अंशु कहे किरण जाके ऐसे जे सूर्य हैं तिन सहित मानों कलिंदगिरि शृंगते हंस कहे, हंस समूह उडिगयो है यहाँ जातिविषे एक वचन है हंसनके सदृश श्वेत छत्र हैं औ सूर्यनके सदृश अनेक रंग नग जटित मुकुट हैं ॥ ४१ ॥ दक्षिण गिरि कहे समुद्रके दक्षिण कूलकी गिरि समुद्र पारको गिरि इति मर्म भेद ॥ ४२ ॥ भौंर भीर सम ऋक्ष हैं मराल हंस सम वानर हैं ॥ ४३ ॥

ताम्रकोट लोहकोट स्वर्णकोट आसपास। देवकी पुरी घिरी कि पर्वतारिके विलास ॥ बीच बीच है कपीश बीच बीच ऋक्षजाल। लंककन्यका गरे कि पीत नील कंठमाल ॥४४॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचंद्र-चंद्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां रामसैन्यसमुद्रतरणं नाम पंचदशः प्रकाशः ॥ १५ ॥

टी०—अर्थ इंद्रकी शत्रुतासों मानो पर्वतन देवपुरीको घेरि लियो है देवपुरी सदृश स्वर्णकोट है जाके मध्यमों पुरी है औ ताके आस पास ताम्रादिके कोट हैं ते पर्वत समान हैं यासों या जनायो कि लंका देवपुरी सम है ॥ ४४ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसाद-निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां पंचदशः प्रकाशः ॥ १५ ॥

दोहा—यह वर्णन है षोडशे, केशवदास प्रकास ॥ रावण अंगदसों विविध, शोभित वचनविलास ॥ १ ॥ अंगद कूदि गये जहाँ, आसनगत लंकेश ॥ मनु मधुकर करहाटपर, शोभित श्यामल वेष ॥ २ ॥ प्रतीहार—नाराचछंद ॥ पढो विरंचि मोन वेद जीव सोर छंडिरे। कुबेर बेर कैं कही न यक्ष भीर

मंडिरे ॥ दिनेश जाइ द्वारि बैठु नारदादि संगहीं । न बोलु चंद मंद बुद्धि इंद्रकी सभा नहीं ॥ ३ ॥ चित्रपदाछंद ॥ अंगद यों सुनि बानी । चित्त महारिस आनी ॥ ठेलिके लोग अनेसे । जाइ सभामहँ बैसे ॥ ४ ॥ चित्रपदाछंद ॥ कौन हो पठये सो कौने ह्यां तुम्हैं कह काम है । अंगद ॥ जातिवानर लंक नायक दूत अंगद नाम है ॥ रावण ॥ कौन है वह बांधिके हम देह पूछि सबै दही । लंक जारि सँहारि अक्ष गयो सो बात वृथा कही ॥ ५ ॥

टी०-॥ १ ॥ आसनमें गत कहे बैठो ॥ २ ॥ रावणके सभाभवनमें जाइ अंगद ऐसे कौतुक देखत भये प्रतीहार या प्रकारके अनादरपूर्वक वचन ब्रह्मादिसों कहत हैं हे कुबेर ! तुमसों कैयो बार कह्यो कि तुम यक्षनकी भीरको न मंडौ अर्थ यक्षनकी भीरको संग लै इहां न आयो करो सो तुम आईबो करत हौ ॥ ३ ॥ ४ ॥ लंकनायक बिभीषण ॥ ५ ॥

महोदर ॥ कौन भांति रहौ तहां तुम राजप्रेषक जानिये । लंक लाइ गयो जो वानर कौन नाम बखानिये ॥ मेघनाद जो बांधियो वाहि मारियो बहुधा तबै । लोकलाज दुरयो है अति जानि जैन कहां अबै ॥ ६ ॥ रावण ॥ कौनके सुत बालिके वह कौन बालि न जानिये । कांख चापि तुम्हैं जो सागर सात न्हात बखानिये ॥ है कहां वह वीर अंगद देवलोक बताइयो । क्यों गयो रघुनाथबान बिमान बैठि सिधाइयो ॥ ७ ॥ लंकनायकको बिभीषण देव दूषणको दहै । मोहि जीवत होहिं क्यों जग तोहि जीवत को कहै ॥ मोहिंको जग मारि है दुर्बुद्धि तेरिय जानिये । कौन बात पठाइयो कहि बेरि बेगि बखानिये ॥ ८ ॥ अंगद ॥ सवैया ॥ श्रीरघुनाथको वानर केशव आयो हो एकु न काहू हयो जू । साग रको मद झारि चिकारी त्रिकूटको देह बिहार छयो जू ॥

सीय निहारि संहारिके राक्षस शोक अशोक बनीहि दयो जू। अक्षकुमारहि मारिके लंकहि जारिके नीकेहीं जात भयो जू॥ ९॥

टी०—महोदरने पूंछो कि तुम तहां कौन भांतिसों रहत हौ अर्थ कौने कामके अधिकारी हौ तब अंगद कह्यो है हम राजाके इहां प्रेषक कहे यथोचित स्थानमें दूतनके पठावनहार हैं अर्थ दूतनके नायक हैं लोक लाज दुरचो रहै यह कहि अंगद या जनायो कि हमारे सैन्यमें ऐसो कोऊ नहीं है जाको काहूं बांध्यो मारचो होइ॥ ६॥ ७॥ पाछे अंगद कह्यो है कि हम लंकनायकके दूत हैं सो रावण पूछचो कि लंकनायक को है जाके तुम दूत हौ तब अंगद कह्यो है कि बिभीषण लंकानायक है कैसो है बिभीषण जे देवतनके दूषण कहे पीडा करनहार हैं तिनको दहै कहे जारत हैं यामों या जनायो कि तुमहूं देवदूषण हो तुमहूंको दहि हैं॥ ८॥ सागरके मद रह्यो कि हमको कोऊ ना नांघि सकि है सो नांघिकै ता मदको झारि डारचो अर्थ दूरि करचो औ चिकारिकै गर्जिकै त्रिकूट नाम जो लंकापुरीको पर्वत है ताके देहमें अर्थ सब पर्वतभरेमें बिहारि कहे नीके प्रकारसों पुरीके स्त्री भवनादि देखिकै छयो कहे रहत भयो॥ ९॥

गंगोदकछंद॥ राम राजानके राज आइये इहां धाम तेरे महाभाग जागे अबै। देवि मंदोदरी कुंभकर्णादि दे मित्रमंत्री जिते पूंछि देखो सबै॥ राखिजै जातिको भांतिको वंशको साधिजै लोकमें लोक परलोकको। आनिकै पां परो दै सुलै कोशलै आसुहीं ईश सीताहि लै ओकको॥१०॥ रावण॥ लोक लोकेशसों शोचि ब्रह्मा रचैं आपनी आपनी सींवसों सोरहै। चारि बाहैं धरे विष्णु रक्षा करैं बात सांची यहै वेदवाणी कहै॥ ताहि भ्रूभंगही देवदेवेशसों विष्णु ब्रह्मादि दै रुद्रजू संहरै। ताहि हौं छोंडिकै पाँय काके परौं आजु संसार तो पाँय मेरे परै॥ ११॥ मदिराछंद॥ रामको काम कहा रिपु जीतहिं कौन कबै रिपु जीत्यो महा। बालि बली छलसों भृगुनंदन गर्व सहो द्विज दीन महा॥ दीन सो क्यौं छिति

छत्र हत्यो बिन प्राणनि हैहय राज कियो । हैहय कौन वहै बिसरयो जिन खेलतहीं तुम्हैं बांधि लियो ॥ १२ ॥

टी०-जा स्त्रीके संग राज्याभिषेक होई सो देवी कहावै ॥ "देवी कृताभिषेकायाम्" इत्यभिधानचिंतामणिः ॥ १० ॥ कल्पांतके अंतमें ब्रह्मा सृष्टि रचत हैं विष्णु रक्षा करत हैं सो ताहि कहे लोकसृष्टिको औ देवेश इन्द्र औ विष्णु औ ब्रह्मादि दै जे देव हैं तिन्हैं रुद्र जे महादेव हैं ते भ्रू जो मौंहहैं ताके भंगही टेढी करनेहीसों संहारकालमों संहारकरि डारत हैं ॥११॥ छत्र कहे छत्रबर्णः ॥ १२ ॥

अंगद-विजयछंद ॥ सिंधु तरयो उनको बनरा तुमपै धनुरेख गई न तरी । बांध्योइ बांधत सो न बँध्यो उन बारिधि बांधिकै बाट करी ॥ अजहूं रघुनाथ प्रतापकी बात तुम्हैं दशकंठ न जानि परी । तेलनि तूलनि पूंछि जरी न जरी जरी लंक जराइ जरी ॥ १३ ॥ मेघनाद ॥ छांडि दियो हमहीं वनरा वह पूँछकी आगन लंक जरी । भीरमें अक्ष मत्र्यो चापि बालक वादिहिं जाई प्रशस्ति करी ॥ ताल बिंधे अरु सिंधु बँधे यह चेटक विक्रम कौन कियो । बानरको नरको वपुरा पल मैं सुरनायक बांधि लियो ॥ १४ ॥

टी०-बांध्योई कहे हनुमान्को बंधन तुम काहू विधिसों करिबोहू करयौ बाहूपर बांधत ना बन्यौ तेल औ तूल कहे रुई युक्त जो वस्तु होति है सो विशेष जरति है सो या प्रकारकी पूँछ तुम करि सो ना जरी औ केवल सुवर्ण औ रत्ननमें अग्नि ज्वलित नहीं होति परंतु तुम्हारी लंका तृणादि रहित केवल रत्नादिके जरायसों जरी जरत भई रामके प्रभावसों ऐसी अनहोनी बातें होती हैं ताहूपर तुम्हैं नहीं जानि परत इति भावार्थः ॥१३॥ वादि कहे वृथा प्रशस्ति कहे स्तुति सप्तताल बेध्यो औ सिंधु बांध्यो यह चेटक कहे भगरविद्या है सरस्वती उक्तार्थः ॥ जो रामचन्द्र तालवेधन सिंधुबंधन करयौ सो तो चेटक कहे भगर विद्यासम है अर्थ खेल सम है यामें कौन विक्रम कहे अतिबल कियो है ॥ "विक्रमस्त्वतिशक्तिता" इत्यमरः ॥ अर्थ वे चाहैं तो त्रैलोक्यको संहार करिडारैं सिंधुबंधादि सदृश कर्मनमें उनको कौन श्रम है ऐसे प्रबल वे ना होते तौ जिन हम पालमें सुनायकको बांधि लियो ते बानर औ नरको वपुरा ह्वै जाते अर्थ हम इंद्र

लोकादिमें जाइकै इन्द्रादिको जीत्यौ औ वे हमपर चढि आये हैं हम वपुरा सम कछू करि नहीं सकत अथवा वपुरा समुझि हमपर चढिआये हैं ॥ १४ ॥

अंगद ॥ चेटकसों धनुभंग कियो प्रभु रावरेको अति जीरन हो । बाण समेत रहे पचिकै तुम जासघँ पैन तज्यो थलु हो ॥ बाण सुकौन बली वलिके सुत वै बलि बावन बांधि लियो । ओई सो तौ जिनकी चिर चेरिन नाच नचाइकै छांडिदियो ॥ १७ ॥ रावण ॥ नील सुखेन हनू उनके नल और सबै कपिपुंज तिहारे । आठहु आठ दिशा बलि दै अपनो पदु लै पितु जा लागि मारे ॥ तोसे सपूतहि जाइकै बालि अपूतनकी पदवी पगु धारे । अंगद संग लै मेरो सबै दल आजुहि क्यों न हनै बाप मारे ॥ १६ ॥ दोहा ॥ जो सुत अपने बापको, बैर न लेइ प्रकाश ॥ तासों जीवतही मरचा, लोग कहैं तजि त्रास ॥ १७ ॥

टी०—कवित्तमें उक्ति मेघनादकी है औ जवाब रावणको अंगद दियो ता जवाबहीसों या जानो कि रामचन्द्र सिंधुबंधनादि सम शंभु धनुषभंग चेटकहीसों कियो है यह बात रावण कह्यो है अंगद कहत हैं कि प्रभु जे रामचन्द्र हैं तिन चेटकसों धनुष भंग कीन्हों औ तुम कहत हौ कि जरिण कहे पुरानो रहै परन्तु तुमको पुरानो तो रहै पै बाणसमेत तुम पराक्रम करि पचिकै कहे थकिकै रहिगये ताहूपर थलहू ना छोंड्यो अर्थ रंच ना उठ्यो ॥ १५ ॥ नील, सुखेन, हनूमान औ सुग्रीव औ राम लक्ष्मण औ बिभीषण ये जे आठ हैं सरस्वती उक्तार्थः ॥नील सुखेनादि चारि वानर उनके सुग्रीवके हैं ते वासिके भयसों भागे रहैं तब संग रहे यासों या जनायो कि जो रामचन्द्र आज्ञाहूं करैं औ तिनहींके मोहसों तिनहीं वै तिहारो राज्य न दियो चाहैं तौ सब बानर तेरेई साथी ह्वै हैं तासों तू आठहूं आठ दिशा वलिद जे रामचन्द्र हैं आठ दिशनके आठ जो इन्द्रादि दिक्पाल हैं ते हैं बलिद कहे भेंटके दाता जिनके अर्थ इन्द्रादि दिक्पाल जिनकर भेंट देतहैं तिनहीं आपनो पद जो राज्य है ताको ले जाके लिये सुग्रीव तिहारे पितुको मारिडारचो है कोहेते राज्य तिहारे पिताको है रामचन्द्र मर्यादापुरुषोत्तम हैं जो तू कहिहै तौ तोकों विशेष देहैं । " बलिदैत्योपहारयोः " इत्यभिधानचिन्तामणिः । बाप मारे कहे जो तेरे बापको मारचो है ॥ १६ ॥ १७॥

अंगद-दोहा ॥ इनको बिलगु न मानिये, कहि केशव पल आधु ॥ पानी पावक पवन प्रभु, ज्यों असाधु त्यों साधु ॥ १८ ॥ रावण ॥ द्रुतविलंबितछंद ॥ उरसि अंगद लाज कछू गहो । जनकघातक बात वृथा कहो ॥ सहित लक्ष्मण रामहिं संहरौ । सकल वानरराज तुम्हैं करौ ॥ १९ ॥

टी०--बिलगु कहे द्वेष साधु कहे भलो असाधु कहे बुरो ॥ १८ ॥ जनक पिता सरस्वती उक्तार्थः ॥ हे अंगद तुम रामचन्द्रसों मिलिबेकों हमकों कहत हो यामें तुमको कछू लाज नहीं होत ऐसी बात कहि कछू लाज तौ उरमें गहौ काहेते कि तुम्हारे जनक वालि तिनके जे घातक रामचन्द्र हैं तिनकी बात वृथा है यह तुम कहौ अर्थ रामचन्द्रकी बात वृथा नहीं होति जो मनमें संकल्प करतहैं सो करिबोई करत हैं यासों या जनायो कि अति बली बालिके वध करिबेको संकल्प कियो सो वध करिबोई कियो तैसे वै तो हमारे मारिबेको संकल्प वृथा काहू उपायसों न ह्वै है तासों मैं लक्ष्मण सहित रामहिसों संहरौं कहे संहारनाशकों प्राप्त होत हौं अर्थ लक्ष्मणसहित राम मोहिं मारतही हैं नाहीं तो ऐसो हित सीख तुमकों दियो है जासों सब वानरनको राजा तुमको करौं अर्थ सुग्रीवसों छोरि तुम्हारो राज्य तुम्हें देऊं अथवा जनकघातक जे सुग्रीव हैं तिनकी बात वृथा कहत हौ अर्थ जो तुम्हारे पिताको मारयो ताकी तुम बडाई वृथा करत हौ मैं लक्ष्मण सहित राम करिकै संहरौं कहे नाशकों प्राप्त होत हौं नाहीं तो सुग्रीवको मारि सब वानरनकौ राजा तुमकों करौं ॥ १९ ॥

अंगद--निशिपालिकाछंद ॥ शत्रु सब मित्र हम चित्त पहिंचानहीं । दूतविधि नूत कबहूं न उर आनहीं ॥ आप मुख दोखि अभिलाषहू । राखि भुज शीश तब और कहँ राखहू ॥ २० ॥ रावण--इन्द्रवज्राछन्द ॥ मेरी बडी भूल सो का कहौं रे । तेरो कह्यो दूत सब सहौंरे ॥ वै जो सबै चाहत तोहिं मारयो । मारों कहा तोहिं जो दैव मारयो ॥ २१ ॥ अंगद--उपेन्द्रवज्राछन्द ॥ नराच श्रीराम जहीं धरैंगे । अशेष माथे कटि परैंगे ॥ शिखा शिवा श्वान गहैं तिहारी । फिरैं चहूं वोर निरे विहारी ॥ २२ ॥

टी०—तुम्हारी जो यह नूतन कहे नवीन दूतविधि कहे दूतता तोर फोर है ताकों कबहूं न उरमें आनि हैं पाइ है ॥ २० ॥ २१ ॥ नराच बान निरै बिहारी रावणको संबोधन है अथवा शिवा औ श्वान औ और जे निरै विहारी काकादि हैं ते तिहारी शिखा गहे तिहारे शिरको लिये फिरैंगे ॥ २२ ॥

रावण—भुजंगप्रयातछन्द ॥ महामीचु दासी सदा पाइँ धोवे । प्रतीहार ह्वैके कृपा शूर सोवै ॥ क्षपानाथ लीन्हे रहे छत्र जाको । करैगो कहा शत्रु सुग्रीव ताको ॥ २३ ॥ सका मेघमाला शिखी पाककारी । करै कोतवाली महादंड-धारी ॥ पढै वेद ब्रह्मा सदा द्वार जाके । कहा बापुरो शत्रु सुग्रीव ताके ॥ २४ ॥

टी०—अंगद कह्यो कि श्रीराम बाण धरिकै तुमको मारि हैं ताको उत्तर रावण दियो कि महामीचु जो है सो मेरे सदा पाइँ धोइबेके अर्थ दासी है याते अति न्यून दासी जनायो एक शत एक मीचु हैं तामें शत अकाल मीचु हैं एक महामीचु है शतमीचु उपायसों दूरि होती हैं एक महामीचु काहू उपायसों नहीं मिटति । यथा भावप्रकाशे "एकोत्तरं मृत्युशतमथ-र्बाणः प्रयच्छते । तत्रैकः कालसंयुक्तः शेषास्त्वागंतवः स्मृताः" । यामों या जनायो कि युद्धादिमें मरिबो अकालमृत्यु है सो मेरे समीप कैसें आइ है ॥ २३ ॥ सका कहे सक्का पाककारी रसोंईदार ॥ २४ ॥

अंगद—विजयछन्द ॥ पेट चढ्यो पलना पलिका चढि पालकिहू चढि मोह मढ्योरे । चौक चढ्यो चित्रसारी चढ्यो गज बाजि चढ्यो गढगर्व चढ्योरे ॥ व्योमविमान चढ्योई रह्यो कहि केशवसों कबहूं न पढ्योरे । चेतत नाहीं रह्यो चढि चित्तसों चाहत मूढ चिताहू चढ्योरे ॥ २५ ॥

टी०—प्रथमहिं पेटमें चढ्यो कहे गर्भमें आयो जब जन्म भयो तब पल-नामें चढिकै झूल्यो कछू और बडो भयो पलिका जो खट्टा है तामें चढि सोवन लाग्यो औ जब व्याह भयो तब पालकीमें चढि ब्याहने चल्यो तब मोह जो माया है तामें मढ्यो कहे युक्त भयो फेरि पाणिग्रहणमें चौकमें चढ्यो फेरि स्त्रीके संग चित्रसारीमें चढ्यो फेरि राजा ह्वैकै गज-बाजिमें चढ्यो औ गढपर चढ्यो औ गर्वपर चढ्यो अर्थ राज्याभिमान भयो औ जेहि कहे जाते अर्थ जाकी कृपासों व्योममें विमानन पर चढ्योई

रह्यो अर्थ पुष्पकादि विमानन पर चढ्यो आकाश फिरत रह्यो केशव कहत हैं कि सो जो वह प्रभु रामचन्द्र हैं ताको कबहूं न पढ्यो अर्थ रामनाम कबहूं न जप्यो सो हे मूढ! अब चिताहू पर चढ्यो चाहत है ताहू पर तेरो चित्त चढि रह्यो है कहे मत्त ह्वै रह्यो है तामें तू चेतत नहीं अर्थ चेत नहीं करतो चिताहूमें चढ्यो चाहत है यह कहि या जनायो कि रामचन्द्र तोहि शीघ्रही मारि हैं तासों उनके शरणमों जाइकै आपनो भलो करु ॥ २५ ॥

रावण-भुजंगप्रयातछंद ॥ निकार्‌यो जो मैं पालियो राज जाको। दियो काढिकै जू कहा त्रास ताको ॥ लिये बानरालीं कहौं बात तोसों। सो कैसे लरै राम संग्राम मोसों ॥२६॥ अंगदबिजयछन्द ॥ हाथी न साथी न घोरे न चेरे न गाउँ न ठाउँ को ठाउँ बिलै है। तात न मात न पुत्र न मित्र न वित्त न तीय कहीं संग रैहै ॥ केशव कामको राम बिसारत औरनि कामन कामहि ऐहै। चेति रे चेति अजौं चित अन्तर अंतकलोक अकेलोई जैहै ॥ २७ ॥

टी०-रामचन्द्रके राज्याभिषेकको येतो बडो उत्सव तामें भरत घरमें नहीं रहे सो सुनिकै रावण याही समुझ्यो कि परक्षर स्वाभाविक बन्धु विरोध समुझि भरतकृत अभिषेकोत्सवभंग भयसों भरतको दशरथ निकारि दियो ह्वै है सो कहत है कि निकारो जो भैया भरत है ताने पिता करि करिकै दियो राजा जाको काढिकै कहे देशसों निकारिकै लै लीन्हों ताको कहा त्रास कहे रहै आशय यह कि जा भयसों दशरथ भरतको निकारिकै रामचन्द्रको राज्य दियो सोई आपने बलसों भरत रामचन्द्रसों छोरि लीन्हों औ देशसों निकारि दीन्हों तो जिनसों पिताको दियो राज्य न राखत बन्यो ते हमको मारिकै कहा हमारी राज्य छोरि हैं औ ताहूपर सैन्य बानरनको लिये हैं औ वेष यतीको धरे हैं यतिनको औ वानरनको काम लरिवेको नहीं है सरस्वती उक्तार्थः । संकल्प करिकै जो रामचन्द्र हमारो राज्य लियो औ हम करिकै निकारो जो भाई बिभीषण है ताको दियो है ता बातको कहा हमारे आत्रास है अर्थ बडो त्रास है यह हम निश्चय जानत हैं कि रामचन्द्रको संकल्प निष्फल न ह्वै है हमसों राज्य छोरि बिभीषणको दे हैं और कहे अग्नि ताकी आली कहे समूह

अर्थ जिनमों अति अग्नि है ऐसे बाण लिये हैं अथवा र कहे तीक्ष्ण जे बाण हैं तिनकी आली कहे पंक्तिसमूह इति तिनको लिये हैं सो रामचन्द्रके संग्राममों मोसो कहे हम ऐसो प्राणी कैसे जुरै अर्थ हम उनके युद्ध करिबे लायक नहीं हैं। 'रस्तीक्ष्णे दहने' इत्यभिधानचिंतामणिः । 'पुंस्यालिविशदाशये त्रिषु स्त्रियां तपस्यायां सेतौ पंक्तौ च कीर्तिता' इत्याभिधानचिंतामणिः ॥ २६ ॥ वित्त धन ॥ २७ ॥

रावण--भुजंगप्रयातछंद ॥ डरै गाय विप्रै अनाथै जो भाजै । पर द्रव्य छोंडै पर स्त्रीहि लाजै ॥ पर द्रोह जासों न होवै रतीको । सुकैसे लरै वेष कीन्हें यतीको ॥ २८ ॥ दोहा ॥ गेंद करेउ मैं खेलको, हरिगिरि केशोदास । शीश चढाये आपने, कमलसमान सहास ॥ २९ ॥

टी०—जे रामचन्द्र गाय औ विप्रको डरात हैं अर्थ अतिदीन गाय औ विप्र तिनहूंको डरात हैं तासों अति कादर हैं औ अनाथ जे प्राणी हैं जिनको नाथ कोऊ नहीं हैं ताहीको भजै कहे सेवन करत हैं अर्थ ताहींसों संग करत हैं यासों या जनायो कि भयसों रंचकहूं परद्रव्य नहीं लै सकत हमारो राज्य कैसे ले है औ पर स्त्रीको लजात हैं यासो या जनायो कि जे स्त्रीको लजात हैं ते बीरनसों कहा धृष्टता करि हैं औ जिनसों परद्रोह कबहूं रत्तीहूभरि नाहीं है सकत आशय कि शत्रुता करते डेरात हैं औ ताहूपर वेष यती तपस्वीकी धरे हैं अर्थ बेषहू बीरको नहीं है सो मोसों कैसे लरिहै सरस्वती उक्तार्थः । मर्यादा पुरुषोत्तम हैं तासों ब्रह्मशाप गोशापको डेरात हैं भृगु लातहू मारयो ताहू पर कछू ना कर्‌यो अनाथ जे प्रह्लाद गजादि हैं तिनके निकट ही रहे जा भांति कष्ट भयो ताही विधि निकटवर्तीसम रक्षा कियो औ परद्रव्य परस्त्री हरनमों पाप होत है तासों त्याग करत हैं औ परद्रोह जासों रत्तीहूभरि नाहीं होत यासों समदरशी जानों सबको समान हैं तिनसों हम कैसे लरैं अर्थ वै ईश्वर हैं वेष कहे रूप मात्र यतीको कीन्हे हैं ॥ २८ ॥ २९ ॥

अंगद--दंडक ॥ जैसो तुम कहत उठायो एक गिरिवर ऐसे कोटि कपिनके बालक उठावहीं । काटे जो कहत शीश काटत घनेरे घाघ भगरके खेले कहा भटपद पावहीं ॥ जीत्यो जो सुरेश रण शाप ऋषिनारिहीको समुझहु हम द्विज नाते समुझावहीं । गहो राम पाँय सुख पाइ करैं तपी तप सीताजूको देहु देव दुंदुभी बजावहीं ॥ ३० ॥ रावण--

वंशस्थछंद ॥ तपी जपी बिप्रनि छिप्रहीं हरौं । अदेव द्वेषी सब देव संहरौं ॥ सिया न देहौं यह नेम जी धरौं । अमानुषी भूमि अवानरी करौं ॥३१॥ अंगद-विजयछंद ॥ पाहनते पतिनी करि पावन टूक कियो हरको धनुको रे । छत्र विहीन करे क्षणमें क्षिति गर्व हत्यो तिनके बलको रे ॥ पर्वतपुंज पुरैनिके पात समान तेरे अजहूं धरको रे । होइँ नरायणहूं पै नये गुण कौन इहां नर वानरको रे ॥ ३२ ॥ रावण-चंचरीछंद ॥ दोहिं अंगद राज तोकहँ मारि वानर राजको । बांधि देहिं बिभीषणै अरु फोरि सेतु समाजको ॥ पूंछ जारहिं अक्षरिपुकी पाइं लागहिं रुद्रके । सीयको तब देहु रामहिं पार जाइं समुद्रके ॥ ३३ ॥

टी०-घाघ कहे नटादि इंद्रजालिका ॥३०॥ सरस्वती उक्तार्थः । हे अंगद ! हौं केशव हौं कि तपी औ जपी जे विप्र हैं अथवा तपी औ जपी औ विप्रनको छिप्रहीं हरों कहों कि तपी औ जपी जे विप्र हैं अथवा तामें कछू बिचार नहीं करत औ अदेव जे दैत्य जे राक्षस हैं तिनके द्वेषी शत्रु देवता है तिन्हें क्षिप्रहू संहरत हौं कहे मारत हौं यासों हौं बडो पापी हौं सो सियाको न देहौं यह नेम जो जीमें धरतहौं सो अब कहे या समयमों अमानुषी कहे नाहीं हैं मानुष्य जहां औ अनरी कहे नाहीं हैं कोऊ काहूको अरि शत्रु जहां ऐसी जो भूमि कहे स्थान है विष्णुलोक ताको करों कहे साधत हौं । 'भूमिः क्षितौ स्थानमात्रे' इति अभिधानचिंतामणिः । ब्रह्मदोष देवदोषादि बडे पातकनसों छूटिबेको उपाव और नहीं है तासों सीताको नहीं देतो कि सीताके लिये आइकै रामचन्द्र मोहिं मारि हैं तौ सब पातकनसों छूटिकै विष्णुलोक जैहौं इति भावार्थः ॥ ३१ ॥ अजहूं कहे अबहूं अर्थ एतेहूपर तौ धरको कहर करौ ॥ ३२ ॥ सरस्वती उक्तार्थः । यामें प्रहस्तादि मंत्रिनप्रति काकोक्ति है रावण कहत है कि हे अंगद ! तुम तौ नीकी शिष देतहौ परंतु प्रहस्तादि मंत्रिन करि दी कर्मवश मेरी ऐसी दुर्मति है कि जब रामचंद्र येती बातें करैं तब सीताको देहुं सो ऐसो काहेको कैहैं तासों दुर्मति कृत हमारी मृत्यु विशेष सो ह्वै चुको यह निश्चय जानौं ॥ ३३ ॥

अंगद-लंक लाइ गयो बली हनुमंत संतन गाइयो । सिंधु बांधत शोधिकै नल क्षीर छीट बहाइयो । ताहि तोहि

समेत अंध उखारिहौं उलटी करौं । आजु राज कहां बिभीषण बैठिहैं तेहिते डरौं ॥ ३४ ॥ दोहा ॥ अंगद रावणको मुकुट, लैकरि उठ्यो सुजान । मनो चलो यमलोकको, दशशिरको प्रस्थान ॥ ३५ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायामंगदरावणसंवादवर्णनं नाम शोडशः प्रकाशः १६

टी०--क्षीर कहे जल ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां अंगदसंवादवर्णनं नाम षोडशः प्रकाशः ॥ १६ ॥

दोहा ॥ या सत्रहें प्रकाशमें, लंकाको अवरोध । शत्रुचमूवर्णन समर, लक्ष्मणको परबोध ॥ १ ॥ अंगद लै वा मुकुटको, परे रामके पाइ ॥ राम बिभीषणके शिरसि, भूषित कियो बनाइ ॥ २ ॥ पद्धटिकाछंद ॥ दिशि दक्षिण अंगद पूर्व नील । पुनि हनूमंत पश्चिम सुशील ॥ दिशि उत्तर लक्ष्मण सहित राम । सुग्रीव मध्य कीन्हे बिराम ॥ ३ ॥ सँग यूथप यूथप बलविलास । पुर फिरत बिभीषण आसपास ॥ निशि बासर सबको लेत सोध । यहि भांति भयो लंकानिरोध ॥ ४ ॥ तब रावण सुनि लंकानिरोध । उपजो तन मन अति परम क्रोध ॥ राख्यो प्रहस्त हठि पूर्व पौरि । दक्षिणहिं महोदर गयो दौरि ॥ ५ ॥ भयो इंद्रजीत पश्चिम दुवार । है उत्तर रावण बल उदार ॥ कियो विरूपाक्ष थित मध्यदेश । करे नरान्तक चहुंघा प्रवेश ॥ ६ ॥ प्रमिताक्षराछंद ॥ अति द्वार द्वारमहँ युद्ध भये । बहु ऋच्छ कंगूरन लागि गये ॥ तब स्वर्णलंकमहँ शोभ भई । जनु अग्निज्वालमहँ धूम मई ॥ ७ ॥

टी०--अवरोध घेरनो औ बिभीषणकरि शत्रु जो रावण है ताके चमूको वर्णन है परमोधु मूर्छा ॥ १ ॥ २ ॥ रामचंद्रके औ लंकाके मध्यमें सुग्रीव विश्राम कीन्हे हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ छंद उपजातिहै ॥ ७ ॥

दोहा ॥ मरकत मणिके शोभिजे, सबै कँगूरा चारु ॥ आइ गयो जनु घातको, पातकको परिवारु ॥ ८ ॥ कुसुमविचित्रा छंद ॥ तब निकसो रावणसुत शूरो । जेहि रन जीत्यो हरि बलपूरो ॥ तप बल माया तम उपजायो । कपिदलके मन संभ्रम छायो ॥ ९ ॥ दोधकछंद ॥ काहु न देखि परै वह योधा । यद्यपि हैं सिगरे बुधिबोधा ॥ शायकसों अहिनायक साध्यो । सोदरस्यो रघुनायक बांध्यो ॥ १० ॥ रामहिं बांधि गयो जब लंका । रावणकी सिगरी गई शंका । देखि बँधे तब सोदर दोऊ । यूथप यूथ त्रसे सब कोऊ ॥ ११ ॥ स्वागताछंद ॥ इंद्रजीत तेहि लै उर लायो । आजु काज सब मो मन भायो ॥ कै विमान अधिरूढति धाये । जानकी हि रघुनाथ देखाये ॥ १२ ॥ राजपुत्रयुत नागनि देख्यो । भूमियुक्त तरु चंदन लेख्यो ॥ पन्नगारि प्रभु पन्नगसाई । काल चालि कछु जानि न जाई ॥ १३ ॥ दोहा ॥ कालसर्पके कवलते, छोरत जिनको नाम ॥ बँधे ते ब्राह्मण वचनवश, मायासर्पहि राम ॥ १४ ॥

टी०-कंगूरनमें ऋक्ष लपटे हैं तासों मानों मरकत मणिहीके कंगूरा शोभित हैं पातक देवदोष ब्रह्मदोषादि ॥ ८ ॥ हरि इन्द्र ॥ ९ ॥ बुद्धि बोधा कहे बुद्धियुक्त ॥ १० ॥ ११ ॥ तेहि रावण इंद्रजीतको उरमें लगायो ॥ १२ ॥ भूमिमें युक्त कहे गिरे चंदन वृक्षहू नागयुक्त रहत हैं दुःखयुक्त सीता यह कहत भई कि हे पन्नगारिप्रभु ! हे पन्नगसांई ! पन्नग जे सर्प हैं तिनके अरि कहे भक्षक जे गरुड हैं तिनके तुम स्वामी हौ यासों या जनायो कि तुम्हारे वाहन जे गरुड हैं ते अनेक सर्प भक्षण करतहैं औ पन्नगसांई कहि या जनायो कि तुम सदा सर्प ही पर सोयो करत हौ ते तुम नागपासमें बाँधे हौ तौ काल जो समय है ताकी चाल कछू जानि नहीं परति बला बल समय ही नत उन्नतको उन्नत नत करत है इति भावार्थः ॥१३॥१४॥

स्वागताछंद ॥ पन्नगारितबहीं तहँ आये । व्याल जाल सब मारि भगाये ॥ लंक मांझ तबहीं गइ सीता । शुभ्रदेह अव-

लोकि सुगीता ॥ १५ ॥ गरुड–इंद्रवज्राछंद ॥ श्रीरामनारायणै लोक कर्त्ता । ब्रह्मादि रुद्रादिके दुःखहर्त्ता ॥ सीतेश मोको कछू देहु शिक्षा । नान्हीं बडी ईश जो होइ इक्षा ॥ १६ ॥ राम ॥ कीबे हुतो काज सबै सो कीन्हों । आये इहां मोकहँ सुक्ख दीन्हों ॥ पां लागि वैकुंठप्रभा बिहारी । स्वलोंक गो तत्क्षण विष्णु धारी ॥ १७ ॥ इंद्रवज्राछन्द ॥ धूम्राक्ष आयो जनु दंडधारी । ताको हनूमंत भये प्रहारी ॥ जिते अंकपादि बलिष्ठ भारे । संग्राममें अंगद वीर मारे॥ १८॥ उपेंद्रवज्राछंद ॥ अकंप धूम्राक्षहि जानि जूझ्यो । महोदरे रावणमंत्र बूझ्यो ॥ सदा हमारे तुम मंत्रवादी । रहे कहौ ह्वै अतिही विषादी ॥ १९ ॥

टी०–॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ छंद उपजाति है ॥ १८ ॥ विषादी कहे दुखी उदासीन इति ॥ १९ ॥

महोदर ॥ कहै जो कोऊ हितवंत बानी । कहो सो तासों अति दुःखदानी ॥ गुनो न दावै बहुधा कुदावै । सुधी तबै साधत मौनभावै ॥ २० ॥ कहो शुकाचार्यसु हौं कहौं जू । सदा तुम्हारो हित संग्रहौं जू ॥ नृपाल भूमै विधि चारि जानों । सुनो महाराज सबै बखानों ॥ २१ ॥ भुजंगप्रयातछंद ॥ यहै लोक एकै सदा साधि जानै । बली बेन ज्यों आपुही ईश मानै ॥ करैं साधना एक परलोकहीको । हरिश्चंद्र जैसे गये दै महीको ॥ २२ ॥ दुहूं लोकको एक साधैं सयाने । बिदेहीनज्यों वेदबानी बखाने ॥ नटै लोक दोऊ हठी एक ऐसे । त्रिशंकै हँसैं ज्यों भलेऊ अनैसे ॥ २३ ॥ दोहा ॥ चहूं राजको मैं कहौं, तुमसों राजचरित्र ॥ रुचै सो कीजै चित्तमें, चिंतहु मित्र अमित्र ॥ २४ ॥ चारि भांति मंत्री कहे, चारि भांतिके मंत्र ॥ मोहिं सुनायो शुक्रजू, सोधि साधि सब तंत्र ॥ २५ ॥

टी०-जो कोऊ तुम्हारे हितकी बात कहत है तासों कहे प्राणीको तुम दुखदा कहे दुखदायक कहत हौ अथवा दुखदानी कहे कटुबाद कहतहौ औ दांव कुदांव कहे समय कुसमयको गुनत नहीं हौ अर्थ जा समय मोको करिबो उचित है ताको विचार नहीं करत हौ आपने मनहींकी करत हौ तासों अथवा दांवको नहीं गुनत हौ बहुधा कुदांवहीको गुनत हौ तासों सुधी जे सुबुद्धि है मंत्री जन ते मौनभावको साधत हैं कहे चुप ह्वै रहत हैं ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ मित्र कहे हित अमित्र कहे अहितकी चिंता करौ कि कौन चरित्र हमको हित है कौन अहित है अथवा सब मंत्रिन मंत्र कह्यो है तामें मित्र अमित्रकी चिंता करौ कि कौन हितकी कहत है औ कौन अहितकी कहत है ॥ २४ ॥ चारि भांतिके मंत्री हैं औ चारि भांतिके मंत्र होत हैं तंत्र कहे सिद्धांत अथवा तंत्र शास्त्र ॥ २५ ॥

छप्पै ॥ एक राजके काज हतैं निज कारज काजे । जैसे रथ निकारि सबै मंत्री सुख साजे ॥ एक राजके काज आपने काज बिगारत । जैसे लोचन हानि सही कवि बालिहि निवारत ॥ एक प्रभु समेत अपनो भलो करत दाशरथि दूत ज्यों । एक आपनो प्रभुको बुरो करत रावरो पूत ज्यों ॥ २६ ॥ दोहा ॥ मंत्र जो चारि प्रकारके, मंत्रिनके जे प्रमाण ॥ विषसे दाडिम बजिसे, गुडसे नीब समान ॥ ॥ २७ ॥ चंद्रवर्त्मछंद ॥ राजनीति मत तत्व समुझिये । देशकाल गुणि युद्ध अरुझिये ॥ मंत्रि मित्र अरिको गुणगहिये । लोक लोक अपलोकन बाहिये ॥ २८ ॥

टी०-दाशरथि दूत अंगद औ हनुमान सीताको देहु तुमसों इत्यादि संधिकी बातैं कहि आपने प्रभुको काज साधत हैं और युद्धमें आपनो मरण घातादि बचाइ आपनो हित करत हैं और रावरो पूत युद्ध कराइ आपना औ तुम्हारीऊ मृत्यु कियो चाहत है ॥ २६ ॥ विषे खातहूमें कटु औ गुण जिनको मृत्युदायक है औ दाडिम बीजसे खातहूमें मधुर औ गुण जिनको पुष्टि कर्त्ता है औ गुडसे खातमें मधुर गुण दुखद है औ नीबसे खातमें कटु गुण सुखद है ॥ २७ ॥ कहूं यह पाठ है कि और विचार तत्व सब लहिये तौ उपजाति चंद्रवर्त्म छंद जानौ ॥ २८ ॥

रावण ॥ चारि भांति नृपता तुम कहियो। चारि मंत्रि मतमैं नमगहियो ॥ राम मारि सुर एक न बचि हैं । इंद्रलोक बसो वासहि रचिहैं ॥ २९ ॥ प्रमिताक्षराछंद ॥ उठिकै प्रहस्त सजि सेन चले । बहु भांति जाइ कपिपुंज दले ॥ तब दौरि नील उठि मुष्टि हन्यो । असुहीन गिरचो सुवमुंड सन्यो ॥ ३० ॥ वंशस्थछंद ॥ महाबली जूझतही प्रहस्तको । चल्यो तहीं रावण मीडि हस्तको ॥ अनेक भेरी बहु दुंदुभी बजैं । गयंद क्रोधांध जहां तहां गजैं ॥ ३१ ॥ सुनीर जीमूत निकास शोभहीं । विलोकि जाको सुरसिद्ध क्षोभहीं ॥ प्रचंड नैर्ऋत्य समेति देखिये । सप्रेत मानों महकाल लेखिये ॥ ३२ ॥ बिभीषण–वसंततिलकाछंद ॥ कोदंडमंडित महारथवंत जोहै । सिंहध्वजा समरपंडितवृन्द मोहै ॥ माहा बली प्रबल काल कराल नेता । सा मेघनाद सुरनायक युद्ध जेता ॥ ३३ ॥

टी०–रामचन्द्रको मारिकै औ सुर देवता येकौ ना मोसों बचि हैं अर्थ सब देवनहूंको मारिकै इंद्रलोकमें बसोवास रचिहौं सरस्वती उक्तार्थ। रामचंद्र जे हैं ते हमैं मारिकै एको देवता न बचि हैं कहे बाकी रहि हैं सब देवतनको बसोबास इंद्रलोकमें रचि हैं अर्थ हमारे भयसों इंद्रलोकसों भागिकै देवता कंदरादिकनमों जाइ बसे हैं तिन्हैं निर्भय करिकै इंद्रलोकमें बसाइ हैं ॥ २९ ॥ छन्दउपजाति है ॥ ३० ॥ ३१ ॥ सनीर कहे सजल जीमूत कहे मेघनके निकास सदृश शोभित है क्षोभहीं कहे डेरात हैं नैर्ऋत्य राक्षस ॥ ३२ ॥ रामचन्द्र पूंछयौ है इति कथाशेषः । नेता कहे दंडकर्ता ॥ ३३ ॥

जो व्याघ्रवेष रथ व्याघ्रनिकेत धारी। संरक्त लोचन कुबेरविपत्तिकारी ॥ लीन्हें त्रिशूल सुरशूल समूल मानों । श्रीराघवेंद्र अतिकाय वहै सो जानों ॥ ३४ ॥ जो कांचनीय रथशृंग मयूर माली । जाके उदार उर षण्मुख शक्तिशाली ॥ स्वर्धाम धामहर कीरति कैन जानी । सोई महोदर वृकोदर बंधु मानी ॥ ३५ ॥ जाके रथाग्रपर सर्पध्वजा विराजै ।

श्रीसूर्यमंडलविडंबन ज्योति साजै ॥ आखंडलीय वपु जो तनत्राणधारी । देवांतकैसो सुरलोकविपत्तिकारी ॥ ३६ ॥ जो हंसकेतु भुजदंड निषङ्गधारी । संग्रामसिंधु बहुधा अवगाहकारी ॥ लीन्ही छँडाइ जेहि देव अदेव वामा । सोई खरात्मज बली मकराक्षनामा ॥ ३७ ॥

टी०-त्रिशूल कैसो है सुर जे देवता हैं तिनको मानौं समूल कहे पूर्णशूल कहे मृत्यु है । " शूलोस्त्री रोग आयुधे मृत्युकेतनयोगेषु " इति मेदिनी ॥ ३४ ॥ कांचनीयरथ कहे सुवर्णको रथ ताके शृंगमें अग्रभागमें मयूरनकी माला पंगति लगी है अर्थ मयूरध्वजी है जाकी शक्ति बरछी षण्मुख जे स्वामिकार्त्तिक हैं तिनके उदार कहे बडे उरमें शाली कहै लगी है स्वः जो स्वर्ग है ताके धाम धाम कहे घर घरको हर कहे हरणहार है अर्थ लूटनहार है ॥ ३५ ॥ श्रीसूर्यमंडलको विडंबन कहे निंदक ज्योति कहे तेजको साजत है रथ अथवा आप अथवा तनत्राण अखण्डलीय कहे इन्द्रको ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

भुजंगप्रयातछन्द ॥ लगे स्यंदनैं वाजिराजी विराजैं । जिन्हैं वेगको पौनको बेग लाजैं ॥ भले स्वर्णकी किंकिणी यूथ बाजैं । मिले दामिनीसों मनो मेघ गाजैं ॥ ३८ ॥ पताका बन्यो शुभ्र शार्दूल शोभै । सुरेंद्रादि रुद्रादिको चित्त छोभै ॥ लसै छत्रमाला हँसै सोमभाको । रमानाथ जानौं दशग्रीव ताको ॥ ३९ ॥ पुरद्वार छांड्यो सबै आपु आयो । मनो द्वादशादित्यको राहु धायो ॥ गिरिग्राम लैलै हरिग्राम मारै । मनो पद्मिनीपत्र दंती बिहारै ॥ ४० ॥

टी०-दामिनीसम स्वर्णकिंकिणीके यूथ कहे समूह हैं मेघसम रावणके श्याम घोडे हैं यथा-वाल्मीकीये । " रथं राक्षसराजस्य नरराजो ददर्श ह । कृष्णवाजिसमायुक्तं युक्तं रौद्रेण वर्चसा ॥ " ॥ ३८ ॥ शार्दूल कहे व्याघ्र ॥ ३९ ॥ पुररक्षाके लिये मेघनादादिको पुरद्वारमें छांडिकै आप लरिबेके आयो है यथा-वाल्मिकीये रावणोक्तिः । " ततः सरक्षोधिपतिर्महात्मा रक्षांसि तान्याह महाबलानि । द्वारेषु चार्या गृहगोपुरेषु सुनिर्वृतास्तिष्ठतु निर्विशंकाः।

इहागतं मां सहितं भवद्भिर्वनौकसः छिद्रमिदं विदित्वा । शून्यां पुरीं दुःप्रसहां प्रमथ्य प्रधर्षयेयुः सहसा समेताः ॥ विसर्जयित्वा सचिवांस्तत-स्तान् गतेषु रक्षस्सु यथा नियोगे ॥" सो गिरि जे पर्वत हैं तिनके ग्राम कहे समूह लै लैकै हरि जे वानर हैं तिनको समूह मारत है तिन गिरिसमूहनमें रावण पद्मिनी कमलिनी पत्रमें दंतीसम विहार कौतुक करत है अर्थ गिरि ग्राम रावणकी देहमें दंतीकी देहमें पद्मिनीपत्र सम लागत है ॥ ४० ॥

सवैया ॥ देखि बिभीषणको रण रावण शक्ति गही कर रोष रईहै । छूटतही हनुमंतसों बीचहिं पूंछ लपेटिकै डारि दईहै ॥ दूसरि ब्रह्मकी शक्ति अमोघ चलावतही हाइ हाइ भई है । राख्यो भले शरणागत लक्ष्मण फूलिकै फूलिसी ओढि लई है ॥ ४१॥ स्रग्विनीछंद ॥ जोरहीं लक्ष्मणै लेन लाग्यो जहीं.। मुष्टि छाती हनूमंत मारचो तहीं ॥ आशुही प्राणको नाशसो ह्वै गयो । दंड द्वै तीनिमें चेत तोको भयो ॥ ४२ ॥ मरह-ट्टाछंद ॥ आयो डरि प्राणनि लै धनु बाणनि कपिदल दियो भगाइ । चढि हनूमंतपर रामचन्द्र तब रावण रोंक्यो जाइ ॥ धरि एक बाण तब सूत छत्र ध्वजा काटे मुकुट बनाइ । लागे दूजो शर छूटि गयो बरु लंक गयो अकुलाइ ॥४३ ॥ दोधक छंद ॥ यद्यपि है अति निर्गुण ताई । मानुष देह धरे रघुराई ॥ लक्ष्मण राम जहीं अवलोक्यो । नैननते न रह्यो जल रोंक्यो ॥ ४४॥ राम–वारक लक्ष्मण मोहिं विलोको । मोकहँ प्राण चले तजि रोको ॥ हौं सुमिरौं गुण केतिक तेरे । सोदर पुत्र सहायक मेरे ॥ ४५ ॥

टी०–फूलिकै प्रसन्न ह्वैकै ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ हनूमानसों प्राणनको डारिकै कपि दलको भगायो जाय तहां हनूमान क्यों न गये तौ जब रावण वा ठौरसों भागो तब लक्ष्मणको लै हनूमान रामचन्द्रके पास गये इति कथा-शेषः ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

लोचन बाहु तुहीं धनु मेरो । तू बल विक्रम वारकहेरो ॥ तू बिन हौं पल प्राण न राखौं । सत्य कहौं कछु झूंठ न

भाखौं ॥ ४६ ॥ मोहिं रही यतनी मन शंका । देन न पाइ बिभीषण लंका ॥ बोलि उठौ प्रभुको प्रण पारो । नातरु होत है मो मुख कारो ॥ ४७ ॥ बिभीषण-सुंदरीछंद ॥ मैं बिनऊं रघुनाथ करो अब । देवत जो परिदेवनको सब ॥ औषधि लै निशिमैं फिरि आवहि । केशव सो सब साथ जिआवहि ॥ ४८ ॥ सोदर सूरको देखतही मुख । रावण-के पुरवै सिगरे सुख ॥ बोल सुने हनुमंत करयो प्रन । कूदि गयो जहँ औषधिको बन ॥ ४९ ॥

टी०-बल कहे सैन विक्रम पराक्रम ॥ ४६ ॥ प्रभु जो मैं हौं ताको बिभीषणको लंकदान रूपी जो प्रण है ताको पारो कहे पूरण करौ ॥ ४७ ॥ हे रघुनाथ ! जो मैं बिनऊं कहे बिनती करत हौं सो तुम करो हे देव ! सब मिलकै परिदेवन जो बिलाप है ताको छोंडि देहु ॥ "बिलापः परिदेवनाम्" इत्यमरः ॥ ४८ ॥ प्रथम कह्यो है कि औषधि लैकै निशिहीमें फिरि आवै ताको हेतु कहत हैं सोदर जे लक्ष्मण हैं सूर जे सूर्य हैं तिनको मुख देखतही रावणके सिगरे सुख पुरवैं कहे पूरित करिहै अर्थ सूर्योदय भये लक्ष्मण न जीहैं या प्रकारको बिभीषणको बोल सुनिकै निशिहीमें हम औषधि ल्याइ हैं हनुमंत यह प्रण करयो ॥ ४९ ॥

रागषट्पद ॥ करि आदित्य अदृष्ट नष्ट यम करौं अष्ट बसु । रुद्रन बोरि समुद्र करौं गंधर्व सर्व पसु ॥ वलित अबेर कुबेर बलिहि गहि देउं इन्द्र अब । विद्याधरनि अविद्य करौं बिन सिद्धि सिद्ध सब ॥ निज होहि दासि दितिकी अदिति अनिल अनल मिटि जाइ जल । सुनि सूरज सूरज उदतहीं करौं असुरसंसार बल ॥ ५० ॥ भुजंगप्रयातछंद ॥ हन्यो विघ्नकारी बली वीर वामैं । गयो शीघ्रगामी गये एक धामैं ॥ चल्यो लै सबै पर्वतै कै प्रणामैं । न जान्यो बिशल्यौषधी कौन तामैं ५१ ॥

टी०-रामचन्द्र सुग्रीवसों कहत हैं कि जो सूर्य उदयको प्राप्त होइ तौ जेते देवता हैं तिनकी सबकी आयुर्दशा करौं औ देवतनके शत्रु जे असुर दैत्य हैं तिनको बन संसारभरेमों करि देउं अर्थ तीनों लोकमें दैत्यनको राज देउं दिति दैत्यनकी माता अदिति देवतनकी माता ॥ ५० ॥

नाम कहे कुटिल ऐसा जो हनुमानके सूर्योदय पर्यंत विलंबाइवेके लिये कपट तपस्वीको रूप धरे मगमें बैठो कार्यको विघ्नकारी कालनेमि राक्षस है ताको मारिकै एक यामै पहरै गये कहे बीते औषधि पास गयो बिशल्यौषधी कहे विशल्यकरनी औषधी ॥ ५१ ॥

लसैं औषधी चारु भो व्योमचारी। कहे देखियों देवदेवाधिकारी ॥ पुरी भौमकीसी लिये शीश राजै। महामंगलार्थी हनूमंत गाजै ॥ ५२ ॥ लगी शक्ति रामानुजे रामसाथी। जडे ह्वैगये ज्यों गिरे हेमहाथी ॥ तिन्हैं ज्याइबेको सुनो प्रेमपाली। चल्यो ज्वालमाली हिले कीर्तिमाली ॥ ५३ ॥ किधौं प्रातही काल जीमें विचारचो, चल्यो अंशु लै अंशुमाली सँहारचो ॥ किधौं जात ज्वालामुखी जोर लीन्हें। महामृत्यु जामें मिटे होम कीन्हें ॥ ५४ ॥

टी०—वा पर्वतमें ज्वलित औषधी सोहती है ताको लै हनुमान व्योमचारा आकाशमगगामी भयो देव औ देवाधिकारी गंधर्वादि अथवा देवदेव जे इन्द्र हैं तिनके अधिकारी जे देवता हैं अर्थ औषधिनके रक्षामों जिन देवतनको इंद्र अधिकार दियो है अथवा देवदेव इंद्र औ मंत्रादिमें अधिकारी जे देवता हैं ते कहत हैं कि महामंगल कल्याणके अर्थी जे हनुमान हैं ते भौम जे मंगल हैं तिनकी पुरीहीको लिये जात हैं अनेक मंगल सम ज्वलित औषधी वृंद है मंगल पद श्लेष हैं कल्याण औ भौमका नाम है ॥ ५२ ॥ तिन्हैं कहे तिन लक्ष्मणको ज्याइवेको औषधिनके ज्वालाकी माली कहे समूह हैं जामें सो ज्वालमाली कहावै ऐसा जो पर्वत है ताहीको लैके चल्यो है अर्थ ज्वलित हैं औषधिवृंद जामें ऐसो जो औषधिपर्वत द्रोणाचल है ताहीको लिये जात हैं अथवा ज्वालकी है माली समूह जामें ऐसी जो विशल्यकरनी औषधि है ताहीको लै चल्यो है अथवा ज्वालमाली जे अग्नि हैं तिनको लै चल्यो है कीर्तिमाली हनूमानको विशेषण है ॥ ५३ ॥ औ प्रातही कहे सूर्योदय होतही लक्ष्मणको काल कहे मृत्यु जीमें बिचारचो है सो अंशुमाली जे सूर्य हैं तिनको संहारि कहे मारिकै सूर्यके अंशु कहे किरण अथवा प्रभाव लिखें जात हैं जामें सूर्योदय न होइ ॥ "अंशुः प्रभाकिरणयोः" इति मेदिनी ॥ ५४ ॥

बिना पत्र है यत्र पालाश फूले । रमैं कोकिलासी भ्रमैं भौंर भूले ॥ सदानंदरामें महानंदकी लै । हनूमंत आये बसंते मनोलै ॥५५॥ मोटनकछंद ॥ ठाढे भये लक्ष्मण मूरि छिये । दूनी शुभ शोभ शरीर लिये ॥ कोदंड लिये यह बात रटै । लंकेश न जीवत जाइ घरै ॥ ५६ ॥ श्रीराम तहीं उरलाइ लियो । सूंघ्यो शिर आशिष कोटि दियो ॥ कोलाहल यूथपयूथ कियो । लंकाह हली दशकंठ हियो ॥ ५७ ॥

इति श्रीमत्सकललोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिंद्रजिद्विरचितायां लक्ष्मणमूर्च्छामोचनं नाम सप्तदशः प्रकाशः ॥ १७ ॥

टी०-यत्र जा पर्वतमें औषधीवृंद नहीं हैं बिनापत्र फूले पलाशके वृक्ष हैं या प्रकार भूले कोकिलनकी आली पंगती रमती हैं औ जामैं भ्रमैं कहे घूमत हैं बसंत कैसो है कि यत्र कहे जामें विनापत्र पलाश फूलि रहे हैं औ जामें कोकिलावली रमती हैं औ भूले कहे उन्मत्ततासों देहकी सुधि बिसराये भौंर भ्रमत हैं यामें (श्लेषोत्प्रेक्षा) है सो सदानन्द जे राम हैं तिनके महानंदके लिये हनूमान मानो बसंत ही ल्याये हैं बसंतको देखि सबको आनंद होत है तासों अथवा जैसे राजनके इहां आनंदार्थ माली वसंत बनाइकै लैजात हैं तैसे मानो रामचन्द्रके महाआनंदको हनूमान बसंतको रूपही बनाइ ल्याये हैं ॥ ५५ ॥ मूरि जो औषधि है ताको छिये कहे छुयेसों ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां सप्तदशः प्रकाशः ॥ १७ ॥

दोहा ॥ अष्टादशे प्रकाशमें, केशवदास कराल ॥ कुम्भकर्णको वर्णिबो, मेघनादको काल ॥ १ ॥ दोधकछंद ॥ रावण लक्ष्मणको सुनि नीके । छूटि गये सब साधन जीके ॥ रे सुतमंत्रि विलंब न लावो । कुंभकरन्नहि जाइ जगावो ॥ २ ॥ राक्षस लक्ष्मण साधन कीन्हे । दुंदुभि दीह बजाई नवीने ॥ मत्त अमत्त बडे अरु बारे । कुंजरपुंज जगावत हारे ॥ ३ ॥

आइ जहीं सुरना रिस भागीं । गावन बीन बजावन लागीं ॥
जागि उठो तबहीं सुरदोषी । क्षुद्र क्षुधा बहु भक्षण पोषी॥४॥

टी०—कुम्भकर्णको औ मेघनादको काल कहे मृत्यु बर्णिवो ॥ १ ॥ साधन कहे जयासिद्धिके उपाय ॥ २ ॥ साधन कहे जगाइबेको यत्न ॥ ३ ॥ यह महादेवसे बर रह्यो है कि देवांगननको गान सुनि कुंभकर्ण अकालहूमें जानि है तासों जब देवांगना आइ गावन लागीं तब जाग्यो ॥ यथा ॥ हनुमन्नाटके ॥ " निद्रां तथापि न जहौ यदि कुंभकर्णः श्रीकंठलब्धवरकिन्नरकामिनीनाम् ॥ गंधर्वयक्षसुरसिद्धवरांगनानामाकर्ण्य गीतममृतं परमं विनिद्रः ॥ " ॥ ४ ॥

नराचछंद ॥ अमत्त मत्त दंतिपंक्ति एक कौरको करै । भुजा पसारि आसपासमेयबोप संहरै ॥ विमान आसमानके जहां तहां भगाइयो । अमान मानसो दिवान कुंभकर्ण आइयो ॥ ५ ॥ रावण ॥ समुद्र सेतु बांधिकै मनुष्य दोइ आइयो । लिये कुचालि वानरालि लंक अंक लाइयो ॥ मिल्यो बिभीषणौं न मोहिं तोहिं नेकहू डरेउ । प्रहस्त आदि दै अनेक मंत्रि मित्र संहरेउ ॥ ६ ॥ करो सो काज आशु आज चित्तमैं जो भावई । असुरुय होइ जीव जीव शुक्र सुख्य पावई ॥ समेति राम लक्ष्मणै सो वानरालि भक्षिये । सकोस मंत्रि मित्र पुत्र धाम ग्राम रक्षिये ॥ ७ ॥

टी०—मान (गर्व) दिवान (सभा) ॥ ५ ॥ बानरालिको लंकके अंक कहे गोदमें लायो है अर्थ लंकके मध्यमें प्राप्त कियो है अथबा जो पुरी काहू कबहूं न घेरचौ ताको घेरिकै अंक कहे कलंक लायो है यामें रामचंद्रके बलको वर्णन है निंदा नहीं है तासों सरस्वती उक्तार्था । नहीं कियो ॥ ६ ॥ ऐसो काज करौ जासों देवतनको विघ्न हो जीव जे बृहस्पति हैं ते असुरुय होइ औ हमारो जय होइ शुक्र सुख पावैं सरस्वती उक्तार्था । राम लक्ष्मण समेत या वानरालिको भक्षिये कहे भक्षण करि सकियत है अर्थ नहीं भक्षण करि साकियत काहेते अनेक नर बानर हम भक्षण करे हैं इनको सेतुबंधनादि कर्म देखिकै हमारो जीव अति डरो है ताते कोष कहे खजाना सहित मंत्र्यादिकनको रक्षिये कहे रक्षण करि सकित है अर्थ नहीं रक्षण करि सकियत अर्थ ये हमको सबको मारि ग्रामादि लेन चाहत हैं ॥ ७ ॥

कुंभकर्ण-मनोरमाछंद ॥ सुनिये कुलभूषण देवविदूषण । बहु आजि विराजिनके तुम पूषण ॥ भवभूप जे चारि पदारथ साधत । तिनको कबहूं नहिं बाधक बाधत ॥८॥ पंकजबाटिकाछंद ॥ धर्म करत अति अर्थ बढावत । संतति हित रति कोविद गावत ॥ संतति उपजतही निशि बासर । साधत तन मन मुक्ति महीधर ॥ ९ ॥

टी०--बहुतै जे हैं आजि कहे समरनके बिराजी कहे शोभनहार अर्थ अनेक समरकर्ता तिनके मध्यमें तुम पूषण पाठ है तहाँ अर्थ कि बहुत जे आजिविराजी संग्रामकर्ता हैं तिनके तम पूषण कहे तमको मूषण सम है अर्थ सूर्य तमको नाश करत है तैसे तुम संग्रामकर्त्ता जे शत्रु भट हैं तिन्है नाश करत हो चारि पदार्थ अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष ॥ ८ ॥ चारों पदार्थनके साधिबेको समय कहत हैं कि महीधर जे राजा हैं ते सन्तत कहे निरंतर धर्महू करत हैं औ संतति अर्थ द्रव्यहूको बढावत हैं अथवा धर्मको करत अर्थ बढावत हैं अर्थ सतरीतिसों अर्थ बढावत हैं औ संततहित है रतिस्त्री भोग अर्थ काम साधन जिनको ऐसे कोविद गावत हैं अर्थ ये तीन्यो एकही समयमों साध्य हैं औ जब संतति कहे पुत्र उत्पन्न भयो तब निशि औ बासर तन औ मन करिकै मुक्तिको साधन करत हैं आजतक तुम अर्थ, धर्म, कामको साधन कीन्हों अब तुम्हारो पुत्र समर्थ है ताको सब राजभार सौंपि सीताको रामचंद्रको दैकै हेतु करि मुक्ति साधन करौ इति भावार्थः ॥ ९ ॥

दोहा ॥ राजा अरु युवराज जग, प्रोहित मंत्री मित्र ॥ कामी कुटिल न सेइये, कृपण कृतघ्न अमित्र ॥ १० ॥ घनाक्षरी ॥ कामी बामी झूंठ क्रोधी कोंढी कुढी कुलद्वेषी खलु कातर कृतघ्नी मित्र दोष द्विज द्रोहिये । कुपुरुष काहली कलही क्रूर कुटिल कुमंत्री कुलहीन केशौ ठोहिये ॥ पापी लोभी झूठ अंध बावरो बधिर गूंगा बौना अविवेकी हठी छली निरमोहिये । सूम सर्वभक्षी दैववादी जो कुवादी जड अपयशी ऐसो भूमि भूपति न सोहिये ॥ ११ ॥

टी०-ये पांचौं राजादि इन दूषण सहित होंहि तौ सेवनके योग्य नहीं योग नहीं होत अथवा यथाक्रमसों जानौं राजा कामी कहेते उचितानुचित विचार विना सुन्दरी देखि प्रजाजनकी स्त्रिनको गहि मंगावत हैं तासों देश उजार होत है औ युवराज कुटिल कहेते मंत्र्यादिकनसों बिरोध राज्य-विध्वंस करत हैं औ प्रोहित कृपण कहे दरिद्र कहेते विवाहादि समयमों द्रव्य लोभ बश वेदबिहित घटयादि बिताइ अमंगल करत हैं अथवा शत्रुसों कछु द्रव्य पाइ मरणादिके लये राशि नाम बतावत हैं औ मंत्री कृतघ्नी कहेते स्वामीको कृत बिसारि शत्रुसों मिलि राज्य छोडावैं औ मित्र अमित्र कहे हृदयसों भलो ना चाहै कहेते कछू गूढ मंत्र कहै सो शत्रु पास पहुँचावै ये पाँचौं इन पांचहुन दोष सहित सेवन योग नहीं होत यासों या जनायो कि तुम राजा हौ तुम्हें ऐसो काम साधन ना चाहिये जासों ईश्वर जे रामचंद्र हैं तिनकी स्त्रीको हरि ल्यायो हौ ॥ १० ॥ वामी (वाममार्गी) कुपुरुष कहे पुरुषार्थरहित किंपुरुष कहे कछू है पुरुषकी आकृति जिन की काहला (रोगी) दैवबादी कहे जे भाग भरोसे रहत हैं याहूमें या जनायो कि तुमको ऐसो कामसाधन ना चाहिये ॥ ११ ॥

निशिपालिकाछंद ॥ वानरन जानु सुर जानु शुभ गाथ हैं । मानुषन जानु रघुनाथ जगनाथ हैं ॥ जानकिहि देहु कारि नेहु कुल देहुसो । आजु रण साज पुनि गाजु हँसि मेहुसो ॥ १२ ॥ रावण-दोहा ॥ कुंभकरण करि युद्धकै, सोइ रहौ घर जाइ ॥ वेगि बिभीषण ज्यों मिल्यो, गहौ शत्रुके पाइ ॥ १३ ॥ मंदोदरी-दोहा ॥ इंद्रजीत अतिकाय सुनि, नारांतक सुखदाइ ॥ भैयनसों प्रभु झुकतहैं, क्यों न कहौ समुझाय ॥ १४ ॥ मंदोदरी-चंचलाछंद ॥ देव कुंभकर्णके समान जानिये न आन । इन्द्र चंद्र विष्णु रुद्र ब्रह्मको हरेउ गुमान ॥ राजकाजको कहै जो मानिये सो प्रेम पालि । कचलीनको चलै न कालकी कुचालि चालि ॥ १५ ॥

टी०-कुल औ देहसों नेह करिकै जानकीको देहु यह कहि या जनायो कि ना देहौ तौ रामचंद्र तुम्हारे कुलके सहित तुम्हारो नाश करि हैं ॥ १२ ॥ कारि कहे करौ ॥ १३ ॥ झुकत कहे रिस करत है भैयनसों बहुवचन कहि

या जनायो कि एक भाई बिभीषण समुझावन लाग्यौ ताको लात मारचो अब वैसेही कुंभकर्णसों रिस करत हैं ॥ १४ ॥ देव रावणको संबोधन है जो बात कुंभकर्ण कहत है सो राजाके काजके हितको कहत है ताहि प्रेमको पालिकै कहे हित करिकै मानिये अर्थ सीताको दैकै रामचंद्रसों हित करौ काहेते काल जो समय है साकी जो कुचालि कहे प्रतिकूलता है तामें चालि कहे चाल युद्धादि उत्कृष्ट कर्मरहित विचारयुक्त निजहितसाधक कार्य कृत्यकै पूर्व नाहीं चल्यो को अब नाहीं चलत अर्थ जे पूर्व भये हैं तिन चल्यो है अब जे होत जात हैं ते चलत हैं जब आपनो समय टेढो होत है तब शत्रु मिलनादि कार्य करिबो साधिबो अनुचित नहीं है इति भावार्थः। अथवा कालकी जो कुचालि है ताकी जो चलि कहे चालु है अर्थ जब आपनो काल प्रतिकूल भयो ता समयमों जो कार्यसाधक उचित चाल है ॥ १५ ॥

विष्णु भाजि भाजि जात छोंडि देवता अशेष । जामदग्न्य देखिदेखि कैन कीन नारिवेष ॥ ईश रामते बचे बचेक बान-रेश बालि । कैंचलीनको चलै न कालकी कुचालि चालि ॥ १६ ॥ विजयाछंद । रामहिं चोरि न दीन्हीं सिया जितके दुख तो तप लीलि लियो है । रामहिं मारन दीहों सहोदर रामहिं आवन जान दियो है ॥ देह धरचौ तुमहीं लगि आजुलों रामहिके पिय ज्याये जियो है । दूरि कऱ्यो द्विजता द्विज देव हरे हीं हरे आततायी कियो है ॥ १७ ॥

टी०-कालकी कुचालिमें चालु कैं चली है सो कहत हैं देवदानवनके युद्धमें देवतनके सहायको विष्णु जात हैं परन्तु जब जानत हैं कि दैत्यनको समय सहायक है हमको कुटिल है हम इतसों ना जीति हैं तब यशकी सुधि भुलाइ आपने प्राणनकी रक्षाके लिये भागि जात हैं या प्रकार कयो बारकी कथा पुराणनमें प्रसिद्ध है यासों या जनायो कि विष्णुसों बली कोऊ नहीं है तेऊ समय बिचारि गौं साधि जात हैं औ जामदग्नि जे परशुराम हैं तिनको देखिकै कै क्षत्री नारिको वेष नहीं धरचो यासों या जनायो कि जब परशुरामको समय रह्यो तब बडे बडे क्षत्री समय विचारि नारिको वेष धारि जीव बचायो औ तेई परशुराम ताही क्षत्रीवंशमें उत्पन्न जे रामचन्द्र हैं तिनको समय बली बिचारि आपनो धनुषबाण दै हेतु करचो तासों हे ईश ! रामचन्द्रको समय बली है सो सीताको

देकै हेतुरूपी जो बचिवेको उपाय है तासों बचो काहेते बालि बली रहे तिन बचिवेको उपाय न कियो ते ना बचे मारेही गये चौथी तुमको अर्थ पाछेके छंदमें कह्यो है ॥ १६ ॥ आवन जान दियो अर्थ युद्धमंडलमें आवन दियो फेरि युद्धमंडलसों फिरि जानदियो स्त्रीहर्तादिक छह आततायी कहावत हैं यथा भागवते ॥ "अग्निदो गरदश्चैव शस्त्रपाणिर्धनापहः ॥ क्षेत्रदारापहश्चैव षडेते आततायिनः" ॥ आततायी ब्राह्मणहू होइ ताके बधसों ब्रह्मदोष नहीं है तासों ॥ १७ ॥

दोहा ॥ संधि करो विग्रह करो, सीताको तो देह ॥ गनौं न पिय देहीनमें, पतिव्रताकी देह ॥ १८ ॥ रावण-विजयाछंद ॥ हौं सतु छांडि मिलौं मृगलोचनि क्यों क्षमिहैं अपराध नये । नारि हरी सुत बांध्यो तिहारे हौं कालिहि सोदर साँगि हये ॥ वामन मांग्यो त्रिपैग धरा दक्षिणा बालु चौदह लोक दये । रंचक वैर हुतो हरि वंचक बांधि पताल तऊ पठये ॥ १९ ॥ दोहा ॥ देवर कुम्भकरन्नसों, हरि अरिसों सुत जाइ ॥ रावणसों प्रभु कौनको, मंदोदरी डेराइ ॥ २० ॥

टी०—पतिव्रता जे स्त्री हैं तिनकी देह स्वरूप देहिनमें न गनौं ॥ १८ ॥ अपराधन ये कह्यो तासों बलिको प्राचीन वैर जानों अर्थ हिरण्यकशिपुके रंचक वैरसों बलिको बांधि पताल पठायो ॥ १९ ॥ २० ॥

चामरछन्द ॥ कुम्भकर्ण रावणैं प्रदक्षिणाहि दै चल्यो । हाइ हाइ ह्वै रह्यो अकाश आशुही हल्यो ॥ मध्य क्षुद्र घंटिकाकिरीट संग शोभनो । लक्ष पक्षसों कलिन्द्र इन्द्रको चल्यो मनो ॥ २१ ॥ नाराचछंद ॥ उडैं दिशा दिशा कपीश कोरि कोरि श्वासहीं । चपैं चपेट पेट बाहु जानु जंघसो तहीं ॥ लिये हैं और ऐंचि ऐंचि वीरबाहु बातहीं । भषेते अन्तरिक्ष लक्ष लक्ष जातही ॥ २२ ॥ कुम्भकर्ण-भुजंगप्रयातछंद ॥ न हौं ताडुका हौं सुबाहै न मानों । न हौं शंभुकोदंड सांची बखानों ॥ न हौं तालमाली खरै जाहि मारो । न हौं दूषणौ सिन्धु सूधो निहारो ॥ २३ ॥ सुरी आसुरी सुन्दरी भोग

कर्ण । महाकालको काल हौं कुम्भकर्ण ॥ सुनौ राम संग्रामको तोहि बोलौं । बढ्यो गर्व लंकाहि आये सो खोलौं ॥ २४॥

टी०-लक्ष विधिको जो पक्ष कहे विरोध है तासों अर्थ बडे विरोधसों अथवा लक्ष विधिको जो पक्ष कहे बल है तासों अर्थ बडे बलसों इहां लक्ष शब्द अधिकार्थमें है । "पक्षो मासार्धके पार्श्वगृहे साध्वविरोधयोः ॥ केशादेः परतो वृंदे बले साक्षिसहाययोः । ' इति मेदनी ॥ २१ ॥ जे लक्षण ऋक्ष भयसों अन्तरिक्षको जात हैं तिन्हैं बाँहके वात वायुसों खैंचिकै भषे खाइ डारचो ॥ २२ ॥ द्वै छन्दको अन्वय एक है खैरे कहे खर राक्षसै सूधो-निहारो अर्थ कपिनको सूधो समुझिकै मारन वेधन करचो सरस्वती उक्तार्थः । मेरी ओर इन सम शत्रु दृष्टिसों ना निहारो सूधो कहे कृपा-दृष्टिसों निहारो अथवा मोको सूधो कहे शत्रुभावरहित आपनो दास निहारो सरस्वती उक्तार्थः । लंकामें आयेते जो तुम्हारे गर्व बढचो है ताहि खोलौं कहे प्रसिद्ध करौं आशय कि जब मोको मारिहौ तब तुम्हारो बलादिको जो गर्व है सो सब प्राणिनमें प्रसिद्ध ह्वै है ॥ २३ ॥ २४ ॥'

उठ्यो केशरी केशरी जोर छायो । बली बालिको पूत लै नील धायो ॥ हनूमन्त सुग्रीव साभ सभागे । डसै डांससे अंग मातंग लागे ॥ २५॥ दशग्रीवको बंधु सुग्रीव पायो । चल्यो लंकमें लै भले अंक लायो ॥ हनूमन्त लातैं हत्यो देह भूल्यो । छुट्यो कर्ण नाशाहि लै इन्द्र फूल्यो ॥ २६॥ सँभारचो घरी एक दूमै मरालै । फिरचो रामहीं सामुहैं सो गदालै ॥ हनूमन्तजू पूंछसों लाइ लीन्हों । न जान्यों कबै सिंधुमें डारि दीन्हों ॥ २७ ॥

टी०-केशरी नामा बानर केशरी कहे सिंहके जोरसों छायो उठ्यो अर्थ सिंह सम गर्जिकै शीघ्र चल्यो ॥ २५ ॥ इन्द्रसम सुग्रीव फूल्यो सुखी भयो ॥ २६ ॥ २७ ॥

जहीं कालके केतुसों ताल लीन्हो । करचो रामजू हस्तपादादिहीनो ॥ चल्यो लोटतैं धाइ वक्रैधा चाली । उडचो मुंड लै बाण ज्यों मुंडमाली ॥ २८ ॥ तहीं स्वर्गके दुंदुभी दीह बाजैं । करचो पुष्पकी वृष्टि जै देव गाजैं ॥ दशग्रीव शोक ग्रस्यो लोकहारी । भयो लंकही मध्य आतंक

भारी॥२९॥ दोहा॥ तबहीं गयो निकुंभिला, होम हेत इन्द्रजीत॥ कह्यो तहां रघुनाथसों, मतो बिभीषण मीत॥३०॥ चंचरीछंद॥ जोरि अंजुलिको बिभीषण रामसों विनती करी। इंद्रजीत निकुंभिला गयो होमको रिस जी भरी॥ सिद्ध हो मन होइ जौलगि ईश तौ लगि मारिये। सिद्ध होहि प्रसिद्ध है यह सर्वथा हम हारिये॥ ३१॥ दोहा॥ सोई वाहि हतै कि नर, वानर ऋक्ष जो कोइ॥ बारह वर्ष क्षुधा तृषा, निद्रा जीते होइ॥ ३२॥ चंचरीछंद॥ रामचन्द्र विदा करचो तब वेगि लक्ष्मण वीरको। त्यों बिभीषण जामवंतहिं संग अंगद धीरको॥ नील लै नल केशरी हनुमंत अंतक ज्यों चले। वेगि जाइ निकुंभिलाथल यज्ञके सिगरे दले॥ ३३॥

टी०—ताल वृक्ष आदि पदते आयुधै जानो वक्रै कहे मुखै मुण्डमाली महादेव॥ २८॥ २९॥ दोहा क्षेपक है निकुंभिला राक्षसके देवतनको स्थान बटवृक्षसों युक्त है तामें यज्ञ करि इन्द्रजीत अजय होत रह्यो है॥ ३०॥ ३१॥ ३२॥ ३३॥

जामवंतहि मारि द्वै शर तीनि अंगद छेदियो। चारि मारि बिभीषणै हनुमंत पंचसु बेधियो॥ एक एक अनेक वानर जाइ लक्ष्मणसों भिरचो। अंध अंधक युद्ध ज्यों भवसों जुरचो भवही हरचो॥ ३४॥ गीतिकाछंद॥ रण इंद्रजीत अजीत लक्ष्मण अस्त्र शस्त्रनि संहरै। शर एक एक अनेक मारत बुंद मंदर ज्यों परै॥ तब कोपि राघव शत्रुको शिर बाण तत्क्षण कर धरचो। दशकंध संध्यहिको कियो शिर जाइ अंजुलिमैं पर्‍यो॥३५॥ रण मारि लक्ष्मण मेघनादहि स्वच्छ शंख बजाइयो। कहि साधु साधु समेत इंद्रहि देवता सब आइयो॥ कछु माँगिये बरबीर सत्वर भक्ति श्रीरघुनाथकी। पहिराइ माल विशाल अर्चहिकै गये सब साथकी॥३६॥ कलहंसछंद॥ हति इंद्रजीतकहँ लक्ष्मण आये।

हँसि रामचन्द्र बहुधा उर लाये ॥ सुनि मित्र पुत्र शुभ सोदर मेरे । कहि कौन कौन सुमिरौं गुण तेरे ॥ ३७ ॥ दोहा ॥ नींद भूख अरु प्यासको, जो न साधते बीर ॥ सीतहि क्यों हम पावते, सुनु लक्ष्मण रणधीर ॥ ३८ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायामिन्द्रजिद्वधवर्णनं नामाष्टादशः प्रकाशः ॥ १८ ॥

टी०-लक्ष्मणसों कैसे जाय भिरयो भय जो डरहै साही कहे हृदयसों हरयो कहे दूरि भयो है जाके ऐसो जो गर्वादि करिके अंध कहे आंधरो अंधक नाम दैत्य है सो जैसे भव जे महादेव हैं तिनसों युद्धमें जुरयो है अर्थ जैसे महादेवसों निर्भय अंधक लरयो तैसे लक्ष्मणसों इन्द्रजीत लरत भयो ॥ ३४ ॥ एक एक कहे एकको परस्पर अनेक शर मारत हैं अर्थ लक्ष्मणको मारत हैं ते शर दुहूनके अंगनमें मंदिरमें जलबुंदसम परत हैं अर्थ अतिबलीनतासों कछू पीडा नहीं करत उद्धरयो काढयो ॥ ३५ ॥ साथकी कहे जो अर्चाकी विधि संगमों लै आये रहैं कहूं शुभगाथकी पाठ है तौ शुभ गाथ कहे लक्ष्मण ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसाद-निर्मितायां राममक्तिप्रकाशिकायामष्टादशः प्रकाशः ॥ १८ ॥

दोहा ॥ उनईसयें प्रकाशमें, रावण दुःखनिधान ॥ जूझैगो मकराक्ष पुनि, ह्वैहै दूतविधान ॥ १ ॥ रावण जैहै गूढ थल, रावर लुटै विशाल ॥ मंदोदरी कढोरिबो, अरु रावणको काल ॥ २ ॥ मोटनकछंद ॥ देख्यो शिर अंजुलिमैं जबहीं । हाहा करि भूमि परयो तबहीं ॥ आये सुत सोदर मंत्रि तबै । मंदोदरि त्यों तिय आई सबै ॥ ३ ॥ कोलाहल मंदिर मांझ भयो । मानौं प्रभुको उडि प्राण गयो ॥ रोवै दशकंठ बिलाप करै । कोऊ न कहूं तन धीर धरै ॥ ४ ॥ रावण-दंडक ॥ आजु आदित्य जल पावन पावक प्रबल चंद आनंदमय ताप जगको हरौं । गान किन्नर करहु नृत्य गंधर्वकुल यक्ष विधि लक्ष उर यक्षकर्दम धरौं ॥ ब्रह्मरुद्रादि दै देव त्रैलोकके राजको

जाय अभिषेक इन्द्रहि करौं । आजु सिय राम दै लंककुल दूषणहिं यज्ञको जाय सर्वज्ञ विप्रन वरौं ॥ ५ ॥ महोदर-तोटक ॥ प्रभु शोक तजौ तन धीर धरौ । सक शत्रु वधो सो विचार करौ ॥ कुलमें अब जीवत जो रहिहै । सब शोक समुद्रहि सो बहिहै ॥ ६ ॥

टी०-दुःखको निदान कहे बडो दुःख ॥ १ ॥ रावरे स्त्रिनके रहिबेको घर, कढोरिबो कहे केशादि पकरि निर्दय खैंचिबो ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ इंद्रजीतके मरे रावण बडे दुःखसों संयुक्त है ऐसे विलाप वचन कहत भयो कि जो इन्द्रजीत मरयो तो मोहूं मरतही हौं तासों मेरे डरसों जे बातें जन नाहीं करत रहे ते सब भयको छोडिकै आपने आपने भाये काज करौ कपूर औ अगुरु औ कस्तूरी औ कंकोल मिलाइ यक्षकर्दम होत है सो यक्षनको अति प्रिय है अंगनमें लेप करत हैं ॥ "कर्पूरागुरुकस्तूरीकंकोलैर्यक्षकर्दमः ।" औ सीता राम मिलिकै कुलदूषण (बिभीषण) को लंका दैकै सर्वज्ञ ब्राह्मणनको यज्ञको निवारो कहे अवकाश देहिं ॥५ ॥ अतिदुःखमें धैर्यके वचन कहिबेको उचित है तासों महोदर, मंदोदरी धीर धराइबेके वचन कहति हैं जा उपायसों शत्रु वधो सक कहे सकै अर्थ शत्रु मारयो जाय सो विचार करौ सबके मरेको जो शोक है ताके समुद्रमें बह्यो करि है ॥ ६ ॥

मंदोदरी-चौपाई ॥ सोदर जूझ्यो सुत हितकारी । को गहि है लंका गढ भारी ॥ सीतहि दैके रिपुहि सँहारौ । मोहतिहै विक्रम बल भारौ ॥ ७ ॥ रावण ॥ तुम अब सीतहि देहु न देहू । बिन सुत बंधु धरौं नहिं देहू ॥ यहि तन जो तजि लाजहि रैहौं । वन बसि जाइ सबै दुख सैहौं ॥ ८ ॥ मकराक्ष-भुजंगप्रयातछंद ॥ कहां कुम्भकर्णौ कहां इन्द्रजीतै । करै सोइ बोवै करै युद्धभीते ॥ सुजोलौं जिओंहौं सदा दास तेरो । सियाको सकै दै सुनौं मंत्र मेरो ॥ ९ ॥

टी०-यह जो तुम्हारी भारी लंकागढ है ताहि कौन गहि है कहे लै सकि है अर्थ लंकागढ शत्रुके लेबे लायक नहीं है विक्रम कहे यत्न बल कहे शक्ति को मोहति है कहे मूर्छित करति है अर्थ तुम्हारो यत्न जो बल निष्फल

होतहै सो याहीके दुःख प्रभावसों ॥ ७ ॥ ८ ॥ भीत युद्ध कहि या जनायो कि बाण वेदनादि भयसों अंतर्धान ह्वै युद्ध करि हैं सरस्वती उक्तार्थः । वै आपने बलसों सबको मारि सीताको ले हैं इति व्यंग्यार्थः ॥ ९ ॥

महाराज लंका सदा राज कीजै । करौं युद्ध मेरी विदा वेगि कीजै ॥ हतौं रामस्यो बंधु सुग्रीव मारौं । अयोध्याहि लै राजधानी सुधारौं ॥ १० ॥ बिभीषण-वसंततिलकाछंद ॥ कोदंड हाथ रघुनाथ सँभारि लीजै । भागे सबै समरयूथप दृष्टि दीजै ॥ बेटा बलिष्ठ खरको मकराक्ष आयो । संहार-काल जनु काल कराल धायो ॥ ११ ॥ सुग्रीव अंगद बली हनुमंत रोंक्यो । रोंक्यो रह्यो न रघुवीर जहीं विलोक्यो ॥ मारयो बिभीषण गदा उर जोर ठेली । काली-समान भुज लक्ष्मण कंठ मेली ॥ १२ ॥ गाढे गहे प्रबल अंगनि अंग भारे । काटे कटैं न बहु भांतिन काटि हारे ॥ ब्रह्मा दियो वरहि अस्त्र न शस्त्र न लागै । लैही चल्यो समर-सिंहहि जोर जागै ॥ १३ ॥ गाढांधकार दिवि भूतल लीलि लीन्हो । अस्तास्त मानहु शशीकहँ राहु कीन्हो ॥ हाहादि शब्द सब लोग जहीं पुकार । बाढे अशेष अँग राक्षसके बिदारे ॥ श्रीरामचन्द्र पग लागत चित्त हर्षैं । देवाधिदेव मिलि सिद्धन पुष्प वर्षैं ॥ १४ ॥

टी०-सरस्वती उक्तार्थः ॥ काकूक्तिसों कहत हैं कि हे महाराज ! अब लंकामें तुम सदा राज किया करौ महाराज पद कहि या जनायो कि मंत्रको त्याग करि प्रभुतासों अपने मनहींकी बात करयो औ जैसे कुंभकर्णादिकन की सबकी बिदा कियो है तैसे मेरीहू बिदा करौ हौं युद्ध करौं जाइ औ तु म्हारी आज्ञाके सदृश जैसे कुंभकर्णादिकन बंधु सहित राम औ सुग्रीवको मारिकै राजधानी अयोध्यामें सुधार्‌यो है तैसे हौंहूं बंधु सहित राम औ सुग्रीवको मारिकै राजधानी अयोध्यामें सुधारौं जैसे सब मरिगये हैं तैसे हौंहूं मरौं जाइ इति व्यंग्यार्थः ॥ १० ॥ ११॥ बिभीषण गदा मारयो ताको उरके जोरसों ठेलिके लक्ष्मणके कंठमें कालसर्पके समान भुजा मेलत भयो ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

दोहा ॥ जूझतही मकराक्षके, रावण अति दुख पाइ । सत्त्वर श्रीरघुनाथपै, दियो वसीठ पठाइ ॥ १५ ॥ सुंदरीछंद ॥ दूतहि देखतही रघुनायक । तापहुँ बोलि उठे सुखदायक ॥ रावणके कुशली सुत सादर । कारज कौन करै अपने घर ॥ १६ ॥ दूत-विजयछन्द ॥ पूजि उठे जबहीं शिवको तबहीं विधि शुक्र बृहस्पति आये । कै विनती मिस कश्यपके तिन देव अदेव सबै बकसाये ॥ होमकी रीति नई सिखई कछु मंत्र दियो श्रुति लागि सिखाये । हौं इतको पठयो उनको उत लै प्रभु मंदिरमांझ सिधाये ॥ १७ ॥

टी०-कि शशीको दिवि आकाशते भूतलमें पाइकै अर्ध स्थानच्युत (अबल) जानिकै स्वाभाविक शत्रुतासों गाढो कहे बहुत जो अंधकार है ताने लीलिलियो है औ कि राहुने ग्रस्तास्त कीन्हों है शशीसम लक्ष्मण है अंधकार औ राहुसम मकराक्ष है जब मकराक्षको शस्त्रास्त्रसों मरण ना जान्यो तब हाथनसों कसिकै गाढे जो गहे रहै ताही समय शीघ्रतासों लक्ष्मणजी बाढ कहे स्थूलकाय ह्वैकै राक्षसके अशेष संपूर्ण अंग विदारे कहे विदीर्ण कीन्हें अर्थ फारि डारे ऐसी शीघ्रतासों लक्ष्मणजू आपने अंग स्थूल किये कि मकराक्ष जो हस्तग्रहण करे रहै सो हस्तग्रहण ना छूटन पायो तासों वक्षस्थल फाटि गयो अधिदेव गन्धर्वादि औ आदि देव पाठ होइ सो ब्रह्मादि जानौ यह छन्द छै चरणको है ॥१५॥१६ ॥ सत्वर कहे शीघ्र वसीठ (दूत) पूछौ कि रावण कौन कारज करत हैं ताको जवाब रावणके प्रभावको देखावत चतुरतासों दियो जब रावण देव औ अदेव सबके नाश करिवेके लिये शिव जे महादेव हैं तिनको पूजन करिकै उठे हैं कि ताही क्षण अति डर मानिकै विधि (ब्रह्मा) औ शुक्र औ बृहस्पति ये तीनों आइकै कश्यपके व्याजसों विनती करिकै देव औ अदेव सब बकसाये कहे मांगि लीन्हें अर्थ ब्रह्मादिकन आइ यह कह्यो कि कश्यप यह बिनती करयो है कि देव औ अदेवनको हमको बकसीस देव अर्थ इनको नाश ना करौ इहां अदेव पदते जे देवतनते अतिरिक्त प्राणी हैं दैत्य मनुष्यादि ते सब जानों यासों या जनायो कि जब रावण शिवकी पूजा करत है तब संहार करिबेकी शक्ति प्राप्ति होति है औ देव अदेवनको बकसाइकै कछू नई होमकी रीति सिखायो औ श्रुति (कान) में लागिकै कछू मंत्र दीन्हों याके आगे मोहिं या ओर पठायो औ ब्रह्मादिकनको लैकै प्रभु जो रावण है सो मंदिरको गया कहिबेको हेतु या जामें रामचन्द्र जानैं कि हमप्रति कोपसों रावण

सब देव औ अदेवको नाश करिवेको चाह्यो तिनको बकसाइ ब्रह्मादिकन कछु हमारि ही हानि हेत होम औ मंत्र सिखायो है है ॥ १७ ॥

दूत--संदेश ॥ सूर्पणखा जो बिरूपकरी तुम ताते कियो हमहूं दुख भारो । बारिधि बंधन कीन्हों हुतो तुम मो सुत बंधन कीन्हों तिहारो ॥ होइ जो होनी सो होइहीं रहै न मिटै जिय कोटि विचार विचारो । दै भृगुनंदनको परशा रघुनंदन सीतहि लै पगु धारो ॥१८॥ दोहा ॥ प्रति उत्तर दूतहि दियो, यह कहि श्रीरघुनाथ ॥ कहियो रावण होहिं जब, मंदोदरिके साथ ॥ १९ ॥ रावण-संयुताछंद ॥ कहिधौं बिलंब कहा भयो । रघुनाथपै जब तू गयो ॥ काहि भांति तू अवलोकियो । कहु तोहिं उत्तर का दियो ॥२०॥

टी०-सीताको हरिकै तुमको दुख दीन्हों अथवा सीताहीको भारी दुख दीन्हों परशुराम तौ धनुषबाण दियो है इहां रावण परशा मांग्यो तहां या जान्यो कि रावण सुन्यौ है कि रामचंद्र परशुरामको हाथियार छोरि लीन्हों है औ परशुरामको मुख्य हथियार परशाही है तासों परशा जान्यो ॥१८॥ रामचंद्र मंदोदरीकी बुद्धिकी स्तुति बिभीषणसों सुन्यौ है तालिये मंदोदरीके साथ कह्यो है अर्थ जो मंदोदरी इन बचननको सुनि है तो समय बिचारि ग्लानि दै रावणको लरिबेको पठाइ है अथवा जा मंदोदरी सहित रावण दुःख पावै अथवा कुंभकर्णादिके मरेसों रावण भीत ह्वै संधिके लिये दूत पठायो है ऐसा न होई कि आपही शरणमों चलि आवै जो हमको शरणागत रक्षकत्वधर्म प्रतिपालन करि रावणको रक्षतही बनै तालिये जो मंदोदरी इन वचनको सुनि है ता समय बिचारि ग्लानि दै लरिबेहीके लिये पठाइ है संधिके लिये ना पठाइ है ॥ १९ ॥ २० ॥

दूत-दंडक ॥ भूतलके इंद्र भूमि बैठे हुते रामचन्द्र मारिच कनकमृग छालहि बिछाये जू । कुंभहर कुंभकर्ण नाशा हरगोद शीश चरण अकंप अक्ष अरि उर लाये जू ॥ देवांतक नारांतक त्यों मुसक्यात बिभीषण बैन तनका न रूप बाये जू । मेघनाद मकराक्ष महोदरप्राण हर बाण त्यों विलोकत परम सुख पाये जू ॥ २१ ॥ रामसंदेश-विजयछंद॥ भूमि दई भुवदेवनको भृगुनंदन भूपनसों वर लैकै । वामन स्वर्ग दियो मघवै सो बली बलि बांधि पताल पठैकै ॥

संधिकी बातनको प्रतिउत्तर आपुनहीं कहिये हितकैकै ।
दीन्हीं है लंकबिभीषणको अब देहिं कहां तुमको यह
दैकै ॥ २२ ॥ मंदोदरी-मालिनी छंद ॥ तब सब कहिहारे
रामको दूत आयो। अब समुझि परी जो पुत्र भैया जुझायो॥
दशमुख सुख जीजै रामसों हौं लरौंयों । हरि हर सब
हारे देवि दुर्गा लरीज्यो ॥ २३ ॥

टी०-रावण पूंछेउ कि केहि भांति तू रामचंद्रको देख्यो है ताको उत्तर यामें दियो है कुंभहर औ कुंभकर्ण नाशहार सुग्रीव अकंप औ अक्षके अरि (हनुमान्) शत्रु हैं सत्रहें प्रकाशमें कह्यो है कि । जिने अकंपादि बलिष्ठ भारे संग्राममें अंगद बीर मारे ॥ यामें विरोध होत है तासों या जनायो दूसरो अकंप रह्यो ताको हनुमान मारचो है यथा वाल्मीकीये "स चतुर्दशभिर्बाणैर्निशितैर्दृहदारणैः । निर्बिभेद महावीरो हनुमंतमकंपनः । ततो वृक्षं समुत्पाट्य कृत्वा वेगमनुत्तमम् । शिरस्यभिजघानाशु राक्षसेन्द्रमकंपनम्। यथा पद्मपुराणे॥ जघान हनुमान्भूयो चतुर्थेहन्यकंपनम् ।" औ देवांतक नरांतके अंतक (अंगद) औ मेघनाद औ मकराक्ष महोदरके प्राणहार (लक्ष्मण) यह अति निर्भय समय स्वरूप जानौ ॥ २१ ॥ बर कहे बलसों या प्रकार अवतार धरि धरि हम तीनों लोक बांटि दियो अब तुमको यह जो परशा है ताको दैकै कहा कौन स्थान देहि जामें तुम रहौ परशुरामकी कथा कहि या जनायो कि जिन सहस्रार्जुन तुम्हें बांधि राख्यो तिनको हम क्षणमें मारचो तामनकी कथा कहि या जनायो कि जिन बलिकी दासिन पालसों तुम्हें गहिकै निकारि दीन्हों तिनको बांधिकै हम पाताल पठायो तैसे तुम-हूंको मारि बिभीषणको लंका देहैं ॥ २२ ॥ शुम्भ निशुम्भादिके युद्धमें हरि हरादि सब हारि गये हैं तब दुर्गा लरिकै मारचो है यह कथा मार्कंडेय-पुराणमें प्रसिद्ध है ॥ २३ ॥

रावण ॥ छल करि पठयो तो पावतो जो कुठारै । रघुपति
वपुराको धावतो सिंधुपारै ॥ इति सुरपति भर्ता विष्णुमाया
विलासी । सुनहिं सुमुखि तोको ल्यावतो लक्ष्मिदासी ॥२४॥
चामरछंद ॥ प्रौढरूढिको समूढ गूढगेहमें गयो । शुक्रमंत्र
शोधि शोधि होमको जहीं भयो ॥ वायुपुत्र वालिपुत्र जाम-

वंत धाइयो । लंकमें निशंक अंक लंकनाथ पाइयो ॥ २५॥ मत्त दंतिपंक्ति वाजिराजि छोरिकै दई । भांति भांति पक्षि रानि भाजि भाजिकै गई ॥ आसने बिछावने वितान तान तूरियो । यत्र तत्र छत्र चारु चौंर चारुचूरियो ॥ भुजंगप्र-यातछन्द ॥ भगी देखिकै शंकि लंकेशबाला । दुरी दौरि मंदोदरी चित्रशाला ॥ तहां दौरि गो वालिको पूत फूल्यो । सबै चित्रकी पुत्रिको देखि भूल्यो ॥ २६ ॥

टी०-सिंधुके पारै धावतो कहे भागि जातो सुरपति (इंद्र) तिनके भर्त्ता रक्षक औ मायाके विलासी जे विष्णु हैं तिनको हति कहे मारिकै तोकों लक्षि जो लक्ष्मी हैं ताको दासी ल्यावतो यासों या जनायो कि रामचंद्र जो करत हैं सो सब परशाहीके बलसों करत हैं यामें रामचंद्रकी शक्ति कछु नहीं है ॥ २४ ॥ प्रौढ जो धृष्टता है ताकी रूढि कहे परिपक्वता ताको समूढ कहे समूह अर्थ अति धृष्ट ऐसा जो रावण है सो यज्ञ करिबेको गूढगेहमों जात भयो मंदोदरीकी ऐसी कटु बातैं सुनि कछू लाज न कियो तासों अतिधृष्ट कह्यो " समूढः पुंजिते भुग्ने " इति मेदिनी ॥ सो शुक्रके मंत्रको शोधि कहे शुद्धोच्चार करिकै होमके अर्थ जब उद्यत भयो तब निशंक कहे शंकाते रहित है अंक (हृदय) जिनको ऐसे जे वायुपुत्रादि हैं ते धावत भये तब लंकनाथके जे अंक कहे राजाचिह्न हैं छत्र चामरादि तिन्हें पायो कहे देख्यो तब जान्यो कि याही मंदिरमें रावण ह्वै है तालिये या प्रकारको उपद्रव करयो सो आगे कहत हैं । ॥ २५ ॥ तान (डोरी) ॥ २६ ॥

गहै दौरि जाको तजै ताकि ताको । तजै जा दिशाको भजै बामताको ॥ भली कै निहारी सबै चित्रसारी। लहै सुंदरीको दरीको विहारी ॥ २७ ॥ तजै दृष्टिको चित्रकी सृष्टि धन्या । हँसी एक ताको तहीं देवकन्या ॥ तहीं हासही देवकन्या दिखाई । गही शंकिकै लंक रानी बताई ॥ २८ ॥

टी०-फूल्यो कहे आनन्दित जा पुतरीको अंगद दौरिकै गहत है ताको पुतरी जानि तजत है औ अंगद जा दिशाको तजत हैं ता दिशाको बाम कहे मंदोदरी भजति है अथवा जा दिशाको अर्थ जा दिशाकी पुतरिनको अंगद गहत हैं ता दिशामें अंगदको ताकिकै देखिकै ता दिशाको तजै कहे

छोडति है अर्थ ता दिशाकी पुतरिनको छोडति है औ जा दिशाको अंगद तजत हैं ता दिशाको मंदोदरी भजै कहे प्राप्त होतिहै अथवा भागति है दरी [कन्दरा] ॥ २७ ॥ धन्या कहे अति निपुण जो चित्रकी सृष्टि है दृष्टिको तजै कहे त्याग करति है अर्थ मंदोदरी पास दृष्टि नहीं जान देति मंदोदरीको नहीं देखन देति इति अथवा धन्या जो चित्रकी सृष्टि है नामें मंदोदरीकी दृष्टिको तजै कहे त्याग करति है अर्थ अपने पास नहीं आवन देति यह मंदोदरी है ये तौ ज्ञानदृष्टिमें नहीं होत इति भावार्थः । या प्रकार कौतुक देखिकै अंगदको एक देवकन्या हँसत भई सो हांसीसों देवकन्या अंगदको देखाइ कहे देखि परी तब ताहीको मंदोदरी जानि अंगद गही तब शंकिकै नाने लंकरानि जो मंदोदरी है ताको बतायो कहूं तहीं शंकिकै पाट है ॥ २८ ॥

सुआनी गहे केश लंकेशरानी । तमश्री मनों सूर शोभा निशानी ॥ गहे बाँह ऐंचें चहूँ ओर ताको । मनो हंस लीन्हे मृणालीलताको ॥ २९ ॥ छुटी कंठमाला लुरैं हार टूटे । खसैं फूल फूलेलसैं केश छूटे ॥ फटी कंचुकी किंकिणी चारु छूटी । पुरी कामकीसी मनो रुद्र लूटी ॥ ३० ॥ विना कंचुकी स्वच्छ बक्षोज राजैं । किधौं सांचहू श्रीफलै शोभ साजैं ॥ किधौं स्वर्णके कुंभ लावण्य पूरे । वशीकर्णके चूर्ण संपूर्ण पूरे ॥ ३१ ॥ मनो इष्ट देवै सदा इष्टहीके । किधौं गुच्छ द्वै कामसंजीवनीके ॥ किधौं चित्तचौगानके मूल सोहैं । हिये हेमके हालगोला बिमोहैं ॥ ३२ ॥ सुनी लंकरानीनकी दीन बानी । तहीं छांडि दीन्हो महामौनमानी ॥ उठ्यो सो गदा लै यदा लंकवासी । गये भागिकै सर्व शाखाविलासी ॥ ३३ ॥

मंदोदरी-दोहा ॥ सीतहि दीन्हो दुःख वृथा, सांचो देखो आजु ॥ करै जो जैसी त्यों लहैं, कहा रंक कहँ राजु ॥ ३४ ॥

टी०-सूर्यकी शोभानसों सानी मानो तमश्री [अन्धकारकी श्री] शोभा है तमश्रीसम बार हैं सुरशोभासम सिंदूर है इहां सिंदूर नहीं कह्यो सो उपमानते उपमेयको ग्रहण कियो अथवा सूरशोभासम अंगद हैं मृणाली लता सम बाहु हैं हंससम अंगदादि बानर हैं ॥ २९ ॥ ३० ॥ लावण्य [सुन्दरता

॥ ३१ ॥ सदा दुष्ट जो स्वामी रावण है ताके इष्ट देवै हैं अर्थ जैसे सब प्राणी इष्टदेवको हृदयमों बसाये रहत हैं तैसे रावणके मनमों सदा बसत हैं गुच्छ पुष्प गुच्छ कामसंजीवनी लतासम मंदोदरी है औ कि चित्त जे मन हैं तिनको जो चौगान खेल है ताको मूल कहे जर अर्थ कारण जो मंदोदरीको हियो कहे वक्षःस्थल है तामें शोहत है कहे सुवर्णके हालगोला कहे गेंद है अर्थ जैसे हलगोलानको खेलनहार आपनी आपनी ओर खैंचत हैं तैसे देखनहारनके चित्त इन कुचनको आपनी आपनी ओर खैंचत हैं मूल कहि या जनायो कि मनुष्य चौगान खेल खेलत हैं चित्त नहीं खेलत सो याहीते चित्तनको चौगान खेल नयो उत्पन्न भयो है सो जानो अथवा चित्त चौगानके मूल हालगोलानहींको विशेषण है चौगान खेल प्रसिद्ध है ॥ ३२ ॥ मौन ह्वै मन्त्रको जो जपत है ताको छोडि दीन्हों मानी कहे गर्वी यदा कहे जब ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

रावण-विजयछन्द ॥ को बपुरा जो मिल्यो है बिभीषण है कुलदूषण जीवैगो कौलौं । कुंभकरन्न मरचो मघवारिपु तारा कहा न डरौं यम सौलौं ॥ श्रीरघुनाथके गातानि सुंदरि जानै न तू कुशली तनु तौलौं । शाल सबै दिगपालनके कर रावणके करवाल है जौलौं ॥ ३५ ॥ चामरछंद ॥ रावणै चले चलेते धाम धामते सबै । साजि साजि साज सूर गाजि गाजिकै तबै ॥ दीह दुंदुभी अपार भांति भांति बाजहीं । युद्धभूमि मध्य क्रुद्ध मत्तदंति राजहीं ॥ ३६ ॥ चंचरीछंद ॥ इन्द्र श्रीरघुनाथको रथहीन भूतल देखिकै । वेगिसारथिसों कहेउरथ जाहि लै सुविशेषिकै ॥ तूण अक्षय बाण स्वच्छ अभेद लै तन त्राणको । आइयो रणभूमिमें करि अप्रमेय प्रमाणको ॥ ३७ ॥ कोटि भांतिन पोनते मनते महालघुतालसै । बैठिकै ध्वज अग्र श्रीहनुमंत अंतक ज्यों हँसै ॥ रामचन्द्र प्रदक्षिणा करि दक्ष ह्वै जबहीं चढे । पुष्प वर्षि बजाय दुंदुभि देवता बहुधा बढे ॥ ३८ ॥

टी०-तनु कहे रंचकहू कुशली ना जानै सरस्वती उक्तार्थाः ॥ हे सुन्दरि ! श्रीरघुनाथके गातानि करिकै मेरे तनको तू कुशली न जानै अर्थ मोको

रामचंद्र मारि हैं ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ तृण कहे तर्कस अक्षय कहे जाते बाण ना चुकैं ॥ ३७ ॥ लघुता शीघ्रता हनूमान ध्वज अग्रमें यासों चढे कि यह रथ कछू राक्षसन माया मा कियो होइ बढे [फूले] अर्थ आनंदित भये ॥ ३८ ॥

रामको रथ मध्य देखत क्रोध रावणके बढ्यो । बीस बाहुनकी शरावलि व्योम भूतलसों मढ्यो ॥ शैल ह्वै सिकता गये सब दृष्टिके बल संहरे । ऋक्ष बानर भेदि तत्क्षण लक्षधा क्षतना करे ॥ ३९ ॥ सुंदरीछंद ॥ बाणन साथ विधे सब बानर । जाय परे मलयाचलको धर ॥ सूरज मंडलमें एक रोवत । एक अकाशनदी मुख धोवत ॥ ४० ॥ एक गये यमलोक सहे दुख । एक कहैं भवभूतनसों रुख ॥ एकति सागरमांझ मरे मरि । एक गये वडवानलमें जरि ॥ ४१ ॥ मोटनकछंद ॥ श्रीलक्ष्मण कोप करयो जबहीं । छोडयो शर पावकको तबहीं ॥ जारयो शरपंजर छार करयो । नैर्ऋत्यनको आत चित्त डरयो ॥ ४२ ॥ दौरै हनुमंत बली बलसों । लै अंगद संग सबै दलसों ॥ मानों गिरि राज तजे डरको घेरै चहुंओर पुरंदरको ॥ ४३ ॥

टी०–सिकता [बारू] दृष्टिके बल कहे पराक्रम अर्थ अति बाणांधकारमों काहूको कछू देखि नहीं परत क्षतना कहे मधुमक्षिकादिकनके छाता जामें मधु रहत है ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ नैर्ऋत्य [राक्षस] ॥ ४२ ॥ पुरंदर इन्द्र सम रावण है गिरिराजनके सदृश अंगदादि हैं ॥ ४३ ॥

हरिच्छंद ॥ अंगद रण अंगन सब अंगन मुरझाइकै । ऋक्षपतिहि अक्षारिपुहि लक्षगति बुझाइकै ॥ बानरगण बाणन सन केशव जबहीं मुरयो । रावण दुखदावन जग पावन समुहे जुरयो ॥ ४४ ॥ ब्रह्मरूपकछंद ॥ इंद्रजीत जीत आनि रोकियो सुबाण तानि । छोंडि दीन वीर बानि कानके प्रमान आनि ॥ शिवप्रताप काढि चाप चर्म बर्म मर्म छेदि ।

जात भो रसातलै अशेष कंठमाल भेदि ॥ ४५ ॥ दंडकछंद ॥ सूरज मुसल नील पट्टिश परिघ नल जामवंत असि हनू तोमर प्रहारे हैं। परशा सुखेन कुंत केशरी गवय शूल बिभीषण गदा गज भिंदिपाल तारे हैं ॥ मोगरा द्विबिद तीर कटरा कुमुद नेजा अंगद शिला गवाक्ष विटप बिदारे हैं। अंकुश शरभ चक्र दधिमुख शेष शक्ति बाण तिन रावण श्रीरामचंद्र मारेहैं ॥ ४६ ॥ दोहा ॥ द्वै भुज श्रीरघुनाथसों, बिरचे युद्ध बिलास ॥ बाहु अठारह यूथपनि, मारे केशोदास ॥ ४७ ॥

टी०-रण अंगन कहे रणभूमिके मध्यमें अंगदको सब अंगनसों मुरझाइकै कहे मूर्च्छित करिकै अर्थ सर्वांग शिथिल करिकै लक्ष कहे निशानकी गतिसों बुझाइकै कहे समुझाइकै अर्थ निशानासम बेधिकै औ और जो बानरगणनसों जब मुरै तौ न रामचन्द्रके समुहैं जुरचो अर्थ लरन लग्यो ॥४४॥ बीरबानि कहे बीरस्वभावसों चर्म [ढाल] बर्म [बखतर] मर्म [मर्मस्थल] ॥ ४५॥ सूरज [सुग्रीव] शेष [लक्ष्मण] ॥ ४६ ॥ श्रीरामचन्द्रसों धनुर्बाणसों लरत है तासों एक हाथ बाणमें एक धनुषमें लग्यो है तासों द्वै भुज जानों ॥ ४७ ॥

गंगोदकछंद ॥ युद्ध जोई जहां भांति जैसी करै ताहि ताही दिशा रोंकि राखै तहीं। आपने अस्त्र लै शस्त्र काढै सबै ताहिकेहू कहूं घाव लागै नहीं॥ दौरि सौमित्र लै बाण कोदंड ज्यों खंड खंडी ध्वजा धीर छत्रावली। शैलशृंगावली छोडि मानों उडी एकही बेरकै हंसवंशावली ॥ ४८ ॥ त्रिभंगी छंद ॥ लक्ष्मण शुभ लक्षण बुद्धि बिचक्षण रावणसों रिस छोडि दई। बहु बाणनि छंडै जे शिर खंडै ते फिर खंडै शोभ नई॥ यद्यपि नरपंडित गुणगणमंडित रिपुबलखंडित भूलि रहै। तजि मन बच कायक सूर सहायक रघुनायकसों बचन कहै ॥ ४९ ॥ ठाढो रण गाजत केहु न भाजत तन मन लाजत सब लायक। सुनि श्रीरघुनंदन मुनि जनबंदन दुष्टनिकंद

न सुखदायक ॥ अब टरै न टारचो मरै न मारचो हौं हठि हारचो धरि शायक। रावण नहिं मारत देव पुकारत ह्वै अति आरत जगनायक ॥ ५० ॥

टी०-ज्यों धनुषगुण शैलशृंग सदृश रावण शिर हैं हंसवंशावलीसदृश श्वेत छत्र हैं ॥ ४८ ॥ रिपुबल करिकै खंडित हैं रणपांडित्यादि जाके ऐसे जे लक्ष्मण हैं ते भूलि रहे कहे आश्चर्ययुक्त ह्वै रहे हैं तासों मनसा, वाचा, कर्मणा, रावणसों लरिबो तजिकै ॥ ४९ ॥ मैं तन औ मनसों लज्जित होत हौं ॥ ५० ॥

राम-छप्पै ॥ जेहि शर मधुमद मरदि महासुर मर्दन कीन्हेंउ। मारेहु कर्कश नर्क शंख जो लीन्हेंउ ॥ निष्कंटक सुरकंटक करचो कैटभ वपु खंडचो। खर दूषण त्रिशिरा कबंध तरु खंड विहंडचो ॥ कुंभकर्ण ज्यहि संहरचो पल न प्रतिज्ञाते टरौं। तेहि बाण प्राण दशकंठके कंठ दशौं खंडित करौं ॥ ५१ ॥ दोहा ॥ रघुपति पठयो आसुही, असुहर बुद्धि निधान ॥ दशशिर दशहू दिशनको, बलि द आयो बान ॥ ५२ ॥ मदनमनोरमाछंद ॥ भुवभारहि संयुत राक-सको गण जाइ रसातलमैं अनुराग्यो। जगमैं जयशब्दसमै तिहि केशव राज बिभीषणके शिर जाग्यो ॥ यम दानवनंदि-निके सुखसों मिलिकै सियके हियको दुख भाग्यो। सुर दुंदुभिसी सँग जा शर रामको रावणको शिर साथहि लाग्यो ॥ ५३ ॥ मंदोदरी-विजयछंद ॥ जीति लिये दिग-पाल शचीके उसासन देवनदी सब सूकी। बासरहू निशि देवनकी नरदेवनकी रहे संपति ठूकी ॥ तीनहुं लोकनकी तरुणीनकी बारी बंधीहु तौ दंड दुहूकी। सेवत श्वान शृगाल सो रावण सोवत सेज परे अब भूकी ॥ ५४ ॥

टी०--कर्कश (कठोर) तरुखंड [सप्ततार] ॥ ५१ ॥ असुहर [प्राण-हर] ॥ ५२ ॥ मयदानवनंदिनि [मंदोदरी] [सहोक्ति अलंकार है]

॥ ५३ ॥ सदा रावणके भयसों स्वर्गसों भागे जे इन्द्र हैं तिनके बिरहसों शची [इंद्राणीके] जे उष्ण उसास हैं तिनसों देवनदी [आकाशगंगा] सब सूकी कहे सूखि गई ॥ ५४ ॥

राम-तारकछंद ॥ अब जाहु बिभीषण रावण लैकै । सकलत्र सबंधु क्रिया सब कैकै ॥ जन सेवक सम्पति कोश सँभारो । मयनंदिनिके सिगरे दुख टारो ॥ ५५ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचान्द्रिकायामिंद्रजिद्विरचितायां रावणवधवर्णनं नामैकोनविंशः प्रकाशः ॥१९॥

टी०-जनसेवक कहे सेबक जन अथवा जन [बंधुजन] सेवक [चाकर] संपत्ति अश्व, गज, वस्त्रादि कोष खजाना ॥ ५५ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायामेकोनविंशः प्रकाशः ॥ १९ ॥

दोहा ॥ या बीसयें प्रकाशमैं, सीता मिलन विशेषि ॥ ब्रह्मादिककी स्तुति गमन, अवधपुरीको लेषि ॥ १ ॥ प्राग वरणि अरु वाटिका, भरद्वाजकी जानि ॥ ऋषि रघुनाथ मिलाप कहि, पूजा करि सुख मानि ॥ २ ॥ श्रीराम--तारकछंद ॥ जय जाय कहो हनुमंत हमारो।सुख देवहु दीरघ दुःख बिदारो॥ सब भूषणभूषित कै शुभ गीता । हमको तुम बेगि दिखावहु सीता ॥ ३ ॥ हनुमंत गये तहहीं जहँ सीता । तब जाय कही जयकी सब गीता ॥ पग लागि कह्यो जननी पगु धारो । मग चाहत हैं रघुनाथ तिहारो ॥ ४ ॥ सिगरे तन भूषण भूषित कीने । धरिकै कुसुमावलि अंग नवीने ॥ द्विजदेवनि बंदि पढी शुभ गीता । तब पावक अंक चली चढि सीता ॥ ५ ॥ भुजंगप्रयातछंद ॥ सवस्त्रा सबै अंग शृंगार सोहैं । विलोके रमा देव देवी बिमोहैं ॥ पिता अंक ज्यों धन्यका शुभ्र गीता । लसै अग्निके अंक त्यों शुद्ध सीता ॥ ६ ॥

टी०-॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ सीताको बंदि कहे वंदना करिकै देवतन द्विज ब्राह्मण, समान शुभ गीता कहे मंगलपाठ पढ्यौ अर्थ जैसे गमन

समयमों ब्राह्मण मंगलपाठ पढत हैं तैसे सीताजूको रामचन्द्रके पास गमनमें देव पढत भये अथवा द्विज औ देवन औ बंदीजन शुभगीता पढत भये औ जो अग्निके अंकमें बैठिकै सीता आई सो लोकके देखाइबेको तौ शुद्धताकी साक्षि दियो औ जो सीताकी देह कनककुरंगके आगमनमें रामचन्द्र अग्निको सौंप्यौ रहै ता देहकी थातीसम रामचन्द्रके दीबेको अग्नि ल्याये हैं सो जानौ ॥ ५ ॥ ६ ॥

महादेवके नेत्रकी पुत्रिकाशी । कि संग्रामकी भूमिमें चंडिकासी ॥ मनो रत्नसिंहासनस्था शची है । किधौं रागिनी रागपूरे रची है ॥ ७ ॥ गिरी पूरमें है पयोदेवतासी । किधौं कंजकी मंजु शोभा प्रकाशी ॥ किधौं पद्महीमें सिफाकन्द सोहे । किधौं पद्मके कोष पद्मा विमोहे ॥ ८ ॥ कि सिन्दूरशैलाग्रमें सिद्धकन्या । किधौं पद्मिनी सूरसंयुक्त धन्या ॥ सरो चासनाहै मनो चारुबानी । जपापुष्पके बीच बैठी भवानी ॥ ९ ॥ मनो ओषधिवृन्दमें रोहिणीसी । कि दिग्दाहमें देखिये योगनीसी ॥ धरापुत्र ज्यों स्वर्णमाला प्रकाशै ॥ मनों ज्योतिसी तच्छका भोग भासै ॥ १० ॥ सुरेन्द्रवज्राछंद ॥ आसावरी प्राणिककुंभ शोभै अशोकलग्ना वनदेवतासी । पालाशमाला कुसुमालि मध्ये वसन्तलक्ष्मी शुभलक्षणासी । आरक्तपत्रा शुभचित्रपुत्री मनो विराजै अति चारुवेषा ॥ संपूर्णसिंदूरप्रभावसकैधौं गणेशभालस्थलचंद्ररेखा ॥ ११ ॥

टी०—जहां केवल रत्नपद पाये तहां अरुणही रत्नको बोध होत है यह कविनियम है रागदीपकादि अथवा अनुराग प्रेम इति ॥ ७ ॥ गिरा सरस्वतीके पूर कहे जलसमूहमेंकी पयो देवता कहे जल देवता है औ कि गिरापूरमें कंजकी शोभा है अर्थ कि कमल है सरस्वतीको जल अरुण प्रसिद्ध है ॥ "पूरो जलसमूहे स्यात्" इति मेदनी ॥ ८ ॥ सूर जे सूर्य हैं तिनसों संयुक्त मिली पद्मिनी कमलिनी हैं सूरसम अग्नि है कमिलिनी सम सीता हैं इहां अरुण सरोज जानौ ॥ ९ ॥ चन्द्रमा औषधीश है औ रोहिणी चंद्रमाकी स्त्री है ता संबंधसों जानौं औषधिनको अग्निसम ज्वलन प्रसिद्ध है धरापुत्र मंगलके जैसे स्वर्णमाला प्रकाशै कहे शोभै, धरापुत्र सम अग्नि

हैं स्वर्णमाला सम सीता हैं भोगिफल तक्षकको अरुणवर्ण प्रसिद्ध है ॥१०॥ आसावरी रागिनी अशोक वृक्षमें लग्ना कहे संलग्न स्थित इति जो वनदेवता हैं ताके सम हैं अशोक वृक्षको अरुणवर्ण है ॥ ११ ॥

विजयछंद ॥ है मणि दर्पणमें प्रतिबिंबाकि प्रीति हिये अनुरक्त अभीता । पुंजप्रतापमें कीरतिसी तपतेजनमें मनों सिद्ध विनीता ॥ ज्यों रघुनाथ तिहारि ये भक्ति लसै उर केशवके शुभ गीता । त्यों अवलोकिय आनँदकंद हुताशन मध्य सुवासन सीता ॥ १२ ॥ दोहा ॥ इन्द्र वरुण यम सिद्ध सब, धर्मसहित धनपाल ॥ ब्रह्म रुद्र लै दशरथहि, आय गये तेहि काल ॥ १३ ॥ अग्नि-वसंततिलकाछंद ॥ श्रीरामचन्द्र यह संतत शुद्ध सीता । ब्रह्मादि देव सब गावत शुभ्र गीता ॥ हूजै कृपाल गहिजै जनकात्मजाया । योगीश ईश तुम हो यह योगमाया ॥ १४ ॥ श्रीरामचन्द्र हँसि अंक लगाइ लीन्हा । संसार साक्षि शुभ पावक आनि दीन्हों ॥ देवान दुंदुभि बजाय सुगीत गाये । त्रैलोक्यलोचन चकोरनि चित्र भाये १५ ॥

टी०-कि अनुरक्त कहे अनुरागी हृदयमों अभीता (निश्चला) प्रीति है विनीता (उत्तमा) ॥ १२ ॥ १३ ॥ योगीश जे महादेव हैं तिनके ईश कहे स्वामी तुम हौ अर्थ विष्णु हौ औ यह जो सीता है सो योगमाया [लक्ष्मी] है पुनरुक्ति,'नित्यं वक्षसि योगं प्राप्नोतीति योगमाया लक्ष्मीः' अर्थ विष्णुके वक्षस्थलमें सदा युक्त रहति है तासों योगमाया नाम है योगमाया कहि या जनायो कि यह तौ सदा तुम्हारे वक्षस्थलमें प्राप्त रहति है कहूं रंचकहू भिन्न नहीं होति तासों अदोष है ॥ १४ ॥ श्रीरामचन्द्र कह्यो है तासों त्रैलोक्य लोचन चकोर कह्यो ॥ १५ ॥

ब्रह्मा-दोधकछंद ॥ राम सदा तुम अन्तर्यामी । लोक चतुर्दशक आभिरामी ॥ निर्गुण एक तुम्हैं जग जानै । एक सदा गुणवन्त बखानै ॥ १६ ॥ ज्योति जगै जगमध्य तिहारी । जाइ कही न सुनी न निहारी ॥ कोउ कहै परिमान न ताको । आदि न अन्त न रूप न जाको ॥ १७ ॥ तारकछंद ॥ तुम हो गुण

रूप गुणी तुम ठाये ॥ तुम एकते रूप अनेक बनाये ॥ एक है जो रजोगुणरूप तिहारो । त्यहिं सृष्टि रची विधिनाम विहारो ॥ १८ ॥ गुण सत्त्व धरे तुम रक्षत जाको । अब विष्णु कहैं सिगरे जग ताको ॥ तुमहीं जग रुद्रस्वरूप सहँारो । काहिये तिन मध्य तमोगुण भारो ॥ १९ ॥

टी०—अन्तर्यामी कहे सबके अन्तरमें व्याप्त रहतहौ अभिरामी कहे रमता अर्थ चौदहौं लोकमें रमत हौ या जगके एकै प्राणी (वेदांती) तुमको निर्गुण कहे रक्ष, रज सत्त्व तमोगुण तीनों करिकै रहित ज्योतिरूप जानत हैं औ एकै सदा रज सत्त्व तमोगुण युक्त ब्रह्मादिरूप बखानत हैं ॥ १६ ॥ यामें निर्गुण रूप कहतहैं कहो नाहिं जाइ इत्यादिसों या जनायो जहां इन्द्रियको गमन नहीं ॥ १७ ॥ अब सगुण कहत हैं सत्त्वादि तीनों गुण-रूप तुमही हौ औ गुण ब्रह्मादिरूप तुमहीं हौ रजो गुणरूप कहे रजोगुणयुक्त रूप ॥ १८ ॥ जाको कहे जा सृष्टिको ॥ १९ ॥

तुमहीं जग हौ जग है तुमहींमैं । तुमहीं विरची मर्याद दुनीमैं ॥ मर्यादहि छोंडत जानत जाको । तबहीं अवतार धरो तुम ताको ॥ २० ॥तुमहीं धर कच्छप वेष धरेजू । तुम मीन ह्वै वेदनको उधरेजू ॥ तुमहीं जग यज्ञवराह भयेजू । क्षिति छीनि लई हिरण्याक्ष हयेजू ॥ २१ ॥ तुमहीं नरसिंहको रूप सँवारचो । प्रहलादको दीरघ दुःख विदारचो ॥ तुमहीं बलि बावनवेष छल्योजू । भृगुनंदन ह्वै क्षितिछत्र दल्योजू ॥ २२ ॥ तुमहीं यह रावण दुष्ट सँहारचो । धरणीमहँ बूडत धर्म उबारचो ॥ तुमहीं पुनि कृष्णको रूप धरौगे । हति दुष्टनको भुवभार हरौगे ॥ २३ ॥ तुम बौद्धस्वरूप दयादि धरौगे । पुनि कल्कि ह्वै म्लेच्छसमूह हरौगे ॥ यहि भाँति अनेक स्वरूप तिहारे । अपनी मर्यादके कार्य सँवारे ॥ २४॥ महादेव—पङ्कजवाटिकाछन्द ॥ श्रीरघुवर तुम हौ जगनायक । देखहु दशरथको सुखदायक ॥ सोदर सहित पिता पद पावन । वंदन किय तबहीं मनभावन ॥ २५ ॥

टी०-विराटरूप सो जग तुमहीं हौ और यह जग तुमहींमें बसतहै "यथा कविप्रियायां, शेष धरे धरणी विधि केशव जीव रचे जग जेते । चौदह लोक समेत तिन्हैं हरिके प्रति रोमनमें चितये ते" ॥ ताको कहे ताके बधको ॥ २० ॥ धर कहे पर्वत अर्थ समुद्र मथन समय मंदराचलको कच्छरूप ह्वै पृष्ठमें धारण कियो ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ अनेक और स्वरूप व्यासादि जानो ॥ २४ ॥ २५ ॥

दशरथ-निशिपालिकाछंद ॥ राम सुत धर्मयुत सीय मन मानिये । बन्धु जन मातुगन प्रानसम जानिये ॥ ईश सुरईश जगदीश सम देखिये । राम कहँ लक्ष्मण विशेष प्रभु लेखिये ॥ २६ ॥ रामचन्द्र-चञ्चलाछन्द ॥ जूझि जूझिकै गये वानरालि ऋक्षराजि । कुम्भकरण लोकहरण भक्षियो जे गाजि गाजि ॥ रूप रेखस्यो विशेषि जी उठैं करौ सो आज । आनि पाइँ लागियो तिन्हैं समेत देवराज ॥ २७ ॥ दोहा ॥ वानर राक्षस ऋक्ष सब, मित्र कलत्रसमेत ॥ पुष्पक चढि रघुनाथजू, चले अवधिके हेत ॥ २८ ॥

टी०-हे राम ! सुत ! सीताको धर्मयुत मनमें मानो अर्थ सीता निर्दोष हैं जो संदेह करो कि हम ग्रहण करैं हमारे बंधु आदि गृहजन कैसे ग्रहण करिहैं तौ बंधुजन भरतादि औ मातुगण कौशल्यादिकनकी सम जानो जैसे कोऊ प्राणनका त्याग आपुसों नहीं करत तैसे सीताको त्याग वे ना करिहैं या प्रकार रामचन्द्रको शिक्षा दै लक्ष्मणसों कहत हैं कि हे लक्ष्मण! रामचन्द्रको ईश (महादेव) सुरईश (विष्णु) जगदीश (ब्रह्मा) के सम देखौ कहे जानो इनको विशेषिकै प्रभु स्वामी लेखौ अर्थ स्वामी सम इनकी सेवा करौ बंधुसम न जानो इति भावार्थः ॥ २६ ॥ रूप (स्वरूप) रेख (चिह्न) तिनसों स्यो कहे सहित जो उठैं सो उपाय करौ या प्रकार रामचन्द्र देवराज जे इंद्र हैं तिनसों कह्यो सो रामचन्द्रकी आज्ञासों संजीवनी आदि उपायसों सबको जियाइकै रामचन्द्रके आइ पाइँ लगे ॥ २७ ॥ भरतकी प्रतिज्ञा है कि जो चौदह वर्षमें रामचन्द्र ना ऐहैं तौ हम नहीं जीहैं ता अवधि कहे मर्यादाके लिये पुष्पकमें चढि अतिशीघ्र अथवा अवधि चले (अयोध्या) ॥ २८ ॥

चञ्चरीछन्द ॥ सेतु सीतहि शोभना दरशाइ पञ्चवटी गये । पाँइ लागि अगस्त्यके पुनि अत्रियैते बिदा भये ॥ चित्रकूट बिलोकिकै तबही प्रयाग विलोकियो । भरद्वाज बसैं जहां जिनते न पावन है बियो ॥२९॥ राम-तारकछन्द ॥ चिलकै द्युति सूक्षम शोभति बारू । तनु ह्वै जनु सेवत हैं सुर चारू ॥ प्रतिबिम्बत दीप दिपै जलमाहीं । जनु ज्वालमुखीनके जाल-नहहीं ॥ ३० ॥ जलकी द्युति पीत सितासित सोहै । चहुँ पातक घात करैयक को है ॥ मद ऐणम लै खसि कुंकम नीको । नृप भारत खण्ड दियो जनु टीको ॥ ३१ ॥

टी०-वियोग कहे दूसरो ॥ २९ ॥ तनु कहे सूक्ष्म ॥ ३० ॥ एक कहे केवल जो बहुत पातक है ताके घात कहे नाश करैको कहे करिबेके अर्थ ऐणमद जो कस्तूरी है औ मलय (चंदन) औ कुंकुम (केशरिको) घसिकै भारतखंडरूपी जो नृप राजा है ताने मानों मारण तिलक दियो है जाको देखतही पातकनको नाश होत है औरों राजा शत्रुके नाश करिबेके मारण तिलक शिरपें देते हैं जाके देखतही शत्रु मरत हैं मारणमोहनोच्चाटनादि षट्कर्मकी तिलकादि क्रिया मंत्रशास्त्रमों प्रसिद्ध है भारतखंडवासिनको पातक दरिद्रादि पीडा करत हैं सोइ शत्रुता जानों ॥ ३१ ॥

लक्ष्मण-दंडक ॥ चतुरवदन पंचवदन षटवदन सहसवदनहु सहस गति गाई है । सात लोक सात द्वीप सातहू रसातलनि गंगाजीकी शोभा सबहीको सुखदाई है ॥ यमुनाको जल रह्यो फैलिकै प्रवाह पर केशोदास बीच बीच गिराकी गोराई है । शोभान शरीरपर कुंकुमविलेपनको श्यामल दुकूल झीन झलकति झाई है ॥ ३२ ॥ सुग्रीव-चंद्रकला ॥ भवसागरकी जनु सेतु उजागर सुंदरता सिगरी सबकी । तिहुँ देवनकी द्युतिसी दरशै गति शोषै त्रिदोषनके रसकी ॥ कहि केशव वेदत्रयी मतिसीपरितापत्रयी तलको मसकी । सब

बंदैं त्रिकाल त्रिलोक त्रिलोक त्रिवेणिहिं केतु त्रिविक्रमके जसकी ॥ ३३ ॥

टी०-चतुरवदन [ब्रह्मा] पंचवदन [शिव] षटवदन [स्वामिकार्तिक] सहस्रवदन [शेष] तिनकारिकै सहसगति कहे सहस्र प्रकारसों गाई है अथवा सहसगति कहे सहस्रधारा सात लोक भू, अंतरिक्षादि, सात द्वीप जंबूद्वीपादि, सात रसातल अतल, बितलादि ॥ ३२ ॥ सेतुसम जाके मग प्राणी भवसागर पार होत हैं तीनों देव ब्रह्मा, विष्णु, महेश, त्रिदोष वात, पित्त कफको जो रस कहे बल है ताकी गतिको शोषती है अर्थ कफ, पित्त, वात, दुःखद दोषकृत जो मृत्यु है तासों बचावति है ऐसी त्रिदेवनकी द्युतिहू है बेणीहू है वेदत्रयी ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, त्रयी, परिताप आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविकको तलको अधोभागको मसकी कहे दबायो है अर्थ पठायो है ऐसी वेद मतिहू बेणीहू है त्रिविक्रम कहे बामनजू तीनि पैगसों तीनों लोक नाप्योहै तिन तीनि पादविक्षेपको त्रिरूप पताकाहै ॥ ३३ ॥

बिभीषण-दंडक ॥ भूतलकी वेणीसी त्रिवेणी शुभ शोभिजाति एक कहैं सुरपुरमारग बिभात है । एक कहैं पूरण अनादि जो अनंत कोऊ ताको यह केशोदास द्रवरूप गात है ॥ सब सुखकर सब शोभाकर मेरे जान कौनो यह अद्भुत सुगंध अवदात है । दरश परशहूते थिरचर जीवनको कोटि कोटि जन्मकी कुगंध मिटि जात है ॥ ३४ ॥ भुजंगप्रयातछंद ॥ भरद्वाजकी बाटिका राम देखी । महादेवकैसी बनी चित्त लेखी ॥ सबै वृक्ष मंदारहूते भले हैं । छहू कालक फूल फूले फले हैं ॥ ३५ ॥ कहूं हंसिनी हंससों चित्त चोरैं । चुनै ओसके बुंद मुक्तानि भोरैं ॥ शुकाली कहूँ सारिकाली विराजैं । पढैं वेदमंत्रावली भेद साजैं ॥ ३६ ॥

टी०-कुगंध पदते पातक जानौं ॥ ३४ ॥ महादेवकी बाटिकासी बनी चित्तमें लेप्यो मंदार (कल्पवृक्ष-विशेष) छहू काल (छह ऋतु) ॥ ३५ ॥ कहूं हंससों कहे हंस सहित हंसिनी मुक्तानके भोरे कहे भ्रमसों ओसके बुंद चुनती हैं सो सबके चित्तको चोरावती हैं यासों हंसनकी मदमत्तता जनायो

वेदमंत्रावलीके जे भेद साजैं हैं तिन्हैं पढती हैं अर्थ अनेक प्रकारके मंत्र ऋषिनके पढत सुनत हैं तिन्हैं शिष्य ताही विधि आप पढत हैं ॥ ३६ ॥

कहूं वृक्षमूलस्थली तोय पीवैं । महामत्त मातंग सीमा न छावैं॥ कहूं विप्रपूजा कहूं देवअर्चा । कहूं योगशिक्षा कहूँ वेदचर्चा ॥ ३७ ॥ कहूं साधु पौराणकी गाथ गावैं । कहूं यज्ञकी शुभ्र शाला बनावैं ॥ कहूं होम मंत्रादिके धर्म धारैं । कहुं बैठिके ब्रह्मविद्या विचारैं ॥ ३८ ॥ आसु ई जहां देखिये वक्ररागी । चले पिप्पले तिच्छ बुध्ये सुभागी ॥ कँपैं श्रीफलैं पत्र हैं पत्र नीके । सुरामानुरागी सबै रामहीके ॥ ३९ ॥

टी०—कहूं महामत्त मातंग वृक्षकी मूलस्थली (थाल्हा) में तोय (जल) पीवत हैं परन्तु वृक्षनकी औ थाल्हनकी सीमा (मर्यादा) नहीं छुवत अर्थ वृक्ष औ थाल्हनको तोरते बिदारते नहीं है ॥ ३७ ॥ पौराणसम्बन्धिनी ब्रह्मविद्या (वेदांत) ॥ ३८ ॥ वक्र कहे मुख हैं रागी कहे अरुण जिनके ऐसे शुक हैं और काहू ऋषिको मुख तांबूलके रागयुक्त नहीं है यतीको ताम्बूल भक्षण निषिद्ध है तासों ॥ " विधवाना यतीनां च तांबूलं ब्रह्मचारिणाम् । एकैकं मांसतुल्यं स्यान्मिलितं मदिरासमम् ॥ " सभागी कहे भाग्यवान् अर्थ अति वृद्ध युक्त अति बडे इति; श्रीफल कहे कदलीके जे पत्र हैं तेई जहां कांपत है यासों या जनायो की सभागी तौ सब हैं ये और कोऊ काहू भयसों कंपत नहीं हैं औ सबै रामानुरागी हैं परन्तु रामा जो स्त्री हैं ताके अनुरागी नहीं हैं रामचन्द्रके अनुरागी हैं ॥ ३९ ॥

जहां वारिदै वृन्द बाजानि साजै । मयूरै जहां नृत्यकारी विराजैं ॥ भरद्वाज बैठे तहां विप्र मोहैं । मनों एकही वक्रलोकेश सोहैं ॥ ४० ॥ लक्ष्मण—दंडक ॥ केशोदास मृगजबछेरू चूषैं बाघिनीन चाटत सुरभि बाघ बालक वदन है । सिंहनकी सटा ऐंचैं कलभ कर निकरि सिंहनको आसन गयंदको रदन है ॥ फणीके फणनपर नाचत मुदित मोर क्रोधन बिराध जहां मदन मदन है । वानर फिरत डोरे डोरे अंघतापशनि शिवको समाज कैधौं ऋषिको सदन है ॥ ४१ ॥

टी०—तहां ता आश्रममों विप्रनके बीचमों बैठे अनेक इतिहासादि कहि

विप्रनके मनको मोहत हैं इत्यर्थः । लोकेश (ब्रह्मा) ॥ ४० ॥ मृगजब छेरू [मृगबालक] सटा [ग्रीवाके बार] डोरे डोरे कहे डोल डोल अंध तापस कहे बडे तपस्वी यासों बानरको ऋषिनके ताडनसों अति निर्भयता जनायो अथवा अंध कहे आंधरे जो तापस कहे तपस्वी हैं तिनके डारे कहे हाथको गहे अर्थ जहां जाइबेकी इच्छा करत हैं तहां वानर पढाइ आवतहैं, औ शिवके समाजमें मृगजबछेरू पदते चन्द्रमाके रथके हारिण जानौं अथवा और अनेक गणके मृगबाहन हैं यथा तुलसीकृतरामायणे "नाना वाहन नाना वेषा । हरषे शिवसमाज जिन देखा ॥" औ सुरभि पदते महादेवको बाहन वृषभ जानौं औ वाघबालक पदते काहू गणको बाहन बाघ जानौं औ सिंह पदते देवीको वाहन सिंह जानौं अथवा दूनों पदते सिंहही जानौं औ गयंदपदते गणेश जानौं औ फणी महादेव धारण करे हैं मोर स्वामिकार्त्तिकको बाहन है अंधतापस कहे तापस वेषधारी जे आंधरे गण हैं यथा तुलसीकृत रामायणे ॥ " विपुल नयन कोउ नयनबिहीना ॥ " औ बानर पदते बानरमुखगण जानौ यथातुलसीकृतरामायणे । खरश्वानशूकरशृगालमुखगण वेषअगणित कोगनै । जैसे शिवके समाजमें स्वाभाविक विरोधी जीव अविरुद्ध रहत हैं तैसे आश्रमहूंमें रहत है इति भावार्थः ॥ ४१ ॥

भुजंगप्रयातछन्द ॥ जहां कोमलै वल्कलै बास सोहैं । जिन्हैं अल्पधी कल्पसाषी बिमोहैं ॥ धरे शृंखला दुःख दाहै दुरंतै । मनों शम्भुजी संग लीने अनंतै ॥ ४२ ॥

टी०--यामें आश्रमके ऋषिजननको वर्णन है जहां जा आश्रममें ऋषिनके कोमल बल्कलहीनके वस्त्र सोहत हैं परन्तु जिनको देखि अल्पधी [लघुबुद्धि] अर्थ स्पर्द्धायुक्त है बुद्धि जिनकी ऐसे जे कल्पशाखी [कल्पवृक्ष] हैं ते बिमोहैं. कहे मोहित होत हैं अथवा अल्पकी धी कहे बुद्धिसों अर्थ हम इनसों लघु हैं या बुद्धिसों मोहत हैं केवल वचनहीसों एतो देत है जे तो कल्पवृक्षनहूंको मोह होत है कि हमहूं इनसम न भये; अथवा [कल्पसाक्षी] पाठ होइ तौ जिनको देखि अल्पकी धी करिकै अर्थ हम इनसों लघु हैं या बुद्धिसों कल्पासाक्षी जे कल्पांतयोनि [मार्कंडेय] आदि हैं ते मोहत हैं औ केवल शृंखला जो कठिन बंधन है ताको धारण करे हैं परन्तु दुरंत कहे बडे जे ओरनके दुःख हैं तिनको दाहै कहे नाश करत हैं अर्थ ऐसे ऐसे आचार्य कृत्यनसों युक्त हैं । " शृंखला पुष्कटी वस्त्रबन्धे ॥ निगडे त्रिषु " इति मेदिनी ॥ महादेव, अनंत जे शेष हैं

तिनको संगमें लीन्हें हैं धारण करे हैं औ ऋषिजन अनंत जे भगवान हैं तिनके ध्यानसों अथवा कथनसों संगमें लीन रहते हैं ॥ ४२ ॥

मालिनीछंद ॥ प्रशमितरज राजै हर्ष वर्षा समैसे । बिरल जठन शाखी स्वर्नदी कूल कैसे ॥ जगमग दरशाई सूरके अंशु ऐसे ॥ ४३ ॥ गहे केश पाशै प्रियासी बखानों । कँपै शापके त्रासते गात मानों ॥ मनो चंद्रमा चंद्रिका चारु साजैं । जरासों मिले यों भरद्वाज राजैं ॥ ४४ ॥

टी०—फेरि कैसे हैं ऋषिजनसो कहत हैं वर्षासमयमें रज जो धूरि है सो प्रशमित कहे नष्ट राजति है ऋषिनके रजोगुण सब ऋषि सत्वगुणी हैं इति भावार्थः। स्वर्नदी [गंगा] के कूलको साखी [वृक्ष] विरल कहे प्रगट जटा जे जरे हैं तिनसहित हैं इहां स्वर्नदीकूलको साखी कहि अति पावनताहू जनायो अथवा स्वर्नदी उपलक्षणमात्र है नदीमात्रके कूलको जानो नदीके प्रवाहके बेगसों जरै खुलि जाती हैं प्रसिद्ध है औ ऋषिजन जटा जे लग्न भये कच हैं तिन सहित हैं ॥ "जटा लग्नकचे मूले" इति मेदिनी ॥ सूरके अंशु [किरण] जगके जे मग [राह] हैं तिनके दरशाई [देखावनहार] हैं औ ऋषि यमलोकके जे ब्रह्म दोषादि स्वर्गलोकके यज्ञादि इत्यादि सब लोकनके मग दरशाई है राम नामके जपसों स्वर्ग नरकको भोग मिटत है मुक्ति होती है ऋषिजन ज्ञानोपदेश करि स्वर्ग नरकको भोग दूरि करि मोक्षको प्राप्त करत हैं औ जो सब चरणनके अंतमें सो, पाठ होइ तौ केवल भरद्वाजहीको वर्णन है ॥ ४३ ॥ जरा जो वृद्धता है सो भरद्वाजके केशपाश गहे है तासों प्रिया कहे अतिप्रिया स्त्रीसम बखानियत है प्रियाहू अतिप्यारसों धृष्टता करि पतिके केश गहति है सो केश गहिबो अनुचित समुझि ऋषि शाप न देहिं याही त्राससों मानो ताके गात कांपत हैं जो कहो अंग तौ भरद्वाजके कांपत हैं वृद्धताके कैसे कह्यो तौ भरद्वाजके अंगनमें मिले वृद्धताके अंग कांपत हैं ताहीमों भरद्वाजहूके अंग कांपत हैं कहेते भरद्वाजके अंगनमें प्रथम कंप नहीं रह्यो तासों जानौं चंद्रसम ऋषि हैं चंद्रिकासम शुक्ल जरा है अर्थ जरायुक्त शुक्ल बार हैं ॥ ४४ ॥

दोहा ॥ भस्म त्रिपुंडक शोभिजैं, बरणत बुद्धि उदार ॥ मनो त्रिस्रोतासोतद्युति, वंदत लगी लिलार ॥ ४५ ॥ मुजं

गप्रयातछन्द ॥ मनो अंकराली लसै सत्यकीसी। किधौं वेद विद्या प्रभाई भ्रमीसी ॥ रमै गंगकी ज्योति ज्यों जह्नुनीकी। बिराजै सदा शोभ दंतावलीकी ॥ ४६ ॥

टी०-त्रिस्रोता [गंगा] कहूं "वंदति" पाठ है तहां या अर्थ कि त्रिस्रो ताके सोतनकी द्युति लिलारमें लगी भरद्वाजको बंदति है अर्थ सेवति है ॥ ॥ ४५ ॥ सत्यको रंग श्वेत है प्रभा [शोभा] भ्रमी कहे भरद्वाजको मुख रूपी शुभस्थान पाइकै आश्चर्ययुक्त ह्वै रहीहै अर्थ प्रसन्न ह्वै रहीहै ज्यों कहे जानों जन्हु ऋषिके मुखमें नीकी गंगाकी ज्योति रमति है जह्नुऋषि गंगाको पान कियो है सो कथा प्रसिद्ध है ॥ ४६ ॥

गीतिकाछन्द ॥ भ्रुकुटी बिराजति श्वेत मानहु मंत्र अद्भुत सामके। जिनके बिलोकतही बिलात अशेष कर्मज कामके ॥ मुख बास आश प्रकाश केशव भौंरभीरन साजहीं। जनु सामके शुभ स्वक्ष अक्षर ह्वै सपक्ष बिराजहीं ॥ ४७ ॥ तनु कम्बुकण्ठ त्रिरेख राजति रज्जुसी उनमानिये। अविनीत इंद्रिय निग्रही तिनके निबंधन जानिये ॥ उपवीत उज्ज्वल शोभिजै उर देखि यों वरणैं सबै। सुरआपगा तपसिंधु भे जस श्वेत श्री दरशै अबै ॥ ४८ ॥

टी०-[सामवेद] काम जो कंदर्प है ताके जे कर्म हैं परस्त्री गमनादि तिनते जे कहे उत्पन्न जे वस्तु हैं अम (पातक) ते अशेष कहे संपूर्ण बिलात हैं अथवा काम जो हैं शुभ अशुभ अभिलाष तिनके जे कर्म हैं तिनते जे कहे उत्पन्न बस्तु हैं अर्थ स्वर्ग नरक भोग शुभ अभिलाषके कर्मनसों स्वर्गभोग उत्पन्न होतेहैं, अशुभ अभिलाषके कर्मनसों नरक भोग उत्पन्न होत हैं, ते दुवौ बिलात हैं अर्थ जिनको देखि प्राणी स्वर्ग, नरकभोगसों भिन्न होत हैं अंतमें मुक्तिपावत हैं; प्रथम कह्यो है कि, स्वर्ग नरकहंता नाम श्रीराम कैसो। औ सामके मंत्रके पुरश्चरणसों कामके कर्मज बिलात हैं इनके देखतही तासों अद्भुत कर्यो बास सुगंध ॥ ४७ ॥ कंबु सदृश कंठमें तनु सूक्ष्म त्रिरेख राजति है ताहि रज्जु कहे जेवरीसम अनुमानियत है सो जेवरी काहेके लिये है अविनीत कहे आशिक्षित अर्थ आज्ञा टारि अभिलाषित बात कर्त्ता जे इंद्रिय नेत्रादि हैं तिनके निग्रही

कहे ताडन कर्त्ता अर्थ दुःखद निबंधन कहे बंधन है तपसिंधु (भरद्वाज) हैं सुरआपगा (गंगा) के तीनों सोतसम उपवीतके तीनों सूत्र हैं सिंधुमें मिलिबो नदीको धर्म है ॥ ४८ ॥

दोहा ॥ फटिकमाल शुभ शोभिजै, उर ऋषिराज उदार ॥ अमल सकल श्रुतिवरणमय, मनों गिराको हार ॥ ४९ ॥ सुंदरीछंद ॥ यद्यपि है रसरूप रस्यौ तनु । दंडाहिंसो अवलंबित है मनु ॥ धूमशिखानके व्याज मनों गुनि । देवपुरीकहँ पंथ रच्यौ मुनि ॥ ५० ॥ रूप धरे वडवानलको जनु । पोषत हैं पयपानहिंसो तनु ॥ क्रोध भुजंगममंत्र बखानहुँ । मोह महातमकेर विमानहुँ ॥ ५१ ॥

टी०—श्रुतिबर्ण (वेदाक्षर) सम स्फटिक गुरिया हैं औ भरद्वाजकी बाणी (सरस्वती) डोरासम है अर्थ सरस्वतीमें गुहिकै मानों वेदाक्षरनहीकी माला पहिरे हैं ॥ ४९ ॥ वृद्धतासों चलिबेके लिये दंड लिये हैं तामें तर्क करत हैं कि ऋषिको तनुरूप रस पदते रूप, रस, गंध, शब्द, स्पर्श, पांचौं इंद्रिनके पांचौं विषय जानों तिनकरिकै कहे तिनकी वासना करिकै रह्यो कहे व्यै गयो है रहित भयो है इति अर्थ वृद्धतासों नेत्रादि इंद्रिनसों रूपादि विषयकी वासना टरि गई है ताहूपर मानों दंडसों अवलंबित कहे युक्त है दंडपद श्लेष है दंड कहे निग्रह औ लकुट औ अग्निहोत्राग्निको आहुतिसों नित्यहीं प्रज्वलित कियो करत हैं तामें तर्क है कि धूमशिखा जो अग्नि है ताके व्याज मानों देवपुरीको पंथ (राह) बनायो है ॥ ५० ॥ पय (दुग्ध) औ (जल) ॥ ५१ ॥

सत्य सखा असखा कलिके जनु । पर्वत औषधि सिद्धिनके मनु ॥ पाप कलापनके दिन दूषण । देखि प्रणाम कियो जगभूषण ॥ ५२ ॥ पद्धटिकाछंद ॥ सीतासमेत शेषावतार । दंडवत किये ऋषिके अपार ॥ नरवेष बिभीषण जामवंत । सुग्रीव बालिसुत हनूमंत ॥ ५३ ॥ ऋषिराज करि पूजा अपार । पुनि कुशल प्रश्न पूंछी उदार ॥ शत्रुघ्न भरत कुशली निकेत । सब मित्र मन्त्रि मातन समेत ॥ ५४ ॥ भरद्वाज॥

कह कुशल कहौं तुम आदिदेव । सब जानत हौ संसार भेव ॥ विधि विष्णु शंभु रवि शशि उदार । सब पावकादि अंशाव तार ॥ ५५ ॥ ब्रह्मादि सकल परमाणु अंत । तुमहीं हौ रघुपति अज अनंत ॥ अब सकल दान दे पूजि विप्र । पुनि करहु विजय वैकुंठ क्षिप्र ॥ ५६ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचंद्रचंद्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां रामस्य भरद्वाजाश्रमगमनं नाम विंशः प्रकाशः ॥ २० ॥

टी०-सत्य कहे सत्ययुग औषधे सम जे आठौं सिद्धि हैं तिनके पर्वत हैं जैसे पर्वतमें औषधी रहती हैं तैसे ऋषिमें आठौं सिद्धि रहती हैं कलाप (समूह) जगभूषण [रामचंद्र] ॥ ५२ ॥ प्रथम दूरसों करनसों प्रणाम कियो पाछें निकट जाइ दंडवत्प्रणाम करयो ॥ ५३ ॥ पुनि कहे फिर ऋषिकी पूजा किये पर रामचंद्र कुशलप्रश्न पूछत भये ॥ ५४ ॥ अंशावतार कहे तुम्हारे अंशावतार हैं ॥ ५५ ॥ "जलांतरगते भानौ यत्सूक्ष्मं दृश्यते रजः । तस्य षष्ठितमो भागः परमाणुः स उच्यते ॥" बिजय कहे हमारे इहां भोजन करौ वैकुंठ ! रामचन्द्रको संबोधन है "विष्णुर्नारायणः कृष्णो वैकुंठो विष्टरश्रवाः" इत्यमरः ॥ ५६ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां विंशतितमः प्रकाशः ॥ २० ॥

दोहा ॥ इकईसयें प्रकाशमें, कह ऋषि दानविधान ॥ भरत मिलन कपि गुणनको, श्रीमुख आप बखान ॥ १ ॥ श्रीराम-सोमराजीछंद॥ कहा दान दीजै । सुकै भांति कीजै ॥ जहां होहिं जैसो । कहो विप्र तैसो ॥ २ ॥ भरद्वाज-दोहा ॥ सात्त्विक तामस राजसी, दान तीनि विधि जानि ॥ उत्तम मध्यम अधम पुनि, केशवदास बखानि ॥ ३ ॥ चंचरी छंद ॥ पूजिये द्विज आपने कर नारिसंयुत जानिये । देवदेवहि थापिकै पुनिवेद मंत्र बखानिये ॥ हाथ ले कुश गोत्र उच्चरि स्वर्ण-

युक्त प्रमानिये । दान ले कछु और दीजहि दान सात्त्विक जानिये ॥ ४ ॥

टी०-॥ १ ॥ कहा कहे कौन वस्तु कै भांति कहे कै प्रकारसों दान कीजै दान पदको संबंध याहूमों है ॥२॥३॥ देवदेव जे विष्णु हैं तिनहिं स्थापिकै कहे तिनके अर्थ फल समर्पण करिकै अथवा ब्राह्मणको देवहि (विष्णुहि) थापिकै कहे मानिकै अथवा देवदेवकी स्थापना करिकै सुवर्णसों युक्त कुश हाथमें लैकै गोत्रको उच्चरिकै वेदके मंत्रसों दान फेरि कछू और दीजै अर्थ सांगतादान दीजै दानके बादि जो दान दियो जात है सो सांगतादान कहावतहै ॥ ४ ॥

दोधकछंद ॥ देहि नहीं अपने कर दानैं । औरके हाथ जो मंगल जानै ॥ दानहिं देत जो आरसु आवै । सो वह राजस दान कहावै ॥ ५ ॥ बिप्रन दीजत हीन बिधानैं । जानहुँ ताकहँ तामस दानै ॥ बिप्रन जानहुँ जै नररूपै । जानहुँ ये सब विष्णुस्वरूपै ॥ ६ ॥ श्लोक ॥ साचारो वा निराचारो साधुर्वासाधुरेव च । अविद्यो वा सविद्यो वा ब्राह्मणो मामकी तनुः ॥ ७ ॥ तोमरछंद ॥ द्विज धाम देहिं जो जाइ । बहु भाँति पूजि सुराइ ॥ कछु नाहिं नै परिमान । कहिये सो उत्तम दान ॥ ८ ॥ द्विजको जो देत बोलाइ । कहिये सो मध्यम राइ ॥ गुनि याचनामिस दानु । अतिहीन ताकहँ जानु ॥ ९ ॥

टी०-॥५॥ बिप्रनको जग रूपै कहे जगतके सदृशै जै कहे जनि जानहुँ ॥ ६ ॥ पाछे कह्यो कि बिप्रनको विष्णुस्वरूपै जानौं ताको विष्णु वाक्यसों पुष्ट करत हैं विष्णु कह्यौ है कि ब्राह्मण कहे आचार सहित होइ और अर्थ सुगम है मामकी कहे हमारो तनु कहा है ॥ ७ ॥ ताकी उत्तमताको कछू प्रमाण नहीं है ॥ ८ ॥ अतिहीन कहे अधम ॥ ९ ॥

श्लोक ॥ अभिगम्योत्तमं दानमाहूतं चैव मध्यमम् । अधमं याच्यमानं स्यात्तत्तेवादानं तु निष्फलम्॥ १० ॥ दोहा ॥ प्रति-दिन दीजत नेमसों, ताकहँ नित्य बखान ॥ कालहि

पाइ जो दीजिये, सो नैमित्तिक दान ॥ ११ ॥ श्लोक ॥ आश्रितं साधु कर्माणं ब्राह्मणं यो व्यतिक्रमेत्। तस्य पुण्य-चयोप्याशु क्षयं याति न संशयः ॥ १२ ॥ तोटकछंद ॥ पहिले निजवर्तिन देहु अबै। पुनि पावहिं नागर लोग सबै ॥ पुनि देहु सबै निज देशिनको। उबरो धन देहु विदेशिनको ॥ १३ ॥ दोधकछंद ॥ दान सकाम अकाम कहे हैं। पूरि सबै जगमांझ रहेहैं ॥ इच्छितही फल होत सकामैं। राम-निमित्त ते जानि अकामैं ॥ १४ ॥

टी०--अभिगम्य कहे ब्राह्मणके घरमें जाइकै जो दान है सो उत्तम है औ आहूत कहे ब्राह्मणको बोलायकै जो दान है सो मध्यम है औ याच्यमान कहे जब ब्राह्मण मांगै आइ तब जो दान है सो अधम है औ सेवादान कहे जब ब्राह्मण सेवा करै तब जो दान है सो निष्फल है अर्थ यामें कछू पुण्य नहीं है ॥ १० काल पाइ अर्थ चन्द्र सूर्य ग्रहणादि समयमों ॥११ ॥ अपनो आश्रित जो साधुकर्मा ब्राह्मण है ताको जो व्यतिक्रमेत् कहे व्यतिक्रम करत है अर्थ तिन्हैं छोडि औरको दान देत है ताको पुण्यचय कहे पुण्यसमूह आशु कहे शीघ्र ही " क्षयं याति " कहे क्षयको प्राप्त होता है यामें संशय नहीं अपि शब्दते या जनायो कि थोरी पुण्य तौ क्षयको प्राप्त होतिही है ॥ १२ ॥ आश्रितको व्यतिक्रम न कियो चाहिये तासों पहिले निज कहे आपने वर्ती कहे आश्रितनकी देहु औ " निजवृत्तिन " पाठ होइ तौ निज कहे आपने इहां है दानहीसों वृत्ति कहे जीविका जिनकी नागर कहे नगरवासी ॥ १३ ॥ १४ ॥

दानते दक्षिण बाम बखानों। धर्मनिमित्त ते दक्षिण जानों ॥ धर्मविरुद्ध ते बाम गुनौ जू। दान कुदान सबै ते सुनौ जू ॥ १५ ॥ देहु सुदानते उत्तम लेखो। देहु कुदान तिन्हैं जनि देखो ॥ छांडि सबै दिन दानहिं दीजै। दानहिंते सबके मत लीजै ॥ १६ ॥ दोहा ॥ केशव दान अनंत हैं, बनैं न काहू देत ॥ यहै जानि भूव भूप सब, भूमि दानही देत ॥ १७ ॥ श्लोक ॥ यत्किंचित्कुरुते पापं ज्ञानतोऽज्ञा-

नतोऽपि वा । अपि गोचर्ममात्रेण भूमिदानेन शुध्यति ॥ १८ ॥ सप्तहस्तेन दंडेन त्रिंशद्दंडैर्निवर्तनम् । दश तान्येव गोचर्म दत्त्वा स्वर्गे महीयते ॥ १९ ॥ अन्यायेन कृता भूमिर्यैर्नरैरपहारिता । हरंतो हारयंतश्च हन्यते सप्तमं कुलम् ॥ २० ॥ राम--दोहा ॥ कौनहि दीजै दानु भुव, हैं ऋषिराज अनेक ॥ देहु सनाढ्यन आदि दै, आये सहित विवेक ॥ २१ ॥ श्रीराम–उपेंद्रवज्राछन्द ॥ कहौ भरद्वाज सनाढ्य को हैं । भये कहांते सब मध्य सोहैं ॥ हुते सबै विप्र प्रभावभीने । तजे ते क्यौं ये अतिपूज्य कीने ॥ २२ ॥

टी०–मारणोच्चाटनादिके लिये जो दान है सो धर्मविरुद्ध जानौ अथवा वेश्यादिके अर्थ दान ॥ १५ ॥ सबके। मीमांसकादिकनके मत कहे समस्त अर्थ समस्त फलको लीजै कहे पाइयत है अर्थ मीमांसकादिकनके मत है कि यज्ञादिसों ऐहिक पारलौकिक फल होत है सो सब फल दानहीसों पाइयत है तासों सबको यज्ञादिकनको छोडिकै दिनप्रति दानहीको दीजै ॥ १६ ॥ १७ ॥ यत्कहे जो ज्ञानतः कहे जानिकै अज्ञानतः कहे विनजाने कोऊ प्राणी किंचित्कह कछु पापं कहे पाप जो है ताहि कुरुते कहे करत है, सो प्राणी गोचर्ममात्रेण भूमिदानेन कहे गोचर्ममात्र भूमिदान करत संते शुद्ध होत है अपि शब्दको अर्थ यह कि अधिक भूमिदान करै तासों तौ शुद्ध यामें गोचर्मको लक्षण कहत हैं ॥ १८ ॥ सप्तहस्तेन दंडेन कहे सात हाथके दंडकरिके त्रिंशद्दंडैः कहे तीस दंड करत संतेनिवर्तन संज्ञक भूमिक्षेत्र होत है हस्तप्रमाण दुइसैदश औ दश तान्येव कहे तेई निबर्त्तनहीं एक गोचर्म संज्ञक क्षेत्र होत है हस्तप्रमाण इकीससै २१०० सो गोचर्म प्रमाणहूं भूमिको दत्त्वा कहे दैकै स्वर्ग कहे स्वर्गको महीयते कहे जात है ॥ १९ ॥ यैर्नरैः कहे जिन नरन करिकै अन्यायेन कहे न्याव बिनाही भूमिहृता कहे हरि गई औ जिन नरन करिकै अपहारिता कहे हराई गई ता भूमि करिकै हरंतः कहे हरनहार औ हारयंतः [हरावनहार] ते हन्यते कहे पीडाको प्राप्त होत हैं अर्थ सो भूमि तिनको पीडा करती है औ " तेषां सप्तमं कुलमपि हन्यते " अर्थ ताही भूमि करिकै तिनके सातपुस्त पर्यंत पितर पीडाको प्राप्त होत हैं अर्थ जे दानकी भूमिको निर्दोष छोरत हैं औ वृथापबाद कहि छोरावत हैं सो भूमि तिनको औ तिन दुहुनके सप्तपुस्त पर्यंत पितरनको

पितृलोकमें पीडा करति है ॥ २० ॥ ऋषि कह्यो सनाढ्यनको दान देहु कहेते इन सनाढ्यनको आदिही सों अस अर्थ जबसों इनकी उत्पत्ति है तबहीसों तुम विवेक सहित दै आये हौ ॥ २१ ॥ २२ ॥

भरद्वाज ॥ गिरीश नारायणपै सुनीत्यों । गिरीश मोसों जो कही कहौं त्यों ॥ सुनो सो सीतापति साधु चर्चा । करी सो जाते तुम ब्रह्म अर्चा ॥ २३ ॥ नारायण-मोटनछंद ॥ मोते जल नाभिसरोज बढ्यो । ऊंचो अतिउग्र अकाश चढ्यो ॥ ताते चतुरानन रूप रयो । ब्रह्मा यह नाम प्रगट्ट भयो ॥२४॥ ताके मनते सुत चारि भये । सोहैं अति पावन वेदमये ॥ चौहूं जनके मनते उपजे । भुवदेव सनाढ्य ते मोहिं भजे ॥ दीन्हो तुमही तिन जो हितजू । ह्वै हो तुम ब्रह्म पुरोहितजू ॥ २५ ॥

टी०-गिरीश (महादेव) जाति कहे जा कारणते तुम ब्रह्म अर्चा कहे सनाढ्य ब्राह्मणनकी पूजा करी है अथवा ब्रह्म जे तुम हौ ते सनाढ्यनकी अर्चा आदिहीसों करी है ॥ २३ ॥ २४ ॥ यह छंद छह चरणको है चारि सुत सनक, सनन्दन, सनातन, सनत्कुमार वेदमये कहे वेदस्वरूप ये नारायणके वचन शिव प्रति हैं तिन्हें कहिके द्वै चरणनसों भरद्वाज रामचन्द्रसों कहत हैं कि हे रामचन्द्र ! नारायणरूप जे तुम हौ तिनहीं तिनको हितसों यह वचन दियो है वचन इति शेषः ॥ कि तुम ब्रह्म कहे परब्रह्मके पुरोहित ह्वै हौ ॥२५॥

गौरीछंद ॥ ताते ऋषिराज सबै तुम छांडो । भूदेव सनाढ्यनके पद मांडो ॥ दीन्हो तुमहीं तिनको बरु रूरे । चौहूं युग होहु तपोबल पूरे ॥ २६ ॥ उपेंद्रवज्राछन्द ॥ सनाढ्यपूजा अघओघ हारी । अखंड आखंडल लोकधारी ॥ अशेष लोकावधि भूमि चारी । समूल नाशे नृप दोषकारी ॥२७॥ श्रीराम--तोटकछंद ॥ हनुमन्त बली तुम जाहु तहां । मुनिवेष भरत्थ बसंतजहां ॥ ऋषिके हम भोजन आजु करैं । पुनि प्रात भरत्थहिं अंकभरैं ॥ २८ ॥ चतुष्पदी-छंद ॥ हनुमंत विलोके भरत सशोके अंग सकल मल धारी । बकला पहिरे तन शीश जटा गण हैं फल-

मूल अहारी॥ बहु मंत्रिन गणमें राजकाजमें सब सुख सो हित तोरे। रघुनाथपादुका तन मन प्रभु कारि सेवत अंजुलि जोरे २९॥

टी०—ब्रह्मपुरोहित होवेको इन्हैं तुम्हारोई वर है औ तुम ब्रह्म हौ ताते कहे ता हेतुते ॥ २६ ॥ अखंड कहे पूर्ण आखंडललोकधारी कहे इन्द्रलोकको धरणहारी है जो कोऊ सनाढ्यनकी पूजा करत है ताको पूर्ण इंद्रलोक देतिहै इति भावार्थः। अशेषलोकाबधि कहे चौदहों लोक पर्यन्त जो भूमि कहे स्थान हैं तिनमें चारी कहे गमनकारी है अर्थ चौदहोंलोकमें सनाढ्यनकी पूजा सब करत है अथवा चौदहों लोकनमें नैनमारग, श्रवणमारग है गमन करति हैं अथ चौदहौं लोकनमें विदित है॥ २७ ॥ बीसयें प्रकाशमें भरद्वाज कह्यो है कि अब करहु बिजय वैकुंठ छिप्र या प्रकार निमंत्रण दियो है तासों रामचन्द्र हनूमानसों कहत हैं कि आज ऋषिको निमंत्रण है तासों ऋषिके इहां भोजन करि प्रात भरतपास नन्दिग्राममें आइ हैं॥ २८ ॥ २९ ॥

हनुमान ॥ सब शोकनि छांडौ भूषण मांडौ कीजे विविधि बधाये। सुरकाज सँवारे रावण मारे रघुनन्दन घर आये ॥ सुग्रीव सुयोधनसहित बिभीषण सुनहुँ भरत शुभ गीता। जयकीरति ज्यों सँग अमल सकल अँग सोहत लक्ष्मण सीता ॥ ३० ॥ पद्धटिकाछंद ॥ सुनि परम भावती भरत बात। भये सुख समुद्रमैं मगन गात ॥ यह सत्य किधौं कछु स्वप्न ईश। अब कहा कह्यो मोसन कपीश ॥ ३१ ॥ जथे चकोर लीलै अँगार। त्यहि भूलि जाति सिगरी सँभार ॥ जी उठत उबत ज्यौं उदधिनंद। त्यों भरत भये सुनि रामचन्द्र ॥ ३२ ॥ ज्यों सोइ रहत सब शूरहीन। अतिहै अचेत यद्यपि प्रवीन ॥ ज्यों उबत उठत हँसि करत भोग। त्यों राम चन्द्र सुनि अवधि लोग ॥ ३३ ॥ मालिनीछंद ॥ जहँ तहँ गज गाजैं दुंदुभी दीह बाजैं। बहु वरण पताका स्यंदनाश्वादि राजैं ॥ भरत सकल सेनामध्य यों वेष कीने। सुरपति जनु आये मेघमालानि लीने ॥ ३४ ॥ सकल नगरबासी भिन्न

सेनानि साजैं । रथ सुगज पताका झुंडझुंडानि राजैं ॥ थल थल सब शोभैं शुभ्र शोभानि छाई । रघुपति सुनि मानों औधिसी आज आई ॥ ३५ ॥ चामरछंद ॥ यत्र तत्र दास ईश व्योमते बिलोकहीं । वानरालि रीछराजि दृष्टि सृष्टि रोकहीं ॥ ज्यों चकोर मेघ ओघमध्य चंद्र लेखहीं । भानुके समान जान त्यों विमान देखहीं ॥३६॥ मदनमनोहरदंडक॥ आवत विलोकि रघुवीर लघुवीर तजि व्योमगति भूतल बिमान तब आइयो । रामपदपद्म सुखसद्म कहँबंधु युग दौरि तब षटमदसमान सुख पाइयो ॥ चूमि मुख सूंघि शिर अंक रघुनाथधरि अश्रु जललोचनानि पेखि उर लाइयो । देव मुनिवृद्ध परासिद्ध सब सिद्धजन हर्षि तन पुष्प वर्षानि वरषाइयो ॥ ३७ ॥

टी०-माँडौ कहे पहिरौ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ उदधिनंद (चन्द्रमा) ॥३२ ॥ ॥ ३३ ॥ स्यंदन (रथ) अश्व (घोडे) आदि पदते पालकी आदि और जानौं ॥ ३४ ॥ थल थलमें सकल नगरबासी कैसे शोभित हैं कि अनेक प्रकारके भूषण बस्त्रादिकी शोभानसों छायो रघुपतिको आगमन इति शेषः। सुनिकै मानों अवधपुरीहीसी आई है ॥ ३५ ॥ वानरनकी आलि कहे पंक्ति औ ऋक्षनकी राजि पंक्ति है सो पुरवासिनकी दृष्टिकी जो सृष्टि कहे ताको रोकत है अर्थ आगे वानर ऋक्ष उडत आवत हैं तासों रामचन्द्र नहीं देखि परत भानु कहे सूर्यरूपी जो यान कहे वाहे वाहन हैं तामों चढयो चंद्रमाको जैसे मेघ ओघ कहे मेघ समूहमें चकोर लेखै ताही विधि भानु (सूर्य) सम जान [पुष्पक] में रामचन्द्रको वानरनके मध्यमें पुरवासी देखत हैं यामें [अभूतोत्प्रेक्षा] है दूसरो अर्थ सुगम है ॥ ३६ ॥ अंक कहे गोदमें धरि लियो कहे बैठारि लियो फेरि लोचननमें अश्रु देखि अति प्रीतिसों उरमें लाइ लियो ॥ ३७ ॥

दोहा ॥ भरत चरण लक्ष्मण परे, लक्ष्मणके शत्रुघ्न ॥ सीता पग लागत दियो, आशिष शुभ शत्रुघ्न ॥ ३८ ॥ मिले भरत अरु शत्रुहन, सुग्रीवहि अकुलाइ ॥ बहुरि बिभीषणको मिले, अंगदको सुखपाइ ॥ ३९ ॥ अभीरछंद ॥ जामवंत

नल नील। मिले भरत शुभशील ॥ गवय गवाक्ष गयंद। कपि-कुल सब सुखकंद ॥ ४० ॥ ऋषि वशिष्ठको देखि । जन्म सफल करि लेखि॥ राम परे उठि पाय। लक्ष्मणसहित सुभाय ॥ ४१ ॥ दोहा ॥ लै सुग्रीव बिभीषणहिं, करि करि विनय अनंत ॥ पाँयन परे बशिष्ठके कविकुल, बुधिबलवंत ॥४२॥ श्रीराम-पद्धटिकाछंद ॥ सुनि जै वशिष्ठ कुल इष्ट देव । इन कपिनायकके सकल भेव ॥ हम बूडतहैं बिपदासमुद्र । इन राखि लियो संग्राम रुद्र ॥ ४३ ॥

टी०-जब भरत शत्रुघ्न सीताके पद लागे तब सीताजू आशिष दियो कि शत्रुघ्न कहे शत्रुनको मारौ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ कपिनायक (सुग्रीव) संग्राममें रुद्र कहे भयंकर ॥ ४३ ॥

सब आसमुद्रकी भू शोधाइ। तब दई जनकतनया बताइ ॥ निज भाइ भरत ज्यों दुखहरण। अतिसमर अमर हत्यो कुँभकरण ॥ ४४ ॥ इन हरे बिभीषण सकल शूल । मन मानत हौं शत्रुघ्नतूल ॥ दशकंठ हनत सब देवसाखि। इन लिये एक हनुमंत राखि ॥ ४५ ॥ तजि तिय सुत सोदर बंधु ईश। मिले हमहिं काय मन वच ऋषीश ॥ दई मीचु इन्द्र-जितकी बताय। अरु मंत्र जपत रावण देखाय ॥ ४६ ॥ तोटकछंद ॥ इन अंगद शत्रु अनेक हने। हम हेतु सहे दिन दुःख घने ॥ बहु रावणको सिख ही दुखलै। पुनि आये भले सिय भूषण लै ॥ ४७ ॥

टी०-शोधाइ कहे ढुंढाइके कुंभकर्णको तो रामचन्द्रही मारयो है परंतु कुंभकर्णकी नासा, श्रवण, प्रथम सुग्रीव काटि लियो है ताही समयमें रामचन्द्र मारयो है ताको मारिबो सुग्रीव ही पर स्थापित करत हैं अमर कहे काहूके मारिबे लायक नहीं ॥ ४४ ॥ जब मेघनाद ब्रह्मपाशमें हनुमानको बांधि लैगयो है तब रावण हनूमानके बध करिबेकी आज्ञा राक्षसनको दियो है तब बिभीषण "दूत मारिये न राज छोडि दीगई" ऐसे वचन कहि हनूमानको बचायो है सो कथा चौदहें प्रकाशमों है ॥ ४५ ॥ सोदर [कुंभकर्ण] बंधु [ज्ञातिसमूह] ईश रावणके मंत्र जपत समय अंगदादि

गये हैं ता समय बिभीषणके कछू बचन नहीं हैं तौ इहां रामचन्द्रकी उक्तिसों जानो बिभीषणहीके बताये सों अंगदादि गये हैं ॥ ४६ ॥ हम हेतु कहे हमारे हेतु ॥ ४७ ॥

दशकंधके जाय जो गूढ थली । तिनके तनसों बहु भांति दली ॥ महिमैं मयकी तनया कर्षी । मति मारि अंकपनको हर्षी ॥ ४८ ॥ दोहा ॥ मारचो मैं अपराध बिन, इनको पितु गुणग्राम ॥ मनसा वाचा कर्मणा, कीन्हे मेरे काम ॥ ४९ ॥ गीतिकाछंद ॥ इन जामवंत अनेक राक्षस लक्षलक्षनहीं हने । मृगराज ज्यौं बनराजमैं गजराज मारतनी गने ॥ बलभावना बलवान कोटिक रावणादिक हारहीं । चढि व्योम दीह बिमान देव दिवान आनि निहारहीं ॥ ५० दोहा ॥ करै न करिहै करत अब, कोऊ ऐसो कर्म ॥ जैसे बांध्यो नल उपल जलनिधि सेतु सधर्म ॥ ५१ ॥ गीतिकाछंद ॥ हनुमन्त ये जिन मित्रता रविपुत्रसों हमसों करी । जलजाल काल कराल माल उफाल पार धरा धरी ॥ निश्शंक लंक निहारि रावण धामधामनि धाइयो । यक बाटिका तरुमूलसी नहिं देखिकै दुख पाइयो ॥ ५२ ॥

टी०-गूढस्थली [जयस्थान] तिनके अंगदके तनसों कर्षी कहे खैंची कठोरि इति औ अकंपनको मारिकै इनकी मति हर्षि (प्रसन्न) भई ॥४८॥ ॥ ४९ ॥ लक्षलक्षनही अर्थ एक एक बारमें लाख लाख मारचोहै बनराज कहे बडो बन बलभावता कहे बलक्रिया हारही कहे हारत भये यहां भूतार्थमें वर्त्तमान प्रत्ययको अर्थ है ॥ ५० ॥ उपल (पाषाण) सधर्म कहे यथोचित ॥ ५१ ॥ कालहूते कराल जे नक्रादि जंतु हैं तिनको है माल कहे समूह जामें ऐसों जो जलजाल कहे समुद्रको जलसमूह है ताके पारकी धरा पृथ्वीको उफाल कहे कूदिबो ताही सों धरी कहे प्राप्त भये अर्थ एतो बडो समुद्र ताके पार कूदिहीकै गये काहू पोतादिमें नहीं गये इति भावार्थः॥५२॥

तरु तोरि डारि प्रहारि किंकर मंत्रिपुत्र सँहारियो । रण मारि अक्षकुमार रावण गर्वसों पुर जारियो ॥ पुनि सौंपि सीतहिं

मणि शीशकी जब पाइयो । बलवन्त नांधि अनंत सागर तैसही फिरि आइयो ॥ ५३ ॥ दशकंठ देखि बिभीषणै रण ब्रह्मशक्ति चलाइयो । करि पीठि त्यों शरणागतै तब आप वक्षासि लाइयो ॥ एक याम यामिनिमैं गयो हति दुष्ट पर्वत आनिकै । त्याहि काल लक्ष्मणको जिआइजियाइयो हम जानिकै ॥ ५४ ॥ दोहा ॥ अपने प्रभुको आपनो, कियो हमारो काज ॥ ऋषिजु कहौ हनुमंतसों, भक्तनको शिरताज ॥ ५५ ॥ चामरछन्द ॥ वीर धीर साहसी बली जे विक्रमी क्षमी । साधु सर्वदा सुखी तपी जपी जे संयमी ॥ भोगभाग योगयाग वेगवन्त है जिते । वायुपुत्र रामकाज वारि डारिये तिते ॥ ५६ ॥ दोहा॥ सीता पाइ रिपु हत्यो, देख्यो तुम अरु गेहु ॥ रामायण जपसिद्धिको, कपिशिर टीका देहु॥ ॥ ५७ ॥ दोहा ॥ यहि विधि कपिकुलगुणनको, कहत हुते श्रीराम.॥ देख्यो आश्रम भरथको, केशव नन्दीग्राम ॥ ५८ ॥

टी०--अनंत कहे बडो ॥ ५३ ॥ दुष्टपदते कालनेमि जानो लक्ष्मणको जियाइ हम कहे हमैं जिआयो लक्ष्मणके मरे राम न जी हैं यह जानिकै ॥ ५४ ॥

भाग योगयाग वेगवन्त है जिते । वायुपुत्र रामकाज वारि डारिये तिते ॥ ५६ ॥ दोहा॥ सीता पाइ रिपु हत्यो, देख्यो तुम अरु गेहु ॥ रामायण जपसिद्धिको, कपिशिर टीका देहु॥ ॥ ५७ ॥ दोहा ॥ यहि विधि कपिकुलगुणनको, कहत हुते श्रीराम.॥ देख्यो आश्रम भरथको, केशव नन्दीग्राम ॥ ५८ ॥

तामहँ कुंकुम चन्दनको जल ॥ ६० ॥ दोहा ॥ चरणकमल श्रीरामके, भरत पखारे आप ॥जाते गंगादिकनको, मिटत सकल संताप॥ ६१ ॥ पंकजवाटिकाछंद ॥ सूरज चरण बिभीषणके अति । आपुहि भरत पखारि महामति ॥ दुन्दुभिधुनि करिकै बहु भेवनि । पुष्प वरषि हरषे दिवि देवनि ॥ ६२ ॥ दोहा ॥ पीछे दुरि शत्रुघ्नसन, लक्ष्मण ध्याये पाइ ॥ चरण सौमित्रि पखारियो, अंगदादिके आइ ॥६३॥ तोमरछन्द ॥ शिरते जटानि उतारि । अँग अंगरागनि धारि ॥ तन भूषि भूषण वस्त्र । कटिसों कसे सब शस्त्र ॥ ॥६४॥ दोहा॥ शिरते पावन पादुका, लेकरि भरत विचित्र॥ चरणकमलतर हरिधरी, हँसि पहिरी जग मित्र ॥ ६५ ॥

टी०-यक्षपुरी कुबेरपुरी ॥ ५९ ॥ कोमल कहे चिक्कण ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ सौमित्री शत्रुघ्न ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ तरहरि कहे तरे ॥ ६५ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांरामस्य नंदिग्रामप्रवेशोनामैकविंशतितमःप्रकाशः ॥२१॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां अंगदसंवादवर्णनं नामैकविंशतितमः प्रकाशः ॥ २१ ॥

दोहा ॥ या बाइसें प्रकाशमें, अवधपुरीहि प्रवेश ॥ पुरवासिन मातानिसों, मिलिवो रामनरेश ॥ १ ॥ सुन्दरीछंद ॥ अवधपुरीकहँ राम चले जब । ठौरहि ठौर बिराजत हैं सब ॥ भरत भये शुभ सारथि शोभन । चमर धर रविपुत्र बिभीषन ॥ २॥ तोमरछंद ॥ लीनी छरी दुहु बीर । शत्रुघ्न लक्ष्मण धीर ॥ टारैं जहां तहँ भीर । आनन्दयुक्त शरीर ॥ ३ ॥ दोधकछंद ॥ भूतलहू-दिवि भीर विराजै । दीह दुहूं दिशि दुन्दुभि बाजैं ॥ भाट भले विरदावलि गावै । मोद मनो प्रतिबिम्ब बढावैं ॥ ४ ॥ भूतलकी रज देवनशावैं । फूल-

नकी वरषा वरषावैं ॥ हीन निमेष सबै अवलोकैं । होड परी बहुधा दुहुँ लोके ॥ ५ ॥

टी०—॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ देवतनके प्रतिबिंब सम अवधवासी अवधवासिनके प्रतिबिंब सम देवता मोद बढावत हैं अर्थ जो आनंद क्रिया हास्यादि अवधबासी करत हैं सोई देवता करत हैं ॥ ४ ॥ होड कहे बहस मानो अवधबासी बहस करि देवता लोकको धूरि उडावत हैं औ देवता ता धूरिको फूलनकी अति वृष्टि करि नशाइ देते हैं अर्थ दबाइ लेते हैं औ देवता तो अनिमेषही हैं औ रामचन्द्रके दर्शनमें अवधवासिनहूंकी पलक नहीं लागत सो मानों परस्पर होड किये हैं कि देखिये धौ काकी पलक लागति है यामें (असिद्ध विषय हेतूत्प्रेक्षा) है ॥ ५ ॥

तारकछंद ॥ सिगरे दल औधपुरी तब देखी । अमरावतिते अति सुन्दर लेखी ॥ चहुं ओर बिराजति दीरघ खाई । शुभ देवतरंगिनिसी फिरि आई ॥ ६ ॥ अति दीरघ कंचनकोट बिराजैं । मणि लाल कँगूरनकी रुचि राजैं ॥ पुर सुन्दर मध्य लसै छबि छायो । परिवेष मनों रविको फेरि आयो ॥ ७ ॥ दोहा ॥ विविधि पताका शोभिजैं, ऊंचे केशोदास ॥ दिवि देवनके शोभिजैं, मानहुं व्यजनविलास ॥ ८ ॥ विजयछंद ॥ चढी प्रति मंदिर शोभ बढी तरुणी अवलोकनको रघुनन्दनु । मनों गृह दीपति देह धरेसु किधौं गृहदेवि विमोहति है मनु ॥ किधौं कुलदेवि दिये अति केशवकै पुरदेविनको हुलस्यो गनु । जहीं सो तहीं यहि भांति लसैं दिवि देविनको मद घालति है मनु ॥ ९ ॥

टी०—देवतरंगिनी (गंगा) सम कह्यो तासों विमल जल युक्त जानो ॥ ६ ॥ रविसम अयोध्यापुरी है परिवेष सम कंचनकोट है ॥ ७ ॥ व्यजन (पंखा) ॥ ८ ॥ अपनी सुन्दरतादि देखाइ देविनकी सुन्दरतादिको मद दूरि करती हैं अवधपुरीकी स्त्री देविनहूंसो अधिक सुंदरी हैं इति भावार्थः ॥ ९ ॥

दोहा ॥ अति ऊंचे मंदिरन पर, चढी सुन्दरी साधु ॥ दिवि देवनको करति हैं, मनु आतिथ्य अगाधु ॥ १० ॥ तोटक-

छंद ॥ नर नारि भली सुरनारि सबै । तिनको ऊपरै पहिं-चानि अबै ॥ मिलि फूलनकी वरषैं वरषा । अरु गावति हैं जयके करषा ॥ ११ ॥ पद्मावतीछंद ॥ रघुनन्दन आये सुनि सब धाये पुरजन जैसे तैसे । दर्शनरस भूले तन मन फूले वरणे जाहिन जैसे ॥ पतिके सँग नारी सब सुखकारी रामहिं यो दृग जोरी । जहँ तहँ चहुँ ओरनि मिली झकोरनि चाहति चन्द चकोरी ॥ १२ ॥ पद्धटिकाछंद ॥ बहु भांति राम प्रति द्वार द्वार । अति पूजत लोग सबै उदार ॥ यहि भांति गये नृपनाथ गेह । युत सुन्दरिसो दरस्यो सनेह ॥ १३ ॥ दोहा ॥ मिले जाय जननीनकों, जबही श्रीरघुराइ ॥ करुणारस अद्भुत भयो, मोपै कह्यो न जाइ ॥ १४ ॥ सीता सीतानाथजू, लक्ष्मणसहित उदार ॥ सबन मिले सबके किये, भोजन एक-हि बार ॥ १५ ॥

टी०--अति सुंदर रूप आतिथ्यसम है ॥ १० ॥ यासों या जनायो कि जेती दूरि देविनको विमान है तेतेई ऊंचे अवधवासिनके गृह हैं ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ नृपनाथ (दशरथ) ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

सोरठा ॥ पुरजन लोग अपार, यहई सब जानत भये ॥ हमहीं मिले अगार, आये प्रथम हमारेही ॥ १६ ॥ मदनहराछंद ॥ सँग सीता लक्ष्मण श्रीरघुनन्दन मातनके शुभ पाइ परे सब दुःख हरे । आँसुन अन्हवाये भागनि आये जीवन पाये अंक भरे अरु अंक धरे ॥ ते वदन निहारैं सरब सुवारैं देहिं सबै सबहीन घनो अरु लेहिं घनो । तन मन न सँभारैं यहै बिचारैं भाग बडो यह है अपनो किधौं है सपनो ॥ १७ ॥ स्वाग-ताछन्द ॥ धाम धामप्रति होति बधाई । लोक लोक तिनकी धुनि धाई ॥ देखि देखि कपि अद्भुत लेखैं । जाहिं यत्र तित रामहिं देखैं ॥ १८ ॥ दौरि दौरि कपि रावर-

आवैं। बार बार प्रति धामनि धावैं ॥ देखि देखि तिनको देतारी। भांति भांति बिहसैं पुरनारी ॥ १९ ॥

टी०—॥ १६ ॥ रामचन्द्रजू भागनसों आये तासों मातन जीवन समपाये सो अंकमें भरे कहे अति प्रेमसों छातीमें लगाये फेरि अंक जो गोद है तामें धरे कहे बैठारे तब आनंदाश्रुनसों सीता राम लक्ष्मणको अन्हवाये औ ते सबै कौशल्यादि माता रामादिके वदन निहारती हैं औ तिनपर सर्वस्व वारि वारि सबको अर्थ याचक नेगिनको देती हैं औ तिन याचकनसों आशीर्वाद करि घनो लेती हैं पावती हैं अर्थ याचक आशीर्वाद देते हैं कि जो हमको तुम दियो ताको कोटि गुणित तुम्हारे होय अथवा रामादिके बदन दर्शनहीसों घनो लेती हैं पावती हैं अर्थ मुखदर्शन करि घनो पायो सम मानती हैं ॥ १७ ॥ १८ ॥ रावर (स्त्री भवन) ॥ १९ ॥

श्रीराम—दोहा ॥ इन सुग्रीव बिभीषणै, अंगद अरु हनुमान ॥ सदा भरत शत्रुघ्नतम, माताजी मैं जान ॥ २० ॥ सुमित्रा—सोरठा ॥ प्राणनाथ रघुनाथ, जियकी जीवन मूरि हो ॥ लक्ष्मण हे तुम साथ, क्षमियहु चूक परी जो कछु ॥ २१ ॥ राम-दंडक ॥ पौरिया कहौं कि प्रतीहार कहौं किधौं प्रभु-पुत्र कहौं मित्र किधौं मंत्री सुखदानिये। सुभट कहौं कि शिष्य दास कहौं किधौं दूत केशोदास हाथको हथ्यार उर आनिये ॥ नैन कहौं किधौं तन मन किधौं तन त्राण बुद्धि कहौं किधौं बल बिक्रम बखानिये। देखिबेको एक हैं अनेक भांति कीन्ही सेवा लक्ष्मणके मात कौन कौन गुण गानिये ॥ २२ ॥

टी०—॥ २० ॥ २१ ॥ पौरिया जो मुख्यद्वारकी रक्षामें रहते हैं प्रतीहार जो राजसभाद्वारमें सुवर्णादिको दंड लै ठाढो रहत है बल जोर विक्रम यत्न ये सब एक एक आपनो आपनो कार्य करि सुख देत हैं सो लक्ष्मणने जहां जाको काज लाग्यो है तहां ताही विधि तौन काज करि हमको परम सुख दीन्हो है ॥ २२ ॥

मोटनकछंद ॥ शत्रुघ्न बिलोकत राम कहैं । डेरानि सजौ जहुँ सुःख लहैं ॥ मेरे घर संपति युक्त सबै । सुग्रीवहि देहु निवास अबै ॥ २३ ॥ साजे जो भरत्थ सबै धनको । राखौ तहँ जाइ बिभीषणको ॥ नैर्ऋत्यनको कपिलोगनको । राखौ निज धामनि भोगनको ॥ २४ ॥ दोहा ॥ एक एक नैर्ऋत्यको, जितने वानरलोग ॥ आगेही ठाढे रहत, अमित इंद्रके भोग ॥ २५ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिंद्रजिद्विरचितायां रामस्यायोध्यापुरप्रवेशो नामद्वाविंशः प्रकाशः ॥ २२ ॥

टी०-संपति (अनेक भोग वस्तु) ॥ २३ ॥ २४ ॥ अमित कहे अप्रमाण ॥ २५ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां द्वाविंशः प्रकाशः ॥ २२ ॥

दोहा ॥ या तेइसयें प्रकाशमें, ऋषिजन आगम लेषि ॥ राज्य श्रीनिंदा कही श्रीमुख राम विशेषि ॥ १ ॥ मल्लिकाछंद ॥ एक काल रामदेव । सोधु बंधु करत सेव ॥ शोभिजै सबै सो और । मंत्रि मित्र ठौर ठौर ॥ २ ॥ बानरेश यूथनाथ । लंकनाथ बंधुसाथ ॥ शोभिजै सबै समीप । देशदेशके महीप ॥ ॥ ३ ॥ दोहा ॥ सरस स्वरूप बिलोकिकै, उपजी मदनहिं लाज ॥ आइ गये ताही समय, केशव ऋषि ऋषिराज ॥ ४ ॥ आसित अत्रि भृगु अंगिरा, कश्यप केशव व्यास ॥ विश्वामित्र अगस्त्ययुत, वालमीकि दुर्वास ॥ ५ ॥

टी०-॥ १ ॥ २ ॥ वानरेश (सुग्रीव) यूथनाथ (अंगदादि) लंकनाथ जे बंधु बिभीषण अथवा बंधु जे ज्ञातिवर्ग हैं राक्षसगण इति ते हैं साथ जिनके ऐसे लंकनाथ जे बिभीषण हैं ते ॥ ३ ॥ सरस कहे आपनासों अधिक सुन्दर ॥ ४ ॥ ५ ॥

दोहा-वामदेव मुनि कण्वयुत, भरद्वाज मतिनिष्ठ ॥ पर्वतादि दै सकल मुनि, आये सहित वशिष्ठ ॥ ६ ॥ नगस्वरूपिणी छंद ॥ सबंधु रामचन्द्रजू उठे बिलोकिकै तबै । सभासमेति पाँ परे विशेषि पूजियो सबै ॥ विवेकसों अनेकधा दशे अनूप आसने । अनर्घ अर्घ आदि पै विनै किये घने घने ॥ ७ ॥ राम-रूपमालाछंद ॥ रावरे मुखके विलोकतही भये दुख दूरि । सुप्रलाप नहीं रहे उरमध्य आनँद पूरि ॥ देह पावन ह्वैगयो पदपद्मको पय पाइ । पूजते भयो वंश पूजित आजुही मुनिराइ ॥ ८ ॥ संनिधान भरे तपोधन धामधीधन धर्म । अद्य सद्य सबै भयो निरवद्य वासरकर्म ॥ ईश यद्यपि दृष्टिही भइ भूरि मंगल सृष्टि । पूंछिबे कहां होति है सो तथापि वाक-विसृष्टि ॥ ९ ॥

टी०-निष्ठ कहे उत्कृष्ट है मति जिनकी ॥ "निष्ठोत्कर्षव्यवस्थयोरिः" इति अभिधानचिंतामणिः ॥ ६ ॥ विवेक (विचार) सों अर्थ यथोचित अनर्घ कहे अमोल अर्घ पाद्यादि पूजाबिधि प्रसिद्ध है ॥ "अर्घः पूजाविधौ मूल्ये" इत्यभिधानचिंतामणिः ॥ ७ ॥ द्वै छंदको अन्वय एक हे तपोधन ! ऋषिनको संबोधन है सुप्रलाप कहे सुवचन ॥ "सुप्रलापः सुवचनम्" इत्यमरः ॥ पदपद्मको पय कहे चरणोदक रावरे पदको संबंध सुप्रलापादिकमों सर्वत्र है संनिधान कहे समीपसों अर्थ रावरे निकट प्राप्त भये सो हमरे धाम(घर) औ धी (बुद्धि) धन औ धर्मसों भरे अर्थ धाम धनसों भरे, बुद्धि धर्मसों भरी, अद्य कहे आज सद्य कहे शीघ्रही सबै जे वासर कर्म कहे रोज रोजके दानकर्म हैं निरवद्य कहे अनिंद्य भये औ हे ईश ! यद्यपि तुम्हारी दृष्टिहीसों अवलोकनहीं सों हमपर भूरि कहे बहुत मंगल कहे कल्याणकी दृष्टि भई अर्थ हमारो बडो कल्याण भयो परंतु कल्याणमें तो काहूकी तृप्ति होति नहीं तासों अधिक कल्याणके लिये तुमसों कछू पूछिवेको हमारे वाक जे वचन हैं तिनकी विसृष्टि कहे उत्पत्ति होति ॥ ८ ॥ ९ ॥

दोहा ॥ गंगासागरसों बडो, साधुनको सतसंग ॥ पावन करि उपदेश अति, अद्भुत करत अभंग ॥ १० ॥

टी०-साधुनको जो सतसंग है सो गंगासागरहूसों बडो है काहेते अति अद्भुत जो उपदेश शिक्षा है तासों पावन कहे पवित्र करिके अभंग कहे नाशरहितके अर्थ मुक्त करत है अथवा उपदेशसों अति पावन करि अद्भुत अभंग कहे मुक्त करत है अर्थ जीवन्मुक्त करत है उपदेश करि अभंगकारिबेकी शक्ति गंगासागरमों नहीं है तासों बडो कह्यौ एतो रामचंद्रके कहतही विरक्त वचन समुझि अगस्त्य बीचहीमें बोलि उठे तासों जो पूछिबो रहै सो नहीं पूछन पाये सो चौबीसवें प्रकाशमें कह्यौ है कि जो कछु जीव उधारनको मत जानत हौ तौ कहौ मनु है कहिबेको हेतु यह कि हमको कछू ऐसो उपदेश करौ जासों संसार छूटै मुक्ति होइ ॥ १० ॥

अगस्त्य-नाराचछंद ॥ किये विशेषसों अशेष काज देवरायके। सदा त्रिलोक लोकनाथ धर्म विप्र गायके ॥ अनादिसिद्धि राजसिद्धि राज आज लीजई। नृदेवतानि देवतानि दीह सुक्ख दीजई ॥ ११ ॥

टी०-हे त्रिलोकनाथ! अर्थ तीनों लोकोंके जे लोक कहे जन हैं तिनके नाथ कहे स्वामी हो अर्थ ईश्वर हौ यासों या जनायो कि तुम्हारो बंधन कौन है जासों छुटिबेकी इच्छा करत हौ रावणको मारि देवराज जे इन्द्र हैं औ धर्म औ विप्र औ गाय इनके अशेष कहे पूर्ण काज करचो अब अपनी अनादि सिद्धि अर्थ तुम्हारी परंपराकी सिद्धि है औ राजसिद्धि कहे राजनकी सिद्धि जो राजति है ताहि लीजै नृदेवता (राजा) ॥ ११ ॥

दोहा ॥ मारे अरि पारे हितू, कौन हेत रघुनंद ॥ निरानंदसे दीखियत, यद्यपि परमानंद ॥ १२ ॥ श्रीराम-तोमरछंद ॥ सुनि ज्ञान मानहंस। जप योग जाग प्रशंस ॥ जगमांझ है दुखजाल ॥ सुख है कहा यहि काल ॥ १३ ॥ तहँ राज है दुखमूल। सब पापको अनुकूल ॥ अब ताहि लै ऋषिराय। कहे कौन नर्क हि जाय ॥ १४ ॥ चौपाई ॥ सोदर मंत्रिनके जे चरित्र। इनके हमपै सुनि मख मित्र ॥ इनहीं लगे राजके काज। इनहींते सब होत अकाज ॥ १५ ॥

टी०-एक तौ तुम परमानंद रूपही हौ ताहूपर अरि (रावणादि) को मारे औ हितू (इन्द्रादि) को पालत भये ऐसे आनंदवर्द्धक काजऊ करे तहूपर

तुम्हैं निरानंदसे काहे देखियत है इत्यर्थः। ज्ञानरूपी जो मानस (मानसर) है ताके हंस हौ औ जगमें योग औ जागकी है प्रशंसा (स्तुति) जिनकी दूनौ पद संबोधन हैं ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

राजभार नल भैयनि दयो। छलबल छीनि सबै तिन लयो ॥
जब लीन्हों सब राज विचारि। नल दमयंती दियो निकारि ॥
॥ १६ ॥ राजा सुरथराजकी गाथ। सौंपी सब मंत्रिनके हाथ ॥ संतत मृगया लीन विचारि। मंत्रिन राजा दियो निकारि ॥ १७ ॥ राजश्री अति चंचल तात। ताहूकी सुनि लीजै बात ॥ यौवन अरु अविवेकी रंग। बिनस्यौ कौन राजश्रीसंग ॥ १८ ॥ शास्त्रसुजलहूँ धोवत तात। मलिन होत अति ताके गात ॥ यद्यपि है अतिउज्ज्वल दृष्टि। तदपि सृजति रागनकी सृष्टि ॥ १९ ॥

टी०—नलकी कथा पुराणमों प्रसिद्ध है ॥ १६ ॥ मृगया (शिकार) सुरथहूकी कथा मार्कण्डेयपुराणसों प्रसिद्ध है ॥ १७ ॥ अति चंचल जो राजश्री है ताहूमें ऐसो दोष है ते सुनो कहियत है यौवन औ अविवेकी रंग औ राजश्रीके संगमें को नहीं बिनस्यौ ए तीनों सम हैं अथवा यौवन औ अबिबेकी रंगयुक्त जो राजश्री है अर्थ सदा यौबन औ अबिवेकसों युक्त रहति है ताके संगको नहीं बिनस्यौ अथवा हितोपदेशमें कह्यो है कि " यौवनं धनसंपत्तिः प्रभुत्वमविवेकिता ॥ एकैकमप्यनर्थाय किमु यत्र चतुष्टयम् ॥" यामें चारि कह्यौ है ता मतसों यह अर्थ--कि यौवन अविवेकी रंग औ राज औ श्री कहे संपत्ति इन चारिके संगमें को नहीं बिनस्यौ ॥ १८ ॥ शास्त्रका उपदेश सुनिकै शास्त्रकी आज्ञा माफिक नहीं करत और तासों मलिन उदास होत है अथवा अनेक शास्त्र सुनावो ताहूपर पातकन करि ताके गात मलिन होत हैं शास्त्रहू सुनिकै अनेक पातक करत ही है इत्यर्थः। और यद्यपि याकी उज्ज्वल (विमल) दृष्टि है अर्थ उत्तम पदार्थनपर दृष्टि है तौ अति उत्तम जो पदार्थ (ईश्वरपद) है तामें प्रीति बारेसों नहीं करति राग जो स्रक्, चंदन, वनितादि विषे अभिलाष है ताको सृजति कहे उत्पन्न करति है "अभिमतविषयाभिलाषो रागः" ॥ १९ ॥

महापुरुषसों जाकी प्रीति। हरति सो झंझामारुतरीति ॥
विषयमरीचिकानिकी ज्योति। इंद्री हरिणहारिणी

होति ॥२०॥ गुरुके वचन अमल अनुकूल । सुनत होत श्रव-
णनको शूल ॥ मैन वलित नव वसन सुदेश । भिदत नहीं
जल ज्यों उपदेश ॥ २१ ॥

टी०—जा पुरुषकी प्रीति महापुरुष जे भगवान् हैं तिनसों है ताके पास आइ झंझामारुत कहे अति जोर वायुकी रीतिसों हरति कहे तोरति है अर्थ जैसे झंझामारुत वृक्ष लतानिको तोरति है तैसे यह प्रीतिको तोरति है आशय यह कि आपु विष्णुकी स्त्री हैं तासों प्रीतिरूपी स्त्रीको विष्णुके पास जाति देखि सौतिधर्मसों तोरति है अर्थ राजनकी प्रीति ईश्वर पर नहीं होति रूप, रस, गंध, स्पर्श, शब्द, ये ज पांचौं विषयरूपी मरीचिका कहे मृगतृष्णा हैं तिनकी ज्योतिमें इंद्रीरूपी जे हरिण हैं तिनकी हारिणी कहे लैजानहारी होति है अर्थ मृगतृष्णा सम मिथ्या जो पंचधा विषय हैं तामें राजनकी इंद्रिनको भ्रमावति है ॥ २० ॥ मैन कहे (मोम) ॥ २१ ॥

मित्रनहूको मतो न लेति । प्रतिशब्दक ज्यों उत्तर देति ॥
पहिले सुनै न शोर सुनंति । माती करनी ज्यों न गनंति
॥ २२ ॥ दोहा ॥ धर्मवीरता विनयता, सत्यशील आचार॥
राजश्री न गनै कछू, वेदपुराणविचार ॥ २३ ॥ चौपाई ॥
सागरमें बहु काल जोरही । सीत वक्रता शशिते लही ॥
सूर तुरँग चरणनिते तात । सीमी चंचलताकी बात ॥२४॥
कालकूटते मोहनरीति । मणिगणते अतिनिष्ठुर प्रीति॥ मदि-
राते मादकता लई । मंदर उदर भई भ्रममई ॥ २५ ॥

टी०—प्रति शब्दक कहे झांई शब्द अर्थ जैसे शब्दके साथही प्रति शब्दक होत है तैसे राजा मित्रके वाक्यमें शुभाशुभको विचार नहीं करत साथही उत्तर कहे जवाब देत हैं औ पहिले तौ हित वाक्यको सुनति नहीं शोर करि कहै सो सुनिबो करत है तो माती कारिनी सम गनति नहीं अर्थ जैसे माती कारिनी महावतके हितके हित बचन नहीं गनति तैसे राज्यश्री मित्रादिके हित बचन नहीं गनति ॥२२॥२३॥ क्षीरसागरमें बहुत काल रही है तहाँ इनको संग रह्यो तिनसो ए कर्म सीखे हैं शीतता कहे प्रसन्न ह्वै सेवकादिको धनादि दीबो

वक्रता क्रुद्ध है बंधादि करिबो सुरतरंग (उच्चैःश्रवा) चंचलताकी बात कहे क्षणमें और क्षणमें और कहिबो (करिबो) ॥ २४ ॥ जैसे कालकूट भक्षणसों मोहित (मूर्छित) भये प्राणीको कछु सुधि नहीं रहति है तैसे राज्यश्रीमें मोहित राजनको ईश्वरादिकी सुधि भूलि जाति है इत्यर्थः।निष्ठुरताबश राजनको जीव वधादिमें कछू दया नहीं आवति इत्यर्थः राज्यश्रीके वश मत्त है राजा हित बस्तुको बिचार नहीं करत इत्यर्थः। औ विष्णु करिकै भ्रमायो जो मंदर है ताके संगसों राज्यश्रीके उदरमें भ्रमगई कहे भ्रमाधिक्य भई अर्थ मंदरको भ्रमत देखिकै भ्रम सिख्यो राजनके उरमें सदा बंधुमंत्र्यादिकनहूकी प्रतिकूलताको भ्रम रहत है इत्यर्थः ॥ २५ ॥

दोहा ॥ शेष दई बहु जिह्वता, बहु लोचनता चारु ॥ अप्सरानितैं सीखियो, अपर पुरुषसंचारु ॥ २६ ॥ चौपाई ॥ दृढ गुन बाँधहू बहु भाँति । को जानै केहि भांति बिलाति ॥ गज घोटक भट कोटिन अरैं । खड्गलता पंजरहू परैं ॥ २७ ॥ अपनाइति कीन्हे बहु भाँति । को जाने कित ह्वै भजि जाति ॥ धर्मकोसमंडित शुभ देश । तजति भ्रमारि ज्यों कमल नरेश ॥ २८ ॥

टी०—बहु जिह्वता कहे एक जिह्वासों अनेक जिह्वासम बात कहि बहुलोचनता कहे द्वै लोचनसों अनेक लोचनसम देखिबो अर्थ राजा चितवत कहा होत हैं औ चार दृष्टिसों सर्वत्र देखत हैं अपर कहे अन्य पुरुष प्रीति संचार अर्थ एक पुरुष राजाको छाँडि एक पास जाइबो ॥ २६ ॥ द्वै छन्दनको अन्वय एक है गुन पद श्लेष है शूरतादि औ डोरी गज औ घोटक (घोडे) औ भट कोटिन रक्षाके अर्थ अरैं कहे हठ करैं औ तिनकी खड्ग (तरवारि) रूपी जो लता हैं ताके पंजरहूमें परैं अर्थ तरवारि हाथमें लैकै अनेक गजादि चौकी दै रक्षा करैं ताहूपर और अनेकविधि आपनाइति कीन्हेंहूं अर्थ प्रीति कीन्हें हूं धर्म (राजधर्म) औ कोमलताकी सब जाना औ सिफा (कंद) तासों मंडित (युक्त) औ शुभदेश कहे सुन्दर है राज्यभूमि जाकी औ सुष्ठु है देश (उत्पत्ति स्थान) जाको औ कमलरूपी जो नरेश राजा है ताको तजति है औ को जानै कहां है भागि जाति है सुंदरतादिहूके वश नहीं होति इति भावार्थः ॥ २७ ॥ २८ ॥

यद्यपि होइ शुद्ध मति सत्तु । फिरै पिशाची ज्यौं उनमत्तु ॥ गुनवंतनि आलिंगति नहीं । अपवित्रनि ज्यों छांडति तहीं ॥ २९ ॥ शूरनि नाशति ज्यों अहि देखि । कंटकज्यों बहु साधुन लेखि ॥ सुधासोदरा यद्यपि आप । सबहीते अति कटक प्रताप ॥ ३० ॥ यद्यपि पुरुषोत्तमकी नारि । तदपि सकल खल जन अनुहारि ॥ हित कारिनकी अति द्वेषिनी । अहितलोगको अन्वेषिनी ॥ ३१ ॥ मनमृगको सुबधिककी गीति । विषयबेलिकी बारिदरीति ॥ मदपिशाचिकाकीसी अली । मोहनींदकी शय्या भली ॥ ३२ ॥

टी०-सत्तु (प्राणी) अथ राजासों राज्यश्री युक्त ह्वै पिशाचाक्रांत पुरुषसम उन्मत्त फिरत हैं गुणवंतन कहे विद्यादि अनेक गुणको अपवित्र सम त्याग करति है इत्यर्थः ॥ "पंडिते निर्द्धनत्वमित्युक्तं माधवानलनाटके" ॥ २९ ॥ नाशति कहे छोडति है शूर औ साधुनको राज्यश्री नहीं प्राप्त होति अथवा शूर औ साधुनको संग्रह राजा नहीं करते इत्यर्थः । सुधा जो अमृत है ताकी सोदरा (बहिन) ॥ ३० ॥ पुरुषोत्तम (विष्णु) द्वेषिणी कहे शत्रु है अन्वेषिणी कहे ढूंढनहारी है॥ ३१ ॥ वधिकसम मनरूपी मृगको बांधि लेति है कहे काबू करि लेत है इत्यर्थः । औ वारिद कहे मेघसम विषयरूपी बेलिको हरित करति है इत्यर्थः । मदरूपी जो पिशाचिका (प्रेतिन) है ताकी अली कहे सखी है अर्थ सहायक है पठावनहारी इति मोह कहे अज्ञानरूपी जो नींद है ताकी शय्या जैसे शय्यामें नींद बढति है तैसे राज्यमें मोह बढत है इत्यर्थः ॥ ३२ ॥

आशीबिषदोषनकी दरी । गुण सतपुरुषन कारण छरी ॥ कलहंसनकी मेघावली । कपटनृत्यकारीकी थली ॥ ३३ ॥ दोहा ॥ वाम कामकारिकी किधौं, कोमल कदलि सुवेष ॥ धीर धर्म द्विजराजको, मनो राहुकी रेष ॥ ३४ ॥ चौपाई ॥ मुखरोगी ज्यों मौने रहै । बात बलाय एक द्वै कहै ॥ बंधुवर्ग पहिचानै नहीं । मानों सन्निपात है गही ॥ ३५ ॥

टी०—दरी (कंदरा) में आशीबिष (सर्प) सम अनेक प्रजा पीडनादि दोष जामें बास करत हैं इत्यर्थः औ अनेक जे बिद्यादिगुणरूपी सत्पुरुष है तिनके कारण कहे अर्थ छरी कहे ताडन दंड है जैसे राजद्वारमें ताडन दंड देखि सत्पुरुष नहीं आवत तैसे राज्यश्री युक्त पुरुषके पास विद्यादि गुण नहीं आवत तासों सत्पुरुष लोभबश दंडपात हंसहि भूप द्वारादि स्थलमें जातही हैं कुपुरुष कह्यो राज्यसुखालस्यसों राजा गुणनको अभ्यास नहीं करत इति भावार्थः । कल कहे अबिघ्नतासों चित्त इति हंसनको मेघावलीसम राजनके कलको राज्यश्री दूरि करति है इत्यर्थः । अनेक शत्रु भयादि युक्त राजनको चित्र सदा रहत है इति भावार्थः । शत्रुसैन्यभेदादि अनेक कपट-युक्त राजा होत हैं इति भावार्थः ॥ ३३ ॥ बाम कहे कुटिल जो काम (कंदर्प) रूपी कारि, (हाथी) है ताको सुवेष कहे हरित कोमल कदली (केरा) है अर्थ गजको कदली सम कामको बलकर्त्ता है अथवा सुखद है राजा अति कामी होत है इति भावार्थः । कदली भक्षणसों गजको बल औ सुख होत है यह प्रसिद्ध है औ धीर औ धर्मरूपी द्विजराज (चंद्रमा) को राहुरेखसम पीडाकर्ती है इत्यर्थः राजा बंधुमंत्री आदिमें भेद भय मान सदा अधीर रहते हैं औ आलस्यबस दानादि धर्म विधिपूर्वक नहीं करते इति भावार्थः ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

महामंत्रहू हो तनबोध । डसी काल अहिकरि जनुक्रोध ॥
पानबिलास उदित आतुरी । परदारागमनै चातुरी ॥ ३६॥
मृगया यहै शूरता बढी । बंदीमुखनि चापसों पढी ॥ जो केहू
चितवै यह दया । बात कहै तौ बडीए मया ॥ ३७ ॥ दर-
शन दीबोई अति दान । हँसि बोलै तौ बड सनमान ॥ जो
केहूसों अपनो कहै । सपनेकीसी पदवी लहै ॥ ३८॥ दोहा ॥
जोई अति हितकी कहै, सोई परम अमित्र ॥ सुखबक्ताई
जानिये, संतत मंत्री मित्र ॥ ३९ ॥

टी०—मंत्रिन करि दीन्हे जे महा कहे बडे बडे मंत्र हैं तिनहुसों जाको बोध ज्ञान नहीं होत सो मानों काल अहि कहे कालसर्प करिकै डसी कहे काटी गई है अर्थ मानों क्रोध करि कालसर्प काट्यो है जा प्राणीको काल-सर्प काटत है ताहूको झारिबेको जे महामंत्र हैं तिनसों बोध (ज्ञान) नहीं

होत अर्थ मूर्च्छा नहीं जागति पान कहे मद्यपानको जो विलास है ताहीमें उदित कहे प्रगट है आतुरी शीघ्रता जाकी ॥ ३६ ॥ मृगया यहै शूरता बडी इत्यादिमों या जनायो कि याही बिधि राजा थोरो करत हैं ताको बहुत मानि लेत है ॥ ३७ ॥ पदवी (राज्य) ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

चौपाई ॥ कहौं कहा लगि ताके साज । तुम सब जानत हौं ऋषिराज ॥ जैसी शिवमूरति मानिये । तैसी राजश्री जानिये ॥ ४० ॥ सावधान ह्वै सेवै जाहि । सांची देत परम पद ताहि ॥ जितने नृप याके वश भये । पेलि स्वर्गमग नर्कहि गये ॥ ४१ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रि-
कायामिन्द्राजिद्विरचितायां राज्यश्रीदूषणवर्णनं-
नाम त्रयोविंशः प्रकाशः २३ ॥

टी०—॥ ४० ॥ शिवमूरतहूको सावधान ह्वै विधिपूर्वक सेवनो बनि परै तो स्वर्गप्राप्ति होत है ना बनै तौ चित्तविक्षेपादि ह्वै अंतमें नरकप्राप्ति होत है तैसे याहूको सावधान ह्वै जनकादि सम सेवन करै तौ स्वर्ग जाई परंतु सावधान ह्वै सेवन नहीं बनि परत तासों केतने भूप बेनु आदिक स्वर्गमगसों पेलिकै नरकको गये हैं तासों हम राज्यश्री ग्रहण ना करि हैं इति भावार्थः ॥ ४१ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसाद-
निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां त्रयोविंशः प्रकाशः ॥ २३ ॥

दोहा ॥ चौबीसयें प्रकाशमें, रामविरक्ति बखानि ॥ विश्वा मित्र वशिष्ठसों, बोध कही शुभ आनि ॥ १ ॥ राम-अमृतग-तिछंद ॥ सुमति महाऋषि सुनिये । जगमहँ सुक्ख न गुनिये ॥ मरणहिं जीवन तजहीं । मरि मरि जन्म न भजहीं ॥ २ ॥ उदरनि जीव परत है । बहु दुखसों निसरत है ॥ अंतहु पीर अनतहीं । तन उपचार सहतहीं ॥ ३ ॥ दोधकछंद ॥ पोच भली न कछूजिय जानै । ले सब बस्तुन आनन आनै ॥ शैशवते कछु होत बडेई । खेलत हैं ते अयान चढे ई ॥ ४ ॥

है पितु मातनिते दुख भारे। श्रीगुरुते अति होत दुखारे ॥
भूख न प्यास न नींद न जोवैं। खेलनको बहु भांतिन रोवैं॥५॥

टी०—वशिष्ठसों बोध जो ज्ञान है ताके कहिबेको विश्वामित्र कही कहे कह्यो है ॥ १ ॥ राजश्रीको दुख कहि अब यामें संसारको दुख देखावत हैं जीव जे हैं ते मरणको नहीं तजत मरिकै फिरि जन्मनको भजहीं कहे प्राप्त होत हैं ॥ २ ॥ यामें जनन, मरण, जीवनको दुख देखावत हैं प्रथम तौ जीव उदरमें परत हैं गर्भमें आवत हैं तहांसे बहुत दुखसों निसरत हैं अर्थ जन्ममें बडो दुख होत है औ अंत जो मरण है ताहूमें बडी पीर कहे कष्ट होत है औ अनतही कहे जनन मरणते अन्यत्र अर्थ जीवतनमें तनके अनेक जे उपचार कहे व्योहार हैं तिनके सहित जीवको पीर है सो आगे कहैं ॥ "उपचारस्तु सेवायां व्यवहारोपचारयोः" इत्यभिधानचिंतामणिः ॥ ३ ॥ द्वैछंदनमों शिशुता अवस्थाके देहव्यवहारमें प्राप्ति जीवको दुख कहत हैं ते कहे तेई जीव शैशव कहे बाल्य अवस्थामें पोच कहे बुरो विषादि औ भली द्राक्षादि कछू जियमें नहीं जानत जो बस्तु पावत हैं ताको लैकै आनन कहे मुखमें आनै कहे डारि लेत हैं तहां विषादि ग्रहणमें जीवको पीडा होती है इति भावार्थः फेरि ते कहे तेई जीव कछु बडे होत कहे बडे होते अयान कहे अज्ञानमें चढे चढे गैलनमें खेलत फिरतहैं अज्ञानमें चढे कहि या जनायो कि जैसे बाहनमें चढिकै कोऊ धावै तौ थकत नहीं तैसे अज्ञानरूपी बाहनमें चढि खेलमें धावत जीव थकत नहीं है ॥ ४ ॥ ता खेलिबेके लिये माता पिता मने करत हैं तासों बडो दुख होतहै औ गुरु खेलिबो छडाई पढाइबो चाहत है तासों अति दुखी होतहैं औ भूख औ प्यास औ नींदको नहीं जोवत कहे देखत अर्थ अपने पास आई भूख प्यास नींदको नहीं गनत अथवा भूख प्यास नींदको नहीं जोवत कहे चाहत तैसे सब अवस्थाके ऐसे देहव्यवहारनमें जीवको ऐसी पीडा होतिहै इति भावार्थः ॥ "शिशुत्वं शैशवं बाल्याम्" इत्यमरः ॥ ५ ॥

जारति चित्त चिता दुचिताई। दीह त्वचा अहिकोप चवाई ॥
काम समुद्र झकोरनि झूल्यो। यौवन जोर महाप्रभु भूल्यो ॥ ६ ॥ धूम सो नीलनिचोलमें सोहै। जाइ छुई न विलोकत मोहै ॥ पावकपाय शिखाबन चारी। जारति है नरको परनारी ॥ ७ ॥

टी०—तीनि छंदमें युवा अवस्थाके व्यवहारको दुःख कहतहैं यौवनके

जोरमें अर्थ युवा अवस्थामें चित्तरूपी जो चिता है तामें जीवको कहे दुचिताई जो संशय है सो जारति है जैसे चितामें जीवको दुचिताई जारतिहै इत्यर्थः औ अहि कहे सर्पसम जो कोप मरे प्राणीको जारियत है तैसे चित्तरूपी चितामें है सो दीह कहे बहुत अर्थनकी बिधि जीवके त्वचाचर्मकी चवाई कहे चबातहै अर्थ काटतहै अथवा त्वगासम अहिकोप चबातहै अर्थ सर्पत्वचामें काटत है तब जीवको परम पीडा होती है औ कोप तौ जीवहीको काटत है ताको पीडा तौ अकथनीय है औ जब काम अथवा अभिलाषरूपी जो समुद्र है ताके तरंगके झकोरनमें झूलौ इत उत आयो गयो तब हे महाप्रभु ! जीव जो है सो भूल्यो अर्थ अपनपाको भुलान्यो महाप्रभु ऋषिनको संबोधन है चिता (दाह) सर्प दंश समुद्र तरंगके झकोरनमें सबको बिकलतासों आपनपाकी सुधि भूलि जात है ॥ ६ ॥ यौवन जोरमें और कहा होत है सो कहत हैं धूमसम जो नीलनिचोल कहे श्याम बस्त्र है तामें सोहति हैं इहां केवल धूमकी समताके लिये नीलनिचोल कह्यो अग्नि दाहभयसों परनारी लोकभयसों छुई नहीं जाति देखतही मनको दुवौ मोहत हैं परनारी मोहति कहे बश करति है अग्नि मोहिति कहे भयसों अथवा तेजसों मूर्छित करतिहै सो पापरूपी यौवन है तासें चारि कहे गामी अर्थ जैसे अग्नि बनमें बिहरति है तैसे पर नारी पापहीमें बिहरति है ऐसी परनारी रूपी जो पावकशिखा है सो नरको जारति है परस्त्रीको देखि जीव बिकल होत है इत्यर्थः ॥ ७ ॥

बंक हिये न प्रभा सरसीसी । कर्दम काम कछू परसीसी ॥
कामिनि कामकी डोरि ग्रसीसी । मीन मनुष्यनको बनसीसी८॥

टी०-मनुष्यनके जे हिय हैं तिनकी जो प्रभा (शोभा) है सोई बंक कहे कुटिल अर्थ घाट रहित अथवा गहिर सरसी कहे तडागसी है अर्थ हृदय तडाग सम है औ काम अभिलाषरूपी जो कर्दम (कीच) है तासों कछु कहे कछुअर्थ थोरीहू परसी कहे युक्त है यासों या जनायो कि अधिक काम युक्तकी कथा है ता सरसी कामिनि कहे स्त्रीरूपी जो काम (कंदर्प) शिकारीकी डोरी है गो ग्रसी है कहे लगी है ते स्त्री मीनरूपी जे मनुष्य हैं इहां मनुष्य पदते मनुष्यनके जीव जानौं तिनको कहे तिनके बसकरिबेकी बनसीसी है जैसे तडागमें कीच बीच बसे मीननको बंसी बश करति है तैसे हृदयरूपी तडागमें कामरूपी कीचमें बसे जे जीव हैं तिनकी बंसी डोरीसम हृदयमों ग्रसी जो कामिनी स्त्री है सो बश करती है इत्यर्थः । अथवा बंक (कुटिल) जे हृदय कहे मन हैं तिनकरिकै प्रभा

(शोभा) सरसी कहे बढी है जाके अर्थ जैसे बंसी कुटिल लोहकंटकसों युक्त रहति है तैसे कुटिल हृदय करिकै युक्त स्त्री है औ काम कहे अभिलाष रूपी जो कर्दम कहे पिशानका गंधादि युक्त कीच है सान्यौ पिसान तासों कछू परसी कहे युक्त है अथ जैसे कुटिल कंटक गंधादि युक्त साने पिसानसों युक्त होत है तैसे स्त्रीनके मन अभिलाषसों युक्त हैं औ कामिनी जो स्त्री हैं सोई काम (कंदर्प) शिकारीकी डोरी है सो ग्रसी है कहे लगी है सो मीनसम मनुष्यनको बंसीसम है अर्थ जैसे सागरमें बँसीके पिसानको गंध पाइ मीन बंसीके बश होत है तैसे संसारसागरमें स्त्रीनके मनके अभिलाषको गंधपाइ अर्थ स्त्रीनकी अभिलाष समुझि मनुष्य बश होत है ॥ ८ ॥

विजयछंद ॥ खैंचत लोभ दशौं दिशिको महि मोह महाइ-तपासिकै डारे । ऊंचेते गर्व गिरावत क्रोधसो जीवहि लूहर लावत भारे ॥ ऐसेमों कोढकी खाजु ज्यों केशव मारत कामके बाणनिनारे । मारत पाँच करे पँच कूटहि कासों कहैं जग जीव बिचारे ॥ ९ ॥

टी०—यामें लोभादिक जो पोच हैं तिन करिकै प्राप्त जीवको दुःख कहते हैं लोभ तौ लक्ष्मीके लिये दशोंदिशिको खैंचत है औ इत कहे इहां स्थलमें स्त्री पुत्रादिकन प्रति जो मोह है सो पासिकै कहे फांसिकै डारि राख्यो है तासों जाइ नहीं सकत औ गर्व ऊँचमें संग जीव उन्मत्त ह्वै रह्यो है अपमानादिसों चढाइ गिरावत है अर्थ गर्व संगजीव उन्मत्त ह्वै गिरे सम दुःख पावत है तब क्रोध उत्पन्न ह्वै जीवहिजीवमें लूहर कहे लुकेठ लावत है अधजरचौ ईंधन काठको लुहर कहत हैं अर्थ क्रोधसों जीव जरत है लोभ, मोह, गर्व क्रोधकी व्यथा कोढ सम है कामबाण व्यथा खाजुसम है या प्रकार लोभादिक पांचौं पंचभूतको कूट (पर्वत) जो शरीर है तामें करे कहवारि पाये जीवको मारत हैं सो आपनी पीडा जीव विचारे कासों कहैं जैसे पर्वतमें पाइकै ठग बटोहीको मारत हैं तैसे शरीरमें पाइकै लोभादिक जीवको मारत हैं इत्यर्थः ॥ ९ ॥

भूलत हैं कुल धर्म सबै तबहीं जबहीं बरु आनि ग्रसैजू । केश व वेद पुराणनको न सुनै समुझै न त्रसै न हँसैजू ॥ देवनिते नरदेवनिते नरते वर वानर ज्यों विलसैजू । यंत्र न मंत्र न मूरि गने जग यौवन काम पिशाच बसैजू ॥ १० ॥ ज्ञाननिके

तन त्रानिको काहि फूलके बाणनि बेधक कोतो । वाइ लगाइ विवेकनको बहु शोधकको काहि बाधक जोतो ॥ औरको केशव लूटतो जन्म अनेकनके तपसानको योतो । तौ मम लोकसबै जग जातो जो काम बडो बट पार न होतो॥ ११

टी०-यामें यौवनकृत दुःख कहत हैं वेद पुराणनको प्रथम तौ सुनत नहीं औ सुनत है तौ समुझत नहीं औ समुझत है तौ त्रसत कहे डरत नहीं और वेद वचनहीको निंदाकरि हँसत है वानरसम विलसत कहि या जनायो कि पशुसम बुद्धि ह्वै जाति है ॥ १० ॥ यामें काम व्यौहारकृत पीडा कहत है साधक प्राणायामादि एतो कहे जहाज पचीसयें प्रकाशमें यकतालिसयें दोहामें रामचन्द्र कह्यो है मोहि न हतो जनाईबे सबहीं जान्यों आज यासों या जानौं रामचन्द्र ईश्वरत्वको छपाये रहे हैं औ यामें ममलोक सबै जग जातो या उक्तिसों ईश्वरत्व प्रगट होत है तहां कविको भ्रम जानब अथवा तौ ममलोक कहे ममताविशिष्ट जे लोक मर्त्य लोकादि है तिनसों सबै जग कहे सब जगतके जीव आपने स्थानको ब्रह्मपदको इति शेषः । जातो प्राप्त होतो ॥ ११ ॥

मकरंदविजयाछंद ॥ कँपै बरबानी डगै उर डीठि तुचाति-कुचै मतिबेली । नवै नव ग्रीव थकै गति केशव बालकते सँ-गही सँग खेली ॥ लिये सब आधिन व्याधिन संग जरा जब आवै ज्वराकी सहेली । भगै सब देह दशा जिय साथ रहै दुरि दौरि दुराशा अकेली ॥ १२ ॥

टी०-यामें वृद्धताको व्यवहार कहत हैं पुत्रादिके कटुवचनादिसों जानित जो आधि कहे मानसी व्यथा औ व्याधि शरीर व्यथा (ज्वरादि) तिनके संगमें लिये ज्वरा जो मृत्यु है ताकी सहेली सखी जो जरा (वृद्धता) है सो जब देहमें आवति है तब ताके उरसों बाणी कांपै लागति है अर्थ मुखसों व्यक्त वचन नहीं कढत औ डीठि डगै कहे डगमगाति है औ त्वचा कहे चर्म अति कुचै कहे बहुत सिकुरि जाति है औ मति (बुद्धि) रूपी जो बेली (लता) है सो सकुचै कहे संकोचको प्राप्त होति है अर्थ बुद्धि हीन होति जाति हैं औ नव कहे नवीन प्रकारसों ग्रीवा नवै कहे नत होति है नवपद यासों कह्यौ कि और जो कोऊ काहूको नवत है अर्थ प्रणाम करत है सो नयौई नहीं रहत ग्रीवा जबसो नवति है तबसों नईही रहति है उठति

ही नहीं अथवा भयसों अनित्यको छोंडि नत होति है औ जो जीवके संगही संगमें बालकहीसे खेली है सो गति गमन जीवकी सहाय छोंडि जराके भयसों थकि रहति है औ देहकी जो दशा कहे शुभदशा है सुंदरतादि सो सब भागति है जियके साथमें दुरिकै केवल दुराशा कहे दुष्ट आशा रहि-जाति है वृद्धतामें इनकी सबको सुभावहीसों यह होति है तामें जराके भयको तर्क है तासों असिद्ध विषय हेतूत्प्रेक्षा है यह वस्तु हमको इते दिनमें मिलि है ऐसी जो बुद्धि है सो दुराशा कहावति है ॥ १२ ॥

विलोकि शिरोरुह श्वेतसमेत तनोरुहके सबको गुण गायो ।
उठे किधौं आयुके औधिके अंकुर शूलकी शुष्क समूल नशायो ॥ जरैं किधौं केशव व्याधिनकी किधौं आधिके आखर अंत न पायो । जराशरपंजर जीव जरेउ कि जरा जर कंबरसों पहिरायो ॥ १३ ॥ मनोहरविजयाछंद ॥ दिनहीं दिन बाढत जाइ हिये जरि जाइ समूलसो औषधि खैहै । किधौं याहिके साथ अनाथ ज्यों केशव आवत जात सदा दुख सैहै ॥ जग जाकी तू ज्योति जगै जड जीवन पाये तुता पहँ जान न पैहै । सुनि बालदशा गई ज्वानी गई जरि जै है जराऊ दुराशा न जैहै ॥ १४ ॥

टी०—यामें प्रसंगवश वृद्धताको वर्णन है तनोरुह कहे तनके रोम तिन सहित शिरोरुह (शिरके बारनको) श्वेत विलोकिकै या प्रकारसों गुण गायो है कि आयुर्बलकी अवधि (मर्यादा) जो आई है ताके अंकुर उठे हैं औ कि शूलनामा आयुध विशेष है शूलहू लगै शुष्क समूल कहे पूर्ण नाशको प्राप्त होत है वृद्धतामें तासों जानो औ कि अनेक जे व्याधी शरी-रव्यथा हैं तिनकी तिनकी अनेक जरैं हैं औ कि अनेक आधी जे मानसी व्यथा लिखी हैं तिनके आखर (अक्षर) हैं जिनको अंत नहीं पाइयत अर्थ बात हैं वृद्धतामें अनेक आधि, व्याधि होती हैं इति भावार्थः । औ कि जरा जो बुढाई है ताने शर (बाण) तिनके पंजरमें जीवको जरयो कहे डारयो है औ कि जराजर कहे जरबाफी कंबर सो जीवको पहिरायो है॥१३॥ यामें जीवप्रति काहूको उपदेश है सो उपदेश कहि रामचन्द्र दुराशाकृत पीडा देखावत हैं जाकी कहे जा ब्रह्मको ॥ १४ ॥

दोहा ॥ जहां भामिनी भोग तहँ, विन भामिनि कहँ भोग ॥ भामिनि छूटे जग छुटै, जग छूटे सुखयोग ॥ १५ ॥ जोई जोई जो करै, अहंकारके साथ ॥ स्नान दान तप होम जप, निष्फल जानौ नाथ ॥ १६ ॥ तोटकछंद ॥ जियमांझ अहं- पद जो दमिये । जिनहीं जिनहीं गुण श्री रमिये ॥ तिनहीं तिनहीं लखि लोभ डसै । पट तंतुनि उंदुर ज्यों तरसै ॥ १७ ॥

टी०-यामें स्त्री व्यवहार कृत पीडा कहत हैं तहां भामिनी (स्त्री) है तहांई दुःखरूपी संसारभोग हैं सो भामिनी जब छूटे जब संसार छूटै तब सुखको योग है अर्थ दुःखमय संसारको बंधन दुराशादि सम स्त्रीहू है ॥ १५ ॥ यामें अहंकारको व्यवहार कहत हैं अहंकारके साथ जो करिये सो निष्फल होत है ॥ १६ ॥ ताही अहंकारको जो काहू प्रकारसों दमिये (दूरिये) तो जिन जिन मिथ्याभावनादि गुणसों श्री जो द्रव्य है तासों रमिये अर्थ द्रव्यको प्राप्त हूजियत है तिन गुणनको देखिकै लोभ जो है सो जीवको डसत है (काटत है) अर्थ काहूको अनुत्तम कर्मसों पावत देखि लोभ जीवको प्रेरत है कि यहे कर्म करौ जामें द्रव्य लाभ होइ अहं- कारहीन प्राणी योग्यायोग्यको विचार नहीं करत जा प्रकार द्रव्य मिलै सोई ऊंच नीच कर्म करत है इति भावार्थः लोभ कैसे डसत है जैसे पट (वस्त्र) के तंतु कहे सूत्रनको उंदुर कहे मूषक तरसै कहे काटत है आशय कि जैसे मूषक पटतंतुनको वृथा काटत है कछू ताको काम नहीं है तैसे लोभ वृथा जीवको सतावत है ॥ १७ ॥

विजयछंद ॥ दान सयाननिके कलपद्रुम टूटत ज्यों ऋण ईशके मांगे । सूखत सागरसे सुख केशव ज्यों दुख श्रीहरिके अनुरागे ॥ पुण्य बिलात पहारनसे पल ज्यौं अघ राघवकी निशि जागे । ज्यों द्विजदोषते संतति नाशति त्यों गुण भाजत लोभके आगे ॥ १८ ॥

टी०-सो लोभ कैसो है ताको व्यवहार कहत हैं जैसे ईश (महादेव) हैं तिनके मांगेते ऋण टूटि जात है अर्थ जब महादेव एते द्रव्य देते हैं जामें केतेऊ बडो ऋण होइ सो दूरि होत है तैसे ता लोभके आगे दान

औ सयाननके जे कल्पद्रुमहैं ते टूटि जात हैं अर्थ लोभसों दानको अभिलाष नशि जात है औ उचितानुचित करिबेमें जो सयानप (चातुरी) है सो नहीं रहति औ जैसे श्रीहरि जे बिष्णु हैं तिनके अनुरागसों भक्ति कियेसों सो सागरसो संसारदुःख सूखत है तैसे ता लोभके आगे जो जीवके सागरसे सुख सूखि जात हैं अर्थ लोभबश इत उत प्राणी धायो धायो फिरत है धन, पुत्र कलत्रादिको सुख नहीं करन पावत औ जैसे राघवकी निशि कहे राघवसंबंधी व्रत दिन रामनौमी आदिकी निशिमें पलहू भरि जागेते अघ (पाप) बिलात हैं तैसे लोभके आगे पहारसे बडे बडे पुण्य बिलात हैं अर्थ लोभसों ऐसे ब्रह्मद्रव्यहरणादि पातक प्राणी करत हैं जासों केतेऊ बडे पुण्य होंइ तौ नशि जात हैं यामें केशवको रामोक्तिमें अपनी उक्तिको भ्रम है औ जैसे ब्रह्मदोषते संतति जो वंश है सो नशि जात है तैसे लोभके आगे अनेकगुन भागत हैं अर्थ अनेकगुणको त्याग करि प्राणी लोभवश जन जनसों दीन होत हैं ॥ "गुणशतमप्यर्थितोहरति" इति प्रमाणात् ॥ १८ ॥

दान दया शुभशील सखा बिझुकै गुणभिक्षुकको बिझुकावैं।
साधु सुधी सुरभी सब केशव भाजि गई भ्रम भूरि भजावैं ॥
सज्जन संग बछेरु डरैं बिडरैं वृषभादि प्रवेश न पावैं। बार बडे
अघबाघ बँधे उरमंदिर बालगोविन्द न आवैं ॥ १९ ॥

टी०—यामें पापको व्यवहार कहत हैं उर रूपी जो मंदिर (घर) है ताके बार कहे द्वारमें बडे पापरूपी अनेक बाघ बँधे हैं तासों उरमें जीवको परम सुखद बालगोविंद जे भगवान् हैं ते नहीं आवत युक्ति यह द्वारपै बाघ बँध्यो देखि बालक घरमें कैसे आइसकैं कैसे हैं अघबाघ कि दान औ दया औ शील ये जे जीवके सखा कहे हित हैं तिनको बिझुकै कहे डेरवाइकै आवन नहीं देत औ सूरतादि जे अनेक गुणरूपी भिक्षुक हैं तिनको बिझुकावैं क्रोधित करि देतेहैं अर्थ ऐसे डेरवावतहैं जासों गुणहू क्रुद्ध ह्वै फिरि जात हैं औ सुष्ठु जे धी बुद्धि हैं अर्थ पुण्यमार्गमें प्रवृत्त जे बुद्धि हैं तेई साधु सुरभी (गाव) हैं ते सब भाजि गईं ते कहेते भूरि कहे बडो भ्रम देखाइकै भजाइ देते हैं औ सज्जननके सत्संगरूपी जे बछेरू हैं तेऊ जिनको डरत है डरिकै उर मंदिर मंदिरमें नहीं आवत औ वृषभपद (श्लेष) है बैल औ धर्म सो जैसे बाघको देखिकै बैल बिडरै कहे भागि जात है तैसे अघ बाघनको देखि

धर्मादि भागत हैं पापके संयोगते जीवके हितसाधक जे दान दयादि हैं ते सब नशि जात हैं इति भावार्थः ॥ १९ ॥

दोहा ॥ आंखिन अछत आंधरो, जीव करै बहु भांति ॥ धीरन वीरज बिन करै, तृष्णा कृष्णाराति ॥ २० ॥ तृष्णा कृष्णा षट्पदी, हृदयकमलमों बास ॥ मत्त दंति गलगंड-युग, नर्कअनर्क विलास ॥ २१ ॥

टी०--तानि छंदनमें तृष्णाको व्यवहार कहत हैं तृष्णारूपी जो कृष्णाराति कहे कृष्णपक्षकी राति है सो आंखिन अक्षत कहे रहने पर जीवको आँधरो करति है अर्थ तृष्णायुक्त प्राणीको आंखिनसों आपनो अपमानादि नहीं देखि परत औ कृष्णा रातिहूमें अंधकारमें घटपटादि वस्तु आखिनसो नहीं देखि परत औ धीरनको धैर्य बिना करिदेति है अर्थ कहूं कछू पाइबो होइ तौ तृष्णायुक्त प्राणी कैसोऊ धीर होइ तौ धीरता छोंडि धावतहै औ रातिमें अंधकारमें चौरादि भयसों बडे धीरऊ धैर्य बिन ह्वै जात हैं ॥ २०॥ कृष्णा कहे श्याम जो तृष्णारूपी षट्पदी (भ्रमरी) है ताको हृदयरूपी कमलमें वास है ता तृष्णाको नर्क औ अनर्क कहे स्वर्गकी विलास दुवौ मत्तदंतीके गल कहे गलत अर्थ मदसों चुवत दुबो गंडस्थल हैं अर्थ जैसे भ्रमरी कमलमों बसति है औ गजनके गंडस्थलन प्रति धायो करति है सो तैसे तृष्णा नरक भोग स्वर्गभोग प्रति धायो करति है उपाय जीवको नहीं करन देति जासो जीव मुक्त होइ ॥ २१ ॥

बिजयछंद ॥ कौन गनै यहि लोक तरी न विलोकि विलोकि जहाज न बोरै । लाज विशाल लता लपटी तन धीरज सत्य तमालनि तोरै । वंचकता अपमान अयान अलाभ भुजंग भयानक कृष्णा । पाटु बडो कहूं घाटु न केशव क्यों तरि जाइ तरंगिनितृष्णा ॥ २२ ॥

टी०--फेरि कैसी है तृष्णा सो कहत हैं कि ऐसी तृष्णारूपी जो तरंगिणी नदी है सो कौनी तरहसे जीवसों तरि कहे उतरि जाइ कैसी है तृष्णा नदी कि यही लोक कहे मृत्युलोककी जे तरी कहे नौका हैं तिन्हैं कौन गनै अर्थ तिनको तो बोरिही देति है ॥ "स्त्रियां नौस्तराणिस्तारिः" इत्यमरः ॥

इहां तरी पदते मनुष्यदेह जानो अर्थ मनुष्य देहको प्राप्त है क तो जीव तृष्णाको पार पावतही नहीं है मनुष्यदेहमें तृष्णा कैसे हू नहीं मिटति इत्यर्थः ॥ बिलोकि बिलोकि कहे ढूंढि ढूंढि जहाजको बोरति है यहां जहाज पदते देवशरीर जानो अर्थ देवताहू तृष्णाको पार नहीं पावत अथवा लोकतरी पदते लोकव्यवहार युक्त मनुष्य देह जानो औ जहाज पदते संसारको त्याग किये जे योगीजन हैं तिनके शरीर जानो अर्थ योगीजन तृष्णाको पार नहीं पावते संसारविशिष्ट प्राणिनकी कहा गिनती है औ लाजरूपी जो बिशाल लता है सो लपटी हैं तनमें जिनके ऐसे धीर्य औ सत्यरूपी तमाल वृक्ष हैं तिन्हैं अति वेगसों तोरै कहे उखारि डारति है नदीहू कूलके वृक्ष उखारि डारति है इहां तमालपद उपलक्षण है तासों वृक्षमात्र जानो अर्थ तृष्णासों लाज औ सत्य प्राणीको दूर है जात है औ बंचकता कहे छल अपमान औ अयान (अज्ञानता) औ अलम्भ कहे याचितबस्तुकी अप्राप्तिरूपी जे भुजंग (सर्प) हैं तिन करिकै अति भयानक है नदीहूमें सर्प रहत हैं अर्थ बंचकतादि जे चारों हैं तिनसों युक्त सदा तृष्णा रहति है औ कृष्णा कहे श्यामरूपा है औ जाको पाटु बडो है अन्त नहीं पाइयत औ दुहूँ कूलमें कहूं घाट नहीं है जहां विश्रामहू पावैं ॥ २२ ॥

पैरत पाय पयोनिधिमैं मन मूढ मनोज जहाज चढोई । पेलत ऊन तजै जड जीव जऊ बडवानल क्रोध डढोई ॥ झूठ तरंगिनिमें उरझै सुइते परलोभ प्रवाह बढोई । बूडत है तेहि ते उबरै कहि केशव काहे न पाठ पढोई ॥ २३ ॥

टी०-यामें जीवप्रति काहूकी शिक्षा है सो प्रसंग पाइ रामचन्द्र कहत हैं हे मन ! मूढ ! जड ! जीव ! तू मनोज, (कन्दर्प) रूपी जो जहाज है तामें चढ्यो पापरूपी पयोनिधि समुद्रमें पैरत है अर्थ कामवश परस्त्रीगमनादि पाप करत फिरत है तहां अनेक अपमानादिते उत्पन्न जो क्रोधरूपी वडवानल है तामें जऊ कहे यद्यपि डढोई कहे जरिहू गयो है तऊ कहे ताहूपर मनोज जहाजमें चढि कामसमुद्रमें परिवो यह जो खेल है ताको तू नहीं तजतो एतेहूपर लोभ रूप प्रवाह बढ्यो है जामें ऐसी जो झूठरूपी तरंगिणी नदी पापसमुद्रमें मिलि है तामें उरझत है अडिजात है अर्थ लोभवश अनेक झुठाई

करत फिरत सो या प्रकार है या समुद्रमें तुम बूडत हौ सो जासों उबरै कहे निकरै सो केशव यह जो पाठ है ताको आजुतक काहे न पढ्यौ अर्थ भगवान्को ना कहे न जप्यो अबहूँ भगवान्को नाम जापिवो तोको उचित है इति भावार्थः ॥ केशव पदके कहिबेको आशय यह कि " के जले शेते" इति केशवः अर्थ वे समुद्रके जलहीमें सोयो करत हैं तासों समुद्रसों उबारिबो उनको सहज है और नामके जपहूँसों या समुद्रसों ना कढि है इति भावार्थः ॥ २३ ॥

दोहा ॥ जो केहू सुखभावना, काहूको जग होति ॥ काल आखु पट तंतु ज्यों, तबहीं काढत ज्योति ॥ २४ ॥ ब्रह्म विष्णु शिव आदि दै, जेतने दृश्य शरीर ॥ नाश हेतु धावत सबै, ज्यों वडवानल नीर ॥ २५ ॥

टी०-यामें समयके व्यवहार कहत हैं जो केहु कहे कौनहू प्रकारसों सुखभावना कहे मोक्षकी बासना जगमें काहू प्राणीके होति है तो काल कहे समयरूपी जो आखु (मूषक) है सो ता भावनाकी ज्योति कहे डोरि अथवा अंकुरको पट वस्त्रके तंतु (सूत्र) सम तबहीं कहे ताही समय काढि देत है अर्थ समौ मति फेरि देत है जासों सुखभावना दूरि ह्वै जाति है ॥२४॥ देह व्यवहार कहि अब यामें मृत्युकृत पीडा कहत हैं ब्रह्मा औ विष्णु औ शिव आदिक जितने दृश्य शरीर हैं ते अनेक यज्ञादि कर्म करि उत्पत्ति पालन संहार करनादि प्रभुत्व पाइ पुनि पुनि या संसारमें नाशहीके हेतु धावत हैं कहे प्राप्त होत हैं अर्थ या संसारमें इनको सबको नाश होत है मृत्युकृत पीडाको ये सब प्राप्त होत हैं इति भावार्थः । कैसे धावत हैं जैसे बडवानलमें समुद्रको नीर (जल) नाशके हेतु धावत है यथा योगवाशिष्ठे-"ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च सर्वे ये भूतजातयः । मृत्युर्नेष्यति भूपाल सलिलानीव वाडवः॥ २५ ॥

सुन्दरीछन्द ॥ दोषमयी जो दवारि लगी अति । देखत ही त्यहिते जो जरी मति ॥ भोगकी आशन गूढ उजागर । ज्यों रजसागरमें मुनिनागर ॥ २६ ॥ विजयाछन्द ॥ माछी कहै अपनो घर माछरु मूसो कहै अपनो घर ऐसो । कोने घुसी कहै: घूसिघिरोरा बिलारि औ व्याल बिलेमहँ वैसो ॥

कीटक श्वान सो पाक्षि औ भिक्षुक भूत कहै भ्रमि जासह जैसो। हौं हूं कहौं अपनो घर तैस्यहिता घरसों अपनो घर कैसो ॥ २७ ॥

टी०—हे मुनिनागर ! या संसारमें दोषमयी कहे दूषण (अपवाद) इति तत् स्वरूप जो दवारि डाढा है अथवा दोषमयी कहे दूषणाधिक्यरूपी जो दवारि हैं सो अति लगी है अति कहि या जनायो कि सब संसारभरेमें लगी है ऐसो स्थान या संसारमें कोऊ नहीं है कि जहां प्राणीको दोष न लगै अथवा जहां कोहूको दोष न लगावै अर्थ या संसारमें वृथा सब सबको दोष लगावत है अथवा दोष कहे परस्पर बिरोधमयी जो दवारि लगी है ताको देखतही तासों हमारी मति जरि गई है दवारिके छुयेसों जरियत हैं याके देखतही जरी कहे अति ते जनायो ता मतिमें या संसारमें राज्यादि भोगकी आश कहे इच्छा न गूढ कहे अंतरमें है न उजागर कहे प्रसिद्ध है जैसे सागर (समुद्र) में रज धूरि गूढ उजागर नहीं है जा स्थानमें जो जीव दवारिमें जरत है ता स्थानमें ताके भोगकी इच्छा नहीं होति यह रीतिही है ॥ २६ ॥ जैसे ये सब अपनो अपनो घर कहत हैं तैसे ता घरसो कहे ताही घरको होहूं अपनो कहौं सो घर अपनो कैसो कहे कौनविधि है या संसारमें कछू काहूको नहीं है वृथा ममत्व है इति भावार्थः ॥ २७ ॥

सुन्दरीछन्द ॥ जैसहि हौं अब तैसहि हौं जग। आपदसम्पदके न चलौं मग ॥ एकहि देहतियाग बिना सुनि। हौं न कछू अभिलाष करौं मुनि ॥ २८ ॥ जो कछु जीव उधारणको मत। जानत हौ तौ कहो तनु हेरत ॥ यों कहि मौन गही जगनायक। केशवदास मनो वच कायक ॥ २९ ॥ चामरछन्द ॥ साधु साधुके सभा अशेष हर्ष हर्षियो। दीह देवलोकते प्रसूनवृष्टि वर्षियो ॥ देखि देखि राजलोक मोहियो महा प्रभा। आइयो तहाँ तुरन्त देवकी सबै सभा ॥ ३० ॥

टी०—राज्यादि जे आपद बिपत्ति औ संपद संपत्तिके मग यह हैं तिनमें हौं न चलिहौं हे मुनि ! एक देह त्याग बिना और कछू अभिलाष नहीं करतो

अर्थ केवल देह त्याग करिबेहीकी इच्छा है ॥ २८॥ रत कहे अनुरक्त ॥२९॥ देवकी सबै सभा आइयो कहे आवत भई सो राजलोक कहे राजभवनकी प्रभा देखि मोहियो कहे मोहित भई ॥ ३० ॥

विश्वामित्र ॥ व्यासपुत्रके समान शुद्ध बुद्धि जानिये । ईशको अशेष तत्त्व तत्त्वसो बखानिये ॥ इष्ट हौ वशिष्ठ शिष्ट नित्य वस्तु शोधिये । देवदेव रामदेवको प्रबोध बोधिये ॥ ३१ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचन्द्रचंद्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां जगनिन्दावर्णनं नाम चतुर्विंशतितमः प्रकाशः ॥२४॥

टी०-विश्वामित्र वशिष्ठसों कहत हैं कि हम तुमको व्यासपुत्र जे शुकाचार्य हैं तिनके समान शुद्ध बुद्धि कहे ज्ञानयुक्त है बुद्धि जिनकी ऐसे जानि मत हैं अर्थ अतिज्ञानि हौ औ ईश जे ईश्वर हैं तिनको जो अशेष कहे संपूर्ण तत्त्व कहे स्वरूप है ताको तत्त्व कहे सिद्धांत सो अर्थ निश्चयात्मक बखानि एक हेतु कहत हौं ॥ " तत्त्वस्वरूपे परमात्मानि " इति मेदिनी ॥ हे शिष्ट कहे श्रेष्ठ ! वशिष्ठ ! तुम इष्ट कहे रघुवंशके गुरु हौ औ नित्य जो वस्तु है ताको शोधिये कहे ढूंढो करत हौ सो सब विधिसों तुमको उचित है तासों देवके देव जे राम देव हैं तिनको प्रबोध जो ज्ञान है तासों बोधिये कहे बोध करौ अर्थ जीवोद्धारको मत रामचंद्र पूछत हैं सो कहौ ॥ ३१ ॥

इति श्रीमज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां चतुर्विंशतितमः प्रकाशः ॥ २४ ॥

दोहा ॥ कथा पचीस प्रकाशमें, ऋषि वशिष्ठ सुख पाइ ॥ जीव उधारण रीति सब, रामहिं कह्यो सुनाइ ॥ १॥ वशिष्ठ-पद्धटिकाछन्द ॥ तुम आदि मध्य अवसान एक । अरु जीव जन्म समुझौ अनेक ॥ तुमहीं जो रची रचना विचारि । त्यहि कौन भांति समुझौं मुरारि ॥ २ ॥ सब जात बूझियत मोहिं राम । सुनिये जो कहौं जग ब्रह्म नाम ॥ तिनके अशेष

प्रतिबिंब जाल । त्यइ जीव जानि जगमें कृपाल ॥ २ ॥ निशिपालिकाछन्द ॥ लोभ मद मोह वशकाम जबहीं भयो । भूलि गये रूप निज बेधि तिनसों गयो ॥ राम–बूझियत बात यह कौन विधि उद्धरै । वशिष्ठ वेदविधि शोधि बुध यत्न बहुधा करै ॥ ४ ॥ राम–दोहा ॥ जित लै जैहै वासना, तित तित ह्वै है लीन ॥ यत्न कहो कैसे करे, जीव बापुरो दीन ॥ ॥ ५ ॥ वशिष्ठ–दोधकछन्द ॥ जीवनकी युग भांति दुराशा । होति शुभाशुभ रूप प्रकाशा ॥ यत्ननसों शुभ पन्थ लगावै । तौ अपनो तबहीं पद पावै ॥ ६ ॥

टी०–॥१॥ जीवनके जे अनेक जन्म हैं तिनको समुझौ कहे जानत हौ अथवा अनेक जे जीव हैं तिनके जन्मको अर्थ जा प्रकारसों जीवनकी उत्पत्ति है ताको समुझौ कहे मोसों बूझत हौ ॥ २ ॥ सब वस्तु जानिहूकै जो हमसों बूझियत कहे पूंछतहौ तौ सुनौं हम कहियत हैं जगमें जो ब्रह्मनाम कह्यो है अर्थ जिनको ब्रह्मनाम है तिनके जे प्रतिबिंब जा प्रतिबिंब समूह हैं तेई जीव हैं यह मत प्रतिबिंबवादिनको वेदांतमें प्रसिद्ध है ॥ ३ ॥ अपनो जो रूप ब्रह्म है ताको भूलिगये तिनसों लोभादिसों ॥ ४ ॥ वासना (दुराशा) ॥ ५ ॥ शुभ दुराशा जो ईश्वर पूजनादिकी आशा है ताके पंथमें जीवको अथवा मनको लगावै तो अपनो जो पद (स्थान) है ब्रह्मस्थान ताको पावै अर्थ शुभ-वासनाको ग्रहण करै ताके बाद ताहू वासनाको त्याग करि ब्रह्मपदको प्राप्त होय ॥ ६ ॥

हौं मनते निधिपुत्र उपायो । जीव उधारण मंत्र बतायो ॥ है परिपूरण ज्योति तिहारी । जाइ कही न सुनी न निहारी ॥ ७ ॥ दोहा ॥ ताकी इच्छाते भये, नारायण मतिनिष्ठ ॥ तिनते चतुरानन भये, तिनते जगत प्रतिष्ठ ॥ ८ ॥ दोधकछंद ॥ जीव सबै अवलोकि दुखारे । आपन चित्तप्रयोग विचारे ॥ मोहिं सुनाये तुम्हैं ते सुनाऊं । जीव उधारण गीत गुनाऊं ॥ ९ ॥ दोहा–मुक्तिपुरी दरबारके, चारि चतुर

प्रतिहार ॥ साधुनको सत संगसम, अरु संतोष विचार ॥ १० ॥ यह जग चक्रा व्यूह किय, कज्जल कलित अगाधु ॥ तामहँ पैठि जो नीकसै, अकलंकित सो साधु ॥ ११ ॥

टी०-ज्योति (ब्रह्मज्योति) ॥ ७ ॥ ८ ॥ तिन चतुरानन जगत्के जीवनको संसारमें दुखार देखिकै अपने चित्तमें तिन जीवनके उद्धारको प्रयोग कहे यत्न बिचारचौ सो सब हमको सुनायो है सो तुमको सुनाइयत है ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ यामें साधुको लक्षण कहत हैं जैसे कज्जल कलित चक्रव्यूहमें शपथार्थ पैठिकै अकलंकित कहे कज्जल चिह्न रहित निकसे सो साधु कहे दोषरहित होत है तैसे कज्जल सम दोषयुक्त जो संसार है तामें पैठि अकलंकित कहे अदोष निकसै सो प्राणी साधु है ॥ ११ ॥

दोधकछंद ॥ देखत हूं एक काल छिये हूं । बात कहै सुनै भोग किये हूं ॥ सोवत जागत नेक न क्षोभै । सो समता सबहीमहँ शोभै ॥ १२ ॥ जो अभिलाषन काहुको आवै । आये गये सुख दुःख न पावै ॥ लै परमानँदसों मन लावै । सो सब मांझ सँतोष कहावै ॥ १३ ॥ आयो कहाँ अब हौं कहि कोहौं । ज्यों अपनो पद पाऊं सो ठोहौं ॥ बंधु अबंधु हियेमहँ जानैं । ताकहँ लोग बिचार बखानैं ॥ १४ ॥

टी०-यामें समताको लक्षण कहत हैं संसारको जो स्रक् चंदन बनितादि विषयभोग है ताको देखत हूं औ छुयेहूं औ ताहीकी बात कहै औ सुनै औ भोगहू करै परंतु सोवत औ जागते नेकहू तामें क्षोभै नहीं अर्थ लीन न होय औ सबहीमें कहे अग्नि जलादिमें समता शोभै सोई समता है ॥ १२ ॥ यामें संतोषको लक्षण कहत हैं जो काहू बस्तुको अभिलाष जीमें न आवै औ काहू बस्तुके आयेसों प्राप्त भयेसों सुख न पावै औ गयेसों दुःख न पावै औ मनको लैके परमानंद जो ब्रह्म है तामें लगावै सोई सबमांझ कहे चारोंके मध्य संतोष कहावत है ॥ १३ ॥ यामें बिचारको लक्षण कहत हैं मैं कौन हौं औ कहां आयो हौं अब जा उपायसों अपने पद (स्थान) को पाऊँ सोउ ठौर कहे ढूंढौं या प्रकारसों बिचार करै औ बंधु कहे हित शम दमादि अबंधु कहे अहित काम क्रोधादिको हियेमें जानै सोई बिचार है ॥ १४ ॥

चारिमें एकहु जो अपनावै । तौ तुमपै प्रभु आवनपावै ॥ राम ॥ ज्योति निरीह निरंजन मानी । तामहँ क्यों ऋषि इच्छ बखानी ॥ १५ ॥ वशिष्ठ-दोहा ॥ सकल शक्ति अनुमानिये, अद्भुत ज्योतिप्रकाश ॥ जाते जगको होतहै, उत्पति स्थिति अरु नाश ॥ १६ ॥ श्रीराम-दोधकछन्द ॥ जीव बँधे सब आपनि माया ॥ कीन्हें कुकर्म मनो वच काया । जीवन चित्त प्रबोधन आनो । जीवनमुक्तके भेद बखानो॥१७॥

टी-०जैसे चोपदारको अपनाइकै राजाके पास सब जात हैं तैसे इन चारिमें एकहूको अपनावै तौ तुमपै जान पावै फेरि राम ऋषिसों पूछ्यो कि ज्योतिको तौ निरीह कहे इच्छारहित औ निरंजन कहे रागरहित मान्यो औ कह्यो कि "ताकी इच्छाते भये, नारायण मातिनिष्ठ" तौ ज्योतिमें इच्छा क्यों कही सो कहौ ॥ १५ ॥ वसिष्ठ कह्यो कि अद्भुत जो ज्योतिको प्रकाश है तामें इच्छादि कहैं तौ नहीं परंतु इच्छादिकनकी सबकी शक्ति अनुमानियतहै जा शक्तिसों संसारकी उत्पत्ति स्थिति नाश होत है ॥ १६ ॥ जीव जे हैं ते अपनीमायामें बँधे मनसा वाचा कर्मणा कुकर्म (कुत्सितकर्म) कीन्हे हैं तिन जीवनको जो प्रबोधन कहे ज्ञान तुम कह्यो सो हम चित्तमें आन्यो अर्थ अभ्यास जान्यो इति अब जीवनमुक्तके भेद कहौ ॥ १७ ॥

वशिष्ठ ॥ बाहेरहूं अति शुद्ध हियहू । जाहि न लागत कर्म कियेहू ॥ बाहेर मूढ सो अंत सयानो । ताकहँ जीवन मुक्त बखानो ॥ १८ ॥ दोहा ॥ आपुनसो अवलोकिये, सबही युक्तायुक्त ॥ अहंभाव मिटि जाहि जो, कौन बद्ध को मुक्त ॥ १९ ॥ श्रीराम दोधक ॥ सो सिगरे गुण होत सो जानो । स्थावर जीवन मुक्त बखानो ॥ वशिष्ठ ॥ जानि सबै गुण दोषण छंडै । जीवनमुक्तनके पद मंडै ॥ २० ॥ रामदोहा ॥ साधु कहावत करत हैं, जगमें सब व्यौहार ॥ तिनको मीचु न छै सकै, कहि प्रभु कौन विचार ॥ २१ ॥

टी०-यामें जीवन्मुक्तको लक्षण कहते हैं बाहर कहे तनमें औ हियहूमें

कहे मनहूमें शुद्ध होय औ पाप पुण्य कर्म करै सो लागै नहीं औ बाहर मूढ अज्ञान रहे अर्थ बावरे सम रहै औ अंतमें सयानो रहै ताहीको जीवन्मुक्त कहियत है ॥ १८ ॥ युक्त कहे योग्य मनुष्यादि अयुक्त कहे अयोग्य सूकरादि तिनको आपुनसों कहे आपने सम अवलोकिये (देखिये) अर्थ अपने सम सबको जानिये औ अहंभाव मिटि जाय तौ कौन बद्ध है कौन मुक्त है अर्थ सबही मुक्त हैं ॥ १९ ॥ योग्यके गुण अयोग्यके दोष जानिकै त्याग करै ॥ २० ॥ रामचन्द्र कहत हैं कि ज्ञानसों जीवनकी मुक्ति कह्यो सो जान्यो अब यह यहौ कि जे प्राणी साधु कहावत हैं औ जगमें स्त्री पुत्रादिके सब व्योहार करत हैं तिनको मीचु नहीं छुई सकति अर्थ तिनकी मृत्यु नहीं होति है ताको बिचार हे प्रभु ! हे वशिष्ठ ! कहौ ॥ २१ ॥

वशिष्ठ पद्धटिकाछन्द ॥ जग जिनको मन तव चरणलीन । तनतिनको मृत्यु न करति क्षीन ॥ तेहि क्षणहीं क्षण दुख क्षीण होत । जिय करत अमित आनँद उदोत ॥ २२ ॥ जो चाहे जीवन अति अनंत । सो साधै प्राणायाम यंत्र ॥ शुभ रेचक पूरकनाम जानि । अरु कुम्भकादि सुखदानि मानि ॥ २३ ॥ जो क्रम क्रम साधै साधु धीर । सो तुमहीं मिलै याहि शरीर ॥ राम ॥ जग तुमते नहिं सर्वज्ञ आन । अब कहौ देवपूजाविधान ॥ २४ ॥

टी०—हे राम! जिन प्राणिनको मन तुम्हारे चरणमें लीन हैं ते साधु जगमें सब व्यवहारहू करत हैं ताहूपर तिनके तनको मृत्यु क्षीण नहीं करि सकति औ तिहि प्राणीके क्षणमें संसाररूपी दुःख क्षीण होत हैं औ मुक्तिरूपी जो अमित आनन्द है सो उदोत (प्रकाश) करत है ॥ २२ ॥ अंगुष्ठ ते तृतीय अंगुलीको नाम अनामिका है तासों नासाको बाम रंध्र अंगुष्ठसों रोकि बाम रंध्रसो वायुको छोडिये सो पूरक प्राणायाम है; औ दक्षिण रंध्र अंगुष्ठसों औ बामरंध्र अंगुष्ठसों औ बामरंध्र अनामिकासों साथही रोंकि वायुको हृदयमें स्थापन करिये सो कुम्भक है औ यथा वायुपुराणे "प्राणायामस्त्रिधा प्रोक्तो रेचकः पूरकस्तथा ॥ कुम्भको रेचकस्तत्र नासारंध्राच्च दक्षिणात् ॥ निरुध्य वामरंध्रञ्चानामिकया विसर्जनम् ॥ निरुध्य दक्षिणं रंध्रं बामरंध्राच्च पूरणम् ॥ तथैवानामिकांगुल्या पूरणं तु तदुच्यते ॥ रेचकात्पूरणात्पश्चाद्वैपुट नाशयोस्तथा । सन्निरुध्य हृदिस्थाप्य वायुं तिष्ठेत्स कुम्भकः" ॥२३॥२४॥

वशिष्ठ-तारकछंद ॥ हम एक समय निकसे तपसाको। तब जाइ भजे हिमवंतरसाको ॥ बहु भांति करचो तप क्यों कहि आवै । शितकण्ठ प्रसन्न भये जग गावै ॥ २५ ॥ दंडक ॥ ऊजरे उदार उर बासुकी विराजमान हारके समान आन उपमा न टोहिये। शोभिजै जटान बीच गंगाजूके जलबुंद कुंदकीसी कली केशोदास मन मोहिये ॥ नखकीसी रेखा चंद्रचन्दनसी चारु रज अंजन शृंगारहू गरल रुचि रोहिये। सब सुख सिद्धि शिवा सोहै शिवजूके साथ जावकसो पावक लिलार लाग्यो सोहिये ॥ २६ ॥

टी०-रसा (पृथ्वी) जग गावै अर्थ जिनको जगत्के प्राणी गान करत हैं ॥ २५ ॥ उजरे औ उदार कहे बडे उरमें हार मालाके समान बासुकी नाम सर्प बिराजमानहै और उपमाको नहीं टोहिये कहे ढूंढियत अर्थ और उपमाके सदृश नहीं हैं तासों खोज नाहीं करियत रज कहे विभूति अंजन जो शृंगार है ताकी रुचि गरल जो विष है तौं करिके रोहिये कहे धारण करियत है अर्थ लगिगयो पार्वतीके नेत्रांजन सम गरल शोभित है सब सुखकी सिद्धिशिवा जो पार्वतीजी हैं ते संगमें शोभती हैं औ जावक कहे महाउर सम लिलारमें लाग्यो पावक (अग्नि) शोभित है ऐसे सदा सुरत चिह्नयुक्त प्रसन्न ह्वै हमारे समीप आये इतिशेषः ॥ २६ ॥

महादेव-तारकछन्द ॥ बर माँगि कछू ऋषिराज सयाने। बहु भांति चले तपपंथ पयाने ॥ वशिष्ठ ॥ पुजवो परमेश्वर मो मन इच्छा । सिखवो प्रभु देवप्रपूजनशिक्षा ॥ २७ ॥ शिव दोहा ॥ राम रमापति देव नहिं, रंग न रूप न भेव ॥ देव कहत ऋषि कौनको, सिखऊं जाकीसेव ॥ २८ ॥ वशिष्ठ-तोमरछंद ॥ हम कहा जानहिं अज्ञ । तुम सर्वदा सर्वज्ञ ॥ अब देव देहु बताइ । पूजा कहौ समुझाइ ॥ २९ ॥ शिव ॥ सतचित्प्रकाशप्रभेव। तेहि वेदमानत देव ॥ तेहि पूजि ऋषि रुचि मंडि । सब प्राकृतनको छांडि ॥ ३० ॥ पूजा यहै उर

आनु । निर्व्याज धरिये ध्यानु ॥ यों पूजि घटिका एक ।
मनु कियो याज अनेक ॥ ३१ ॥

टी०-चले तपपंथमें अर्थ उचित तपपंथमें तुम बहुभांति पयाने कहे गमन करचौ है अर्थ बडो तप करचो है ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ सत कहे सत्यरूप चित् कहे चैतन्यरूप जो प्रकाश कहे ज्योति जो रामचन्द्रको प्रभेव कहे भेद है अर्थ रूपांतर है ताको देव वेद मानत हैं प्राकृत कहे लघु गणेशादि ॥ ३० ॥ निर्व्याज कहे निष्कपट ध्यानको धरिये यहै ता देवकी पूजा है अर्थ ताकी पूजा ध्यानही है और नहीं है ॥ ३१ ॥

जिय जान यहई योग । सब धर्म कर्म प्रयोग ॥ सब रूप पूजि प्रकाश । तब भये हमसे दास ॥ यह बचन करि परमान । प्रभु भये अंतर्द्धान ॥ ३२ ॥ दोहा ॥ यह पूजा अद्भुत अगिनि, सुनि प्रभु त्रिभुवन नाथ ॥ सबै शुभाशुभ वासना, मैं जारी निज हाथ ॥ ३३ ॥ झुलनाछंद ॥ यहि भांति पूजा पूजि जीव जो भक्त परम कहाइ । भवभक्तिरस भागीरथीमहँ देहि डुबनि बहाइ ॥ पुनि महाकर्त्ता महात्यागी महाभोगी होइ । अतिशुद्ध भाव रमै रमापति पूजि है सब कोइ ॥ ३४ ॥ दोहा ॥ राग द्वेष बिन कैसहूं, धर्माधर्म जो होइ ॥ हर्षशोक उपजै न मन, कर्त्ता महा सो लोइ ॥ ३५ ॥

टी०-धर्मके जे दानादि कर्म हैं तिनको प्रयोग कहे यत्न सब प्राणी प्रकाश जो रूप है ज्योतिरूप ताको पूजिकै हमारे सम दास भये हैं परिमाण कहे निश्चय ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ जो जीव या प्रकारसों पूजा पूजिकै परमभक्त कहायकै भव जो संसार है ताके दुःखनको भक्तिरसकी जो भागीरथी गंगा हैं तामें बहाइ देइ अर्थ दूरि करै फेरि महाकर्त्ता औ महात्यागी औ महाभोगी होइ औ शुद्धभावसों रमापति (ईश्वर) में रमैं कहे प्राप्त होइ औ ताको सब कोउ पूजन करिहैं ॥ ३४ ॥ महाकर्त्तादिकनके तीनहूके लक्षण क्रमसों कहत हैं जाके राग कहे प्रीति बिना जीव रक्षणादि कछू धर्म अकस्मात् ह्वै जाइ ताको हर्ष कहे सुख न होइ औ द्वेष कहे विरोध बिना जीवहिंसादि अधर्म होइ ताको शोक दुःख ना होइ सो प्राणी महाकर्त्ता हैं ॥३५॥

दोहा ॥ भोज अभोजन रत विरत, नीरस सरस समान ॥ भोग होइ अभिलाष विन, महाभोगता मान ॥ ३६ ॥ जो कछु आंखिन देखिये, वाणी वण्योंजाहि ॥ महातियागी जानिये, झूठो जानौ ताहि ॥ ३७ ॥ तोमरछंद ॥ जिय ज्ञान बहुव्योहार । अरु योग भोग विचार ॥ यहि भांति होइ जो राम । मिलिहैं सो तेरे धाम ॥ ३८ ॥ सवैया ॥ निशिबासर वस्तु विचार करै मुख सांच हिये करुणाधनु है । अघनिग्रहसंग्रह धर्मकथा न परिग्रह साधुनको गनु है ॥ कहि केशव योग जगै हियभीतर बाहेर भोगनसों तनुहै । मनु हाथ सदा जिनके तिनको बनही घर है घरही बनु है ॥ ३९ ॥

टी०—भोज कहे भक्ष्य औ अभोज (अभक्ष्य) पदार्थमें रत (अनुरक्त) औ विरत (बिरक्त) न होइ अर्थ भोज्य अभोज्यको समान भक्षण करै औ निरस कहे स्वादरहित सरस (स्वादयुक्त) बस्तु जाको समान होइ औ भोग जाको अभिलाष बिना होइ सो महाभोक्ता है ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ जाके जियमें ज्ञानको बहुत प्रकारको व्यौहार है औ योग औ भोगको बहु बिचार है ऐसो जब होइ तब तुम्हारो जो धाम (तेज) है ज्योतिरूप ताको मिलि है अथवा धाम कहे घर वैकुंठ ताको मिलि है (प्राप्त) ह्वै है ॥ ३८ ॥ बस्तुविचार कहे ब्रह्मविचार अथवा सत् असद्वस्तुको विचार निग्रह (ताडन) परिग्रह कहे परिजन (निकटवासी) इति ॥ "परिग्रहः परिजने" इति मेदिनी ॥ ३९ ॥

दोहा ॥ लेइजो कहिये साधु अन, लीन्हे कहिये बाम ॥ सबको साधन एक जग, राम तिहारो नाम ॥ ४० ॥ राम ॥ मोहिं न हु तो जनाइबे, सबही जान्यौ आजु ॥ अब जो कहौ सो करि बनै, कहे तुम्हारे काज ॥ ४१ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायागिंद्रजिह्विरचितायां जीवोद्धारवर्णनं नाम पंचविंशः प्रकाशः ॥ २५ ॥

टी०-बाम कहे कुटिल साधन कहे उपाय अर्थ मुक्तिको उपाय केवल तुम्हारे नामको जप है ॥ ४० ॥ जो आपनो ईश्वरत्व मोहि काहूको जनाइ कोई नहीं रह्यौ सो सबही जान्यौ तासों जो कहौ सो अब करिये अर्थ राज्य लेबेको कहत हौ सो लेहैं ॥ ४१ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसाद-निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां पंचविंशः प्रकाशः ॥ २५ ॥

दोहा ॥ कथा छबीस प्रकाशमें, कह्यो वशिष्ठ विवेक ॥ रामनामको ताव अरु; रघुबरको अभिषेक ॥ १ ॥ मोटनक-छंद ॥ बोले ऋषिराज भरत्थ तबै । कीजै आभिषेक प्रयोग सबै ॥ शत्रुघ्न कह्यो चुप ह्वै न रहौ । श्रीरामके नामको तत्त्व गहौ ॥ २ ॥

टी०-जब रामचन्द्र राज्य अंगीकार करचो तब ऋषिराज (वशिष्ठ) सों भरत बोले प्रयोग (यत्न) शत्रुघ्न भरतसों कह्यो कि चुप क्यों नहीं ह्वै रहते अर्थ राज्याभिषेक तौ रामचन्द्र अंगीकार करचो है तो ह्वै हैई ॥ १ ॥ जो ऋषिराज कह्यो है कि सबको साधन एक जग, राम तिहारो नाम ॥ ता रामनामकी तत्त्व ऋषिसों गहौ अर्थ सुनिकै धारण करो ॥ २ ॥

राम-मोटनकछन्द ॥ श्रद्धा बहुधा उर आनि भई । ब्रह्मासु-तसों बिनती विनई ॥ श्रीरामको नाम कहौ रुचिकै । मति-मान महामनको शुचिकै ॥ ३ ॥ वशिष्ठ-स्वागताछन्द ॥ चित्तमांझ जब आनि अरूझी । बात तातकहँ मैं यह बूझी॥ योग याग करि जाहि न आवै । स्नान दान विधिमर्म न पावै ॥ हे अशक्त सब भांति बिचारो। कौन भांति प्रभु ताहि उधारो।४।

टी०-शत्रुघ्नके उरमें बडी श्रद्धा भई ॥ ३ ॥ अरुझी अर्थ संदेह भई तात (ब्रह्मा) मर्म (सिद्धान्त) ॥ ४ ॥

ब्रह्मा भुजंगप्रयातछन्द ॥ जहीं सच्चिदानन्दरूपे धरैंगे । सुत्रै-लोक्यको तापतीन्यों हरैंगे ॥ कहैगो सबै नाम श्रीराम ताको । सदा सिद्ध है शुद्ध उच्चार जाको ॥ ५ ॥ कहै नाम आधो सो

शावे । कहे नाम पूरो सो वैकुंठ पावे ॥ सुधारैं दुहूं लोकको वर्ण दोऊ । हिये छद्म छांडे कहे वर्ण कोऊ ॥ ६ ॥ सुनावे सुने साधुसंगी कहावे । कहावे कहे पापपुंजै नशावे ॥ स्मरावे स्मरे वासना जारि डारे । तजे छद्मको देवलोकै सिधारे ॥ ७ ॥ तामरसछंद ॥ जब सब वेद पुराण नशै हैं । जप तप तीरथ हू मिटि जैहैं ॥ द्विज सुरभी नहिं कोउ विचारे । तब जग केवल नाम उधारे ॥ ८ ॥ दोहा ॥ मरणकाल काशीविषे, महादेव निज धाम ॥ जीवनको उपदेशिहैं, रामचन्द्रको नाम ॥ ९ ॥ मरणकाल कोऊ कहे, पापी होइ पुनीत ॥ सुखही हरिपुर जाइ है, सब जग गावे गीत ॥ १० ॥

टी०—और मंत्र पुरश्चरणादिसों सिद्ध किये जात हैं औ याके शुद्ध उच्चार सदाही सिद्ध हैं ॥ ५ ॥ आधो नाम रा अथवा म अधोगति (नरक) इति, पूरे नामके जपसों वैकुंठ प्राप्ति होति है मृत्युलोकमें कहा होत है ता लिये फेरि कहत हैं कि राम ये जे दुवौ अंक (वर्ण) हैं ते मृत्युलोक, स्वर्गलोक दुवौ सुधारत हैं मृत्युलोकमें यश गौरवादिको लाभ होत है, वैकुंठमें देवसुख प्राप्त होत है इत्यर्थः ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

दोहा ॥ रामनामके तत्त्वको, जानत वेदप्रभाव ॥ गंगाधर के घरणिधर, बालमीकि मुनिराव ॥ ११ ॥ दोधकछंद ॥ सातहु सिंधुनके जल रूरे । तीरथजालनिके पय पूरे ॥ कंचनके घट वानर लीने । आइ गये हरि आनँद भीने ॥ १२ ॥ दोहा ॥ सकलरत्नमय मृत्तिका, शुभ औषधी अशेष ॥ सात द्वीपके पुष्प फल, पल्लवरस सविशेष ॥ १३ ॥ दोधकछंद ॥ आंगन हीरनको मन मोहै । कुंकुम चन्दन चर्चित सोहै ॥ है सरसी सम शोभ प्रकाशी । लोचन मीन मनोजविलाशी ॥ १४ ॥ दोहा ॥ गजमोतिनयुत शोभिजैं, मरकतमणिके थार ॥ उदकबुन्दसों जनु लसत, पुरइनिपत्र अपार ॥ १५ ॥ विशेष-

कछंद ॥ भांतिन भांतिन भाजन राजत कौन गनै । ठौरहि ठौर रहे जनु फूलि सरोज घनै ॥ भूपनके प्रतिबिम्ब विलोकत रूप रसे । खेलत है जलमांझ मनो जल देव बसे ॥१६॥ पद्धटिकाछंद ॥ मृगमद मिलि कुंकुम सुरभि नीर । घनसारसहित अम्बर उसीर ॥ घसि केशरिसों बहु विविधिनीर । क्षिति छिरके चर थावर शरीर ॥ १७ ॥ बहु वर्ण फूल फल दल उदार । तहँ भरि राखे भाजन अपार ॥ तहँ पुष्पवृक्ष शोभैं अनेक । मणिवृक्ष स्वर्णके वृक्ष एक ॥ १८ ॥ त्याहि उपर रच्यो एकै वितान । दिवि देखत देवनके विमान ॥ दुहुँ लोक होत पूजाविधान । अरु नृत्य गीत वादित्र गान ॥ १९ ॥

टी०-धरणिधर (शेष) ॥ ११ ॥ हरि जे रामचन्द्र हैं तिनके अभिषेकोत्सवके आनंदमें भीने इत्यर्थः ॥ १२ ॥ रस (घृतादि) ॥ १३ ॥ भांतिन भांति तीनि छंदमें एक बाक्यता है सरसी तडाग ता आंगनमें प्रतिबिंबित जे सबके लोचन हैं तेई मनोजके (कामके) मीन (मत्स्य) हैं अथवा मनोजबिलासी कहे कामके खेलिवेके मीन हैं ॥ १४ ॥ ताही तडागमें पात्र पुरइनि पत्र समहैं ॥ १५ ॥ ताही तडागमें भाजन कहे पात्र सरोज सम फूलि रहे हैं प्रतिबिंब जल देव सम हैं ॥ १६ ॥ सुरभि (सुगंधि अथवा सुंदर) " सुराभिर्हीम्नि चंपके जातीफले मातृभेदे रम्ये चैत्रवसंतयोः ॥ सुगंधौ गवि शल्लक्याम् ॥ " इति हेमचंद्रः ॥ अम्बर सुगन्ध वस्तु विशेष ॥ " अंबरं नद्वयो व्योम्निसुगन्ध्यंतरवस्त्रयोः " इति मेदिनी ॥ सरिस (बराबरिसों) अर्थ मृगमदादि सब सम घसिकै ॥ १७ ॥ दलपत्र (भाजपात्र) ॥ १८ ॥ एकै अपूर्व वादित्र (बाजने) ॥ १९ ॥

तरु ऊमरिको आसन अनूप । बहु रचित हेममय विश्वरूप ॥ तहँ बैठे आपुन आइ राम सियसहित मनो रति रुचिर काम ॥२०॥ जनु घन दामिनि आनन्द देत । तरु कल्प कल्पवल्लीसमेत ॥ है कैधौं विद्यासहित ज्ञान । कै तपसंयुत मनसिद्धि जान ॥ २१ ॥ कै विक्रमयुत कीरति प्रवीन । कै श्रीनारायण शोभलीन ॥ कै अतिशोभित स्वाहासनाथ । कै सुन्दरता शृंगार

साथ ॥ २२ ॥ सुन्दरीछंद ॥ केशव शोभन छत्र विराजत । जाकहँ देखि सुधाधर लाजत ॥ शोभित मोतिनके मतिके गन । लोकनके जनु लागि रहे मन ॥ २३ ॥ दोहा ॥ शीतलता शुभता सबै, सुन्दरताके साथ ॥ अपनी रविकी अंशु ले, सेवत जनु निशिनाथ ॥ २४ ॥

टी०—ऊमरि (गूलरी) हैममय कहे सुवर्णमयी विश्व कहे संसारके रूप अर्थ संसारके वस्तु स्वरूपन करिके रचित है (चित्रित) है ॥ २० ॥ कै तपसंयुत सिद्धि कहे तपसिद्धि यह मनमें जानु इत्यर्थः ॥२१॥ श्री (लक्ष्मी) सनाथ कहे अग्नि सहित शृंगाररस अथवा भूषणको शृंगार कियेसों सुन्दरता बढति है तासों जानों ॥ २२ ॥ २३ ॥ ताही छत्रमें तर्क है शीतलता औ शुभता कहे मांगल्य औ सुन्दरता जो सब कहे पूर्ण है तिनके संग अपनी औ रविकी अंशु (किरणि) लैके मानों निशिनाथ (चन्द्रमा) रामचन्द्रको सेवत है चन्द्रकिरणि सम मुक्तनकी किरणि हैं रविकिरणि सम औ जटित जे माणिकादि मणि हैं तिनकी किरणि हैं औ शीतलतादि हैंही ॥ २४ ॥

सुन्दरीछन्द ॥ ताहि लिये रविपुत्र सदा रत । चमर बिभीषण अंगद ढारत ॥ कीरति लै जगकी जनु वारत । चन्द्रकचंदन चंद सवारत ॥ २५ ॥ लक्ष्मण दर्पणको देखरावत । पाननि लक्ष्मण बंधु खवावत ॥ भर्थ लैलै नरदेव सदारत । देव अदेवनि पायन पारत ॥ २६ ॥ दोहा ॥ जामवंत हनुमंत नल, नील मरातिन साथ ॥ छरी छबीली शोभिजे, दिक्पालनके हाथ ॥ २७ ॥ रूप बहिक्रम सुरभिसम, वचनरचन बहु भेव ॥ सभामध्य पहिचानिये, नर नर देवन देव ॥ २८ ॥ आई जब अभिषेककी, घटिका केशवदास ॥ बाजे एकहि बार बहु, दुंदुभि दीह अकाश ॥ २९ ॥

टी०—रत कहे अनुरक्त है कीर्तिसम चमर है फिरि चमर कैसे हैं कि चंद्रक जो कपूर है औ चंदन औ चंद्रमा है सदा आर्त कहे पीडित जिनसों अर्थ

जिनकी श्वेततासों अपनी श्वेतताही न समुझि चंद्रकादि दुःखी होत हैं ॥ ॥ २५ ॥ २६ ॥ माही (मरातिब) प्रसिद्ध है छरी (आशा) ॥ २७ ॥ सुरभि (सुगंधि) ॥ २८ ॥ २९ ॥

झूलनाछंद ॥ तब लोकनाथ विलोकिकै रघुनाथको निज हाथ । सविशेषसों अभिषेककी पुनि उच्चरी शुभ गाथ ॥ ऋषि राज इष्ट वशिष्ठसों मिलि गाधिनन्दन आइ । पुनि बालमीकि वियास आदि जिते हुते मुनिराइ ॥ ३० ॥ रघुनाथ शंभुस्वयंभुको निज भक्ति दी सुख पाइ । सुरलोकको सुरराजको किय दीह निर्भय राइ ॥ विधिसों ऋषीशनसों विनय करि पूजि औ पारि पाइ । बहुधा दई तपवृक्षकी सब सिद्धिसिद्ध सुभाइ ॥ ३१ ॥

टी०-लोकनाथ जे ब्रह्मा हैं तिन अभिषेककी घटिका आई बिलोकिके निज हाथसों रघुनाथको अभिषेक की कहे करचो पुनि फेरि शुभ गाथ कहे वेदविहित गाथको उच्चार करचो इत्यर्थः । पुनि कहे ब्रह्माके अभिषेक किये बाद बशिष्ठादिक जेते मुनिराय ता ठौर हुते तिनहुँन अभिषेक करि शुभगाथ उच्चरी इत्यर्थः ॥ ३० ॥ स्वयंभू कहे ब्रह्मा ॥ ३१ ॥

दोहा ॥ दीन्हों मुकुट बिभीषणै, अपनो अपने हाथ ॥ कंठमाल सुग्रीवको, दीन्ही श्रीरघुनाथ ॥ ३२ ॥ चञ्चरछिन्द ॥ मालश्री रघुनाथके उर शुभ्र सीताहि सोदई । आफियो हनुमन्तको तिन दृष्टि के करुणामई ॥ और देव अदेव वानर याचकादिक पाइयो । एक अङ्गद छोडिकै ज्वइ जासुके मन भाइयो ॥ ३३ ॥ अंगद ॥ देव हो नरदेव बानर नैऋतादिक घरि हौं । भरत लक्ष्मण आदि दै रघुवंशके सब बीरहौं ॥ आजु मोसन युद्ध माडहु एक एक अनेकके । बापको तब हौं तिलोदक दीह देहु विवेकके ॥ ३४ ॥ राम-दोहा ॥ काऊ मेरे वंशमें, करिहै तोसों युद्ध ॥ तब तेरो मन होइगो, अंगद मोसों शुद्ध ॥ ३५ ॥ विधिसों पाँय पखारिकै,

राम जगतके नाह ॥ दीन्हेउ गाउं सनोढियन, मथुराम-
ण्डलमाह ॥ ३६ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रि-
कायामिन्द्रजिद्विरचितायां रामस्यराज्याभिषेकवर्णनं-
नाम षड्विंशःप्रकाशः ॥ २६ ॥

टी०—॥ ३२ ॥ आफियो कहे दियो तिन सीताजू ॥३३॥३४॥३५॥३६॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां
रामभक्तिप्रकाशिकायां षड्विंशः प्रकाशः ॥ २६ ॥

दोहा ॥ सत्ताइसें प्रकाशमें, रामचन्द्र सुखसार ॥ ब्रह्मादिक
अस्तुति विविधि, निज मतिके अनुसार ॥ १ ॥ ब्रह्मा-
झूलनाछन्द ॥ तुम हो अनंत अनादि सर्वग सर्वदा सर्वज्ञ ।
अब एक हौ कि अनेक हो महिमा न जानत अज्ञ ॥ भ्रमिवो
करैं जग लोक चौदह लोभमोहसमुद्र । रचना रची तुम
ताहि जानत हौं न ब्रह्म न रुद्र ॥ २ ॥

टी०—॥ १ ॥ सर्बग कहे सर्वत्र व्याप्त लोभ मोहके समुद्र अर्थ लोभ मोहसों
रे जे चौदहलोक कहे चौदहौं लोकके प्राणी जा रचनामें भ्रमिवो करत हैं :
र्थ संदेहको प्राप्त भयो करत हैं ता रचनाको नहीं जानत हौं न ब्रह्म (बेद)
ानत हैं न रुद्र जानत हैं अथवा चौदहलोकमें लोभ औ मोहके समुद्रमें हम
भ्यो करत हैं तासों तुम्हारी रचनाको नहीं जानत ॥ २ ॥

शिव—दण्डक ॥ अमल चरित तुम वैरी न मलिन करो साधु
कहैं साधु परदारप्रिय अति हौं । एक स्थल स्थितपै बसत
जग जन प्रिय केशोदास द्विपदपै बहुपदगति हो ॥ भूषण
सकल युत शीश धरे भूमिभार भूतल फिरतपै अभूत भुवपति
हो । राखो गाइ ब्राह्मणन राज सिंह साथ चिरु रामचन्द्र
राज करो अदभुत गतिहो ॥ ३ ॥ इन्द्र ॥ वैरी गाइ ब्राह्मणको
ग्रन्थनमें सुनियतु कविकुलहीके सुवरण हरकाज है । गुरु-
भ्यागामी एक बालके बिलोकियतु मातंगनहींके मतवारे

केसो साज है ॥ अरिनगरीन प्रति होत है अगम्या गौन दुर्ग नहिं केशोदास दुर्गतिसी आज है । देवताई देखियतु गढनि गढोई जीवो चिरु चिरु रामचन्द्र जाको ऐसो राज है ॥ ४ ॥

टी०-याहूमें विरोधाभास है अनल (निर्मल) चरितनसों वैरिनको मलिन करत हौ इत्यर्थः पर कहे उत्कृष्ट दार अर्थ लक्ष्मीजू । "राघवत्वे भवेत्सीता रुक्मिणी कृष्णजन्मनि" इति पुराणात् ॥ जा भूमिको शीशमें धरे हैं ताही पर फिरिवो विरोध है गाय सदृश जे ब्राह्मण हैं तिनहूंको राखत हौ रक्षा करत अथवा गाय औ ब्राह्मणको राखत हौ औ राजसिंह कहे राजरूपी. जे सिंह हैं तिनसों साथ कहे मित्रता है तौ सिंहसों मित्रता औ गायकी रक्षा यह बिरोध है ॥ ३ ॥ यामें परिसंख्यालंकार है ग्रंथनमें लिख्यो है कि गाइ ब्राह्मणके वैरसों ऐसो पाप होत है सुंदर वर्ण (अक्षर) कवितामें धरिवेको देवताई कहे देवताकी प्रतिमाही ढांकी आदिकी गढनिसों गढी देखियत है और कोऊ प्राणी नहीं गढ्यो जात अर्थ ताडनाको नहीं प्राप्त होत ॥ ४ ॥

पितर । बैठे एकछत्रतर छाँह सब छितिपर सूरकुल कलश सुराहु हितमति हौ । त्यक्त वामलोचन कहत सब केशोदास विद्यमान लोचन द्वै देखियतु अति हौ ॥ अकर कहावत धनुष धरे देखियतु परम कृपालुपै कृपाण करपति हौ । चिरु चिरु राज करो राजा रामचंद्र सब लोक कहैं नर देव देव गति हौ ॥५॥ अग्नि । चित्रहीमें आज वर्णसंकर विलोकियतु व्याह-हीमें नारिनके गारिनसों काज है । ध्वजै कंप योगी निशिचक्रै है वियोगी द्विजराज मित्रद्वेषी एक जलद समाज है ॥ मेघै तो गगनपर गाजत नगर घेरि अपयश डर यशहीको लोभ आज है । दुःखहीको खंडन है मंडन सकल जग चिरु चिरु राज करौ जाको ऐसो राज है ॥ ६ ॥

टी०-यामें विरोधाभास है बिरोधपक्ष राहु (ग्रह) अविरोध सुराह कहे सुमार्ग त्यक्त कहे त्यागे वामलोचन औ वाम कहे कुटिल लोचन अर्थ काहूसों टेढे लोचन करि नहीं ताकत विद्यमान कहे प्रत्यक्ष अकर कहे दंड रहित अर्थ काहूको तुम दंड द्रव्य नहीं देते कृपाण जो करवाल है सो है

१ तलवार.

करमें हाथमें जिनके ॥ ५ ॥ यामें परिसंख्या है वर्ण जे अरुणादि हैं तिनको संकर मिलाइवो द्विजराज (चन्द्रमा) मित्र (सूर्य) जाको राज सकल जगको मंडन (भूषण) है ऐसे जे तुम हौ ते चिरु चिरु कहे बहु काल पर्यंत राज करौ ॥ ६ ॥

वायु ॥ राजा रामचंद्र तुम राजहु सुयश्जाको भूतलके आस पास सागरको पाससो । सागरमें बडभाग वेष शेषनागजूको जपै सुखदानि सोई विष्णुको निवाससो ॥ विष्णुजूमें भूरि-भावको प्रभाव जैसो भवजूके भालमें विभूतिको विलाससो । भूतिमाह चंद्रमासो चंद्रमें सुधाको अंशु अंशुनिमें केशोदास चंद्रिका प्रकाशसो ॥ ७ ॥ देवगण । राजा रामचंद्र तुम राज करो सब काल दीरघ दुसह दुख दीननको दारिये । केशो-दास मित्रदोष मंत्रदोष ब्रह्मदोष देवदोष राजदोष देशते निका-रिये ॥ कलह कृतघ्न महिमंडलके वरिबंड पाखंड अखंड खंड खंड करि डारिये । वंचक कठोर ठेलि कीजे बाट आट झूठ पाठ कंठ पाठकारी काठमाहिं मारिये ॥ ८ ॥ ऋषिगण । भोगभार भागभार केशव विभूतिभार भूमिभार भूरि अभि-षेकनके जलसे । दानभार गानभार सकल सयानभार घन-भार धर्मभार अक्षत अमलसे ॥ जय भार यशभार राजभार राजत है राम शिर आशिष अशेष मंत्रबलसे । देश देश यत्र तत्र देखि देखि तेहि दुख फाटत हैं दुष्टनके शीश दाह्यो फलसे ॥ ९ ॥

टी०—पास कहे फांस अंशु (किरणि) ॥ ७ ॥ दारिये कहे नाश करत बंचक (ठग) कठोर (निर्दय) झूठरूपी जो पाठ है ताके जे कंठपाठकारी हैं अर्थ जे गूढही कह्यौ करत हैं विभूति (ऐश्वर्य) ॥ ८ ॥ ९ ॥

केशव—विजयाछंद ॥ जाइ नहीं करतूति कही सब श्रीसविता कविता करि हारो । याहीते केशवदास अशीष पढे अपनो करि नेकु निहारो ॥ कीरति देवनिकी दुलही यश दूलह

श्रीरघुनाथ तिहारो । सातौं रसाल सातहु लोकन सातहु सागर पार बिहारो ॥ १० ॥ किन्नर,यक्ष, गन्धर्व-रामलीला छंद ॥ अजर अमर अनन्त जय जय चरित श्रीरघुनाथ । करत सुरनर सिद्ध अचरज श्रवण सुनि सुनि गाथ ॥ काय मन वच नेम जानत शिला सर्म परनारि । शिलाते पुनि परम सुन्दरि करत नेक निहारि॥ ११॥ चमर ढारत मातु ऊपर पाणिपीडा होइ । विशदंड ज्यों कोदंड हरको टूक कीन्हों होइ ॥ साधु होइ असाधु राखत द्विजनहीको मान । सकल मुनिगण मुकुटमणिको मर्दियो अभिमान ॥ १२ ॥

टी०-सविता (सूर्य) ॥ १० ॥ शिलाते सुंदरी (अहल्या) को करचो ॥ ११ ॥ विशदंड कहे पौनारीको दंड मुनिगणमुकुट (मुनिनारद) की कथा तुलसीकृतरामायणमें प्रसिद्ध है वानर सदृश मुख करिदियो है अथवा परशुराम छंद उपजाति है ॥ १२ ॥

सूर सुन्दर सरसर विराते करत रति कहँ लालि । एकपत्नी व्रत निवाहत मदनको मद घालि ॥ सुखद सुहृद सपूत सोदर हनत नृप जा काज । पलकमें सोइ राज छांडचो मातु पितुकी लाज ॥ १३ ॥ मंथरासों मोद मानत बिपिन पठयो पेलि । सूर्पनखाकी नाक काटी करन आई केलि ॥ चंचुचापत अंगुरी शुक ऐंचि लेत डेराइ । बन्धु सहित कबन्धके उरमध्य पैठे धाइ ॥ १४ ॥ सर्वथा सर्वज्ञ सर्वग सर्वदा रस एक । अज्ञ ज्यों सीता बिलोकी व्यग्र भ्रमत अनेक ॥ बाण चूकत लक्ष्यको को गनै केतिक बार । ताल सातों वेधियो शर एक एकहि बार ॥१५॥ सापराध असाधु अति सुग्रीव कीन्हों मित्र । अपराध बिन अतिसाधु बालिहि हन्यो जानि अमित्र ॥ चलत जब चौगानको ले चलत दल चतुरंग । देव शत्रुहि चले जीतन ऋक्ष वानर संग ॥ १६ ॥ भूलिहू जात निहारत गुरुसों गिरिन समान । निगरु देखो

भये गिरिगण जलधिमें ज्यों पान ॥ यतन यतननि तरण सरयू डोडिलोलत डीठि । गये सागरपार दै पशु प्रगट पाहन पीठि ॥ १७ ॥

टी०—सब पर रति (प्रीति) रचिकै सब कीर्तिकी (प्रीति) लालि कहे लालसा इच्छा करत हौ औ आश्चर्य पक्षमें रति जो कामकी स्त्री है ताको लालि कहे लालसा करत हौ अर्थ रतिकी लालसा करत हौ औ मदनको मद घालत हौ यह आश्चर्य है ताही सोदरके लिये अर्थ भरतके लिये राज्यही छांड्या इति शेषः ॥ १३ ॥ मंथरा (कूबरी) ॥ १४ ॥ व्यग्र (विकल) अनेक स्थाननमों इति शेषः । भ्रमत कहे घूमत तौ सर्वग औ सर्वज्ञकी अज्ञसम स्थल ढूंढिबो आश्चर्य है औ सर्वदा एक रस कहे आनंद रूप जो रहनि है ताको विकल ह्वैबो आश्चर्य है लक्ष्य (निशाना) वार कहे चोट ॥ १५ ॥ १६ ॥ निगरु कहे हरुये पानपात्र ॥ १७ ॥

बाजि गज रथ वाहिनी चढि चलत श्रमित सुभाय । लंकमें बिन पानहीं निज गये अपने पाय ॥ यज्ञको फल गहत यत्ननि यज्ञपुरुष कहाय । बेर जूंठे दियो सेवरी भक्षियो सुख पाय ॥ १८ ॥ कुसुम कन्दुक लगत काँपत मूंदि लोचन मूल । शत्रुसन्मुख सहे हँसि हँसि शैल असि शर शूल ॥ दूरि करत न दया दर्शत देर दंशत दंश । भई बारन करत रावणवंशको निर्वंश ॥ १९ ॥ बाण बेझहि आनको लगि नाम अपनो लेत । कालसो रिपु आपु हति जयपत्र औरहिं देत ॥ पुण्य-कालन देत विप्रन तौलि तौलि कनंक । शत्रुसोदरको दई सब स्वर्णहीकी लंक ॥ २० ॥ होइ मुक्त सो जाहि इनको मरत आवै नाम । मुक्त एक न भये वानर मरे करि संग्राम ॥ एक पल बिन पान खाये बारबार जम्हात । बर्ष चौदह नींद भूख पिआस छोडि गात ॥ २१ ॥ क्षमै बरु अपराध अपने कोटि कोटि कराल । अपराध एक न क्षम्यो गो द्विज दीनको सब काल ॥ यदपि लक्ष्मण करी सेवा सर्व भाँति सभेव । तदपि मानत सर्वथा करि भरतहीकी सेव ॥ २२ ॥

टी०-॥ १८ ॥ कुसुम जे फूल हैं तिनको कंदुक (गेंद) ॥ १९ ॥ बेझा (निशाना) ॥२०॥ मुक्त कहे मुक्ति और मरे ॥२१॥ छंद उपजाति है॥२२॥

कहत इनको सर्व साँचे सकल राना राय । तनक सेवा दासकी कहे कोटिगुणित बनाय ॥ डरन यक अपलोकते ये जीव चौदह लोक । ठौर जाकहँ कहुँ न ताकहँ देत अपनो ओक ॥ २३ ॥ छाँडि ऋषि द्विज देवऋषि ऋषिराज सब सुख पाइ । प्रगट सकल सनौढियनके प्रथम पूजे पाइ ॥ छोडि पितर त्रिशंकु है विपरीत यद्यपि देह । अवध केशव जात सूकर श्वान स्वर्ग सदेह ॥ २४ ॥ एक पल उरमांझ आये हरत सब संसार । आयकै संसारमें इन हरेउ भूतल भार ॥ शेष शम्भु स्वयम्भु भाषत निगम नेति न जास । ताहि लघु मति वरणि कैसे सकत केशव दास ॥ २५ ॥ याहि विधि चौदह भुवनके गाव मुनि यशगाथ । प्रेमसहित पहिराइ सबको बिदा किय रघुनाथ ॥ २६ ॥ झूलनाछंद ॥ अभिषेककी यह गाथ श्रीरघुनाथकी नर कोइ । पल एक गावत पाइहै बहु पुत्र सम्पति सोइ ॥ जरि जाहिंगी सब वासना भव विष्णुभक्त कहाइ । यमराजके शिर पाँउ दै सुरलोकलोकनि जाइ ॥ २७ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिंद्रजिद्विरचितायां ब्रह्मादिस्तुतिवर्णनं नाम सप्तविंशः प्रकाशः ॥२७॥

टी०-अपलोक कहे अपगत लोक अर्थ छोटो लोक औ कलंक ॥ २३ ॥ ऋषि सामान्य तपस्वी द्विजऋषि कहे ब्राह्मणश्रेष्ठ देव ऋषि, ब्रह्मऋषि राजऋषि वशिष्ठादि ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां सप्तविंशः प्रकाशः ॥ २७ ॥

दोहा ॥ अट्ठाइसें प्रकाशमें, वर्णन बहु विधि जानि ॥ श्रीरघुबरके राजको, सुर नरको सुखदानि ॥ १ ॥ भुजंगप्रयातछंद ॥ अनन्ता सबै सर्वदा शस्ययुक्ता । समुद्रावधिः सप्तईतीविमुक्ता ॥ सदा वृक्ष फूले फले तत्र सोहैं । जिन्हैं अल्पधी कल्पसाखी विमोहैं ॥ २ ॥ सबै निम्नगा क्षीरके पूरपूरी । भई कामगोसी सबै धेनु रूरी ॥ सबै वाजि स्ववाजिते तेजपूरे । सबै दन्ति स्वर्दन्तिते दर्परूरे ॥ ३ ॥ सबै जीव हैं सर्वदानन्द पूरे । क्षमी संयमी विक्रमी साधु शूरे ॥ युवा सर्वदा सर्वविद्याविलाशी । सदासर्वसम्मति शोभाप्रकाशी ॥ ४ ॥ चिरंजीव संयोग योगी अरोगी । सदा एक पत्नी व्रती भोगभोगी ॥ सबै शील सौंदर्यसौगन्धधारी । सबै ब्रह्मज्ञानी गुणी धर्मचारी ॥ ५ ॥

टी०—॥ १ ॥ जा रामचन्द्रके राज्यमें समुद्रावधि कहे समुद्रपर्यंत अनंता जो पृथ्वी है सो सप्त जे शुकादि ईती हैं तिनसों विमुक्ता (रहित) शस्य (धान्य) सों युक्त है ॥ "अतिवृष्टिरनावृष्टिर्मूषकाः शलभाः शुकाः । स्वचक्रं परचक्रं च सप्तैते ईतयः स्मृताः ॥" जिन बृक्षनको देखि अल्पबुद्धि जे कल्पसाखी (कल्पवृक्ष) हैं ते विमोहैं कहे मोहित होत हैं कि ऐसे हम न भये अथवा अल्पकी बुद्धिसों अर्थ हम इनसों लघु हैं या बुद्धिसों मोहत हैं ॥ ॥ २ ॥ निम्नगा (नदी) क्षीर (जल) स्ववाजि (उच्चैःश्रवा) स्वर्दंति (ऐरावत) दर्प (मद) ॥ ३ ॥ संयोगी कहे सदा स्त्रीसंयोगसों युक्त सौगंधपदते स्वाभाविक अंग सुगंधि जानौ ॥ ४ ॥ ५ ॥

सबै न्हान दानादि कर्माधिकारी । सबै चित्त चातुर्य चिंताप्रहारी ॥ सबै पुत्रपौत्रादिके सुक्ख साजैं । सबै भक्त माता पिताके विराजैं ॥ ६ ॥ सबै सुन्दरी सुन्दरी साधु सोहैं । शचीसी सतीसी जिन्हैं देखि मोहैं ॥ सबै प्रेमकी पुण्यकी सद्मिनीसी । सबै चित्रिणी पुत्रिणी पद्मिनीसी ॥ ७ ॥ भ्रमै संभ्रमी यत्र शोकै सशोकी । अधर्मै अधर्मी अलोकै अलोकी ॥ दुखे तो दुखी तापतापाधिकारी । दरिद्रे दरिद्री विकारे

विकारी ॥ ८ ॥ चौपाई ॥ होमधूम मलिनाई जहां । अति चंचल चलदल है तहां ॥ बालनाश है चूडाकर्म । तीक्ष्णता आयुधके धर्म ॥ ९ ॥ लेत जनेऊ भिक्षादानु । कुटिल चाल सरितानि बखानु ॥ व्याकरणे द्विजवृत्ति न हरै । कोकिल कुलपुत्रन परिहरै ॥ १० ॥ फागुहि निलज लोग देखिये । जूवा देवारीको लेखिये ॥ नित उठि बेझै मारिये । खेलतमें केहूं हारिये ॥ ११ ॥

टी०-चित्तकी चातुर्य करिकै औरको चिंताके प्रहारी कहे हर्त्ता हैं ॥ ६ ॥ सुंदरी (स्त्री) कहे सुंदरता युक्त साधु कहे पतिव्रता सद्मिनी कहे हवेली चित्रिणी कहे चित्रिणी जाति है पुत्रिणी कहे पुत्रवती हैं औ पद्मिनी कहे पद्मिनी जाति है यासों या जनायो कि हस्तिनी, शंखिनी एकौ नहीं हैं ॥ ॥ ७ ॥ श्लोक कहे अपलोक ॥ ८ ॥ चलदल (पिप्पलवृक्ष) बार (शिरोरुह) इति औ बालक चूडाकर्म (क्षौरकर्म) ॥ ९ ॥ द्विज जे ब्राह्मण हैं तेई व्याकरण शास्त्रहीमें वृत्तिको हरत हैं हरिलेत हैं अर्थ पढत हैं और कोऊ काहूकी वृत्ति जीविकाको नहीं हरत व्याकरणशास्त्रमें सूत्र वृत्ति प्रसिद्ध है ॥ १० ॥ बेझा (निशान) खेलतहीमें काहू विधिसों हारि होति है अन्यत्र हारि नहीं होति ॥ ११ ॥

दंडक ॥ भावै जहां बिंभिचारी वेद्य रमैं परनारी द्विजगन दंडधारी चोरी परपीरकी । मानिनी नहीं के मन मानियत मानभंग सिंधुहि उलंघि जाति कीरति शरीरकी ॥ मूलै तौ अधोगतिन पावत हैं केशोदास मीचुही सोहै बियोग इच्छा गंगानीरकी । वंध्यावासनानि जानु विधवा सुवाटिकाई ऐसी रीति राजनीति राजै रघुवीरकी ॥ १२ ॥ दोहा ॥ कविकुलहीके श्रीफलन, उर अभिलाष समाज ॥ तिथिहीको क्षय होत है, रामचंद्रके राज ॥ १३ ॥ दंडक ॥ लूटिवेके नाते पापपट्टनै तो लूटियतु तोरिवेको मोहतरु तोरि डारियतु है । घालिवेके नाते गर्व घालियतु देवनके जारिवेके नाते अघ ओघ जारियतु है ॥ बांधिवेके नाते ताल बांधियतु

केशवदास मारिवेके नाते तौ दरिद्र मारियतु है । राजा रामचन्द्रजूके नाम जग जीतियतु हारिवेके नाते आन जन्म हारियतु है ॥ १४ ॥

टी०—निर्वेदादिते इति सांचेमिचारी भाव रस ग्रंथनमें प्रसिद्ध है नारी (नाडिका) (दंड) ब्रह्मलकुट औ (डांड) अर्थ और कोउ काहूसों डांड नहीं लेत मीचुसों बियोग कहि जनायो कि सबकी मुक्ति होति है बासनाई बंध्या है अर्थ बासनाको जो शुभाशुभ फल स्वर्ग नरकादि भोग है सो काहू प्राणीको नहीं होत सब प्राणी मुक्त होत हैं ॥ १२ ॥ १३॥ पाप कहे कष्ट पट्टन (शहर) पाप नाम कष्टको बिहारीकी शतशैयामें है ॥ "सीरे यत्नानि शिशिर निशि, सहि बिरहिन तनताप ॥ बिसिबेकी ग्रीष्मादिनानि, परयो परोसिनि पाप॥" सम नामसों एक संसारहीको सब जीतत हैं अर्थ संसारबंधनसों छुटि जात हैं और कोऊ काहूको हरावत नहीं ॥१४॥

चंद्रकलाछन्द ॥ सबके कल्पद्रुमके बन हैं सबके बरबारन गाजत हैं । सबके घर शोभति देवसभा सबके जय दुंदुभि बाजत हैं॥ निधि सिद्धि विशेष अशेषनिसों सब लोग सबै सुख साजत हैं । कहि केशव श्रीरघुराजके राज सबै सुरराजसे राजत हैं ॥ १५ ॥ दंडक ॥ जूझहिमें कलह कलहप्रिय नारदै कुरूप है कुबेरै लोभ सबके चयनको । पापनकी हानि डर गुरुनको वैरी काम आगि सर्व भक्षी दुखदायक अयनको । विद्याहीमें वादु बहुनायकहै बारिनिधि जारजहै हनुमंत मीत उदयनको । आंखिन आछत अंधनारिकेर कृश कटि ऐसो राज राजै राम राजीवनयनको ॥ १६॥

टी०—कल्पद्रुमके अर्थ कल्पद्रुम सरिसद्रुम वृक्षनके बन हैं देवसभा सम सभा महापद्मादि जे नवौं निधि हैं औ अणिमादि जे अष्ट सिद्धि हैं तिन अशेषन पूर्वन सहित विशेषपूर्वक सब लोग और जे सबै सुख हैं तिन्हैं साजत है अर्थ करत हैं ॥ १५ ॥ पार्वतीके शापसो कुबेर कुरूप भये हैं सो कथा बाल्मीकीय रामायण उत्तरकांडमें प्रसिद्ध है चयन कहे आनंद अयन कहे घरको दुखदायक अर्थ दाहक औ सर्वभक्षी आगिही है बहुनायक बहुत

स्त्रीनको अर्थ नदिनको नायक स्वामी औ सब एकपत्नीभोगी हैं इति भावार्थः सबके उदयन (प्रकाशन) को मीत है सबके शुभकांक्षी हैं नारी केर कहे नारिकेरके फल औ कटिही कृश (दुर्बल) है ॥ १६ ॥

दोहा ॥ कुटिल कटाक्ष कठोर कुच, एकै दुःख अदेय ॥ द्विस्वभाव अश्लेषमें, ब्राह्मण जाति अजेय ॥ १७ ॥ तोमर-छंद ॥ बहु शब्द वंचक जानि । अलि पश्यतोहर मानि ॥ नर छांहई अपवित्र । शर खड्गनिर्दय मित्र ॥ १८ ॥ सोरठा ॥ गुण तजिओ गुणजाल, गहत नित्यप्रति चालनी ॥ पुंश्चलीति तेहि काल, एकै कीरति जानिये ॥ १९ ॥ दोहा ॥ धनदलोक सुरलोकमय, सप्तलोकके साज । सप्तद्वीपवति महि बसी, रामचंद्रके राज ॥ २० ॥ दश सहस्र दशसै बरस, रसा बसी यहि साज, ॥ स्वर्ग नर्कके मग थके, रामचंद्रके राज ॥ २१ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचंद्रचंद्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां रामराज्यवर्णनंनामाष्टाविंशः प्रकाशः ॥ २८ ॥

टी०--द्विस्वभाव कहे द्वै प्रकारको स्वभाव श्लेष कवितामें है एक समय और अर्थ कहत हैं एक समय और कहत हैं औ सबको एकई स्वभाव है इति भावार्थः ॥ १७ ॥ बहू कहे बहुत बिधिसों शब्द जो है सोई बंचक कहे ठग है अर्थ बंचक यह जो शब्द है सोई है और कोऊ प्राणी ठग नहीं है अथवा बहुत जे परस्पर कोमल भाषित शब्द हैं तेई ठग हैं अर्थ ठगसम मोहित करतहैं औ अलि जे भ्रमर हैं तेई पश्यतोहर कहे देखतहूँ चोरी करत हैं अर्थ सबके देखत भ्रमर पुष्पनसों मधु चोरत हैं ॥ १८ ॥ गुणरूप पिसानको त्यागि अवगुणरूपी भूसीको ग्रहण करति है पुंश्चली (परकीया) ॥ १९ ॥ २० ॥ रसा (पृथ्वी) स्वर्ग नरकके मग थके कहे नहीं चलत अर्थ न कोऊ प्राणी स्वर्ग जाइ न नरक जाइ सब मुक्तिपुरीको जात हैं२१॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसाद-निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायामष्टाविंशः प्रकाशः ॥ २८ ॥

दोहा ॥ उनतीसयें प्रकाशमें, बरणि कह्यो चौगान ॥ अवधि दीपशुककी विनति, राजलोक गुणगान ॥ १ ॥ चौपाई ॥ एक काल अति रूपनिधान । खेलनको निकरे चौगान ॥ हाथ धनुष शर मन्मथरूप । संग पयादे सोदरभूप ॥ २ ॥ जाको जबहीं आयसु होइ । जाइ चढै गज वाजिन सोइ ॥ पशुपतिसे रघुपति देखिये । अनुगत शेष महा लेखिये ॥ ३ ॥ वीथी सब असवारिन भरी । हय हाथिनसों सोहति खरी ॥ तरुपुंजनसों सरिता भली । मानों मिलन समुद्रहि चली ॥ ४ ॥

टी०—॥ १ ॥ २ ॥ जा गजपर औ जा वाजिपर चढिकै चलिवेको रामचंद्रको आयसु जाको होत है सो तापर चढत है रामचंद्रके अनु कहे पाछे गत कहे प्राप्त शेष (लक्ष्मण) हैं औ महादेवके पश्चाद्भागमें गत प्राप्त शेष कहे शेषनाग हैं शेषको महादेव ग्रीवामें पहिरे हैं सो पृष्ठभागमें उरमत हैं इत्यर्थः । कहूं अनुगण सैन पाठ है तौ अनुपश्चाद्गणसमूह सैनको पेखियत है औ महादेवके अनु पश्चाद्गणबीरभद्रादिकनकी महासैन पेखियत ॥ ३ ॥ वीथी (गली) ॥ ४ ॥

यहि बिधि गये राम चौगान । सावकाश सब भूमिसमान ॥ शोभन एक कोश परिमान । रचो रुचिर तापर चौगान॥५॥ एक कोद रघुनाथ उदार । भरत दूसरे कोदबिचार ॥ सोहत हाथे लीन्हें छरी । कारी पीरी राती हरी ॥ ६ ॥ देखन लग्यौ सबै जगजाल । डारि दियो भुव गोला हाल ॥ गोला-जाह जहां जहँ जबै । होत तहीं तितहीं तित सबै ॥ ७ ॥ मनो रसिक लोचन रुचि रचे । रूप संग बहु नाचनि नचे ॥ लोकलाज छांडे अँग अंग । डोलत जनु जनमनके संग ॥ ॥ ८ ॥ गोला जाके आगे जाइ । सोई ताहि चलै अपनाइ॥ जैसे तियगणको पति रयो । जेहि पायो ताहीको भयो ॥ ९ ॥ उतते इत इतते उत होई । नेकउ ढील न पावै सोई ॥ काम क्रोध मद मच्यो अपार । मानो जीव भ्रमै संसार ॥ १० ॥

टी०-सावकाश कहे फैलाव सहित और समान कहे नीच उच्च रहित ॥ ५ ॥ कोद कहे ओर ॥ ६ ॥ जाहीं कहे तबै ॥ ७ ॥ रुचि इच्छारूपसुंदरता ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

जहां तहां मारै सब कोइ । ज्यों नर पंच विरोधी होइ ॥ घरी घरी प्रति ठाकुर सबै । बदलत बासन बाहन तबै ॥ ११ ॥ दोहा ॥ जब जब जीतैं हाल हरि, तब तब बजत निशान ॥ हय गय भूषण भूरि पट, दीजत लोगनि दान ॥ १२ ॥ चौपाई ॥ तब तेहि समय एक बेताल । पढ्यौ गीत गुनि बुद्धिविशाल ॥ गोलनकी बिनती सुख पाई । रामचन्द्रसों कीन्ही आई ॥ १३ ॥ दंडक ॥ पूर पूर बंकी पूरापूरी पापर पुरीसेतन बापुरी वै दूरिहीते पायन परति हैं । दक्षिणको पक्षिनीसी गच्छै अंतरिक्षमग पक्षिमको पक्षहीन पक्षी ज्यों उरतिहैं ॥ उत्तरकी देतीहैं उतारि शरणागतनि बातन उतायली उतार उतरति है । गोलनकी मूरति न दीजियेजू अभेदान रामवैर कहां आइ विनती करति है ॥१४॥

टी०-बासन (वस्त्र) ॥ ११ ॥ १२ ॥ बेताल (भाट) गोलनकी बिनती कहे गोलनकी तरफसों बिनती रामचन्द्रसों करचो ॥ १३ ॥ यामें समय बिचारि स्तुतिपूर्वक गोलनके बिनतिनके व्याज खेल खेलियों मने करत हैं कहत हैं कि हे राम ! पापर (पूरी भेद) प्रसिद्ध हैं औ पुरी कहे पूरीसम है तन जिते कहे ऐसी जे पूर्वदिशाको पूरी कहे ग्रामपुरी कहे लघु ग्राम हैं ते बा पुरी दूरिही ते भयसों तुम्हारे पायन परती हैं औ दक्षिणकी पूरनपूरी अंतरिक्ष आकाशके मग पक्षिनी सम गच्छती हैं पक्षहीन कहि या जनायो कि उडि जाइबो चाहती हैं पै पक्षहीन हैं तासों रहि जाती हैं औ उत्तरकी पूरा पूरी तुम्हारो विरोधी जो शरणागत है ताको उतारि देती हैं अथवा उत्तरमें पर्वत पर बसती हैं सो पर्वतसों उतारि देती हैं कैसे उतारि देती हैं कि बातनहूं करिकै उतायली जो जल्दी है ताके उतारमें उतरती हैं अर्थ यह कहती हैं कि तुम यहांसे जल्दी जाउ नाहीं तौ रामचन्द्र जानि हैं तो हमको बिदारि हैं यासों या जनायो कि उत्तरकी पुरी दुर्गम पर्वतनहूं

पर हैं तहांऊ तुम्हारे बैरीको नहीं राखि सकते तासों गोलनकी मूर्ति विनती करती हैं कि राम बैरसों हम कहां जाइं तासों हे राम ! अभयदान दीजै खेलको समय ह्वै आयो तासों अब खेल बंद करौ इति भावार्थः ॥ १४ ॥

चौपाई ॥ गोलनकी बिनती सुनि ईश । घरको गमन कह्यौ जगदीश ॥ पुरपैठत अतिशोभा भई । वीथिन असवारी भरि गई ॥ १५ ॥ मनों सेतु मिलि सहित उछाह । सरितनके फिरि चले प्रवाह ॥ ताही समय द्यौस नाशि गयो । दीप उदोत नगरमहँ भयो ॥ १६ ॥ नखतनकी नगरीसी लसी । मानों अवधिदेवारी बसी ॥ नगर अशोक वृक्ष रुचि रयो । मधु प्रभु देखि प्रफुल्लित भयो ॥ १७ ॥ अध अध फर ऊपर आकाश । चलत दीप देखियत प्रकाश ॥ चौकी है जनु अपने भेव । बहुरे देवलोकके देव ॥ १८ ॥ वीथी विमल सुगंध समान । दुहुँ दिशि दीसत दीप प्रमान ॥ महाराजको सहित सनेह । निज नैनन जनु देखत गेह ॥ १९ ॥ बहु विधि देखत पुरके भाइ । राजसभामहँ बैठे जाइ ॥ पहर एक निशि वीती जहीं । विनतीको शुभ आये तहीं ॥ २० ॥

टी०—॥ १५ ॥ प्रथम जात समय कह्यो है कि ॥ " तरुपुंजनसों सरिता भली । मानहुँ मिलन समुद्रहि चली ॥" सो अब आवतमें ताहीमें तर्क करत हैं कि मानो सेतुमें मिलिकै उछाह आनंद सहित सरितनके तेई प्रवाह फिरि चले हैं जैसे लंका जातमें रामचंद्र सेतु बांध्यो है तामें लगिकै सरितनके प्रवाह फिरि चले हैं तैसे जानौ ॥ १६ ॥ रुचि कहे सुंदरतासों युक्त नगररूपी जो अशोकवृक्ष है सो मधु कहे बसंतसम जे रामचन्द्र हैं तिन्हैं देखि प्रफुल्लित भयो है ॥ १७ ॥ यामें आकाशदीपनको वर्णन है एकै आकाशके अध कहे अधोभागमें हैं औ एकै अधफर कहे मध्यभागमें हैं एकै ऊपर हैं या प्रकार ज्यों ज्यों क्रम क्रम डोरि खींची जाति है त्यों त्यों आकाशको चलत प्रकाश दीप देखियत है सो मानो ये सब दीप नहीं देवता हैं अवधपुरीकी चौकी देत हैं तिनके मानो अपने भेव कहे समय प्रमाण चौकी देकै ये देव आपने लोक जात हैं ॥ १८ ॥ विमल तृणादि रहित सुगंध (गंधयुक्त) समान (उच्च नीच रहित) दुहुँ दिशि कहे गैलके याहू ओर वाहू ओर सनेह (प्रेम) औ तैल ॥ १९ ॥ भाई कहे चेष्टा ॥ २० ॥

शुक-हरिप्रियाछंद ॥ पौढिये कृपानिधान देवदेव रामचंद्र चंद्रिकासमेति चंद्रचित्त रैनि माहै । मनहुँ सुमन सुमति संग रचे रुचिर सुकृत रंग आनंदमैं अंग अंग सकल सुखनि सोहै ॥ ललित लतनके विलास भ्रमरवृंद ह्वै उदास अमल कमलकोश आसपास वास कीन्हें । तजि तजि माया दुरंत भक्त रावरे अनंत तव पद कर नैन बैन मानहुँ मन दीन्हें ॥ २१ ॥ घर घर संगीत गीत बाजे बाजे अजीत काम भूप आगम जनु होत हैं बधाये । राजभौन आसपास दीपवृक्षके विलास जगति ज्योति यौवन जनु ज्योतिवंत आये ॥ मोतिनमय भीति नई चंद्रचंद्रिकानिमई पंक अंक अंकित भव भूरि भेदसो करी । मानहुं शशिपंडित करि जोन्ह ज्योति मंडित श्रीखंड शैलकी अखंड शुभ्र सुंदरी दरी ॥ २२ ॥ एक द्वीपद्युति विभाति दीपति मणिदीपपांति मानहुँ भव भूप तेज मंत्रिनमय राजै । आरे मणिखचित खरे वसन बहुबास भरे राखत गृह गृह अनेक मनहुँ मैन साजै ॥ अमल सुमिल जल निधान मोतिनके शुभ वितान तापर पलिका जराव जडित जीव हरषै । कोमल तापर रसाल बनसुखकी सेज लाल मनहुँ सोम सूरजपर सुधाबिंदु वरषै ॥ २३ ॥ फूलनके विविध हार धोरिलनि उरमत उदार बिच बिच मणि श्याम हार उपमा शुक भाषी । जीत्यौ सब जगत जानि तुमसों हारि हारि मानि मनहुँ मदन धनुषनिते गुन उतारि राखी ॥ जल थल फल फूल भूरि अंबर घटबास धूरि स्वच्छ यच्छकर्दम हिय देवनि अभिलाषे । कुंकुमभेदौ यवादि मृगमद कर्पूर आदि बीरा वनितनि बनाइ भाजन भरि राखे ॥ २४ ॥ पन्नगिनी कुमारि आपुरी सुरी निहारी विविध बीन किन्नरीन किन्नरी बजावैं । मानो निष्काम भक्ति शक्ति आय आपनीन देहन धारि प्रेमन भरि भजन भेद गावैं ॥ सोदर सामंत सूर सेनापति दास दूत देशदेशके

नरेश मंत्रि मित्र लेखिये। बहुरे सुर असुर सिद्ध पंडित मुनि कबि प्रसिद्ध केशव बहु राय राजराज लोक देखिये ॥ २९ ॥

टी०—पांच छंदको अन्वय एक है रैनिमें चंद्रिका समेत चंद्रचित्तको मोहत है प्रसन्न करत है अर्थ रात्रिके संगसों चन्द्रिका समेत है चंद्र चित्त मोहत है सो मानो सुष्ठु जो मति है ताके संगसों सुष्ठु जो मन है ताके अंग आनंदमय कहे स्वच्छ सुकृत सुकर्मके रंगसों रचे हैं सुकृतको रंग श्वेत कवि-प्रियामें श्वेतगणनामें कह्यो है ॥ " शेष सुकृत शुचि सत्वगुण, संतनके मन हास ॥ " सो मन सकल कहे पुत्र धनादिके सुखन सहित सोहत है सुकृतीको सब सुख प्राप्त होत हैं यह प्रसिद्ध है सुमतिसम रात्रि है सुमनसम चन्द्रमा है सुकृतसम चांदनी है ललित लतनके विलाससों उदास ह्वैकै अर्थ त्याग करिकै मायासम लता है भक्तसम भ्रमर हैं कर औ नयन औ बैन-सम कमल हैं बैन पदते इहां मुख जानौ छंद उपजाति है आसपास जे दीप-वृक्ष कहे झाऊ हैं तिनके बिलासमों राजभवनकी ज्योति जगतिहै जानों यौवनके आये शरीरकी ज्योति जगति है इति शेषः । ताही राजभवनकी चंद्र चंद्रिकानिमयी कहे चंद्रिकनसों युक्त जो मोतिनमय भीति है ताहि भव जो संसार है ताके जे भूरि भेद हैं अर्थ अनेक विधि चित्र हैं तिन सहित पंक जो चंदन पंक है तासों सेवकन चित्रित करी है अर्थ भीतिनमें चित्र विचित्र चंदन पंक लग्यौ है सो श्रीखंड जो चंदन है ताको शैल मलया-चल अथवा चंदनहीको निर्मित जो शैल है ताकी शुभ्र कहे श्वेत औ सुंदरी रुचिर दरी (कंदरा) को पंडित कहे चतुर जो शशि है सो जोन्ह ज्यो-तिसों मंडित करी है चंदन लेपसों युक्त है तासों राजभवनको श्रीखंडशैल सम कह्यौ है दरी सम गृहको उदर है ता भूपभवनमें ये दीपकी द्युति विभाति कहे शोभित है औ मणिदीप कहे भीतिनमें जटित मणिनमें प्रतिबिंबित जे दीप हैं तिनहूंकी पांति दीपति है सो मानों भुवमें अर्थ भुवमंडलमें मंत्रिनमय कहे मंत्रिनके तेजमय अर्थ मंत्रिनके प्रतापसों युक्त राजाको तेज राजत है भूपतेजसम एकदीप है मंत्रिनके तेजसम प्रतिबिंब दीप है मंत्रिनको तेज राजतेजके प्रतिबिंब सम होतही है अथवा मानो राजाको तेज है मंत्रिनमें व्याप्त राजत है मंत्रिन सम मणि हैं भूपतेज सम दीप हैं औ आरे कहे ताख मणिन करिकै खरे कहे नीकी विधि चित्रित हैं तिनमें बहुत वास कहे सुगं-धनसों भरे अनेक बासन कहे पात्र गृह गृहमें कहे स्थान स्थानमें स्त्रीजन राखती हैं ते मानों मैन जो काम है ताकी साजैं हैं अर्थ कामके लाइवेके सुगंध हैं औ अमल कहे निर्मल सुमिल कहे गोल औ जल कहे पानीके

निधान जे मोती हैं तिनके शुभ वितान कहे चंदोवा हैं तनसुख तन जो लाल (अरुण) सोम सम मोतिनको वितान है सुधाबिंदु सम मोती हैं सूरज सम अरुण सेज है घोरिला धनुषके गोसा सदृश होत हैं औ धनुबसों गुण उतारचो जात है तब एक गोसामें लग्यौ रहतहै "रोदामौर्वीज्यासिंजिनीगुणः" इत्यमरः ॥ औ जल औ थलके भूरि कहे अनेक विधिके फल औ फूल औ अंबर (वस्त्र) औ पटबास कहे सुगंध चूर्ण ताकी भूरि । "पिष्टांतः पटवासकः" इत्यमरः॥ औ जाको हियमें देवता अभिलाष करत हैं सो ऐसो स्वच्छ यक्षकर्दम ॥ "कर्पूरागरुकस्तूरीकंकोलैर्यक्षकर्दमः ॥" औ कुंकुम (केशरी) औ मेद जवादि कहे उवटन औ मृगमद (कस्तूरी) औ कर्पूर आदि औ बीरा बनाइ बनाइकै भिन्न भिन्न भाजन (पात्रन) में बानिता जे दासीजन हैं तिन भरि राखे हैं किन्नरीन कहे सारंगीनकी आपनी आपनी शक्तिसों कहे अणिमादि सिद्धिके बलसों देहनको धरिक बहुरे कहे आज्ञा पाइ रावरी सभासों अपने धामनको जात हैं तासों अब आपहू चलिकै राजलोकको देखिये औ तहां पौढिये इत्यन्वयः ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥ २५ ॥

दोहा ॥ कहि केशव शुकके वचन, सुनि सुनि परम विचित्र ॥ राजलोक देखन चले, रामचन्द्र जग मित्र ॥ २६ ॥ नराचछंद ॥ सुदेश राजलोक आस पास कोटु देखियो । रची विचारि चारि पौरि पूरबादि लेखियो ॥ सुवेश एक सिंहपौरि एक दंतिराज है । सुएक बाजि राज एक नंदिवेष साज है ॥ २७ ॥ दोहा ॥ पांच चौक मध्यहि रच्यौ, सात लोकतर हारि ॥ षट ऊपर तिनके तहां, चित्रे चित्र बिचारि ॥ ॥ २८ ॥ चामरछन्द ॥ भोज एक चौक मध्य दूसरे रची सभा । तीसरे विचार मंत्र और नृत्यकी प्रभा ॥ मध्य चौकमें तहां विदेहकन्यका बसै । सर्व भाव रामचन्द्र लीन सर्वथा लसै ॥ २९ ॥

टी०-राजलोक कहे राजभवन ॥ २६ ॥ रामचंद्रजू राजलोकके आसपास सुदेश कहे आछो कोट देखत भये अर्थ आसपास कोट है ताके मध्यमें राजलोक है ता कोटके पूर्वादिदिशामें क्रमसों चारों ओर चारि पोरि कहे द्वार हैं पूर्वदिशामें सिंहपौरि है दक्षिण दिशामें दंतिपौरि है पश्चिम दिशामें वाजिपौरि

है उत्तर दिशामें नंदिपौरि है इहां सिंहादि पौरिसों सिंहादि स्वरूप युक्त पौरि जानौ ॥ २७ ॥ ता कोटके मध्यहि कहे मध्यमें सात लोकके तरहारि कहे सतमहलाके तरे पांच चौक अंगनाई रची है अँगनाई विशिष्ट पृथक् पांच भवन बने हैं ते सतमंजिला हैं तिनके कहे तिन भवननके षट ऊपर कहे छठे लोकके जे ऊपर कहे छत है तहां बिचारिकै कहि जहां जैसो चाहिये तैसा तहां समुझिकै चित्र चित्रे हैं और अर्थ पांच चौक मध्यमें रच्यो है ते कैसे हैं तासों लोकके अतल १ वितल २ सुतल ३ तलातल ४ महातल ५ रसातल ६ पाताल ७ हैं तरहारि कहे अधन्यून जिनते अर्थ सातौं लोकमें ऐसे धाम नहीं हैं औ षटके छे लोक जे भू १ अंतरिक्ष २ स्वर्ग ३ ब्रह्मलोक ४ पितृलोक ५ सूर्यलोक ६ तिनहूंके ऊपर है अर्थ श्रेष्ठ है यासों या जनायो सातवाँ लोक जो वैकुंठ है ताके सदृश है तहां बिचारिकै अर्थ यथोचित स्थानमें चित्र चित्रे हैं अथवा सात लोक जे तरहारि कहे तरेके हैं अतलादि औ षट् जे भूलोकादि हैं तिनहूंके ऊपर जो लोक है वैकुंठ सो बिचारिकै तिनके कहे ता वैकुंठके धामनके चित्र सम चित्रे है अर्थ वैकुंठधामनके प्रतिमा बने हैं अथवा बिचारिकै तिनके वैकुंठधामनके चित्र चित्रे हैं अर्थ जे चित्र वैकुंठनामनमें हैं तेई इनमें चित्रे हैं ॥ २८ ॥ यामें पांचहूँ चौकनको प्रयोजन कहत हैं और चौथे चौकमें नृत्यकी प्रभा रची इत्यर्थः ॥ २९ ॥

दोधकछन्द ॥ मन्दिर कञ्चनको यक सोहै । श्वेत तहां छतुरी मन मोहै ॥ सोहत शीरष मेरुह मानो । सुन्दर देव दिवान बखानो ॥ ३० ॥ मंदिर लालनको यक सोहै । श्याम तहां छतुरी मन मोहै ॥ ताहि यहै उपमा सब साजै । सूरज अंक मनो शनिराजै ॥ ३१ ॥ मन्दिर नीलनको यक सोहै । श्वेत तहां छतुरी मन मोहै ॥ मानहु हंसनकी अवलीसी । प्राविटकाल उडाइ चलीसी ॥ ३२ ॥ मंदिर श्वेत लसै अति भारी । सोहति है छतुरी अति कारी ॥ मानहु ईश्वरके शिर सोहै । मूरति राघवकी मन मोहै ॥ ३३ ॥ तोटकछंद ॥ सब धामनमें यक धाम बन्यो । अतिसुन्दर श्वेतस्वरूप सन्यो ॥ शनि सूर बृहस्पतिमण्डलमें । परिपूरण चन्द्र मनों बलमें ॥ ३४ ॥ चौपाई ॥ बहुधा मन्दिर देखे भले । देखन शुभ्र

शालिका चले ॥ सीतभीत ज्यों नेक न त्रसे । पलुक वसन शालामहँ लसे ॥ ३५ ॥ जलशाला चातक ज्यों गन्धशालिका ठये ॥ निपट रंक ज्यों शोभित भये मेवाकी शालामें गये ॥ ३६ ॥

टी०-तिन पांचहू मंदिरनको रूप क्रमसों पांच छंदनमों कहत हैं मेरुह कहे मेरुके शीर्ष कहे अग्रभागमें देव दिवान कहे देवसभा है ॥ ३० ॥ ३१ ॥ मेघन करि आच्छादित श्याम प्राविट काल कहे वर्षाकाल सम नीलमणिको मंदिर है हंसवाली सम श्वेत छतुरी है ॥ ३२ ॥ ईश्वर (महादेव) ॥ ३३ ॥ शनैश्चरादिके मंडलमें परदृष्ट्यादि दोषसों संयुक्त ह्वै के चंद्रमा हीनबल हू ह्वै जात है तासों बलमय कहे बलाधिक्यसों युक्त कह्यो इहां शनि सूर बृहस्पति मंडलमें कहे शनि सूर बृहस्पति आदिके मंडलमें जानो श्याममंदिर शनैश्चर है अरुणमंदिर सूर्य है सुवर्ण मंदिर बृहस्पति है श्वेतमंदिर शुक्र है ॥ ३४ ॥ शीत जो जाडो है तासों भीत जो प्राणी हैं सो जैसे अनेक वस्त्रनमें प्रसन्नचित्त होत हैं या प्रकार वस्त्रनके देखिबेमें न त्रसे कहे न ऊँचे अर्थ प्रसन्न चित्त ह्वै सब वसनशालाके वस्त्र देख्यो इत्यर्थः । याही विधि जलशालादिमें चातकादि सब जाइबेमें केवल चित चोपकी समता जानो॥३५॥३६॥

चतुर चोरसे शोभित भये । धरणीधर धनशाला गये ॥ माननीन कैसे मनमेव । गये मानशालामें देव ॥ ३७ ॥ मंत्रिनस्यो बैठे सुख पाइ । पलुक मंत्रशालामें जाइ ॥ शुभ शृंगार शालाको देखि । उलटे ललित वयनसे लेखि ॥३८॥ तोटकछन्द ॥ जब राउरमें रघुनाथ गये । बहुधा अवलोकत शोभ भये ॥ सब चन्दनकी शुभ शुद्ध करी । मणिलालशिरानि सुधारि धरी ॥ ३९ ॥ बरंगा अति लाल सुचन्दनके । उपजे जब सुन्दर नन्दनके ॥ गजदन्तकी शुभ सींक नई । तिन बीजन बीचन स्वर्ण मई ॥ ४० ॥ तिनके शुभ छप्पर छाजत हैं । कलशामलि लाल विराजत हैं ॥ अति अद्भुत थम्भनकी दुगई । गजदन्त सुचन्दन चित्रमई ॥ तिनमांझ लसैं बहु भायनके । शुभ कंचन फूल जरायनके ॥ ४१ ॥

टी०—मानिनीनके सदृश इत्यर्थः ॥३७॥जा शालामें स्त्रीजन शृंगार करत हैं अथवा भूषणादि शृंगार वस्तु जा शालामें धरे हैं ताको देखतही प्रेमातुर ह्वै रावरमें जाइबेकी इच्छा करि नयन सम कहे नयनपूतरीसम उलटे कहे फिरे नयन पूतरी अति शीघ्र फिरति ै ै से अतिशीघ्र फिरे जानौ ॥३८॥ रावर स्त्रीभवन शिरा (टोपी) ॥ ३९ ॥ ४० ॥ तिनके कहे गज दंतसुवर्णादिके अथवा तृणक दुगई द्विकनाई अथवा द्वै खंभ एकमें मिलाइ लागत हैं सो दुगई कहावत हैं ॥ ४१ ॥

रूपमालाछन्द ॥ वर्ण वर्ण जहाँ तहाँ बहुधा तने सो वितान। झालरैं मुकतानकी अरु झूमका बिनमान ॥ चौकठैं मणि नीलकी फटिकानके सुकपाट। देखि देखि सो होत हैं सब देवता जनु भाट ॥ ४२ ॥ श्वेत पीत मणीनकी परदा रची रुचि लीन। देखिकै तहँ देखिये जनु लोल लोचन मीन ॥ शुभ्र हरिनको सुआँगन है हिंडोरा काल। सुन्दरी जहँ झूलहीं प्रतिबिम्बकै जहँ जाल ॥ ४३ ॥ स्वागताछन्द ॥ धाम धाम प्रति आसन सोहैं। देखि देखि रघुनाथ बिमोहैं ॥ वरणि शोभ कवि कौन कहै जू। यत्र तत्र मन भूलि रहैजू ॥ ४४ ॥ दोहा ॥ जाके रूपन रेख गुण, जानत वेद न गाथ ॥ रंगमहल रघुनाथ गे, राजश्रीके साथ ॥ ४५ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां लोकवर्णनं नामैकोनत्रिंशः प्रकाशः ॥ २९ ॥

टी०— झूमका (झब्बा) बिनमान कहे बहुत ॥ ४२ ॥ तिनको देखिकै सबके लोचन मीनसम लोल होत हैं यह देखियत है ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ जाके रूपादि एकौ नहीं है ते राजश्रीके साथ ह्वै रंगमहल गये तो रूपादियुक्त प्राणिनको तौ लैजायोई चाहै इति भावार्थः ॥ ४५ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायामेकोनत्रिंशः प्रकाशः ॥ २९ ॥

दोहा ॥ या तीसयें प्रकाशमें, वरण्यो बहु विधि जानि ॥ रङ्गमहल संगीत अरु, रामशयन सुखदानि ॥ १ ॥ पुनि सारिका जगाइबो, भोजन बहुत प्रकार ॥ अरु बसन्त रघु-

वंशमणि, वर्णन चन्द उदार ॥ २ ॥ चतुष्पदीछन्द ॥ द्युति रंगमहलकी सहस बदनकी वर्णै मतिन बिचारी । अध ऊरध राती रंग सँघाती रुचि बहुधा सुखकारी ॥ चित्री बहु चित्र परम विचित्रनि रघुकुल चरित सुहाये । सब देव अदेवनि अरु नरदेवनि निरखि निरखि शिर नाये ॥ ३ ॥ आई बनि बाला गुणगणमाला बुधिबल रूपन बाढी । शुभ जाति चित्रनी चित्र गहते निकसिभई जनु ठाढी ॥ मानों गुण संगनि यों प्रति अंगनि रूपक रूप विराजै । वीणानि बजावैं अद्भुत गावैं गिरा रागिनी लाजै ॥ ४ ॥

टी०—॥ १ ॥ २ ॥ संघाती कहे सघन है रुचि (शोभा) ॥ ३ ॥ मानों गानादि जे गुण हैं तिनके संगनि (समूहनि) सों युक्त जे प्रति अंग हैं तिनसों युक्त रूप जो सुंदरताके रूपक कहे विचित्र विराजत हैं ॥ ४ ॥

पद्धटिकाछन्द ॥ स्वर नाद ग्राम नृत्याति सताल । मुख वर्ग विविध आलाप काल ॥ बहु कला जाति मूर्छना मानि । बढ भाग गमक गुण चलत जानि ॥ ५ ॥

टी०—षड्जादि जे सप्त स्वर हैं तिनको जो कल, मंद्र औ तार तीनि प्रकारको नाद है औ तीनि प्रकारके जे याम हैं औ देशी आदि जे अनेक विधि ताल हैं तिन सहित नृत्यति कहे नाचती हैं ॥ "स्वरादीनां सर्वेषां लक्षणमुक्तं संगितदर्पणे ॥ " तत्र लक्षणम् ॥ " श्रुत्यनंतरभावित्वं यस्यानुरणमात्मका । स्निग्धश्च रंजकश्चासौ स्वर इत्यभिधीयते ॥ १ ॥ अथवा ॥ स्वयं यो राजते नादः स स्वरः परिकीर्तितः ॥ २ ॥ श्रुतिभ्यः स्युः स्वराः षड्जर्षभगांधारमध्यमाः । पंचमो धैवतश्चाथ निषाद इति सप्त ते ॥ ३ ॥ अथ त्रिधा नादः ॥ ध्वनौ तु मधुरा स्फुटे ॥ कलो मंद्रस्तु गंभीरे तारोत्युच्चैस्त्रयस्त्रिषु ॥" इत्यमरः ॥ अथ ग्रामलक्षणम् ॥ ग्रामः स्वरसमूहः स्यान्मूर्छनादेः समाश्रयः । तौ द्वौ धरातले तत्र स्यात्षड्जग्राम आदिमः । द्वितीयो मध्यमग्रामस्तयोर्लक्षणमुच्यते । षड्जग्रामः पंचमे च चतुर्थे श्रुतिसंस्थिते । स्वीयांत्यश्रुतिसंस्थोसिन्मध्यमग्रामइष्यते । यद्वाधास्त्रिश्रुतिः षड्जे मध्यमे च चतुः श्रुतिः । ऋषयोः श्रुतिमेकैकां गाधा-

रश्चेत्समाश्रयेत् । यः श्रुतिधो निषादस्तु धश्रुतिं स श्रुतिं मृतः ॥ गांधार-ग्राममाचष्टे तदा तं नारदोमुनिः । प्रवर्त्तते स्वर्गलोके ग्रामोऽसौ न महीतले ॥ अथ तालल्क्षणं विनोदाचार्येणोक्तम् ॥ हस्तद्वयस्य संयोगे वियोगे वापि वर्तते । व्याप्तिमान्यो दशप्राणैः स कालस्तालसंज्ञकः ॥ तथा च सारोद्धारे ॥ कालस्ताल इति प्रोक्तः सोऽवच्छिन्नो द्रुतादिभिः । गीतादिमानकर्त्ता स्यात्स द्वेधा कथितो बुधैः ॥ तथाच संगीतार्णवः । कालः क्रिया च मानंच संभवंति यथा सह ॥ तथा तालस्य संभूतिरितिज्ञेयं विचक्षणैः ॥ मार्गदेशीमतत्वेन तालोऽसौ द्विविधो मतः । शुद्धशालंगसंकीर्णस्तालभेदाः क्रमान्मताः । तालः कालक्रियामानम्" इत्यमरः ॥ १ ॥ औ आलापके कालमें कहे समयमें मुख विविध बर्ग कहे अनेक रूप होत हैं ॥ आलापलक्षणम् ॥ "रागालपमालभिः प्रकटीकरणं मतम् ॥ २ ॥" औ बहु कहे बहुत प्रकारकी जे कला हैं औ पांच जे जाति हैं औ एकईस जे मूर्छना हैं औ बड कहे बडे अर्थनको जो चारि प्रकारको भाग है औ पंचदश प्रकारकी जो गमक हैं इनके सरकेतेगुण हैं तिनसहित नृत्यमें चलति कहे चलति हैं यह जानि कहे जानो ॥ अथक-लाचूडामणिः ॥ दक्षिणोवार्त्तकश्चित्रो ध्रुवचित्रतरस्तथा ॥ अथ चित्रतम-श्चेति षण्मार्गा शास्त्रसंमताः । ध्रुवादिककलाष्टौ च मार्गे दक्षिणसंज्ञके । ध्रुवका सर्पिणी चैव पताकापतितास्तथा । चतस्रो धार्तिके ज्ञेयाश्चित्रेर्थे पुन-रुच्यते । ध्रुवका पतिता चेति योजनीया विशेषतः । ध्रुवे कलेका विज्ञेया शार्ङ्गदेवेन कीर्तिता । अथ चित्रतरे मार्गे कला च द्रुतसंमिता । मार्गे चित्र-तमे ज्ञेया कला करजसंज्ञिता । अथ जातयः ॥ चतुरस्रस्तथा तिस्रः खंडो मिश्रस्तथैव च । संकीर्णाः पंच विज्ञेया जातयः क्रमशो बुधैः । चतुर्वर्णैस्त्रि-भिर्वर्णैः पंचवर्णैस्तथैव च ॥ सप्तवर्णैश्च नवभिर्जातयः क्रमशोदिताः ॥ अथ मूर्च्छनालक्षणम् ॥ क्रमात्स्वराणां सप्तानामारोहश्चावरोहणम् ॥ मूर्च्छनेत्यु-च्यते ग्रामप्रयैताः सप्तसप्त च । अथ भागलक्षणम् ॥ धातुप्रबन्धोऽवयवः स चोद्ग्राहादिभेदतः । चतुर्धाकथितो भागस्तदानुद्ग्राहसंज्ञकाः आदाउद्ग्राह्यते गीतं येनोद्ग्राहस्ततो भवेत् । मेलापको द्वितीयस्तु ग्राहकध्रुवमेलनात् ॥ ध्रुव-त्वाद्ध्रुवसंज्ञस्तुतृतीयो भाग उच्यते । आभोगस्त्वंतिमो भागो गीतपूर्णत्व-सूचकः ॥ अथ गमकलक्षणम् ॥ स्वरस्यैको यो गमकः श्रोतृचित्तसुखावहः । भेदाः पञ्चदशैवास्य कथितास्तारियादयः ॥ ५ ॥

बहुवर्ण विविधि आलाप कालि । मुख चालि चारु अरु शब्दचालि ॥ बहु उडुपतिर्यगपति पति अडाल । अरु लाग धाउराय रंगाल ॥ ६ ॥ उलथा टेंकी आलमस दिण्ड । पद

पलटि हुरुमयी निशंक चिण्ड ॥ असुतिनकी भ्रमनि देखि मति धीर । भ्रमि सीखत हैं बहुधा समीर ॥ ७ ॥ मोटनक-छंद ॥ नाचैं रसवेष अशेष तबै । बरसैं सुरसैं बहु भांति सबै ॥ न बहू रसमिश्रितभाव रचै । कौनों नहिं हस्तक भेद बचैं ॥ ८ ॥ दोहा ॥ पाइँपखाउज तालसों, प्रतिधुनि सुनियतु गीत ॥ मानहुँ चित्र विचित्र मति, पढत सकल संगीत ॥ ९ ॥ अमल कमलकर अंगुली, सकल गुणनिकी मूरि ॥ लागत मठ मृदंग मुख, शब्द रहत भरिपूरि ॥ १० ॥

टी०-प्रथम गानको विषय निरूपण करि अब द्वै छन्दमें नृत्यको विषय निरूपण करत हैं द्वै छन्दको अन्वय एक है आलापकालि कहे आलापकाली अर्थ आलापकालके योग्य बहु वर्ण कहे अनेकरंगकी अथ अनेक तरहकी औ विविधि कहे अनेक जे चारु कहे सुंदर मुखवालि नृत्य हैं औ शब्द वालि औ बहुत प्रकारके जे उडप हैं औ तियगपति कहे पक्षिशार्दूल नृत्य औ पति औ अडाल औ, डलथा औ टेकी औ अलम नृत्य सदिंड कहे दिंडनृत्यसहित औ पदपलटी औ हुरुमई औ निशंक औ चिंड जे जे नृत्य हैं औ कहूँ उडपति रियपति बट अडाल पाठ है तौ तिरिय औ बट येऊ नृत्यके भेद जानौ तिनमें तिन स्त्रिनकी असु कहे शीघ्र भ्रमनि कह घूमनि देखिकै मतिधीर कहे धीरमतिसों अथ मतिमें धीर्य धरिकै एकाग्रचित्त-ह्वैकै इति भ्रमि कहे बघरुराके ब्याज घूमिकै समीर जे वायु हैं ते सीखत हैं अथवा तिनकी भ्रमनि देखिकै अपनी शीघ्रताके गरूर करिकै मति है धीर जिनकी ऐसे जे समीर हैं ते भ्रमि कहे सन्देहको प्राप्त ह्वैकै अर्थ अप-नासों अधिक जानि आतुर ह्वैकै शीघ्रता सीखत हैं । " नृत्यानां लक्षण-मुक्तं संगीतदर्पणे ॥ अथ मुखचालिः । नृत्यादौ प्रथमं नृत्यं मुखचालि-रिति स्मृतः ॥ १ ॥ अथ शब्दचालिः ॥ प्राग्वत्कृत्वा स्थानहस्तौ मध्य-सञ्चेन नर्तकः । यत्र स्थित्वैकपादेन शब्दवर्णानुगामिनी । गतिं नयेद्द्वितीयेन दक्षिणाङ्घ्रिशोभनाम् । तद्वत्पादांतरेणाथक्रमेणैतद्वयोर्यदा । पर्यायेण गतिं कुर्याद्वार्तिकादिषु पंचसु । मार्गेष्वसौ शब्दचालिः पंडितैश्च निरूपिता ॥ २ ॥ अथोडुपानि ॥ नेरिः करणनेरिश्च मित्रं चित्रं तथा भवेत् ॥ नत्रं च जारमानं च मुरुरीडमरुतं तथा ॥ हुलं च लावणी ज्ञेया कर्त्तरी तुलकं तथा । प्रसरं च द्वादश स्युरुडुपानि यथाक्र-मात् ॥ ३ ॥ अथ पक्षिशार्दूलनृत्यलक्षणम् ॥ यदि मंडिमधिष्ठाय प्रसृतौ

भ्रमतः करौ । तदानंतरशार्दूलाः पक्षिशार्दूलमूचिरे ॥ ४ ॥ अथ पतिनृत्यलक्षणम् ॥ कटाक्षराभ्यां कान्यांचिन्मित्तात्यंतकोमलाः ॥ एकरूपाक्षरः पंचपुटतालानुगा पदा । वाद्यते यो वाद्यखंडो विरामैर्भूरिभिर्मुहुः । योनिर्मितो वाद्यपाठैर्वाद्यभेदापतिः स्मृता ॥ ५ ॥ अथाडाललक्षणम् ॥ सुलं बद्धा तदोत्प्लुत्य चरणैः पक्षिपक्षवत् । भ्रामित्वा नियते भूमौ तदडालमितीरितम् ॥ ६ ॥ अथ लागनृत्यलक्षणम् ॥ लागशब्देन कर्णाटभाषयाउत्प्लुतीरिति ॥ ७ ॥ अथ धाउनृत्यलक्षणम् ॥ आकाशचार्यो द्वित्रोश्चत्ततश्च तिरियं भवेत् । अंते मुरुतदोदिष्टं धाउनृत्यं नटोत्तमैः ॥ ८ ॥ अथ रापरंगालनृत्यलक्षणम् ॥ शूलं बद्धैकपादेन सहैवानुपतेद्यदि । द्वितीयोऽपि तदारापरंगालं तद्विदो विदुः ॥ ९ ॥ अथ उलथानृत्यलक्षणम् । उत्प्लुत्याद्यैर्यदा नृत्येत्करणैस्तालसंमितैः। तदोत्प्लुत्याद्यकरणनृत्यं नृत्यविदो विदुः॥अथवा उलथानृत्यको लक्षणनामर्थही है ॥ १० ॥ अथ टेंकीनृत्यलक्षणम् । पादौ समौ यदान्यस्मिन् पार्श्वे चापरपार्श्वतः।उत्प्लुयोत्पादयेच्चित्रं तदा टेंकीति कथ्यते ॥ ११ ॥ अथासलनृत्यलक्षणम् ॥ भूमावेकं समास्थाय द्वितीयं पूर्ववद्यदा ॥ पातयेच्चरणं चारु तं वीशं चतुरा विदुः ॥ याहीको नामान्तर अमल है ॥ १२ ॥ अथ दिंडनृत्यलक्षणम् ॥ उत्प्लुत्य चरणद्वंद्वं वस्त्रनिष्पीडनोपमम् ॥ परिभ्राम्यावनी याति यदि तद्दिंडमुच्यते ॥ १३ ॥ अथ पदपलटीनृत्यलक्षणम् । पुरः प्रसार्य्य चरणं लंघयेदपरांघ्रिणा । सूलू पूर्वतदान्वर्था प्रोक्तलंघितजंघिका याहीकी अन्वर्थ पदपलटी है ॥ १४ ॥ अथ हुरुमयीनृत्यलक्षणम् । अलातां परिवृत्यांगं पादपृष्ठं गतं यदा । अलातांघ्रौ पृष्ठगते शीघ्रमन्यांघ्रिलंघयेत् । लंघयेद्दक्षिणोऽन्येन प्रोक्ता हुरुमयी नटैः ॥ १५॥ अथनिःशंकनृत्यलक्षणम् । सुलूपूर्वयदोत्प्लुत्य मिलितौ चरणौ समौ । दूरं भूमौ निपतितः स निःशंकः प्रकीर्तितः ॥ १६ ॥ अथ चिंडनृत्यलक्षणम् ॥ विडाचिंडः कालचरी इति चिंडार्द्विधा भवेत् । यदपिल्लमुरू यत्र निबद्धौ बिडाचिंडकः ॥ तत्तज्जात्यनुकरेण कालचारीति कीर्तितः । तालतानसुलूतुंगघर्घरीध्वनिपेशलम् । वादते तुडके डिंडगीते नयाति पूर्वकम् ॥ तत्तज्जातियुतं नृत्यं नानागतिविचित्रितम् ॥ चारुपाटानुचचर्यांककणीध्वनिपेशलम् । कालासैरपि लास्यांगैरंकजैरंतरांतरा ॥ धृतहस्तत्रिशूलादि यत्र नृत्यं समाचरेत् । तदाधीरैः समाख्यातं चिंडनृत्यं मनोहरम् ॥ १७ ॥ ६ ॥ ७ ॥ रसवेष कहे रस स्वरूप अर्थ शृंगारादि जे नवरस हैं तिनमें जा रसको प्रबंध गावती ता रसके रूप आप ह्वै जाताहै औ बहुत प्रकारसों रस स्वादको वर्षति हैं भाव कहे चेष्टा हस्तक (हस्तक्रिया) रंगमहलमें स्त्रिनके पांवकी औ पखावजकी ताल सहित प्रति ध्वनि

जो झांई शब्द है ताहूके गीत सुनियत है सो मानो विचित्र मति जे स्त्री पुरुषनके चित्र हैं ते ताही बिधिपाँवकी औ पखावजी ताल दैकै ताही विधि गीतको गाइ सब संगीतको पढत है ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

घनाक्षरी ॥ अपघन घायन विलोकियतु घायलनि घनो सुख केशोदास प्रगट प्रमान है । मोहै मन भूलै तन तनय रुदन होत सूखै शोचपोच दुख मारन बिधान है ॥ आगम अगम तंत्र शोधि सब यंत्र मंत्र निगम निवारिवेको केवल अपान है । बालनिको तन त्राण अमित प्रमाण सब रीझि रामदेव कामदेव कैसो बान है ॥ ११ ॥

टी०—रीझि रामदेव कहत हैं इति शेषः । कहा कहत हैं कि कामदेवके बाणको त्राण है बरुतर बालकनको तन है अर्थ जबलों जीव बालकनके तनरूपी त्राणमें रह्यो तबलो कामबाण नहीं लागत औ गान जो है ताको त्राण बालकनहूको तनही है अर्थ बालकनहूको व्याप्त होत है यतनोई भेद है और अमित कहे अनंत सब बातप्रमाण, कहे तुल्य है तासों गान काम-देवको ऐसो बाण है कैसोहै कामदेवको बाण औ गान जाके वायु अपघन जो शरीर है तामें नहीं बिलोकियत औ घायलनको घनो सुख होत है औ मन मोहकी मूर्च्छाको प्राप्त होत है औ तनकी सुधि भूलि जाति है औ नयनमें रोदन होतहै औ पोच कहे नागा जो राज्यादि वस्तुको शोच है सो सूखि जात है औ मारणही है बिधान जाको ऐसो दुःख होत है अथवा दुःखको मारण कहे नाश कर्त्ता है विधान जाको औ अगम कहे अनंत आगम जे धर्मशास्त्र हैं औ अगम जे तंत्रशास्त्र हैं तिनके जे शोधि कहे ढूंढिकै अथवा शुद्ध करिकै मंत्र औ यंत्र हैं औ निगम जे वेद हैं ताके जे यंत्र मंत्र हैं ते सब ताके निवारण करिवेको केवल अयान (अज्ञान) हैं केवल पदको अर्थ यह किया कि निवारणकी विधि वे जानत नहीं ॥ ११ ॥

दोहा ॥ कोटि भांति संगीत सुनि, केशव श्रीरघुनाथ ॥ सीता-जूके घर गये, गहे प्रीतिको हाथ ॥ १२ ॥ सुन्दरीछन्द ॥ सुन्दरि मन्दिरमें मन मोहति । स्वर्णसिंहासन ऊपर सोहति ॥ पङ्कजके करहाटक मानहुँ । हैं कमला विमला यह जानहुँ ॥ १३ ॥ फूलनकोसो बितान तन्यो वर । कञ्चनको पलिका यक तातर ॥ ज्योति जराय जरेउ अति शोभनु । सूरजमण्ड-लते निकस्यो जनु ॥ १४ ॥

टी०-जैसे सखीको हाथ गहि स्त्रीके पास जात है तैसे प्रीतिरूपी सब जो सखी हैं ताको हाथ गहे रामचन्द्र सीताके घर गये ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

कुसुमविचित्राछन्द। दर्शतही नयनानि रूचि बनै। वसन बिछाये सब सुख सनै ॥ अतिरुचि सोहैं कबुहुं न सुन्यो। मानो तनु लै शशिकर चुन्यो ॥ १५ ॥ चम्पकदलद्युतिके गेंडुये। मनहुं रूपके रूपक उये ॥ कुसुम गुलाबनकी गल-सुई। बरणी जाय नैनन कारि छुई ॥ १६ ॥ दोहा ॥ राम-चन्द्र रमणीय तर, तापर पौढै जाइ ॥ पदपंकज पखराइकै, कहि केशव सुख पाइ ॥ १७ ॥ तोमरछन्द ॥ जिनके न रूप न रेष। ते पौढियों नरवेष ॥ निशि नाश यौं त्यहिं बार। बहु बंदि बोलत द्वार ॥ १८ ॥

टी०-शुचि कहे श्वेत मानो शशिको (चन्द्रमाको) तनु कहे त्वचा लै चुन्यो कहे बनायोहै अथवा मानो शशि जो चन्द्रमा है तेही तनु कहे सूक्ष्म जे कहे किरणि हैं तिनको लैकै ता बसनको बनायो है ॥ १५ ॥ गेंडुआ (तकिया) चंपकदल द्युतिके गेंडुआ धरिवेको हेतु यह कि सीताजू पद्म-मुखी हैं तासों मुखको पद्म जान सोवतमें गेंडुआनको देखि चम्पकदलके भयसों भ्रमर मुखमें दंश ना करैं चंपकदलके निकट भ्रमर नहीं जात यह प्रसिद्ध है रूपक कहे प्रतिमा कुसुम कहे फूल जे गुलाबनके हैं तिनकी गल-सुई (गेंडुआ भेद) है ते वचनकरि बरणी नहीं जातीं औ नैनन करि छुई नहीं जातीं अर्थ अति सुन्दरी है ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

दोहा ॥ राजलोक जाग्यो सबै, बन्दीजनके शोर ॥ गये जगावन रामपै, सारिकादि उठि भोर ॥ १९ ॥ सारिका-हरिप्रियाछन्द ॥ जागियो त्रिलोकदेव देवदेव रामदेव भोर भयो भूमिदेव भक्त दर्श पावै। ब्रह्मा मन मंत्र वर्ण विष्णु हृदय चातकघन रुद्रहृदयकमल मित्र जगत गीत गावै ॥ गगन उदित रवि अनन्त शुक्रादिक ज्योतिवन्त क्षण क्षण छबिक्षीण होत लीन पीन तारे। मानहुँ पर देश देश ब्रह्म दोषके प्रवेश ठौर ठौरते बिलात जात भूप भारे ॥ २० ॥

टी०--राजलोक कहे राजलोकके सब जन जागे ॥ १९ ॥ पांच छंदको अन्वय एक है भूमिदेव अर्थ हे भूपति ! ब्रह्माको मनरूपी जो मंत्र है ताके तुम बर्ण कहे अंक हो जैसे अंकनमें मंत्र बस्यौ रहत है तैसे ब्रह्माको मन तुममें सदा बसो रहत है औ विष्णुको जो हृदयरूपी चातक यह है ताके घन कहे सजल मेघ हौ जैसे घन चातककी तृषा बुझावत है तैसे तुम विष्णुके हृदयकी तृषा बुझावत हौ औ रुद्रको हृदयरूपी जो कमल है ताके मित्र (सूर्य) हौ जैसे कमलको सूर्य प्रफुल्लित करत हैं तैसे तुम रुद्रहृदयको प्रफुल्लित करत हौ बा प्रकारसों तुम्हारो गीत जगत गान करत है गगनमें रवि उदित भये तासों अनंत कहे अनेक जे शुक्रादिक ज्योतिवंतनके पीन कहे बडे तारे नक्षत्र हैं ते क्षण क्षणमें छबि क्षीण ह्वै गगनमें लीन होत जात हैं अर्थ बिलात जातहैं मानों ब्रह्मदोषके प्रवेशसों जे भूप भय मानि परदेश गये हैं तेऊ औ जे आपने देशमें हैं तेऊ बिलात जातहै तैसे जे नक्षत्र स्थानमें हैं ध्रुवादि औ स्थानसों चलित हैं ते सब बिलात जातहैं इत्यर्थः ॥ २० ॥

अमल कमल तजि अमोल मधुप लोल टोल टोल बैठत उडि कारिकपोल दानमानकारी । मानहुं मुनिज्ञान बद्ध छोडि छोडि गृहसमृद्ध सेवत गिरिगण प्रसिद्ध सिद्धि सिद्धिधारी ॥ तरणि किरणि उदित भई दीप ज्योति मलिन गई सदय हृदय बोध उदय ज्यों कुबुद्धि नाशै । चक्रवाक निकट गई चकई मन मुदित भई जैसे निज ज्योति पाइ जीव ज्योति भासै ॥ २१ ॥ अरुण तरणिके बिलाश एक दोइ उडु अकाश कलि कैसे सन्त ईशदिशन अंत राखै । दीखत आनन्द कन्द निशि बन द्युतिहीन चंद ज्यों प्रवीन युवतिही न पुरुष दीन भाखै ॥ निशिचर चपके बिलास हास होत है निराश शूरके प्रकाश त्रास नाशत तम भारे । फूलत शुभ सकल गात अशुभ शैलसे बिलात आवत ज्यों सुखद राम-नाम मुख तिहारे ॥ २२ ॥ सारो शुक शुभ मराल केकी कोकिल रसाल बोलत कल पारावत भूरि भेद गुनिये । मनहुँ मदन पंडित ऋषि शिष्य गुणन मंडित करि अपनी गुदरैन

दैन पठये प्रभु सुनिये ॥ सोदर सुत मंत्रि मित्र दिशि दिशिके नृप विचित्र पंडित मुनि कवि प्रसिद्ध सिद्ध द्वार ठाढे। रामचन्द्र चन्द्र ओर मानहुँ चितवत चकोर कुवलय जल जलधि जोर चोप चित्त बाढे ॥ २३ ॥ नचत रचत रुचिर एक याचक गुणगण अनेक चारण मागध अगाध बिरद बन्दि टेरे। मानहुँ मंडूक मोर चातक चप करत शोर तडित वसनसंयुत घनश्याम हेत तेरे ॥ केशव सुनि वचन चारु जागे दशरथकुमारु रूप प्याइ ज्याइ लीन जन जलथल ओकके। बोलि हँसि विलोकि वीर दान मान हरी पीर पूरे अभिलाष लाख भाँति लोकलोकके ॥ २४ ॥

टी०—टोल टोल कहे झुंड झुंड कैसे हैं करिदान जो मद है ताके कर्त्ता औ श्लेषसों दाता औ मान कहे आदर कर्त्ता भ्रमर जात हैं तिन्हैं शिरपर बैठावत हैं दाता ह्वै आदर करै ताके समीप सब प्रसन्न ह्वै जात हैं इति भावार्थः ॥ समृद्ध कहे संपतियुक्त कैसे हैं मुनिगण सिद्ध कहे आपने वश्य जो सिद्धि कहे तपसिद्धि अथवा अष्टसिद्धि है तिन्हैं धरे हैं अथवा गिरिगणनहींको विशेषण है सिद्धि जो सिद्धि (तपसिद्धि) है तिनको धरे हैं अर्थ जिन पर्वतनमें जातही विन तप कियेही तपसिद्धि प्राप्त होति है मलिन गई कहे मलिनताको प्राप्त भई बोध कहे ज्ञान सम तरणि जे सूर्य हैं तिनकी किरणें हैं कुबुद्धि सम दीपज्योति है हृदय सम भूमंडल जानों निज ज्योति अर्थ ब्रह्मज्योति उडु (नक्षत्र) आनंदकंद चन्द्रको विशेषण है सूर्यके प्रकाशके त्राससों निशिचर कहे चोर परस्त्रीगामी कुलटादिके जे विलास औ हास हैं ते निराश कहे नाश होत हैं औ भारे जे तम अन्धकार हैं ते नाशत हैं औ शुभ कहे तपस्वी आदि प्राणी पूजादि कर्म तिनके सकल गात फूलत कहे प्रफुल्लित होत हैं हे राम ! जैसे तिहारे नामको मुखमें लेत शुभ जे मंगलादि हैं तिनके गात प्रफुल्लित होत हैं औ शैल कहे पर्वत सम अशुभ अमंगल बिलात हैं मदनरूपी जो पण्डित ऋषि कहे पण्डित श्रेष्ठ हैं गुदरैनी परीक्षा रामचन्द्ररूपी जे चन्द्र तुम हो तिनकी ओर दर्शनके चोप चित्तनमें जोर कहे अति बाढे हैं जिनके ऐसे चकोर औ कुवलय कोई औ जलधिके जलहैं मानो या प्रकारसों दरादिद्वार पर ठाढे चितवत हैं एके अर्थ नृत्य

कारी नचतहैं औ और जे अनेक याचक हैं ते अपने गुणगण रचत हैं छंद उपजाति है ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥

दोहा ॥ जागत श्रीरघुनाथके, बाजे एकहि बार ॥ निगर नगारे नगरके, केशव आठहु द्वार ॥ २५ ॥ मरहट्टाछन्द ॥ दिन दुष्टनिकन्दन श्रीरघुनन्दन आँगन आये जानि । आई नव नारी सुभग शृँगारी कञ्चनझारी पानि ॥ दाँत्यों निकरत हैं मनन गहत हैं ओरि बोरि घनसार । सजि सजि विधि मूकनि प्रतिगंडूषनि डारत गहत अपार ॥ २६ ॥ दोहा ॥ सन्ध्या करि रवि पाँय परि, बाहर आये राम ॥ गणक चिकित्सक आशिषा, बन्धुन किये प्रणाम ॥ २७ ॥ मरहट्टाछन्द ॥ सुनि शत्रु मित्रकी नृपचरित्रकी ख्याति रावत बात । सुनि याचकजनके पशुपक्षिनके गुणगण अति अवदात ॥ शुभ तन मज्जन करि स्नान दान करि पूजे पूरण देव । मिलि मित्र सहोदर बन्धु शुभोदर कीन्हे भोजन भेव ॥ २८ ॥

टी०—निगर कहे मौन विधिको सजिकै प्रतिगंडूषनि कहे प्रति कुल्लनको डारत हैं औ गहतहैं असार अनेक अथवा प्रतिगंडूषनि कहे कुल्लाकुल्ला प्रति अर्थ हरि कुल्ला मूकनि कहे कुल्लाके त्यागनकी विधिको सजिकै डारत हैं त्यागत हैं फेरि और गहत है ॥ २५ ॥ २६ ॥ गणक (ज्योतिषी) चिकित्सक (वैद्य) ॥ २७ ॥ मज्जन कहे उबटनादि सहोदर (भरतादि) बंधु जातिजन (बिरादरी) इति शुभोदर कहे नीकी विधि उदरपूर्ति करिकै अथवा शुभोदर बडे भोजन कर्त्ता ॥ २८ ॥

दण्डक ॥ निपट नवीन रोगहीन बहु क्षीर लीन वक्ष पीन तन ताप दानसों हरतु हैं । ताँबे मढी पीठि लागे रूपके खुरन डीठि डीठि स्वर्ण शृंग मनआनंद भरतु हैं ॥ कांसेकी दोहनी श्याम पाटकी ललित नोइ घटनसों पूजि पूजि पांयनि परतु हैं । शोभन सनौढियन रामचन्द्र दिनप्रति गोशत सहस्र दैक भोजन करतु हैं ॥ २९ ॥ तोटकछंद ॥

तहँ भोजन श्रीरघुनाथ करैं। षट्रीति मिठाइन चित्त हरैं॥ पुनि खारिसों चौविधि भात बन्यो। तकि तीनि प्रकार निशोभ सन्यो॥ ३०॥ षट्भांति पहीति बनाइ सची। पुनि पांचसो व्यंजन रीति रची॥ विधि पांचसो रोटिन मांगत हैं। विधि पाँच बरा अनुरागत हैं॥ ३१॥

टी०--॥ २९॥ चौ विधिको अन्वय दूनौं ओर है अर्थ चारि विधिकी खीर बनी है औ चारि विधिको भात बन्यो है॥ ३०॥ सची कहे सञ्चित करचौ अर्थ एकत्र करचौ॥ ३१॥

विधि पांच अथान बनाइ कियो। पुनि द्वै विधि क्षीरसों मांगि लियो॥ पुनि झारिसो द्वै विधि स्वाद घने। विधि दोइ पछावरि सात पने॥ ३२॥ दोहा॥ पांच भांति ज्योनार सब, षट्रस रुचिर प्रकास॥ भोजन करि रघुनाथजू, बोले केशवदास॥३३॥ हरिलीलाछन्द॥ बैठे विशुद्ध गृह अग्रज अग्रजाइ। देखी वसन्त ऋतु सुन्दर मोद दाइ॥ बौरे रसाल कुल कोमल केलिकाल। मानों अनंगध्वज राजत श्रीविशाल॥३४॥

टी०—अथान (अचार) झारि आम्रके चूर्णमें जीरछंकादि डारि जलमें घोरि बनाति है पश्चिममों प्रसिद्ध है पछ्यावरि पकवानको भेद है या सब प्रकार भोजनके मिलाइ छप्पन होत हैं॥ ३२॥ शर्करादि (मधुर)॥ १॥ आम्रादि (अम्ल) २ करैला आदि (तिक्त) ३ मरिचादि (कटु) ४ लवणादि (लवण) ५ हर्रादि (कषाय) ६ ये जे षट् छः रस हैं तिनकी है रुचिर प्रकाश जामें ऐसी जो चोष्य (आम्रादि) १ पेय (दुग्धादि) २ भोज्य (भक्तादि) ३ लेह्य (अवलेहादि) ४ चर्व्य (पिस्ता बादामादि) ५ पांच भांतिकी जेवनार है ताको भोजन करिकै रामचन्द्र बोले भोजन-समयमें बोल्यो न चाहिये यह धर्म शास्त्रोक्त है॥ ३३॥ रामचन्द्रजू भोजन करिकै गृह अग्रज कहे गृहमें अग्रज श्रेष्ठ जो गृह (घर) है ताके अग्रभागमें बसंत बहार देखिवेको जाइकै बैठत भये कोमल कहे सुगंधयुक्त रसाल (आम्र) वृक्ष बोरे हैं सो मानों यह केलिको काल कहे समय है या प्रसिद्ध करिबेके लिये मानों अनंग जो काम है ताके विशाल ध्वजा राजत हैं जा कछू वस्तु प्रसिद्ध करिबो होत है ता लिये सब ध्वजा बांधत हैं प्रसिद्ध है॥३४॥

फूली लवंग लव लोलतिका विलोल । भूले जहां भ्रमर विभ्रम मत्त डोल ॥ बोलैं सुहंस शुक कोकिल केकिराज । मानों बसन्त भट बोलत युद्धकाज ॥ ३५ ॥ सोहै पराग चहुँभाग उडै सुगन्ध । जाते विदेश विरहीजन होत अन्ध ॥ पालास माल विन पत्र विराजमान । मानों वसन्त दिय कामहिं अग्नि-वान ॥ ३६ ॥ सवैया ॥ फूले पलास विलास थली बहु केश-वदास प्रकाश न थोरे । शेष अशेष मुखानलकी जनु ज्वाल विशाल चली दिवि ओरे ॥ किंशुक श्रीशुक तुंडनकी रुचि राचे रसातलमें चित्त चोरे । चोंचन चापि चहूँ दिशि डोलत चारु चकोर अँगारन भोरे ॥ ३७ ॥ मौक्तिकदामछन्द ॥ जरैं विरहीजन जोवत गात । उघरे उर शीतलसे जलजात ॥ किधौं मन मीननको रघुनाथ । पसारि दियो जनु मन्मथ हाथ ॥३८॥

टी०—लवली हरफारचोरी पुष्प रस पानसों मत्त जे भ्रमर हैं ते विभ्रममें भूले डोल कहे डोलत हैं ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ विलास स्थलिनमें बहुत पलाश फूले हैं रसातल भूतल दिवि आकाश किंशुक कहे पलाश अर्थ पलाशपुष्प ॥ ३७ ॥ सीताजूकी उक्ति रामचन्द्र प्रति है उघरे हैं कहे हृदय अर्थ सिफा-कंद जिनके ऐसे जे शीतलसे कहे शीतल जलजात कमल हैं तिनको देखत विरही जननके गात जरत हैं सो हे रघुनाथ ! मनमीननके गहिबेके अर्थ मानो मन्मथ (काम) हाथ पसारि दियो है अर्थ जाको मन कमलनमें जात हैं ताको गहि राखत हैं मन्मथ हाथ सम कहि कमलनकी अति सुन्द-रता जनायो छंद उपजाति है ॥ ३८ ॥

जिते नर नागर लोग विचारि । सबै वरनै रघुनाथ निहारि ॥ किधौं परमानँदको यह मूल । विलोकतही सोहरै सब शूल ॥ ३९ ॥ किधौं वनजीवनको मधुमास । रचे जग लोचन भौंर विलास ॥ किधौं मधुको सुख देत अनंग । धरेउ मन मीननि कारण अंग ॥४०॥ किधौं रतिकी रतिवेलिनिकुंज । बसै गुणपक्षिनको जहँ पुंज ॥ किधौं सरसीरुह ऊपर हंस ।

किधौं उदयाचल ऊपर हंस ॥ ४१ ॥ दोहा ॥ प्राचीदिशि ताही समय, प्रगट भयो निशिनाथ ॥ वर्णत ताहि विलोकिकै, सीता सीतानाथ ॥ ४२ ॥

टी०--नागर लोग कहे नगरश्रेष्ठ जो नर हैं ते रामचन्द्रको बैठे देखि परस्पर वर्णत हैं मूलके भक्षणसों शूल दूरि होत है औ रामरूपी जो आनन्दमूल है ताके देखतही शूल दूरि होत है ॥ ३९ ॥ कि वनरूपी जे जीव प्राणी हैं तिनको मधुमास (चैत्रमास) है जैसे चैत्र वनको फलावनको फुलावत है तैसे रामचन्द्र जगत्के प्राणिनको प्रफुल्लित करत हैं औ मधुमासमें भ्रमर अनुरागत हैं इहां जगके लोचन भ्रमरके बिलाससों रचे कहे अनुरागे हैं औ कि रामचन्द्र नहीं हैं अनंग (काम) हैं बनमें विराजमान जो मधु (वसंत) ताको दरश दैकै सुख देत हैं कैसो है अनंग सबके मनरूपी जे (मीन-मत्स्य) हैं तिनके कारण कहे गहिबेके अर्थ अंगनको धारण करचो है देखतहीं रामचन्द्र सबके मनको गहि राखतहैं तासों जानो ॥४०॥ रति प्रीति औ कीर्ति यशरूपी जो बेलि हैं तिनको निकुंजहैं कुंजमें पक्षी बसत हैं रामचन्द्रमें गुणरूपी जे पक्षी हैं तिनके पुञ्ज (समूह) बसत हैं ॥ "निकुञ्जकुञ्जौ वा क्लीबे लतादिपिहितोदरे" इत्यमरः ॥ सरसीरुह औ उदयाचल सम गृह है हंस (पक्षी) औ हंस (सूर्य) सम रामचन्द्र हैं ॥ ४१ ॥ प्राची (पूर्व) ॥ ४२ ॥

हरिणीछंद ॥ फूलनकी शुभ गेंद नई । सूंघि सची जनुडारि दई ॥ दर्पण सो शशि श्रीरतिको । आसन काम महीपतिको ॥ ४३ ॥ मोतिनको श्रुतिभूषण भनो । भूलि गई रविकी तिय मनो ॥ अंगदको पितु सो सुनिये । सोहत तारहिं संग लिये ॥ भूप मनोभव छत्र धरेउ । लोक वियोगिनको बिडरेउ ॥ ४४ ॥ देवनदी जल राम कह्यो । मानहुँ फूलि सरोज रह्यो ॥ फेन किधौं नभसिंधु लसै । देवनदी जलहंस बसै ॥ ४५ ॥ दोहा ॥ चारुचंद्रिका सिंधुमें, शीतल स्वच्छ सतेज ॥ मनो शेषमय शोभिजै, हरिणाधिष्ठित सेज ॥ ४६ ॥

टी०--शशि जो चन्द्र है सो श्रीरति जो कामकी स्त्री है ताको दर्पणसों है ॥ ४३ ॥ तारा (नक्षत्र) औ वालिकी स्त्री मनोभव (काम) वियोगी स्त्री

पति परस्पर वियोगी औ विरोधी छंद उपजाति है ॥ ४४ ॥ या प्रकार सीताको वर्णन सुनिकै रामचन्द्र कह्यो नभसिंधु (आकाशगंगा) ॥ ४५ ॥ हरिणाधिष्ठित है तासों चारु चन्द्रिकारूपी जो सिंधु कहे क्षीरसिंधु है तामें शीतल औ स्वच्छ मलरहित सतेज कहे कान्तियुक्त मानो शेषमय कहे शेष स्वरूप सेज है शेषमयसेजहरि (विष्णु) करसन्ते अधिष्ठित युक्त है हरि वा तृतीयांत पद है चन्द्रमा हरिण करिकै अधिष्ठित है मृग अंकमें प्रसिद्ध है४६

दण्डक ॥ केशोदास है उदास कमलाकर सो करशोषक प्रदोष तापतमोगुण तारिये । अमृत अशेषके विशेष भाव वरषत कोकनद मोद चण्डखण्डन विचारिये ॥ परम पुरुष-पद विमुख परुष रुख सुमुख सुखद विदुषन उर धारिये । हरि हेरी हियेमें न हरिण हरिणनैनी चन्द्रमा न चन्द्रमुखी नारद निहारिये ॥ ४७ ॥

टी०--सीतासों रामचन्द्र कहत हैं कि, हे हरिणनयनी ! यह चन्द्रमा नहीं है नारद हैं औ याके हियमें यह हरिण नहीं है हरि (विष्णु) हैं सो श्लेषसों कहत हैं कैसा है चन्द्रमा कमलनको जो अकार समूह है तासों उदास हैं कर (किरण) जाके चन्द्रकिरण स्पर्शसों कमल संकुचित होत हैं औ प्रदोष जो रजनीमुख है औ ताप जो उष्ण है औ तमोगुण जो अन्धकार है तिन-को शोषक (दूरि करनहार) है यह तारिये कहे जानियत है पूर्णिमाको चन्द्र जब उदित भयो तब रात्रिको प्रवेश होत है रजनीमुख काल व्यतीत होत है तासों शोषक कह्यो ॥ " प्रदोषो रजनीमुखम् " इत्यमरः" ॥ औ अशेष कहे पूर्ण जो अमृत है ताके जे भाव कहे विभूति है वृद्धि इति ॥ ताको विशेषसो वर्षत है अमृतकी बडी बर्षा करत है इत्यर्थः ॥ औ कोक जे चक्र-वाक हैं तिनको जो नद (शब्द) है ताको जो मोद है अर्थ परस्पर स्त्री पुरुष संभाषणानन्द है ताको चण्ड कहे उग्र अर्थ नीकी विधि खंडन कहे खंडन कर्त्ता है अर्थ चक्रवाकनको वियोगी करि परस्पर स्त्रीपुरुष संभाष-णानन्दको दूरि करत हैं अथवा प्रथम कमलाकर पद कह्यो है तहां श्वेतादि कवल जानो इहां कोकनद कहे अरुण कमलको जो मोद है ताको चण्ड-खण्डन है ॥ " रक्तोत्पलं कोकनदम् " इत्यमरः ॥ औ परमपुरुष जो पति है ताके पदसों जे स्त्री विमुख हैं अर्थ मान किये हैं तिन्हें परुष रुख कहे कठोर रुख है अर्थ ताप कर्त्ता है औ जे लोगन पतिसों सुमुख हैं

तिनको सुखद है औ विदुष जे प्रवीण लोग हैं तिन करिकै उरमें धारियत है वीणके सदा चन्द्रोदयकी इच्छा रहति है चौरादिक चंद्रोदय नहीं चाहत ति भावार्थः ॥ नारद कैसे हैं कि कमला जो लक्ष्मी हैं अर्थ द्रव्य ताके आकर समूह) सों उदास हैं कर (हाथ) जाको अर्थ बहुतहू द्रव्य कोऊ देइ ताको हण नहीं करत अल्पकी का कथा है इति भावार्थः ॥ औ प्रकर्ष जे दोष हैं ोवधादि औ ताप जे दैहिक, दैविक, भौतिक त्रैताप हैं औ तमोगुणके ोषक दूरि कर्त्ता हैं तमो गुणके शोषक कहि या जनायो कि सदा सत्त्वगुणयुक्त रहत हैं औ अमृत कहे नाहीं है मृत्यु जिनकी अशेष कहे पूर्ण ऐसे ो विष्णु हैं तिनके जे भाव कहे अनेक लीला हैं तिनको विषेशसों बर्षत हैं अर्थ भगवानकी अनेक लीला विशेषसों गान करत हैं अथवा भाव कहे अभिप्राय ताको वरषत हैं अर्थ भूत भविष्य वर्त्तमान तीनों कालमें जो ईश्वरके अभिप्रायके कृत्य हैं ताहि जानत हैं सो सबसों कहत हैं त्रिकालज्ञ हैं इत्यर्थः॥ "भावोऽभिप्रायवस्तुनो स्वभावजन्मसतात्माक्रिया लीलाविभूतिषु" इत्यभिधानचिन्तामणिः ॥ औ कोक जो शास्त्र विशेष है ताको जो नद (शब्द) है वचन इति ताको जो मोद (आनंद) है ताके खंडन कहे खंडन कर्त्ता हैं अर्थ कोकशास्त्रमें अनेक कामवार्त्ता हैं तिनको निंदत हैं औ परम पुरुष जे भगवान् हैं तिनके पदसों जे प्राणी विमुख हैं अर्थ विष्णुकी भक्ति नहीं करत तिन्हैं परुषरुख (कठोररुख) हैं औ जे सुमुख हैं अर्थ विष्णुभक्त हैं तिन्हैं सुखद हैं औ विदुष जे पंडित हैं तिन करिकै जिनको उरमें धारियत है अथवा विशेषसों दुःख नहीं जिन करिकै उरमें धारियत अर्थ सदा आनंदयुक्त रहैं ॥ ४७ ॥

दोहा ॥ आई जानि वसंत ऋतु, वनहिं विलोकत राम ॥
धराणि धसे सीतासहित, रतिसमेत जनुकाम ॥ ४८ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचन्द्रचंद्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां वसंतदर्शनं नाम त्रिंशः प्रकाशः ॥ ३० ॥

टी०—बनको देखत वसंत ऋतु आई जानिकै बनबिहार करिबो मनमें निश्चय करि सीता सहित गृह अग्रसों धराणिको धसे कहे उतरे ॥ ४८ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां त्रिंशः प्रकाशः ॥ ३० ॥

दोहा ॥ इकतीसयें प्रकाशमें, रघुवरबागपयान ॥ शुकमुख सिय दासिनको, वर्णन विविध विधान ॥ १ ॥ ब्रह्मरूपक-

छंद ॥ भोर होतही गयो सो राजलोक मध्यबाग । बाजि आनियो सो एक इंगितज्ञ सानुराग ॥ शुभ्र शुद्ध चारिहून अंशुरेणुके उदार । सीखि सीखि लेत हैं ते चित्तचंचला प्रकार ॥ २ ॥ तोमरछंद ॥ चढि बाजि ऊपर राम । बनको चले तजि धाम ॥ चढि चित्त ऊपर काम । जनु मित्रको सुनि नाम ॥ ३ ॥ मगमें विलम्ब न कीन । बनराज मध्य प्रवीन ॥ सब भूप रूप दुराइ । युवती विलोकी जाइ ॥४॥

टी०-॥ १ ॥ वनविहारके अर्थ भोर होतही राजलोक कहे रनिवास प्रथम बागके मध्य गयो फेरि इंगितज्ञ कहे सवारकी चेष्टाको जाननहार अर्थ जैसे सवारको मन देखै ताही विधि ताडन बिनाहीं गमन कर्त्ता सानुराग कहे अपने अनुराग प्रेम सहित अर्थ जाके ऊपर अपनो बडो प्रेम है ऐसो बाजि रामचन्द्र आनियो कहे मँगायो अथवा बन जाइबेके अनुराग सहित जे रामचन्द्र हैं तिन इंगितज्ञ बाजि आनियो अथवा इंगितको जाननहार जो कोऊ अनुचर है सो रामचंद्रको बाजिपर चढिकै बाग जाइबेको इंगित जानिकै सानुराग कहे प्रेमसहित बाजि आनियो (लायो) कैसो है बाजि जाके शुभ्र कहे सुंदर शुद्ध कहे निर्दोष चारिहू चरणमें इति शेषः ॥ रेणु जो धूरि है ताके अंश कहे कण चलतमें लगि गये हैं ते मानों उदार कहे चतुरचित्त हैं चरणनमें लगिकै चंचला प्रकार कहे चंचलताको प्रकार सीखि लेत हैं जिनके चरणनमें चित्तहूसों अधिक चंचलता है इति भावार्थः ॥ २ ॥ बनमें आयो मित्र जो वसंत है ताको नाम सुनिकै मानों चित्तपर चढिकै धाम छोडि कामबनको चल्यो है इत्यर्थः ॥ चित्तसम चंचल बाजि है कामसम सुंदर राम हैं ॥ ३ ॥ भूपरूप छत्र चामरादिको दुराइ छिपे छिपे युवतिनको विलोक्यो जाइ ॥ ४ ॥

स्वागताछंद ॥ रामसंग शुक एक प्रवीनो । सीयदासि गुण वर्णन कीनो ॥ केशपाश शुभ श्याम सनेही । दास होत प्रभु जीव विदेही ॥ ५ ॥ भाँति भाँति कबरी शुभ देषी । रूपभूप तरवारि विशेषी ॥ पीय प्रेम प्रण राखनहारी । दीह दुष्ट छल खंडनकारी ॥ ६ ॥ किधौं शृंगारसरित सुखकारि ।

वंचकता निबहावनिहारि ॥ कंचन पत्रपांति सोपान । मनों शृँगारलोकके जान ॥ ७ ॥

टी०–स्नेही स्नेह तैलयुक्त प्रभु रामचन्द्रको संबोधन है विदेही ज्ञानी जे जनकादिसम जन देह धरे हैं अथवा जिनको देखि जीव उदास होतहैं औ विदेही होतहैं अर्थ देहकी सुधि भूलि जाति हैं ॥ ५ ॥ कबरी (वेणी) "कबरी केशविन्यासशशांकयोः । " इति हेमचन्द्रः । अनेक दासी हैं तासों भाँति भाँति पद कह्यो काहू दासीकी वेणी और विधि है काहूकी और विधि है कैसी है कबरी रूप कहे सौंदर्य रूपी जो भूप राजा है ताकी बिशेष निश्चय तरवारि है कैसी हैं तरवारि पीय जो स्वामी रूप है ताके प्रेमकी राखनहारी है अर्थ अति प्रेमसों सौंदर्य जिनको एकहु क्षण त्याग नहीं करत औ सबके मनको वश्य करिबो यह जो रूप भूपको प्रण है ताहूकी राखनहारी है सबके मनको वश्य करति औ दीह (दुष्ट) सम जो छल है ताकी खंडनकारी है अर्थ जैसे तर वारि दुष्ट जे विरोधी हैं तिन्हैं खंडन करि प्रजानको राजाके बश्य करि प्रण राखती है तैसे छलको खंडन करि सबके मनको रूपके वश्य करि प्रण राखती है ॥ ६ ॥ और नदी वृक्षादि बहावति है तैसे यह चंचलता छलताकी बहावनहारी है कंचनपत्र जे वेणीपान हैं तिनकी पांति है सो मानों शृंगारलोकके जान कहे जाइबेको सोपान कहे सीढी है शृंगाररसके लोकसम केशपाशयुक्त शीश हैं ॥ ७ ॥

शीश फूल अरु वेंदा लसै । भाग सोहाग मनों शिर बसै ॥ पाटिन चमक चित्तचौंधिनी । मानों दमकति घन दामिनी ॥ ८ ॥ सेंदुर माँग भरी अति भली । तिनपर मोतिनकी अवली ॥ गंग गिरा तनसों तन जोरि । निकसी जनु यमुना जल फोरि ॥ ९ ॥ शीशफूलशुभ जरचो जराय । माँगफूल शोभै शुभ भाय ॥ वेणीफूलनकी बरमाल । भाल भले बेंदा युत लाल ॥ तमनगरीपर तेजनिधान । बैठे मनों बारहों भान ॥ १० ॥ भ्रुकुटि कुटिल बहु भायन भरी । भाललाल द्युति दीसति खरी ॥ मृगमद तिलकरेख युग । तिनकी

शोभा शोभति घनी ॥ जनु यमुना खेलति शुभ गाथ । पर-सन पितहि पसारयो हाथ ॥ ११ ॥

टी०—बेंदा भालमें रहत है सो भाग कहे भाग्यसम है शीशफूल सोहाग सम है इहां स्थानमें बसिबेकी उत्प्रेक्षा है तासों क्रमही दूषण नहीं है ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ तमनगरीसम शीशके बार हैं बारहौं भानु सम शीशफूलादि हैं इहां संख्या करि उत्प्रेक्षा है ॥ १० ॥ यमुना सम भ्रुकुटी हैं हाथ सम कस्तूरीके तिलककी द्वै ऊर्द्धरेखा हैं पिता जे सूर्य हैं तिनके सम भाल लाल है भ्रुकुटि-नको बहु भावन भरी कह्यो है तासों यमुनाको खेलत कह्यो ॥ ११ ॥

पंकजवाटिकाछंद ॥ लोचन मनहुँ मनोभव यन्त्रनि । भूजुग उपर मनोहर मंत्रनि ॥ सुन्दर सुखद सो अंजन अंजित । बाण मदनमिषसों जनु रंजित ॥ १२ ॥ चौपाई ॥ सुखद नासिका जग मोहियो । मुक्ताफलनियुक्त सोहियो ॥ आनँद-लतिका मनहुँ सफूल । सूधि तजत शशि सकल कुशूल ॥ १३ ॥ पद्धटिकाछन्द ॥ जनु भाल तिलकरविव्रतहि लीन । नृप रूप अकाशहि दीप दीन ॥ ताटंक जटितमणि श्रुति बसंत । रवि एकचक्र रथसे लसंत ॥ अतिझुलमुलीन सह झलकलीन । फहरात पताका जनु नवीन ॥ १४ ॥

टी०—॥ १२ ॥ मुक्ताफलनयुक्त अर्थ मुक्ताफलसहित नासिका भूषण युक्त फल सहित आनंद लतिका कोंकै मानों शशि जो चंद्र हैं सो सब शूल जो दुःख है ताको दूरि करत हैं आनंदलतिका सम नासिका भूषण है फूलसम मोती है शशि सम मुख है ॥ १३ ॥ भालमें तिलक कहे टीका मणिजटित ऊर्ध्वपुंड्र होतहै सो जानों रूप सौंदर्यरूपी जो नृपराज है सो रविके व्रतमें लीन द्वै कै रविके अर्थ आकाशको दीप दीन्हों है जे प्रथम शीशफूलादि कह्यो है तेई रवि हैं केश युक्त शीश आकाश है और मणिजटित ताटंक कहे ढार श्रुतिमें (श्रवणमें) लसत हैं ते मानों रविके एक चक्र कहे एक पहियाकें रथसे हैं रविको रथ एकही पहियाको है औ झुलमुली जे पात नामा कर्णभूषण हैं तिनकी झुलक (शोभा) सह कहे साथ अर्थ ताटंकनके साथ लीन है युक्त है मानों ताही एक चक्ररथकी

पताका हैं अथवा रूपनृप जो है सो रविको दीप दीन्हों है औ या प्रकारके पताकासों युक्त एक चक्र रथहू दीन्हों समर्पण करयौ है इत्यर्थः ॥ १४ ॥

अतितरुण अरुण द्विजद्युति लसंति । निज दाडिमबीजनको हसंति ॥ संध्याहि उपासत भूमिदेव । जनु वाकदेवकी करत सेव ॥ शुभ तिनके सुख मुखके विलास । भयो उपवन मलयानिलविलास ॥ १५ ॥ चौपाई ॥ मृदु मुसुकानि लता मन हरैं । बोलत बोल फूलसे झरैं ॥ तिनकी वाणी सुनु मनहारी । बाणी वीणा धरेउ उतारी ॥ १६ ॥ लटकैं अलिक अलक चीकनी । सूक्षम अमल चिलकसों सनी ॥ नकमोती दीपक द्युति जानि । पाठी रजनीही उनमानि ॥ १७ ॥

टी०--तरुण कहे नवीन द्विजदंत मानों भूमिदेव ब्राह्मण हैं ते मुखमें बास किये वाग्देवी जो सरस्वती है ताकी सेवा करत हैं ते ब्राह्मण संध्या समयमें संध्याकी उपासना करत हैं इहां दाँतनकी औ ब्राह्मणनकी द्विज शब्दसों साम्य है संध्यासमय दांतनकी अरुणद्युति है दाँतन पक्ष वाग्देवी (जिह्वा) जानौ ॥ १५ ॥ ताही मुसकानि लताके फुलेसे जानौ ॥ १६ ॥ द्वैछंदको अन्वय एक है अलिक (लिलार) दशा (बाती) मानों रविसींक पसारिकै ज्योति बढावत है रविपदको संबंध याहूमें है कवि जे शुक्र हैं तिनके हित कहे चटाई लेबेके अर्थ इत्यर्थः ॥ शुक्रसम नाकमोती हैं रविसम शीशफूल हैं ॥ १७ ॥

ज्योति बढावत दशा उतारि । मानहुँ श्यामल सींक पसारि ॥ जनु कविहित रविरथते छोरि । श्याम पाटकी बांधी डोरि ॥ १८ ॥ रूप अनूप रुचिर रसभीनि । पातुर नैननकी पुतरीनि ॥ नेह नचावत हित रतिनाथ । मरकत लकुट लिये जनु हाथ ॥ १९ ॥ दोहा ॥ गगनचन्द्रते अति बडो, तियमुख चन्द्र विचारु ॥ दई विरंचि विचारि चित, कला चौगुनी चारु ॥ २० ॥

टी०-॥ १८ ॥ ताही अलकमें दूसरी (उत्प्रेक्षा) करति है पुतरिनको जो अनूप रूप है ता प्रति जो रुचिर रस कहे प्रेम है तामें भीनि कहे भीजिकै

अर्थ वश्य ह्वैके पातुर कहे वेश्या अर्थ कामकी वेश्यारूपी जे नयनकी पुतरी हैं तिनको रतिनाथ जो काम है ताके हितसों आनों मर्कत कहे श्यामलकुट हाथमें लैकै स्नेह नचावत है शिक्षक लकुटके तालमें वेश्याको नृत्य सिखावत हैं यह प्रसिद्ध है अथवा कहूं भीनी पाठ है तौ अनूप रूप कहे अति सुंदर औ रुचिर जो रस प्रेम है तामें भीनों कहे युक्त पातुररूपी जे नयनकी पुतरी हैं तिनको रतिनाथके हितसों नेह नचावत हैं इत्यर्थः ॥ १९ ॥ चन्द्रमामें सोरह कला हैं मुखमें चौंसठि हैं चौंसठि कला प्रसिद्ध हैं ॥ २० ॥

दंडक ॥ दीन्हों ईशदंड बल दलबल द्विजबल तदबल प्रबल समेति कुलबलकी । केशव परम हंसबल बहु कोशबल कहा कहौ बढीपै बडाई दुर्गजलकी ॥ विधिबल चंद्रबल श्रीको बल श्रीशबल करत हैं मित्रबल रक्षा पलपलकी । मित्रबल हीन जानि अबलामुख निबल नीकेही छडाइ लई कमला-कमलकी ॥ २१ ॥ दोहा ॥ रमनीमुखमंडल निरखि, राकारमण लजाइ ॥ जलद जलधिसिवसूरमैं, राखत बदन दुराइ २२ ॥

टी०-ईश जे ईश्वर हैं तिन दण्ड जो नाल है ताको बल दीन है औ श्लेषसों परिघादि दण्ड आयुध जानों दलपत्र औ चमूद्विज चक्रवाकादि पक्षी अथवा दंत इहां दंत पदत बीज जानों औ ब्राह्मण जलशायित्वादि तप जानों, कुल कहे ज्ञाति समूह परम हंस पक्षी औ तपस्वी विशेष कोश कहे सिफा-कन्द औ खजाना औ दुर्ग (कोट) रूपी जो लता है ताके बलकी कहा बडाई कहा इत्यर्थः ॥ विधि (ब्रह्मा) को आसन है ता संबंधसों विधि बल जानों जलज (चन्द्र) हू है (कमल) हू है तासों ता संबंधसों चन्द्र-बल जानौं लक्ष्मीको कमलमें सदा बास रहत है ता संबंधसों श्रीको बल जानौं श्रीश (विष्णु) सदा करमें लिये रहत हैं तासों श्रीशबल जानौ औ मित्र जे सूर्य हैं तिनहूंको बल पल पलमें रक्षा करत है यद्यपि येते सब बल हैं परंतु मित्र जे तुम हो तिनके बलसों कमलनको हीन जानिकै ये जे अबला सीय तासी हैं तिनके मुखन बलसों कमलकी जो कमला कांति रूपा (लक्ष्मी) ते ताहि बडाई लीन्हों है अबला पद कहि राम बलकी अति

उत्कृष्टता जनायो ॥ २१ ॥ पूर्ण चन्द्र युक्त जो पूर्णिमाकी रात्रि है सो राका कहावतीहै ॥ "पूर्णे राकानिशाकरे" इत्यमरः ॥ याहूमें असिद्ध विषय हेतूत्प्रेक्षा है ॥ २२ ॥

विशेषकछंद ॥ भूषण ग्रीवनक बहु भाँतिन सोहत हैं । लाल सितासित पीत प्रभा मन मोहतहैं ॥ सुंदर रागनके बहु बालक आनि बसे । सीपनको बहु रागिनि केशवदास लसे ॥ २३ ॥ चौपाई ॥ हरिपुरसी सुरपूर दूषिता । मुक्ताभरण प्रभाभूषिता ॥ कोमल शब्दनिवंत सुवृत्त । अलंकार मय मोहनामित्त ॥ काव्यापद्धतिशोभा गहे । तिनके बाहुपाश कविकहे ॥ २४ ॥

टी०--राग भैरवादि ॥ २३ ॥ आपनी छबि करिकै सुरपुरकी अथ सुरपुरकी स्त्रिनकी दूषिता कहे निंदा करनहारी हैं औ मुक्ता जे मोती हैं तिनके जे आभरण (भूषण) हैं तिनकी प्रभासों भूषित हैं तासों हरिपुर (विष्णुलोक) सो हैं हरिपुर कैसो है कि आपनी छबिसों देवलोकको निंदत है अर्थ देवलोकसों अधिक है औ मुक्त कहे मुक्तिको प्राप्त जे जीव हैं तेई हैं आभरण भूषण तिनकी प्रभासों भूषित है अर्थ अनेक मुक्त जीवनसों युक्त है फेरि कैसी हैं कि कोमल शब्दनिबंतहैं अर्थ मधुर वचन बोलती हैं औ सुष्ठु हैं सुवृत्त कहे चरित्र जिनको औ माल्यादि अलंकार युक्त हैं औ मित्त जो स्वामी हैं ताको मोहन कहे मोहकर्त्ता हैं औ तिनके बाहुनको पाश कहे फांस सम कविजन कहतहैं यासों काव्यकी जो पद्धति रीति है ताकी शोभाको गहेहै काव्यपद्धति कैसी है कोमल कहे कोमलाक्षर युक्त जे शब्द हैं तिनसों युक्त है सुष्ठु वृत्त पद जाके औ उपमादि अलंकारसों युक्त हैं औ मित्र जे काव्यपाटी हैं तिनको मोहन है औ तिनके बाहुनको कवि पाशसम कहत हैं अर्थ बाहुपाश सम होत नहीं है परन्तु कविनको नियम है कि काव्य रीतिमें स्त्री पुरुषके बाहु पाशसम कहत हैं ॥ "वृत्तश्छंदचारित्रवृत्तिषु" इति मेदिनी ॥ २४ ॥

नवरंग बहु अशोकके पत्र । तिनमें राखत राजकलत्र ॥ देखहु देवदीनके नाथ । हरत कुसुमके हारत हाथ ॥२५ ॥ सुंदर अँगुरिन मुँदरी बनी । माणिमय सुवरण शोभा सनी ॥ राजलोकके मन रुचि रये । मानों कामिनि कर कारि लये ॥ २६॥

अतिसुंदर उरमें उर जात । शोभा सरमें जनु जलजात ॥ अखिल लोक जलमय करि धरे । वशीकरण चूरणचय भरे ॥ कामकुँवर अभिषेकनि मित्र । कलश रचे जनु यौवन-मित्र ॥२७॥ दोहा ॥ रोमराज शृंगारकी, ललित लतासी राज ॥ ताहि फले कुचरूप फल, लै जग ज्योतिसमाज॥२८॥

टी०– द्वै छंदको अन्वय एक है हे देव ! हे दीनोंके नाथ ! यह देखो जे हाथ कुसुम (फूलन) के हरतमें तोरतमें हारत कहे थकत हैं अर्थ जिनसों फूलऊ नहीं तूरि जात ऐसे कोमल जे हाथ हैं तेई नवरंग बहुत अशोकके पंत्र हैं तिनमें कहे तिन हाथनमें राजकलत्र जे सीता हैं तिनको राखती हैं तासों मानों सुन्दर जे अंगुरी हैं तिनमें सुवरण शोभासों सनी मणिमय मुंदरी बनी हैं तेई रुचि कहे सुंदरतासों रये (युक्त) राजलोक कहे अन्तः-पुरके अर्थ सीतादिकनके मन हैं तिनको मानो करमें (हाथमें) करि लीन्हों है अतिसेवा करि सीतादिकनके मन मानों आपने हाथमें करि लीन्हों है इत्यर्थः ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥

चौपाई ॥ सूक्षम रोमावली सुवेष । उपमा दीन्ही शुकस-विशेष ॥ उरमें मनहुँ मदनकी रेष । ताकी दीपति दिपति अशेष ॥ २९ ॥ दोहा ॥ कटिके तत्त्व न जानिये, सुनि प्रभु त्रिभुवनराव ॥ जैसे सुनियतु जगतके, सत अरु असत सुभाव ॥ ३० ॥ नाराच छन्द ॥ नितंबबिंब फूलसे कटिप्र-देश क्षीण है । विभूति लूटिली सबै सो लोकलाज लीन है ॥ अमोल ऊजरे उदार जंघयुग्म जानिये । मनोजके प्रमोदसों विनोदयंत्र मानिये ॥ ३१ ॥

टी०– रेख कहे लीक अर्थ हृदयमें मदन वस्यो है ताकी छवि बाहेर काढिकै देखि परत है कामको रूप श्याम है ॥ २९ ॥ तत्त्वस्वरूप ॥ "तत्त्वं स्वरूपे परमात्मनि" इति मेदिनी ॥ सत सुभावपुण्यादि ॥ ३० ॥ नितम्ब-बिंब कहे नितम्बमण्डल नितम्ब स्वरूप इति ॥ "बिंबं तु प्रतिबिंबे स्यान्म-ण्डले पुंनपुंसकम्" इति मेदिनी ॥ फूलसे कहे प्रफुल्लित हैं अर्थ आनन्द सहित है औ कटि प्रदेश अति क्षीण है सो मानों नितंबन कटिकी विभूति

संपति लुटि लीन्ही है तासों आनन्दसहित हैं औ काट लोकके जालसों लीन कहे छपीहै ऊजरे (मलरहित) प्रमादसों कहे प्रसन्नता सहित अर्थ अतिप्रशस्त मनोज जो काम है ताके मानों बिनोदयंत्र कहे विनोदके अर्थ यंत्र है औ यंत्रके बंधनसों आनन्द होतहै इनके देखतही आनंद होत है ॥३१॥

छवानकी छुई न जाति शुभ्र साधु माधुरी। विलोकि भूलि भूलि जाति चित्त चालि आतुरी॥ विशुद्ध पादपद्म चारु अंगुली नखावली। अलक्तयुक्त मित्रकी सो चित्र बैठकी भली॥ ३२॥ दोहा॥ कठिन भूमि अतिकोबरे, जावकयुत शुभ पाइ॥ जनु माणिक तनत्राणकी, पहिरी तरी बनाइ॥३३॥ चौपाई॥ बरण बरण अँगिया उर धरे। मदनमनोहरके मन हरे॥ अंचल अतिचंचल रुचि रचैं। लोचन चल जिनके सँग नचैं॥ ३४॥ दोहा॥ नख शिख भूषित भूषणनि, पठि सुवरणमय मंत्र॥ यौवनश्री चल जानि जनु, बांधे रक्षायंत्र॥ ३५॥ चित्रपदाछंद॥ मोहनशक्तिन ऐसी। मकरध्वज ध्वज जैसी॥ मंत्र बशीकर साजैं। मोहनमूरि विराजैं॥ ३६॥

टी०—छवा कहे एँडी तिनकी शुभ्र कहे मलरहित साधु कहे श्रेष्ठ माधुरी कहे सुन्दरता नयननकरि छुई नहीं जाति अर्थ अतीन्द्रिय है अति सुन्दरताहै इति भावार्थः। जिनको विलोकिकै चित्तकी जो आतुरी शीघ्र चालि कहे चालु है सो भूलिजातहै अर्थ चित्त अचल ह्वै जातहै पाद औ अंगुली औ नखावली चित्र विचित्र अलक्त कहे महावरसों युक्त है ते मानों मित्रको कहे मित्र जो स्वामी है ताके मनकी बैठकीहैं इत्यर्थः॥ अथवा मित्र कहे सूर्यकी सूर्य सम नख हैं॥ ३२॥ जानों माणिककी तनत्राणके अर्थ पहिरे हैं इत्यर्थः॥ ३३॥ ३४॥ भूषण सुवर्णमय कहे कंचनमयी हैं औ मन्त्रपक्ष सुष्ठु वर्णमय (अक्षर) मय जानों॥ ३५॥ ३६॥

रूपमालाछन्द॥ भालमें भव राखियो शशिकी कला शुभ एक। तोषता उपजावहीं मृदु हास चन्द अनेक॥ मार एक विलोकिकै हर जारिकै कियो छार। नयनकोर चितै करै

पतिचित्त मार अपार ॥ ३७ ॥ चौपाई ॥ कंटक अटकत फटि कटि जात । उडि उडि वसन जात वश वात ॥ तऊ न तिनके तन लखि परे । मणिगण अंग अंगप्रति धरे ॥ ३८ ॥ दोहा ॥ उपमागण उपजाइ हरि, बगराये संसार ॥ तिनको परसपरोपमा, रचि राखी करतार ॥ ३९ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिंद्रजिद्विरचितायां सीतासखीजनवर्णनं नामैकत्रिंशः प्रकाशः ॥ ३१ ॥

टी०-तोषता कहे संतोषके लिये इत्यर्थः । नतिवादीसों अधिक को करिये तब संतोष होतहै यह प्रसिद्ध है औ महादेव एक मार जारयौ तालिये नयनकोरसों चितैकै पतिनके चित्तमें अपार मार कहे काम उत्पन्न करतीहैं अथवा महादेव कामको एकई मार करयौ कि जारिहि डारयौ औ ये काम सरिस जे पति हैं तिनके चित्तमें अपार कहे अनेक विधिको मार (ताडन) करती हैं ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ हे हरि ! कर्ता और उपमा गण उपजाइकै संसारमें बगरायो (फैलायो) है औ तिन दासिनको परस्पर उपमा कहे एकदासीकी उपमा एकको एकको एककी रचि राख्यो है और उपमा इनके सादृश्य नहीं है इत्यर्थः ॥ ३९ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसाद-निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायामेकत्रिंशः प्रकाशः ॥ ३१ ॥

दोहा ॥ बत्तीसयें प्रकाशमें, उपवनवर्णन जानि ॥ अरु बहु विधि जलकेलिको, करहु राम सुखदानि ॥ १ ॥ सुन्दरीछंद ॥ अचानक दृष्टि परे रघुनायक । जानकिके जियके सुखदायक ॥ ऐसे चले सबके चललोचन । पंकजबात मनो मनरोचन ॥ २ ॥ रामसों रामप्रिया कह्यो यो हँसि । बाग देखावहु लोकनके शशि ॥ राम विलोकत बाग अनन्तहि । ज्यों अवलोकत कामद सन्तहि ॥ ३ ॥ बोलत मोर तहाँ सुखसंयुत । ज्यों बिरदावलि भाटनके सुत ॥ कोमल कोकिलके कुल बोलत । ज्ञानकपाट कुची जनु खोलत ॥ ४ ॥ फूल तजे बहु वृक्षनको गनु । छोडत

आनँद आँसुनको जनु ॥ दाडिमकी कलिका मन मोहति । हेमकुपी जनु बन्दन सोहति ॥ ५ ॥ दोहा ॥ मधुवन फूल्यो देखिशुक, वर्णत हैं निःशंक ॥ सोहत हाटक घटित ऋतु, युवतिनके ताटंक ॥ ६ ॥ दोधकछन्द ॥ बेलके फूल लस अति फूले । भौंर भवैं तिनके रस भूले ॥ यों करवीर करी वन राजै । मन्मथ बाणनकी गति साजै ॥ ७ ॥ केतकपुंज प्रफुल्लित सोहैं । भौंर उडैं तिनमें अतिमोहैं ॥ श्रीरघुनाथहिं आवत भागे । जे अपलोकहुते अनुरागे ॥ ८ ॥ दोहा ॥ श्याम शोण द्युति फूलकी, फूले बहुत पलास ॥ जरै काम-कैला मनो, मधुऋतुवातविलास ॥ ९ ॥

टी०-॥ १ ॥ रामचंद्र भूप दुराइकै ये छपे जो युवतिनको देखत रहे सो उपवनकी छबि निरखत अचानक सीतादिकनकी दृष्टिमों परे सो रामचंद्रकी ओर सबके चंचल लोचन ऐसे चलत भये जैसे वात कहे बायुसों मन रोचन कहे मनको सुखद पंकज (कमल) चलै ॥ २ ॥ ३ ॥ कुंजीसों मानों ज्ञानके कपाट खोलतहै ज्ञानिनके कामोद्भव करि ज्ञानको दूरि करतहैं इत्यर्थः ॥ ४ ॥ वंदन (रोरी) ॥ ५ ॥ मधु जो वसंतहै तामें वन जो बाग है ताके मध्य दाडिमको फूले देखिकै शुक निशंक वर्णत हैं दाडिम पदको संबंध इहांऊं है मानों हाटक जो सुवर्ण है तासों घटित कहे रचित षट् ऋतुरूपी जे युवती स्त्री हैं तिनके ताटंक ढार हैं भाषामें ऋतु शब्द स्त्रीलिंग है ॥ यथा रसराज काव्ये ॥ " आई ऋतु सुरभि सोहाई प्रीति वाके चित्त, ऐसे में चलै तौ लाल रावरी बडाई है" ॥ अथवा ऋतु करिकै घटित बनाये ॥ ६ ॥ बेल कहे बेला करबीर (कनेर) ॥ ७ ॥ केतक कहे केंरावते भ्रमर श्रीरामचन्द्रको निकट आवत देखिकै भागत भये जे भ्रमर प्राणीमें अपलोक पापके सम केतक पुंजमें अनुरागे हैं जैसे ध्यानमें अथवा साक्षात् रामागमनसों प्राणीके अपलोक दूरि होत हैं ते केतकके निकट आवत भ्रमर भागत भये इत्यर्थः ॥ ८ ॥ शोण ('अरुण) मधु कहे वसंत ऋतुरूपी जो वायु है ताके बिलाससों मानों महादेव करिकै जारचो जो काम है ताके कैला फेरि जरैं कहे सुपचतहैं ॥ ९ ॥

तोटकछंद बहु चम्पककी कलिका हुलसी । तिनमे अलि-श्यामल ज्योति लसी ॥ उपमा शुक सारिक चित्तधरी ।

जनुहेमकुपी रससोंध भरी ॥ १० ॥ चौपाई ॥ अलि उडि धरत मंजरीजाल । देखि लाज साजति सब बाल ॥ अलि अलिनीके देखत भाई । चुम्बत चतुर मालती जाई ॥११॥ अद्भुतगति सुन्दरी विलोकि । विहँसति हैं घुंघुटपट रोकि ॥ गिरत सदाफल श्रीफलओज । जनु धर धरत देखि वक्षोज ॥ १२ ॥ तारकछंद ॥ उदरे उर दाडिम दीह विचारे । सुदतीनके शोभन दन्त निहारे ॥ अतिमंजुल बंजुल कुंज विराजैं । बहु गंजनिकेतन पंजनि साजैं ॥ नर अन्ध भये दरशे तरु मौरे । तिनके जनुलोचन हैं यकठौरे ॥ १३ ॥

टी०-हुलसी कहे फूली शृंगाररस सदृश भ्रमर हैं औ सोंध (सुगंध) हैहैहै चंपक पै भँवर बैठिबेको वर्णन कवि नियम विरुद्ध है परंतु केशव बडे कवि हैं कछु विचारहीके कह्यो ह्वै है तासों दोष नहीं है अथवा गंधही न होति है कली तासों कह्यो है ॥ १० ॥ ११ ॥ सदाफल जे श्रीफल बिल्वहैं ते गिरत हैं सो मानो तिन स्त्रीनके वक्षोजकको ओज कहे प्रताप कांतिको देखिकै भयसों मानों उन्नत आसनको त्याग करि धर (पृथ्वी) को धरत हैं अर्थ नत होतहैं ॥ १२ ॥ दाडिम फलनके उर पाकिकै उदरे कहे फाटि गये हैं सो मानों सुदती कहे सुन्दरहै दंत जिनके ऐसी जे सीताकी दासी है तिनके सुंदर दंतही निहारिकै स्पर्द्धासों फाटि गये हैं बंजुल (अशोक) गुंजनके तन कहैं भ्रमर भौंरे कहे बौरे अर्थ अशोक वृक्षनके दरशे नर अंध कहे कामांध भये तिन नरनके मानों लोचनहीं एक ठौर हैं बौरे अशोक वृक्षनको जिन देख्यो तिनके लोचन तहांई लागि रहे ताहीसों ते अधम भये हैं इत्यर्थः ॥ १३ ॥

थल शीतल तप्त स्वभावनि साजैं । शशि सूरजके जनु लोक विराजैं ॥ जलयंत्र विराजत भाँति भली है । धरते जलधार अकाश चलीहै ॥ यमुनाजल सूक्षम वेष सँवारेउ । जनु चाहत है रविलोक विहारेउ ॥१४॥ चंचरीछंद ॥ भाँति भाँति कहाँ कहाँ लगिवाटिका बहुधा भली । ब्रह्मघोष घने तहां जनु है गिरावनकी थली ॥ नीलकंठ नचैं वने जनु

जानिये गिरिजा बनी । शोभिजै बहुधा सुगन्ध मनों मलै वनकी धनी ॥ १५ ॥ चौपाई ॥ करुणामय बहु कामनि फली । जनु कमलाकी वासस्थली ॥ शोभे रम्भा शोभासनी । मनो शचीकी आनँद बनी ॥ १६ ॥

टी०—उष्णसमय बैठिबेके जे स्थल हैं ते शीतल स्वभावको साजत हैं शीतसमय बैठि कहे तप्त सुभाव साजत हैं शशिको लोक शीतल है सूर्यको तप्त है जलयंत्र (फुहारे) ॥ १४ ॥ बाटिकामें ब्रह्मघोष कहे वेदशब्द (पाठशाला) बनी हैं तिनमें शिष्य पढत हैं अथवा तपस्वी टिके हैं ते वेदपाठ करत हैं अथवा अन्यत्र ऋषिनके आश्रमनमें शिखि शुकादि पक्षी वेद इहां आइ पढत हैं औ गिरा (सरस्वती) क उपवनमें ब्रह्माको शब्द नीलकंठ बाटिकामें मोर गिरिजावनीमें महादेवधनी कहे रानी ॥ १५ ॥ वाटिका करुणा जे वृक्षविशेष हैं तिनसों युक्त हैं औ बहुत जे काम कहे अभिलषित फल हैं तिनसों फली है कमलाकी वासस्थली कैसी है करुणामय जे भगवान्हैं तेहैं जहाँ औ बहुत जे काम्य पदार्थ तिनसों फली युक्त है अर्थ जहाँ सब अभिलषित पदार्थ मिलत हैं ॥ " कामः स्मरेच्छाकाम्येषु " इति हेमचन्द्रः ॥ वाटिका । पक्षरंभा (केरा) आनंद बनी पक्ष अप्सरा ॥ १६ ॥

कमलछंद ॥ तरु चन्दन उज्ज्वलता तन धरे । लपटी नव नागलता मन हरे ॥ नृप देखि दिगम्बर वन्दन करे । चित चन्द्रकलाधर रूपनि भरे ॥ १७ ॥ अति उज्ज्वलता सब कालहु बसै । शुककेकिपिकादिक कंठहु लसै ॥ रजनी दिन आनँदकंदनि रहै । मुखचन्द्रनकी जनु चंदनि अहै ॥ १८ ॥

टी०—जा बाटिकामें चन्दनवृक्ष चिरकहे बहुत कालसों चन्द्रकलाधर जे महादेव हैं तिनके रूपनको धरे हैं कैसे हैं चंदनवृक्ष औ महादेव उज्ज्वलता जो श्वेतता है ताको तनमें धारण करे हैं चंदन वृक्षहू श्वेत हैं महादेवके अंगऊ श्वेत हैं नागलता कहे नागबेली औ नाग सर्परूपी लता और दिगंवर नग्न दुवौ हैं महादेवको ईश्वर तासों औ वृक्षनको अति अद्भुततासों नृप सब वंदना करत हैं ॥ १७ ॥ फेरि वाटिका कैसी है कि जानो सीताकी दासिनके मुख चंदनकी चाँदनी है कैसी है वाटिका औ चाँदनी सब कालहू कहे सब समयमें उज्ज्वलता कहे स्वच्छता औ शुक्लता वसतिहै कैसी है वाटिका शुकादि पक्षिनके कट कहे शब्द सहित लसति है अर्थ अनेक शुकादि पक्षी जामें बोलत हैं औ चाँदनी शुकादिकनके शब्द सरिस जे

अनेक विधि परस्पर बोलती हैं तिन सहितहै औ रातौ दिन दुवौ आनंदकी कंदनी कहे जर हैं ॥ अर्थ रातौदिन सुखद है वा चंदकी चाँदनी रातिहीको सुखद होती है मुखचंदकी चांदनी रातौदिन सुख देतिहै इति भावार्थः । शुक केकि पिकादिकके मुख वैसे कहूं यह पाठ है तहांऊ मुख कहे शब्द जानो अर्थ वही है ॥ " मुखं निश्शरणे वक्त्रे प्रारम्भोपाययोरपि । संध्यन्तरे नाटकादिः शब्देपि च नपुंसकम् ॥ " इति मेदिनी ॥ १८ ॥

तोटकछन्द ॥ सब जीवनको बहु सुक्ख जहां । विरहीजनहीं कहँ दुःख तहाँ ॥ जहँ आगम पौनहिंको सुनिये । नित हानि असौंधहिको गुनिये ॥ १९ ॥ दोहा ॥ तपहीको ताउ न जहां, तृष चातकके चित्त ॥ पात फूल फल दलनिको, भ्रम भ्रमरनिके मित्त ॥२०॥ तारकछंद ॥ तिनमें यक कृत्रिम पर्वतराजै । मृगपक्षिनकी सब शोभहि साजै ॥ बहु भाँति सुगंध मलयगिरि मानों । कलधौतस्वरूप सुमेरु बखानों ॥ २१ ॥ अति शीतल शंकरको गिरि जैसो । शुभ श्वेत लसै उदयाचल ऐसो॥द्युति सागरमें मैं नाकु मनोहै । अजलोक मनों अजलोक बनो है ॥ २२ ॥ तोटकछंद ॥ सरिता तिनते शुभ तीनि चली । सिगरी सरितानकी शोभ दली ॥ इक चंदनके जल उज्ज्वल है । जग जह्नुसुता शुभ शील गहै ॥ २३ ॥ चौपाई ॥ सुरगजकी मारग छबि छायो । जनु दिविते भूतलपर आयो ॥ जनु धरणीमें लसति विशाल । त्रुटित जुहीकी घन वनमाल ॥ २४ ॥ दोहा ॥ तज्यौ न भावै एक पल, केशव सुखद समीप ॥ जासों सोहत तिलकसो, दीन्हें जंबूद्वीप ॥ २५ ॥ दोधकछंद ॥ एणनके मदकै जनु दूजी । है यमुनाद्युतिकै जनु पूजी ॥ धार मनो रसराजविशाला । पंकजजालमई जनु माला ॥ २६ ॥ दोहा ॥ दुखखंडन तरवारिसी, किधौं शृंखला चारु ॥ क्रीडागिरिमांतगकी, यहै कहै संसारु ॥ २७ ॥ क्रीडागिरिते अलिनकी अवली

चली प्रकाश ॥ किधौं प्रतापानलनकी, पदवी केशवदास ॥ २८ ॥ दोधकछंद ॥ और नदी जल कुंकुम सोहै । शुद्ध गिरा मन मानहुँ मोहै ॥ कंचनके उपवीताहि साजै । ब्राह्मणसों यह खंड विराजै ॥ २९ ॥

टी०—सब जीवनको असौंध (दुर्गंध) ॥ १९ ॥ पात कहे पतन ॥ २० ॥ कृत्रिम बनायो कलधौत स्वरूप कहे सुवर्णमय है ॥ अर्थ सुवर्णहीको बन्यो है ॥ २१ ॥ मैनाक सागरमें है यह द्युति शोभारूपी सागरमें हैं अज जे दशरथके पितहैं तिनके लोकमें मानो अज जे ब्रह्मा हैं तिनको लोक ब्रह्मलोक बन्यो है ॥ २२ ॥ शील कहे स्वभाव ताप दूरि करणादि ॥ २३ ॥ सुरगज ऐरावतकी राह आकाशमें रात्रिके उवतिहै प्रसिद्ध है जुही कहे जाहीजूही पुष्प विशेषहै ॥ २४ ॥ तिलकसों अर्थ राज्याभिषेक तिलकसों ॥ २५ ॥ एणनको मद (कस्तूरी) पूजी कहे पूरित अर्थ मानों यामें यमुनाकी शोभा आइ बसीहै रसराज शृंगार रस पंकज इहां श्याम कमल जानौ ॥ २६ ॥ क्रीडा गिरिरूपी जो मातंग है ताकी शृंखला क्षुद्रघंटिका है अथवा आँदू है ॥ २७ ॥ किधौं रघुवंशिनके इति शेषः प्रतापाग्निकी पदवी राह है अग्निकी राह श्याम होतीहै ॥ २८ ॥ २९ ॥

स्वागताछन्द ॥ लौंग फूलमयसेवटि लेखी । एलबीज बहुबालक देखी ॥ केरिफूल दलनावनमाहीं । श्रीसुगन्ध तहँ है बहुधाहीं ॥ ३० ॥ दोहा ॥ खेवत मत्त मलाह अलि, को वरणै वह ज्योति ॥ तीन्यो सरिता मिलेत जहँ, तहाँ त्रिवेणी होति ॥ ३१ ॥ सीता श्रीरघुनाथजू; देखी श्रमित शरीर ॥ द्रुम अवलोकन छोडिकै, गये जलाशयतीर ॥ ३२ ॥ चौपाई॥ आई कमल वासु सुख देन । मुखवासन आगे ह्वै लेन ॥ देख्यो जाइ जलाशय चारु । शीतल सुखद सुगन्ध अपारु ॥ ३३॥ मरहट्टाछन्द ॥ वनश्रीको दर्पण चन्द्रातप जनु किधौं शरद आवास । मुनिजन गण मनसों विरही जनसों बिश वलयानि विलास ॥ प्रतिबिम्बित थिर जीव मनोहर मनु हरि उदर

अनन्त । बन्धुन युत सोहैं त्रिभुवन मोहैं मानों बलि यश-वन्त ॥ ३४ ॥

टी०-नदिनमें सेवटि परि जाति है कहूं सेवटा करि प्रासिद्ध है एला (इलायची) केरि कहे केराके फूलके जे दल (पत्र) हैं तेई नाव हैं तिनमें सुगंध जो है सोई श्री कहे वाणिज्य द्रव्य है ॥ ३० ॥ ३१ ॥ जलाशय (तडाग) ॥ ३२ ॥ जब कोऊ बडो आपने इहां आवत है ताको आगे चलिकै लेबो उचित है ॥ ३३ ॥ वनकी जो श्री (लक्ष्मी) है ताको दर्पण है कि चन्द्रातप कहे चाँदनीहै कि शरद ऋतुको आवास घर है मुनिजनके मनसम विमलहै इत्यर्थः ॥ तडाग विश जो कमलकी जरहै ताके वलय समूह युक्त है औ विरही शीतलताके लिये अनेक कमल जर धारण करेहैं हरिके उदर हूमें चौदहों लोक बसतहैं तडाग पाषाणादिसों बांध्यो है बलिको वामन बांध्यो है ॥ ३४ ॥

चौपाई ॥ विषमै यह सब सुखको धाम । शम्बररूप बढावै-काम ॥ कमलन मध्य भ्रमर सुख देत । सन्तहृदय जनु हरिहि समेत ॥ ३५ ॥ बीच बीच सोहैं जलजात । तिनते अलिकुल उडि उडि जात ॥ सन्तहियनसों मानहुँ भाजि । चञ्चल चली अशुभकी राजि ॥ ३६ ॥ दण्डक ॥ एक दमयन्ती ऐसी हरै हँसि हंसवंश एक हंसिनीसी बिशहा रहिये रोहिये । भूषण गिरत एकै लेतीं बूडि बूडि बीच मीन गति लीन हीन उपमा न टोहिये ॥ एक पति कण्ठ लागि लागि बूडि बूडि जाति जलदेवतासीदृगदेवता विमोदिये । केशोदास आसपास भँवर भँवत जलकेलिमें जलजमुखी जलजसी सोहिये ॥ ३७ ॥ दोहा ॥ क्रीडासरवरमें नृपति, कीनी बहु विधि केलि ॥ निकसे तरुणिसमेत जनु, सूरज किरणि सकेलि ॥ ३८ ॥ हाकलिकाछन्द ॥ नीरनिते निकसीं तिय सबै । सोहति हैं विन भूषण तबै ॥ चन्दन चित्र कपोलन नहीं । पंकज केशर शोभत तहीं ॥ ३९ ॥

टी०-द्वै चरणमें विरोधाभास है विषजल शंबररूप कहे शंबर जो मत्स्यभेद है तन्मयहै अर्थ अति शंबर मत्स्य युक्त है ॥ " शंबरो दैत्यहारिणमत्स्य-

शैलजिनांतरे।" इति मेदिनी ॥३५॥३६॥ हौं कहे गहि लेती हैं दमयंतीहू राजा नलको पठायो जो हंस है ताको गहि लियो है हंसहू पौनारीको काढि गरेमें डारि लेत है ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ तहीं अर्थ कपोलनमें लगे कमलनके केशर (किंजल्क) सोहत हैं ॥ ३९ ॥

मोतिनकी विथुरी शुभ छटैं। हैंउरझी उरजातन लटैं ॥ हास शृंगारलता मनु बनी। भेंटति कल्पलता हित घनी ॥४०॥ केशनि ओर निसीकर रमैं। ऋक्षनको तमयी जनु बमैं ॥ सज्जल अम्बर छोडत बने। छूटत है जलके कण घने॥ भोग भले तिनसों मिलिकरे। बिछुरत जानि ते रोवत खरे॥४१॥ भूषण जे जलमध्यहिं रहे। ते वनपाल वधूटिन लहे ॥ भूषण वस्त्र जबै सजि लये। चारिहु द्वारन दुन्दुभि भये ॥ ४२ ॥ दोहा ॥ गूंगे कुब्जे बावरे, बहिरे बामन वृद्ध ॥ यान लये जन आइगे खोरे खंज प्रसिद्ध ॥ ४३ ॥ चौपाई ॥ सुखद सुखासन बहु पालकी। फीरक वाहिनी सुखचालकी ॥ एकन जोंते हयसी हिये। वृषभ कुरङ्ग अंग मोहिये ॥ तिन चढि राजलोक सब चल्यो। नगरनिकट शोभा फल फल्यो॥४४॥

टी०--हासरस लता सम मोतिनकी लरै हैं शृंगार रस लता सम लटै हैं कल्प लता सम स्त्री हैं ॥ ४० ॥ केशनके ओरन कहे अंतमें सीकर जे अंबुकण हैं ते रमे कहे शोभित हैं ऋक्ष (नक्षत्र ॥ ४१ ॥ वाटिकाके चारिहू द्वारनमें कूचके नगारे भये इत्यर्थः ॥ ४२ ॥ खजिनके निकट ऐसेही जन चाहिये जिनपै स्त्री जन प्रीति न करैं ॥ ४३ ॥ सुखासन कहे कोमल बिछावने युक्त फिरक बाहिनी (सेजगाडी) एकन फिरक वाहिनीनमें जोते हय शोभित हैं एकनमें वृषभ शोभित हैं ते आपने अंगन करि कुरंग अंगनको मोहत हैं अर्थ अति चंचल है ॥ ४४ ॥

मणिमय कनकजालिका घनी। मोतिनकी झालरि अति बनी ॥ घण्टा बाजत चहुं दिशि भले। रामचन्द्र त्यहि गज चढि चले ॥ चपला चमकत चारु अगूढ। मनहुं मेघ मघवा आरूढ ॥ ४५ ॥ आसपास नरदेव अपार। पांइ पियादे

राजकुमार ॥ बन्दीजन यश पढत अपार । याहि विधि गये राजदरबार ॥ ४६ ॥ विजयाछन्द ॥ भूषित देहविभूति दिगम्बर नाहिंन अम्बर अंग नवीने । द्वारिके सुन्दर सुन्दरि केशव दौरी दरीनमैं आसन कीने ॥ देखिये मण्डित दण्डनसों भुजदण्ड दुवौ असिदण्ड विहीने । राजन श्रीरघुनाथके वैर कुमण्डल छोडि कमण्डल लीने ॥ ४७ ॥ दोहा ॥ कमलकुलनमैं जात ज्यों, भंवर भयो रसचित्र ॥ राजलोकमैं त्यों गये, रामचन्द्र जगमित्र ॥ ४८ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिद्रजिद्विरचितायां वनविहारवर्णनं नाम द्वात्रिंशः प्रकाशः ॥३२॥

टी०-हौदामें मणिमयी कनकजालिका (झांझरी) घनी हैं इत्यर्थः ॥ अथवा झालारिकी जारी मणिमयी कनककी घनी बनी हैं अगूढ (प्रसिद्ध) ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ असिदंड (तरवारि) कुमंडल (पृथ्वीमंडल ॥ ४७ ॥ ४८॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां द्वात्रिंशः प्रकाशः॥ ३२ ॥

दोहा ॥ त्रयतीसयें प्रकाशमें, ब्रह्मा विनय बखानि ॥ शम्बुकवध सियत्याग अरु, कुशलवजन्म सो जानि ॥ १ ॥

टी०-शंबुक नामा (शूद्र) ॥ १ ॥

त्रिभंगीछन्द ॥ दुर्जनदलघायक श्रीरघुनायक सुखदायक त्रिभुवन शासन । सोहैं सिंहासन प्रभाप्रकाशन कर्म विनाशन दुखनाशन ॥ सुग्रीव बिभीषन सुजन बंधुजन सहित तपोधन भूपतिगन । आये सँग मुनिजन सकल देवगन मृगतपकानन चतुरानन ॥ २ ॥ तोटकछंद ॥ उठि आदरसों अकुलाइतयो । अति पूजनक बहुधा विनयो ॥ सुखदायक आसन शोभ रये । सबको सो यथाविधि आनि दये॥ ३ ॥ दोहा ॥ सबन परस्पर बूझियो, कुशल प्रश्न सुख पाइ ॥ चतुरानन बोले वचन, श्लाघा विनय बनाय ॥ ४ ॥ ब्रह्मा--

मनोरमाछन्द ॥ सुनिये चित दै जगके प्रतिपालक । सबक गुरु हौ हरि यद्यपि बालक ॥ सबको सब भाइ सदा सुखदायक । गुण गावत वेद मनो वच कायक ॥ ५ ॥

टी०-त्रिभुवनके शासन कहे शिक्षक पाप पुण्य कर्मको नाश कै आपने धाम पठावत हैं इत्यर्थः ॥ तपरूपी जो कानन बन है ताके मृग कहे अरण्य पशु जैसे अरण्यको मृग अवगाहन करत है तैसे अनेक तपस्याके अवगाहन कर्त्ता इत्यर्थः ॥ १ ॥ २ ॥ आनि कहे मँगाइकै ॥ ३ ॥ श्लाघा (स्तुति) ॥ ४ ॥ ५ ॥

तुम लोक रचे बहुधा रुचिकै तब । सुनियें प्रभु ऊजर हैं सिगरे अब ॥ जग कोउ न भूलिहु जाइ निरयमग । मिटिगे सब पापन पुण्यनके नग ॥ ६ ॥ दोहा ॥ वरुणपुरी धनपति पुरी, सुरपतिपुर सुखदानि ॥ सप्त लोक वैकुंठ सब, वस्यौ अवधमें आनि ॥ ७ ॥ तोमरछन्द ॥ हँसि यों कह्यो रघुनाथ । समुझि सब विधि गाथ ॥ मम इच्छ एक सुजानि । कबहूं न होइसु आनि ॥ ८ ॥ तव पुत्र जे सनकादि । मम भक्त जानहु आदि ॥ सुत मानसिक तिनकेति । भुवदेव भुव प्रगटोति ॥ ९ ॥ हम दियो तिन शुभ ठांउँ । कछु और दीबे गाँउँ ॥ अब देहिं हमके ठौर । तुम कहौ सुराशिर मौर ॥ १० ॥ ब्रह्मा-मरहट्टा छंद ॥ सब वे मुनि रूरे तपबल पूरे विदित सनाढ्य सुजाति । बहुधाबहुवारनि प्रति अवतारनि दै आये बहु भाँति ॥ सुनि प्रभु आखंडलमथुरामंडलमैं दीजै शुभ ग्राम । बाढ़ै बहु कीरति लवणासुर हति अति अजेय संग्राम ॥ ११ ॥ दोहा ॥ जिनके पूजे तुम भये, अन्तर्यामीश्रीप ॥ तिनकी बात हमैं कहा, पूछत त्रिभुवनदीप ॥ १२ ॥ द्विज आयो ताही समै, मृतक पुत्रके साथ ॥ करत विलापकलापहा, रामचंद्र रघुनाथ ॥ १३ ॥ मल्लिकाछन्द ॥ बालकै मृतै सो देखि । धर्म राजसों विशेखि ॥ बात यों कहा

निहारि । कर्म कौनको विचारि ॥१४॥ धर्मराज-मनोरमा छंद ॥ निज सूदनकी तपसा शिशुघालक । बहुधा भुवदेवनके सब बालक ॥ कारि बेगि बिदा सिगरे सुरनायक । चढि पुष्पक आशु चले रघुनायक ॥ १५ ॥

टी०-नग (पर्वत) ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ आखंडल (इन्द्र) ॥ ११ ॥ श्रीपति कहे लक्ष्मीपति ॥ १२ ॥ कलाप समूह ॥ १३ ॥ धर्मराज न्यायदर्शी) अथवा यमराज ॥ १४ ॥ १५ ॥

दोधकछन्द ॥ रामचले सुनि शूद्रकी गीता । पंकजयोनि गये जहँ सीता ॥ देखि लगी पग रामकी रानी । पूजिकै बूझात कोमल बानी ॥ १६ ॥ साता ॥ कौन हूं पुरव पुण्य हमारे । आजु फले जो इहाँ पगु धारे ॥ ब्रह्मा ॥ देवनको सब कारज कीन्हों । रावण मारि बडो यश लीन्हों ॥१७॥ मैं विनती बहु भाँतिन कीनी । लोकनकी करुणा रसभीनी ॥ उत्तरु मोहिं दियो सुनि सीता । जाकि न जानि परै जिय गीता ॥ १८ ॥ माँगत हौं बर मोकहँ दीजै । चित्तमें और विचार न कीजै ॥ आजुते चाल चलौं तुम ऐसे । राम चलैं वैकुंठहि जैसे ॥ १९॥ सीय जहीं कछु नैन नवाये । ब्रह्म तहीं निज लोक सिधाये ॥ राम तहीं शिर शूद्रको खंड्यो । ब्राह्मणको सुत जीवन मंड्यो ॥२०॥ सुन्दरीछंद ॥ एक समय रघुनाथ महामति । सीताहिं देखि सगर्भ बढी रति ॥ सुन्दरि माँगु जो जीमहँ भावत । मो मनतो निरखे सुख पावत॥२१॥ सीता ॥ जो तुम होत प्रसन्न महामति । मेरे बढै तुमहींसों सदा रति ॥ अंतरकी सब बात निरंतर । जानत हौ सबकी सबते पर ॥ २२ ॥ राम-दोहा ॥ निर्गुणतें मैं सगुण भो, सुनु सुंदरि तव हेत ॥ और कछू मांगौ सुमुखि, रुचै जो तुम्हरे चेत ॥ २३ ॥

टी०-॥१६॥ द्वै छन्दको अन्वय एक है उत्तरु कहे जबाब दियो अर्थ वैकुंठ चलिबेको न कह्यो ॥१७॥ १८ ॥ १९ ॥ नयन नवायेते ब्रह्माको कह्यो अंगी-

कार करचो जानो ॥ २० ॥ यह कह्यो इतिशेषः ॥ २१ ॥ हमारे तुमहींसों सदा रति (प्रीति) बढे यह बर हमको दीजै इत्यर्थः ॥ २२ ॥ २३ ॥

सीताजू-सुन्दरीछंद ॥ जो सबते हित मोकहँ कीजत । ईश दया करिकै बरु दीजत ॥ हैं जितने ऋषिदेव नदीतट । हौं तिनको पहिराय फिरौं पट ॥ २४ ॥ राम-दोहा ॥ प्रथम दोहदै क्यों करौं, निष्फल सुनि यह बात ॥ पट पहिरावन ऋषिनको, जैयो सुन्दरि प्रात ॥ २५ ॥ सुन्दरीछंद ॥ भोजन कै तब श्रीरघुनंदन । पौढि रहे बहु दुष्टनिकंदन ॥ बाजे बजे अधरात भई जब । दूतन आइ प्रणाम करी तब ॥ २६ ॥ चंचलाछंद ॥ दूत भूतभावना कही कही न जाय बैन । कोटिधा विचारियो परै कछू विचार मैन ॥ सूरके उदोत होत बंधु आइयो सुजान । रामचंद्र देखियो प्रभातचंद्रके समान ॥ २७ ॥ संयुताछंद ॥ बहु भाँति वंदनता करी । हसि बोलियो न दया धरी ॥ हमते कछू द्विज दोष है । जेहिते कियो प्रभु रोष है ॥ २८ ॥ दोहा ॥ मनसा वाचा कर्मणा, हम सेवक सुनु तात ॥ कौन दोष नहिं बोलियतु, ज्यों कहि आये बात ॥ २९ ॥

टी०-देवनदी (गंगा) ॥ २४ ॥ दोहद कहे गर्भ ॥ २५ ॥ २६ ॥ यामें केशव कहत है कि दूतकी कही जो भूत कहे व्यतीत भावना कहे क्रिया है रजक बचनादि कथा सो कहिबेको हम कोटि प्रकारसों विचारचो कछू विचारमें नहीं परत तासों वैनसों हमसों नहीं कही जाति इत्यर्थः ॥ २७ ॥ २८॥२९॥

राम-संयुताछंद ॥ कहिये कहा न कही परै । कहिये तौ ज्यों बहुते उरै ॥ तब दूत बात सबै कही । बहु भाँति देह-दशा दही ॥ ३० ॥ भरत-दोहा ॥ सदा शुद्ध अति जानकी, निन्दत त्यों खलजाल ॥ जैसे श्रुतिहि सुभावही, पाखण्डी सब काल ॥ ३१ ॥ भव अपवादनिते तज्यो, ज्यों चाहत सीताहि ॥ ज्यों जगके संयोगते, योगी जनसम ताहि ॥ ३२ ॥ झूलनाछंद ॥ मन मानिकै अति शुद्ध सीतहिं आनियो निज

धाम । अवलोकि पावक अंक ज्यों रवि अंक पंकजदाम ॥ क्याहिं भाँति ताहि निकारिहौ अपवाद वादिं बखानि । शिव ब्रह्म धर्मसमेत श्रीपितु साखि बोल्यहु आनि ॥ ३३ ॥ यमनादिके अपवाद क्यों द्विज छोडिहै कपिलाहि । विरहीनको दुख देत क्यों हर डारि चन्द्रकलाहि ॥ यह है असत्य जो होइगो अपवाद सत्य सुनाथ । प्रभु छोंडि शुद्ध सुधा न पीवहु आपने विष हाथ ॥ ३४ ॥ दोहा ॥ प्रियपावनि प्रियवादिनी, पतिव्रता अति शुद्ध ॥ जगको गुरु अरु गुर्विणी, छाँडत वेद विरुद्ध ॥ ३५ ॥ वे माता वैसे पिता, तुमसों मैया पाइ ॥ भरत भये अपवादको, भाजन भूतल आइ ॥ ३६ ॥

टी०-॥ ३० ॥ पाखंडी (नास्तिक) ॥ ३१ ॥ अपवाद (निंदासमताको) लक्षण पचीसवें प्रकाशमें कह्यो है ॥ ३२ ॥ दाम (जेवरी) बादि (वृथा) ॥ ३३ ॥ यह जो ब्रह्मादिकनकी साक्षी है सोई जो असत्य है तो हे नाथ ! रजक कृत यह अपवाद कैसे सत्य ह्वै है इत्यर्थः । सुधा सम ब्रह्मादिकनकी साक्षी है विषसम रजकको अपवाद है ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

राम-हरिलीलाछन्द ॥ साची कही भरत बात सभ सुजान । सीता सदा परम शुद्ध कृपानिधान ॥ मेरी कछू अबहिं इच्छ यहै सो हेरि । मोकों हतौ बहुरि बात कहौ जो फेरि ॥ ३७ ॥ लक्ष्मण-दोधकछन्द ॥ दूषत जैन सदा शुभ गंगा । छोडहुगे बहु तुंगतरंगा ॥ मायहि निन्दत है सब योगी । क्यों तजिहैं भवभूपति भोगी ॥ ३८ ॥ ग्यारसि निन्दत है मठधारी । भावति है हरिभक्तनि भारी ॥ निन्दत है तव नामनि वामी । का कहिये तुम अन्तर्यामी ॥ ३९ ॥ दोहा ॥ तुलसीको मानत प्रिया, गौतमतिय अति अज्ञ ॥ सीताको छोडन कहौ, कैसे के सर्वज्ञ ॥ ४० ॥ शत्रुघ्न-रूपमालाछन्द ॥ स्वप्नहू नाहिं छोडिये तिय गुर्विणी पल दोइ । छोडियो तब

शुद्ध सीताहिं गर्भमोचन होइ ॥ पुत्र होइ कि पुत्रिका यह बात जानि न जाइ । लोकलोकनमें अलोकन लीजिये रघुराइ ॥ ४१ ॥ दोहा ॥ रामचन्द्र जगचन्द्र तुम, फल दल फूल समेत ॥ सीताया वनपद्मिनी, न्याय नहीं दुख देत ॥४२॥

टी०–फेरि कहे पलटिकै ॥ ३७ ॥ जैन (नास्तिक) ॥ ३८ ॥ ग्यारासि (एकादशी) वामी (वाममार्गी) ॥३९॥ ४० ॥ अलोक (निंदा) ॥४१॥४२॥

दोहा–घर घर प्रति सब जग सुखी, राम तुम्हारे राज॥ अपनोहि घर करत कत हो, शोक अशोकसमाज ॥४३॥ राम--तोटकछन्द ॥ तुम बालक हौ बहुधा सबमैं । प्रति उत्तर देहु न फेरि हमैं ॥ जो कहैं हम बात सो जाइ करौ । मनमध्य न और विचार धरौ ॥ ४४ ॥ दोहा–और होइ तौ जानिजै, प्रभुसों कहा बसाइ ॥ यह विचारिकै, शत्रुहा, भरत उठे अकुलाइ ॥ ४५ ॥ राम--दोधकछन्द ॥ सीतहि लै अब सत्वर जैये । राखि महावनमें पुनि ऐये ॥ लक्ष्मण जो फिरि उत्तर दैहौ । शासनभंगको पातक पैहौ ॥ ४६ ॥ लक्ष्मण लै वन सीताहिं धाये । स्थावर जंगमहू दुख पाये ॥ गंगहिं देखिकह्यो यह सीता । श्रीरघुनायककी जन गीता ॥ ४७ ॥

टी०–अशोक जो आनंद है ताके समाज कहे समूहमें ॥४३॥४४॥ जानिजै अर्थ दोष अदोषको निर्णय समुझिये ॥ ४५ ॥ शासन (आज्ञा) राजाको आज्ञाभंग वधके सम होतहै यथा । माधवानल नाटके ॥ "आज्ञाभंगो नरेंद्राणां विप्राणां मानखंडनम् । पृथक्शय्या वरस्त्रीणामशस्त्रबध उच्यते" ॥ ४६ ॥ सीताको लैकै लक्ष्मण वनहूंको गये तहां पर्यंत कहूं कौशल्य वशिष्ठादिके वचन नहीं हैं सो ऋष्यशृंग ऋषिके यज्ञ रह्यो तहाँ कौशल्यादि माता औ अरुंधती सहित वशिष्ठ सब निमंत्रणमें गये रहैं यह कथा उत्तररामचरित्र नाटकमें लिख्योहै सो जानो ॥ ४७ ॥

पार भये जबहीं जन दोऊ । भमि बनी जन जन्तु न कोऊ ॥ निर्जल निर्जन कानन देख्यो । भूत पिशाचनको घर

लेख्यो ॥ ४८ ॥ सीताजू-नगस्वरूपिणीछंद ॥ सुनों न ज्ञान-कारिका। शुकी पढैं न सारिका ॥ न होमधूम देखिये। सुगन्ध बन्धु लेखिये ॥ ४९ ॥ सुनों न वेदकी गिरा। न बुद्धि होति है थिरा ॥ ऋषीनकी कुटी कहाँ। पतिव्रता बसैं जहाँ ॥ ५० ॥ मिलै न कोउ एकहू। न आवते न जातहू॥ चले हमैं कहाँ लिये। डचराति हैं महाहिये ॥५१॥ दोहा ॥ सुनि सुनि लक्ष्मण भीत अति, सीताजूके बैन ॥ उत्तर मुख आया नहीं, जल भरि आय नन ॥ ५२ ॥ नाराचछन्द ॥ विलोकि लक्ष्मणै भई विदेहजा विदेहसी। गिरी अचेत ह्वै मनो घनै बनै तडीतसी ॥ करी जो छाँह एक हात एक बात वाससों। सिंच्यो शरीर बीर नैन नीरहीं प्रकाशसों ॥५३॥

टी०-जन कहे मनुष्य जंतु कहे जीव अर्थ मनुष्य जीव केवल वनजीवही देखि परत हैं इति भावार्थः ॥ ४८ ॥ सुगन्धको बंधु कहे हित अर्थ सुगन्ध-युक्त होम धूम नहीं देखियत अथवा सुगन्ध बंधु कहे दुर्गंध कहूं सुगंधबंध पाठ है तहां अर्थ सुगन्धकी बंध कहे बन्धन है यामें ऐसो होमधूम नहीं देखि-यत ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥माना घनैवनै कहे घन वनको देखि तडित जो बिजुरी है सोई बसी कहे डरीहै सो डरिकै अचेत ह्वै गिरिपरी है इत्यर्थः। कहूं घने घने तडी त्रसी पाठ है अर्थ मानों घने जे घन मेघ हैं ॥ ५३ ॥

रूपमालाछंद ॥ रामकी जपसिद्धिसी सियको चले वन छांडि। छांह एक फनी करी फन दीह मालनि मांडि ॥ वालमीकि विलोकियो वन देवता जनु जानि। कल्पवृक्ष लता किधौं दिविते गिरी भुव आनि ॥ ५४ ॥ सींचि मंत्र सजीव जीवन जी उठी तेहि काल। पूंछिये मुनि कौनकी दुहिता बहू अरु बाल ॥ सीताजू ॥ हौं सुता मिथिलेशकी दशरत्थपुत्रकलत्र। कौन दोष तजी न जानति कौन आपुन अत्र ॥ ५५ ॥ मुनि पुत्रिके सुनि मोहिं जानहि वालमीकि द्विजाति। सर्वथा

मिथिलेशको गुरु सर्वदा शुभ भाँति ॥ होहिंगे सुत द्वै सुधी पशु धारिये मम ओक । रामचन्द्र क्षितीशके सुत जानि है तिहुँ लोक ॥ ५६ ॥ सर्वथा गुणि शुद्ध सीतहिं लैगये मुनि राइ । आपनी तपसानकी शुभ सिद्धिसी सुख पाइ ॥ पुत्र द्वै भये एक श्रीकुश दूसरो लव जानि । जातकर्महि आदि दै किय वेदभेद बखानि ॥ ५७ ॥ दोहा॥ वेद पढायो प्रथमहीं धनुर्वेद सविशेष ॥अस्त्र शस्त्र दीन्हे घने, दीन्हे मंत्र अशेष ५८॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां जानकीत्यागवर्णनं नाम त्रयस्त्रिंशः प्रकाशः ॥ ३३ ॥

टी०—तिनमें त्रसी कहे डेरानी तडी अचेत ह्वै गिरि है मेघ सम वन हैं बिजुरी सम सीता है ॥ ५४ ॥ सजीवमंत्रसों जीवन जल सींच्यो तब सीताजी उठीं अत्र कहे या स्थानमें आपनो कौन दोष है जासों मोको तजी यह हौं नहीं जानति इत्यर्थः ॥ ५५ ॥ ओक कहे घर ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां त्रयस्त्रिंशः प्रकाशः ॥ ३३ ॥

दोहा ॥ आयो श्वान फिरचादिको, चौंतीसयें प्रकाश ॥ अरु सनाढ्य द्विज आगमन, लवणासुरको नाश॥ १ ॥ दोध कछंद ॥ एक समय हरि धर्मसभामें । बैठे हुते नरदेवप्रभामें॥ संग सबै ऋषि राज विराजैं । सोदर मंत्रिन मित्रन साजैं॥२॥ कूकर एक फिरादिहि आयो । दुंदुभि धर्मदुवार बजायो ॥ बाजतहीं उठि लक्ष्मण धाये । श्वानहिं कारण बूझन आये॥३॥ कूकुरु ॥ काहुके क्रोध विरोध न देख्यो । रामको राज तपोमय लेख्यो ॥ तामहँ मैं दुख दीरघ पायो । रामहिं हौं सो निवेदन आयो ॥ ४ ॥ लक्ष्मण ॥ धर्मसभामहँ रामहिं

जानो । श्वान चलो निज पीर बखानो ॥ श्वान ॥ हौं अब राजसभा नहिं आऊं । आउं तो केशव शोभन पाऊं ॥५॥ दोहा ॥ देवअदेव नृदेव घर, पावन थल सुखदाइ । बिन बोले आनंदमति, कुत्सित जीव न जाइ ॥ ६ ॥

टी०--धर्मसभा(न्यायसभा) ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ निवेदन (कहन)॥४॥५॥६

दोधकछंद ॥ राजसभामहँ श्वान बोलायो । रामहिं देखत ही शिर नायो ॥ राम कह्यो जो कछु दुख तेरे । श्वान निशंक कहो पुर मेरे ॥ ७ ॥ श्वान-तारकछंद ॥ तुम हो सर्वज्ञ सदा सुखदाई । अरु हौं सबको समरूप सदाई ॥ जग सोवत है जगतीपति जागे । अपने अपने सब मारग लागे ॥ ८ ॥ नर देवन पाँय परै परजाको । निशि वासर होइ न रक्षक ताको ॥ गुणदोषनको जब होइ न दर्शी । तबहीं नृप होइ निरयपदपर्शी ॥ ९ ॥ दोहा ॥ निज स्वारथही सिद्धि द्विज, मोकों करयो प्रहार ॥ बिन अपराध अगाधमति, ताको कहा विचार ॥ १० ॥ तारकछंद ॥ तब ताकहँ लेन तहीं जन धाये । तबहीं नगरीमहँ ते गहि ल्याये ॥ राम ॥ यह कूकर क्यों बिन दोषहि मारयो । अपने जिय त्रास कछू न विचारयो ॥ ११ ॥ ब्राह्मण-दोहा ॥ यह सोवत हो पंथमें, हौं भोजनको जात ॥ मैं अकुलाइ अगाधमात, याको कीन्हों घात ॥ १२ ॥ राम-स्वागताछंद ॥ ब्रह्म ब्रह्म ऋषिराज बखानो । धर्म कर्म बहुधा तुम जानो ॥ कौन दंड द्विजको द्विज दीजै । चित्त चेति कहिये सोइ कीजै ॥ १३ ॥

टी०-पुर कहे(अयोध्या) ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥१२ ॥ १२॥ हे ब्रह्म ! ऋषिराज ! जो वेद वदै है ताको मत हमसों बखानौ (कहौ) ॥ १३ ॥

कश्यप ॥ है अदण्डय भुवदेव सदाई । यत्र तत्र सुनिये रघुराई ॥ ईश शीख अब याकहँ दीजै । चूकहीन अरि कोउ न

कीजै ॥ १४ ॥ राम-तोमरछंद ॥ सुनि श्वान कहि तू दंड । हम देहिं याहि अखंड ॥ कहि बात तू डर डारि । जिय मध्य आपु विचारि ॥ १५ ॥ श्वान-दोहा ॥ मेरो भायो करहु जो, रामचन्द्र हित मंडि ॥ कीजि द्विज यहि मठपती, और दंड सब छंडि ॥ १६ ॥ निशिपालिका छंद । पीत पहिराइ पट बांधि शिरसों पटी । बोरि अनुराग अरु जोरि बहुधा गटी ॥ पूजि परि पायँ मठु ताहि तबहीं दयौ । मत्त गजराज चढि विप्र मठको गयो ॥ १७ ॥ दोहा ॥ भयो रंकते राज द्विज, श्वान कीन करतार ॥ भोगन लाग्यौ भोगबै, दुंदुभि बाजत द्वार ॥ १८ ॥ सुंदरीछंद ॥ बूझत लोग सभामहँ श्वानहिं । जानत नाहिं नया परिमानहिं ॥ विप्रहितैं जो दई पदवी वह । है यह निग्रह कैधौं अनुग्रह ॥ १९ ॥ श्वान-दोधक-छंद ॥ एक कनोज हुतोमठधारी । देव चतुर्भुजको अधिकारी ॥ मन्दिर कोउ बडो जब आवै । अंग भली रचनानि बनावै ॥ ॥ २० ॥ जा दिन केशव कोउ न आवै । ता दिन पालिकते न उठावै ॥ भेटनि लै बहुधा धन कीनो । नित्य करै बहु भोग नवीनो ॥ २१ ॥ एक दिना यक पाहुन आयो । भोजन तौ बहु भांति बनायो ॥ ताहि परोसनको पितु मेरो । बोलि लियो हितहौं सब केरो ॥ २२ ॥ ताहि तहां बहु भांति परस्यो । केहूं कहूँ नखमाहँ रह्या स्यो ॥ ताहि परोसि जहीं घर आयो । रोवत हौं हँसि कण्ठ लगायो ॥ २३ ॥ चामरछन्द ॥ मोहिं मातु तप्त दूध भात भोजको दियो । बातसों सिराइ तात छीर अंगुली छियो ॥ ध्योद्रयो भष्यो गयो अनेक नर्क वास भो । हौं भ्रम्यों अनेक योनि अवध आनि श्वान भो ॥ २४ ॥ दोहा ॥ वाको थोरो दोष मैं, दीन्हों दण्ड

अगाध ॥ राम चराचर ईश तुम, क्षमियो यह अपराध ॥
॥ २५ ॥ लोक करेउ अपवित्र वहि, लोक नरकको वास ॥
छुवै जो कोऊ मठपतिहि, ताको पुण्यविनाश ॥ २६ ॥

टी०-बिनदोष काहूको घात न करै ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ गजरथ अश्वादिकी गढी कहे समूह जोरि यत्नकरिकै दियो औ मठ दियो कृपा दुहूं ओर लगति है अथवा मठधारिनकी गढीमें जोरि कहे मिलाइकै कालंजर दुर्ग जो प्रसिद्ध है ताको मठपति कियो यह बाल्मीकीयरामायणमें लिख्यो है यथा ॥ " कालंजरे महाराज कौलपत्यं प्रदीयताम् । एतच्छ्रुत्वा तु रामेण कौलपत्येऽभिषेचितः । " ॥१७ ॥ १८ ॥ या जो मठपति है ताके प्रमाणको नहीं जानत ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४॥२५॥२६॥

रामायणे-यथा ॥ ब्रह्मस्वं देवद्रव्यं च स्त्रीणां बालधनं च यत् ॥ दत्तं हराति यो मोहात्स पचेन्नरके ध्रुवम् ॥२७॥ स्कन्दपुराणे-यथा ॥ हरस्य चान्यदेवस्य केशवस्य विशेषतः ॥ मठपत्यं च यः कुर्यात्सर्वधर्मबहिष्कृतः ॥ २८ ॥ पद्मपुराणे यथा ॥ पत्रं पुष्पं फलं तोयं द्रव्यमन्नं मठस्य च ॥ योऽश्नाति स पचेद्घोरान्नरकानेकविंशतिः ॥ २९ ॥ देवीपुराणे यथा ॥ अभोज्यं मठिनामन्नं भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥ स्पृष्ट्वा मठपतिं विप्रं सवासा जलमाविशेत् ॥३०॥ दोहा ॥ आरा एक कथा कहौं, विकल भूपकी राम ॥ वहौ अयोध्या वसतहै, वंशकारके धाम ॥ ३१ ॥ वसन्ततिलकाछन्द ॥ राजा हुतो प्रबल दुष्ट अनेकहारी । वाराणसी विमल छेत्र निवासकारी ॥ सो सत्यकेतु यह नाम प्रसिद्ध शूरो । विद्या विनोद रत धर्मविधान पूरो ॥ ३२ ॥

टी० ब्रह्मस्व (ब्राह्मणको द्रव्य) औ देवताको द्रव्य और स्त्रीको द्रव्य और बालकको द्रव्य और अपनी दीन्ही जो द्रव्य है इनको मोहवश ह्वैकै जो हरतहैं सो प्राणी ध्रुव कहे निश्चय करि नरके कहे नरकमें पचेत् कहे पाकत है अर्थ जरत है दुःख पावत है इति ॥ कहिबेको हेतु यह कि देव द्रव्य-

हारी (मठपती) है सो नरकको प्राप्त होतहै ॥ २७ ॥ जो प्राणी काह देवको मठपति होइ सो धर्मरहित ह्वै जात है इत्यर्थः ॥ २८ ॥ अश्नाति कहे भोग करत है घोरभयानक जे एकविंशति नरक हैं तिनमें पाकत है ॥ २९॥ मठिनको अन्न अभोज्य है खाइवे योग्य नहीं है जो खाइये तो चान्द्रायणव्रतको करिये औ मठपति ब्राह्मणको स्पृष्ट्वा कहे छुइकै सवासा कहे वस्त्रसहित जलं कहे जलमें आविशेत् कहे प्रवेश करिये वस्त्रसहित स्नान करिडारिये इत्यर्थः ॥ ३० ॥ जो पाछै कह्यौ है कि " गुणदोषनको जब होइ न दर्शी । तब नृप होइ निरयपदपर्शी " सो बात पुष्ट करिबेके लिये सत्यकेतुकी कथा कहतहैं जो वंशकार कहे डोमके घरमें विकले कष्टयुक्त बसतहै ता भूपकी कथा कहत हौं ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

धर्माधिकारपर एक द्विजाति कीन्हों । संकल्प द्रव्य बहुधा त्यहिं चोरि लीन्हों ॥ बंदी विनोद गणिकादि विलासकर्त्ता । पाव दशांश द्विज दान अशेष हर्त्ता ॥ ३३ ॥ राजा विदेश बहु साजि चमू गयो हो । जूझेउ तहाँ समर योधनसों भयो हो ॥ आये कराल किल दूत कलेशकारी । लीन्हे गये नृपतिका जहँ दण्डधारी ॥ ३४ ॥ धर्मराज—भुजंगप्रयातछन्द ॥ कहा भोगवैगो महाराज दूँमैं । कि पापै कि पुण्यै करेउ भूरि भूमैं॥ राजा ॥ सुनौ देव मोकों कछू शुद्धि नाहीं । कहौ आपही पाप जो मोहिं माहा ॥ ३५ ॥ धर्मराज ॥ कियो तैं द्विजाती जो धर्माधिकारी । सुतो नित्य सङ्कल्प वित्तापहारी ॥ दियो दुष्ट रण्डानि मुण्डानि लैलै । महापाप माथे तिहारे सो दैद॥ ३६॥

टी०—बन्दी जननकी जो विनोद कहे स्तुतिहैं तामें औ गणिकादिकनको अनेक विलासको कर्त्ता रह्यो औ जो दान द्रव्य राजाके इहाँसों कढत रह्यो है तामें दशांश ब्राह्मण पावैं औ अशेष सम्पूर्णको हर्त्ता आप रह्यो ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

हुतो तैं सबै देशहीको नियन्ता । भलेकी बुरेकी करीतैं न चिन्ता ॥ महासूक्ष्म है धर्मकी बात देखो । जेतो दान दीन्हों तेतो पाप लखो ॥ ३७ ॥ दोहा ॥ कालसर्प्पसे समुझिये, सबै

राजके कर्म ॥ ताहूते अतिकठिनहै, नृपतिदानके धर्म ॥३८॥ भुजङ्गप्रयातछन्द ॥ भयो कोटिघा नर्क संपर्क ताको । हुते दोष संसर्गके शुद्ध जाको ॥ सबै पाप भे क्षीण भो मुक्त लेखी । रह्यो अवधमें आनि ह्वै कोलबेखी ॥ ३९ ॥ तारकछन्द ॥ तब बोलि उठो दरबार विलासी । द्विज द्वार लसै यमुनातटवासी ॥ अति आदरसों ते सभामहँ बोल्यो । बहु पूजन कै मगको श्रम खोल्यो ॥ ४० ॥ राम-रूपमालाछन्द ॥ शुद्ध देश ये रावरेसों भये सबै यहि बार । ईश आगम सङ्गमादि कही अनेक प्रकार ॥ धाम पावन ह्वै गये पदपद्मको पय पाय । जन्म शुद्ध भये छुये कुलदृष्टिही मुनिराय ॥ ४१ ॥

टी०-॥ ३७ ॥ ३८ ॥ जाको जा शुद्ध राजाको केवल संसर्गहीके दोष रहे तासों नरकको संपर्क कहे संयोग भयो यासों राजाको भले बुरेकी चिन्ता करिबो उचित है इति भावार्थः । जब नरक भागसों सबै पाप क्षीण भये तब नरकते मुक्त भयो छूट्यो तब अवधमें कोल कहे चाण्डाल भेद अथवा शूकरवेषी रूपधारी रह्यो है ॥ ३९ ॥ दरबार जो बहिर्द्वार है ताको विलासी द्वारपाल खोल्यो दूरि करचो ॥ ४० ॥ रामचन्द्र ब्राह्मणसों कहत हैं कि, हे ईश ! रावरे आगम आइबेसों औ संगम बैठिवो पौंढिवो आदिसों तिन्हें आदि जे और स्नान भोजनादि हैं तिनसों ये हमारे देश अनेक प्रकारसों शुद्ध भये औ तुम्हारे पदपद्मके छुयेसों जन्म शुद्ध भये औ तुम्हारी दृष्टिसों कुल शुद्ध भयो अथवा आगमसों देश शुद्ध भये औ संगम जो स्पर्श है त्यहिं आदि दै सो जन्मादि अनेक प्रकारसों शुद्ध भये ते आगे कहत हैं ॥ ४१ ॥

पादपद्म प्रणामही भये शुद्ध सीरख हाथ । शुद्ध लोचन रूप देखतही भये मुनिनाथ ॥ नासिका रसना विशुद्ध भये सुगन्ध सुनाम । कर्न कीजत शुद्ध शब्द सुनाइ पीयूषधाम ॥ ४२ ॥ दोधकछन्द ॥ आये कहाँ सों आयसु दीजै । आजु मनोरथ पूरण कीजे ॥ ब्राह्मण ॥ जीवतिसों सब राज्य तिहारी । निर्भय ह्वै भुवलोकविहारी ॥ ४३ ॥ ऋषि-मरहट्ठाछन्द ॥

तुम हौ सब लायक श्रीरघुनायक उपमा दीजै काहि ।
मुनि मानस रंता जगत नियंता आदि न अन्त न जाहिं ॥
मारौ लवणासुर जैसे मधु मुर मारे श्रीरघुनाथ ।
जग जय रसभीने श्रीशिव दीन्हे शूलहि लीन्हे हाथ ॥ ४४ ॥
दोहा ॥ जाके मेलत शूल यह, सुनिये त्रिभुवनराय ॥ ताहि-
भस्म करि सर्वथा, वाहीके कर जाय ॥ ४५ ॥ दोधकछन्द ॥
देवसब रण हारि गयेजू । और जिते नरदेव भयेजू ॥ श्रीभृगु-
नन्दन युद्ध न माँड्यो । श्रीशिवको गनि सेवक छाँड्यो ॥४६॥

टी०—॥ ४२ ॥ तुम्हरो जो सब राज्य ह्वै अर्थ राजवासी हैं सो जीवति जीवनसों निर्भय ह्वै कै भुवलोकमें विहारो कहे विहार करतहैं । अर्थ तुम्हारे राजवासीको कहूं भय नहीं है तामें हमको जीवितकी भय प्राप्त है' इति भावार्थः ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

दोहा ॥ पादारघ हमको दियो, मथुरामंडल आप ॥ वासों
वसन न पावहीं, बिना बसे अति पाप ॥ ४७ ॥ राम ॥ रक्ष-
हिंगे शत्रुघ्नसुत, ऋषि तुमको सब काल ॥ वासुदेव ह्वै रक्षिहौं,
हँसि कह दीनदयाल ॥ ४८ ॥ भुजंगप्रयातछन्द ॥ चलो बोगि
शत्रुघ्न ताको सँहारो । वहै देश तौ भावँतो है हमारो ॥ सदा
शुद्ध वृन्दावनी भू भली है । तहाँ नित्य मेरी विहारस्थली
है ॥ ४९ ॥ यहै जानि भूमै द्विजन्मान दीनी । वसै यत्र वृन्दा
प्रिया प्रेमभीनी ॥ सनाढ्यानकी भक्ति जो जीय जागै ।
महादेवको शूल ताके न लागै ॥ ५० ॥ बिदा ह्वै चले रामपै
शत्रुहंता । चले साथ हाथी रथी युद्ध रंता ॥ चतुर्द्धा चमू
चारिहू ओर गाजैं । बजैं दुन्दुभी दीह दिग्देव लाजैं ॥ ५१ ॥
दोहा ॥ केशव वासर बार हैं, रघुपति केशव वीर ॥ लवणा-
सुरके यमनिज्यों, मेले यमुनातीर ॥ ५२ ॥ मनोरमाछंद ॥
लवणासुर आइ गयो यमुनातट । अवलोकि हँस्यो रघुनन्द-

नके भट ॥ धनु बाण लिये निकसे रघुनन्दनु । मदके गजको सुतके हरिको जनु ॥ ५३ ॥ लवणासुर-भुजंगप्रयातछंद ॥ सुन्यौ तैं नहीं जो इहाँ भूलि आयो । बडो भाग मेरो बडो भक्ष पायो ॥ शत्रुघ्न ॥ महाराज श्रीराम हैं क्रुद्ध तोसों । तजै देश को कै सजौ युद्ध मोसों ॥ ५४ ॥

टी०-पाप (कष्ट) अथवा पातक ॥ ४७ ॥ वासुदेव (कृष्ण) ॥ ४८॥ वृन्दा (तुलसी) ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ लवणासुरके यमनि कहे यमराज नके सम ॥ ५२ ॥ मदके गजको कहे मदयुक्त गजको ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

लवणासुर ॥ वहे रामराजा दशग्रीव हंता । सो तो बन्धुमेरो सुरस्त्रीन रंता ॥ हतौं तोहिं वाको करौं चित्त भायो । महादेवकीसों बडो भक्ष पायो ॥ ५५ ॥ भये क्रुद्ध दोऊ दुवो युद्ध रंता । दुवो अस्त्र शस्त्र प्रयोगी निहंता ॥ बली विक्रमी धीर शोभा प्रकाशी । नश्यो हर्ष दोऊ सबर्षैं विनाशी ॥५६ शत्रुघ्न ॥ दोहा ॥ लवणासुर शिव शूल बिन, और न लागै मोहिं ॥ शूल लिये बिन भूलिहूं, हौं न मारिहौं तोहिं ॥ ५७ ॥

टी-रंता (भोगी) सरस्वती उक्तार्थः । सुरस्त्रीनरंता कहि या जनायो जो रावण इन्द्रहूको जीति देवांगननको लै आयो ताहूको रामचन्द्र मारयो तो अति बली हैं तिनके तुम बंधुही हौ तो कहे तौही कहे निश्चय करि हमको हतौं मारौं वाको रामचन्द्रको चित्त भायो करो महादेवकी सौंह है जो तू रामचन्द्रको बंधुही है तो बडो भक्ष्य कहे मेरे जे भक्ष या ठौरके वासी हैं तिनको पालनहार तू आयो है ॥ ५५ ॥ प्रयोगी कहे चलावनहार सवर्षैं कहे बाण वर्षा सहित जे दोऊ विनाशी कहे परस्पर हंताहैं तिनको हर्ष नशि गयोहै अर्थ विकल हैं ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

मोटनकछंद ॥ लीन्हों लवणासुर शूल जहीं । मारेउ रघुनन्दन बाण तहीं ॥ काट्यो शिर शूलसमेत गयौ । शूली कर सुःख त्रिलोक भयो ॥ ५८ ॥ बाजे दिवि दुन्दुभि दीह तबै । आये सुर इंद्र समेत सबै ॥ देव ॥ कीन्हों बहु विक्रम या

रणमें माँगौ वरदान रुचै मनमें ॥ ५९ ॥ शत्रुघ्न ॥ प्रमाणिकाछंद ॥ सनाढ्य वृत्ति जो हरै । सदा समूल सो जरै ॥ अकाल मृत्युसो मरै । अनेक नर्कसों परै ॥६०॥ सनाढ्यजाति सर्वदा । यथा पुनीत नर्मदा । भजैं सजैं जे संपदा । विरुद्धते असंपदा ॥ ६१ ॥ दोहा ॥ मथुरामंडल मधुपुरी, केशव स्ववश वसाइ ॥ देखे तब शत्रुघ्नजू, रामचंद्रके पाँइ ॥ ६२ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचंद्रचंद्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां लवणासुरवधवर्णनं नाम चतुस्त्रिंशः प्रकाशः ॥ ३४ ॥

टी०—॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ कहिबेको हेतु यह कि ऐसे जे सनाढ्य हैं तिनकी भक्ति हमको वर दीजै ॥ ६१ ॥ ६२ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां चतुस्त्रिंशः प्रकाशः ॥ ३४ ॥

दोहा ॥ पैंतीसयें प्रकाशमें, अश्वमेध किय राम ॥ मोहन लव शत्रुघ्नको, ह्वैहै संगर धाम ॥ १ ॥ विश्वामित्र वसिष्ठसों, एक समय रघुनाथ ॥ आरंभो केशव करन, अश्वमेधकी गाथ ॥ २ ॥ राम—वामरछंद ॥ मैथिलीसमेति तौ अनेक दान मैं दियो । राजसूय आदि दै अनेक यज्ञ मैं कियो ॥ सीय त्याग पापतेहि ये सौ हौं महा डरौं । और एक अश्वमेध जानकी विना करौं ॥ ३ ॥

टी०—संगरधाम कहे समरभूमिमें ॥ १ ॥ २ ॥ सीताके त्याग पापके मोचनार्थ विना जानकी एक अश्वमेध करत हौं इत्यर्थः ॥ ३ ॥

कश्यप—दोहा ॥ धर्मकर्म कछु कीजई, सफल तरुणिके साथ ॥ ता बिन जो कछु कीजई, निष्फल सोई नाथ ॥४॥ तोटकछंद ॥ करिये युत भूषण रूप रयी । मिथिलेशसुता इक स्वर्णमयी ॥ ऋषिराज सबै ऋषि बोलि लिये । शुचिसो

सब यज्ञविधान किये ॥ ५ ॥ हय शालनते हय छोरि लियो । शशिवर्णसो केशव शोभ रयो ॥ श्रुति शामल एक विराजतु है । अलिस्यो सरसीरुह लाजतु है ॥ ६ ॥ रूपमालाछंद ॥ पूजि रोचन स्वच्छ अक्षत पट्ट बांधिय भाल । भूषि भूषण शत्रुदूषण छोडियो तोहि काल ॥ संग लै चतुरंग है नाहि शत्रुहंता साथ । भाँति भाँतिन मान दै पठये सो श्रीरघुनाथ ॥ ७ ॥ जात है जितवाजि केशव जात हैं तित लोग । बोलि विप्रन दान दीजत यत्र तत्र सभोग ॥ बेणु वीणि मृदंग बाजत दुंदुभी बहु भेव । भाँति भाँतिन होत मंगल देवसे नरदेव ॥ ८ ॥ कमलछंद ॥ राघवकी चतुरंग चमूचय को गन केशवराज समाजनि । शूर तुरंगनके उरझैं पग तुंग पताकनकी पटसाजनि ॥ टूटि परैं तिनते मुक्ता धरणी उपमा बरणी कवि राजनि । बिंदु किधौं मुख फेननके किधौं राजश्री श्रवै मंगल लाजनि ॥ ९ ॥

टी०-शुचिसों (पवित्रता) सों ॥ ४ ॥ ५ ॥ श्वेत कमल जानो ॥ ६ ॥ शत्रु दूषण (रामचन्द्र) ॥ ७ ॥ सभोग कहे अनेक भोग्य वस्तु सहित ॥ ॥ ८ ॥ समाज समूह श्रवे कहे बर्षति हैं राजनके प्रयाणमें पुरस्त्री लाज कहे लावा मंगलार्थ वर्षति हैं यह प्रसिद्ध हैं ॥ ९ ॥

राघवकी चतुरंग चमू चपि धूरि उठी जलहू थल छाई । मानौ प्रताप हुताशन धूमसो केशवदास अकाशन माई ॥ मेटिकै पंच प्रभूत किधौं विधुरेणुमयी नव रीति चलाई । दुःखि निवेदनको भवभारको भूमि किधौं सुरलोक सिधाई ॥ १० ॥ दंडक ॥ नाद पूरि धूरि पूरि तूरि वन चूरि गिरि शोषि शोषि जल भूरि भूरि थलगाथकी । केशोदास आस पास ठौर ठौर राखि जन तिनकी संपति सब आपनेही हाथकी ॥ उन्नत नवाइ

नत उन्नत बनाइ भूप शत्रुनकी जीविकाति मित्रनके हाथकी । मुद्रित समुद्र सात मुद्रा निज मुद्रित कै आई दिशि दिशि जीति सेना रघुनाथकी ॥ ११ ॥

टी०—पंचप्रभूत पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश ॥ १०॥ नाद (कोलाहल) नदी तडागादिकनकी भूरि जल शोशिकै औ भूरिजलहीकी थलमें गाथ प्रसिद्धता करचो अर्थ चमूके चरणसों चापि मेघादिकनको जल शोषि गयो औ थल दबात भये तासों पातालसों जल कढि आयो और ठौर ठौर कहे देशदेशमें जन कहे आमिल राखिकै तिन देशनकी संपत्ति आपने हाथ कहे काबूमें कीन्हों अर्थ तिन देशनमें अमल कियो औ तिन देशनके उन्नत कहे बडे भूप रहैंन तिन्हैं नवाइ दियो जासों समय पाय विरुद्ध करिबे लायक न रहैं औ नत कहे छोटे जे भूप रहैं तिन्हैं उन्नत बनायो जासों ताबेदार बने रहैं औ शत्रु राजनकी जीविका राज्य अतिमित्र राजा हैं तिन्हैं सौंपि दियो औ सातों समुद्रनसों मुद्रित (चिह्नित) जो पृथ्वी है अर्थ सप्तसमुद्र पर्यंत पृथ्वीमें आपनी मुद्रा जो मोहर है ताको मुद्रित कै कहे छापिकै अर्थ गज सिक्का चलाइकै ॥ ११ ॥

दोहा ॥ दिशि विदिशनि अवगाहिकै, सुखही केशवदास ॥ वालमीकिके आश्रमहि, गयो तुरंग प्रकाश ॥ १२ ॥ दोधकछंद ॥ दूरिहिते मुनि बालक धाये । पूजित वाजि विलोकन आये॥ भालको पट्ट जहीं लव वाच्यो । बाँधि तुरंगम जयरस राँच्यो ॥ १३ ॥ श्लोक ॥ एकवीरा च कौशल्या तस्याः पुत्रो रघूद्वहः ॥ तेन रामेण मुक्तोसौ वाजी गृह्णात्विमं बली ॥ १४ ॥ दोधकछंद ॥ घोर चमू चहुँ ओरते गाजी । कौने हिरे यह बाँधिय वाजी ॥ बोलि उठे लव मैं यह बाँध्यो । यों कहिकै धनुसायक साँध्यो ॥ मारि भगाइ दिये सिगरे यों । मन्मथके शर ज्ञान घने ज्यों ॥ १५ ॥

टी०--अवगाहि (मँझाइ) कै ॥ १२ ॥ १३ ॥ "एको वीरः पतिर्यस्याः सा एकवीरा" अर्थ भूमंडलमें जेते प्रसिद्ध वीर हैं तिनके मध्यमें एकवीर मुख्यवीर अर्थ सबसों अधिकवीर है पति जाको औ फेरि कैसी हैं कौशल्या कोशलाधिपकी कन्या हैं तिनके पुत्र रघूद्वह कहे रघुवंशके राज्यादि भारके धारणकर्त्ता रामचन्द्र हैं इतिशेषः ॥ इन तीनों पदनसों एकवीरात्मजत्व

सुकुलजात्मज राज्याभिषिक्तत्व जनायो तेन रामेण कहे तिनराम करिकै असौ कहे यह बाजी मुक्तः कहे छोडो गयो है जो बली होय सो इमं कहे याको गृह्णातु कहे ग्रहण करै अथवा बाँधै ॥ १४ ॥ १५ ॥

धीरछंद ॥ योधा भगे वीर शत्रुघ्न आये। कोदंड लीन्हे महा-रोष छाये ॥ ठाढो तहाँ एक बालै विलोक्यो। रोंक्यो तहीं जोर नाराच मोक्यो ॥ १६ ॥ शत्रुघ्न-सुन्दरीछंद ॥ बालक छाँडिदे छाँडि तुरंगम। तोसों कहा करौं संगर संगम ॥ ऊपर वीर हिये करुणारस। वीरहि विप्र हते न कहूँ यश ॥ १७ ॥ लव-तारक छंद ॥ कछु बात बडी न कहौ मुख थोरे। लवसों न जुरा लवणासुर भोरे ॥ द्विज दोष नहीं बल ताको सँहारचो। मरिही जो रहो सो कहा तुम मारचो ॥ १८ ॥ चामरछंद ॥ रामबन्धु बाण तीनि छोडियो त्रिशूलसे। भालम विशाल ताहि लाग यो ते फूलसे ॥ लव ॥ घात कीन राज तात गात तैं कि पूजियो। कौन शत्रुतैं हत्यौ जो नाम शत्रुहा लियो ॥ १९ ॥

टी०--मोकों कहे छोडिहीसे चुके रहैं ता नाराचको रोंक्यो ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥

निशिपालिकाछंद ॥ रोष करि बाण बहु भाँति लव छंडियो। एक ध्वज सूत युग तीनि रथ खंडियो ॥ शस्त्र दश रत्थसुत अस्त्र कर जो धरै। ताहि सिय पुत्र तिल तूल सम खंडरै॥२०॥ तारकछंद ॥ रिपुहा कर बाण वहै कर लीन्हो। लवणासुरको रघुनंदन दीन्हो ॥ लवके उरमें उरझ्यो वह पत्री। मुरझाइ गिरचो धरणी महँ क्षत्री ॥ २१ ॥ माटनक छंद ॥ मोहे लव भूमि परे जबहीं। जय दुंदुभि बाजि उठे तबहा ॥ भुवत रथ ऊपर आनि धरे। शत्रुघ्नतों यों करुणानि भरे ॥ २२ ॥ घोडो तबहीं तिन छोरि लयो। शत्रुघ्नहिं आनंद चित्त भयो ॥ लैके लवकोते चले जबहीं। सीतापहँ

बाल गये तबहीं ॥ २३ ॥ बालक-झूलनाछंद ॥ सुनु मैथिली नृप एकको लव बाँधियो वर बाजि । चतुरंग सैन भगाइके तब जीतिये वह आजि ॥ उर लागिगो शर एकको भुवमें गिरचो मुरझाइ । वह वाजिलै लव लै चल्यो नृप दुंदुभीन बजाइ ॥ २४ ॥ दोहा ॥ सीता गीता पुत्रकी, सुनि सुनि भई अचेत ॥ मनों चित्रकी पुत्रिका, मनक्रम वचनसमेत॥२५॥ सीता-झूलनाछन्द ॥ रिपुहरि श्रीरघुनाथके सुत क्यों परैं करतार । पतिदेवता सब काल जो लव जो मिलै यहि बार ॥ ऋषि हैं नहीं कुश है नहीं लव लेइ कौन छडाइ । बनमाँझ टेर सुनी जहीं कुश आइयो अकुलाइ ॥ २६ ॥

टी०-एक बाणसों ध्वजा खंडचो औ द्वै बाणसों सूतं (सारथी) खंडचौ औ तीन बाणसों रथ खंडचो तिल औ तूल (रुई) समखंडरै कहे खंडन करत है ॥ २० ॥ पत्री (बाण) ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

कुश-दोहा ॥ रिपुहि मारि संहारि दल, यमते लेउँ छुडाइ ॥ लवहि मिलैहौं देखिहौ, माता तेरे पाँइ ॥ २७ ॥ सवैया ॥ गहियो सिंधु सरोवरसो जेहि वालि बली बरसो बर पेरचो । ढाहि दिये शिर रावणके गिरिसे गुरु जात न जा तन हेरचो ॥ शूल समूल उखारि लियो लवणासुर पीछे ते आइ सो टेरचो । राघवको दल मत्त करी सुर अंकुश दै कुशके सब फेरचो ॥ २८ ॥ दोहा ॥ कुशकी टेर सुनी जहीं, फूलि फिरे शत्रुघ्न ॥ दीप विलोकि पतंग ज्यों, यदपि भयो बहु विघ्न ॥ २९ ॥ मनोरमाछंद ॥ रघुनन्दनको अवलोकतहीं कुश । उर माँझ हयो शर शुद्ध निरंकुश ॥ ते गिरे रथ ऊपर लागतहीं शर । गिरि ऊपर ज्यों गजराज कलेवर ॥ ३० ॥ सुंदरीछंद ॥ जूझि गिरे जबहीं अरिहारन । भाजि गये तबहीं भटके गन ॥ काढि लियो जबहीं लवको शर । कंठ लग्यो

तबहीं उठि सोदर ॥ ३१ ॥ दोहा ॥ मिले जो कुश लव कुशलसों, बाजि बाँधि तरुमूल ॥ रणमहि ठाढे शोभिजैं, पशुपति गणपति तूल ॥ ३२ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचद्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां शत्रुघ्नसम्मोहो नाम पंचत्रिंशः प्रकाशः ॥ ३५ ॥

टी०-यमते लेउँ लुडाइ कहि या जनायो जो मरयो ह्वै है तो यमपुरते फेरि ल्याइ हौं ॥ २७ ॥ मत्त कारिसम कह्यो सो मत्तकरिको कृत राघव दलमें स्थापित करत हैं गहियो (मँझाइयो) वालिबलिको जो वरबल है ताहि वर कहे वट वृक्षसो पेरयो कहे मर्दउ औ शूलरूपी जो मूल जर रह्यो त्यहि सहित लवणासुरको वृक्षसो इति शेषः ॥ उखारि लीन्हों जैसे वृक्ष मूलके आधारसों सबल रहत है तैसो शूलसों लवणासुर सबल रह्यो तासों मूलसम कह्यो ॥ २८ ॥ पतंग (पांखी) ॥ २९ ॥ निरंकुश (निर्भय) कलेवर (देह) है ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां पंचात्रिंशः प्रकाशः ॥ ३५ ॥

छत्तीसयें प्रकाशमें, लक्ष्मण मोहन जानि ॥ आयसु लहि श्रीरामको, आगम भरत बखानि ॥ १ ॥ रूपमालाछन्द ॥ यज्ञमंडलमें हुते रघुनाथजू तेहि काल ॥ चर्म अंग कुरंगको शुभ स्वर्णकी सँग बाल । आसपास ऋषीश शोभित शूर सो दरसाथ । आइ भग्गुल लोग वरणे युद्धकी सब गाथ ॥ २ ॥ भग्गुल-स्वागताछन्द ॥ वालमीकि थल वाजि गयोजू ॥ विप्रबालकन घेरि लयोजू ॥ एक बांचि पटु घोटक बाँध्यो । दोरि दीह धनुसायक साँध्यो ॥ ३ ॥ भाँति भाँति सब सैन सँहारयो । आपु हाथ जनु ईश सँवारयो ॥ अस्त्र शस्त्र तब बंधु जो धारयो । खंड खंड करि ताकहँ डारयो ॥ ४ ॥ रोषवेष वह बाण लयोजू । इन्द्रजीत लगि आपु दयोजू ॥ कालरूप उरमाँह ह्यो जू । वीर मुर्छि तब भूमि भयो जू ॥ ५ ॥ तोमरछन्द ॥ वह वीर लै अरु बाजि । जबहीं चल्यो दल साजि ॥ तब

और बालक आनि। मग रोकियों तजि कानि ॥ ६ ॥ तेहि मारियो तुव बंध। तब ह्वै गयो सब अंध ॥ वह बाजि लै अरु वीर। रणमें रह्यो रुपि धीर ॥ ७ ॥

टी०—॥ १ ॥ २ घोटक (घोडो) ॥ ३ ॥ ४ ॥ पैंतीसयें प्रकाशमें कह्यो है "रिपुहा कर बाण वहै करि लीन्हों ॥ लवणासुरको रघुनदंन दीन्हों ॥" औ इहाँ कह्यो है कि "इंद्रजीतलगि आप दयोजू" तहाँ या जनायो कि वहै बाण इन्द्रजीतके मारिबेको लक्ष्मणको दियो रहै औ वहै लवणासुरके मारिबेको शत्रुघ्नहूको दियो रहै अथवा इंद्रजीत लवणासुरहीको नाम जानो इन्द्रको बाणासुरहु जीत्यो है सो चौंतीसये प्रकाशमें कह्यो है कि ॥ "देव सबै रण हारिगये जू।" भूमि भयो कहे भूमिमें परचो कानि (मर्यादा) ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥

बुधि बल विक्रम रूप गुण, शील तुम्हारे राम ॥ काकपक्ष धरि बाल ह्वै, जीते सब संग्राम ॥ ८ ॥ राम—चतुष्पदीछंद ॥ गुणगणप्रतिपालक रिपुकुलघालक बालक ते रनरंता। दशरथनृपको सुत मेरो सोदर लवणासुरको हंता ॥ कोऊ ह्वै मुनिसुत काकपक्षयुत सुनियत हैं जिन मारे। यहि जगतजालके करमकालके कुटिलभयानक भारे ॥ ९ ॥

टी०— काकपक्ष (जुलुफ) ॥ ८ ॥ बालक ते बाल अवस्थाही सों रणरंता कहे रणमें रमत रह्यो है यह जो जगज्जाल कहे संसार समूह है अथवा जगतरूपी जाल (फांस) हैं औ काल कहे समय है तिनके जे कुटिल कहे टेढे कर्म हैं ते भारे कहे अति भयानक हैं या जगत्में समयके फेरसों ऐसी अनुचित बात ह्वै जाति है जाको देखिकै बडो भय होतहै इत्यर्थः ॥ ९ ॥

मरहट्ठाछंद ॥ लक्ष्मण शुभलक्षण बुद्धिविचक्षण लेहु बाजिको शोधु। मुनिशिशु जानि मारेहु बंधु उधारेहु क्रोध न करेहु प्रबोधु ॥ बहु सहित दक्षिणा दै प्रदक्षिणा चल्यो परम रणधीर। देख्यो मुनिबालक सोदर उपज्यो करुणा अद्भुत वीर ॥ १० ॥ कुश—दोधकछंद ॥ लक्ष्मणको दल दीरघ देख्यो। कालहुते अति भीम विशेख्यो ॥ दोमैं कहौ सो कहा लव कीजै। आयुध लेहौ कि घोटक दीजै ॥ ११ ॥

टी०-प्रबोध (क्षमा) मुनि बालकनको लघुवेश देखि करुणारस भयो औ सोदर शत्रुघ्नको मूर्च्छित देखि आश्चर्य भयो कि एतो बडो वीर ताको बालकन मूर्च्छित करचो है तासों इनको मारो चाहिये यासों वीररस भयो ॥ १० ॥ ११ ॥

लव ॥ बूझत हौं तौ यहै प्रभु कीजै । मो असु दैव रु अश्व न दीजै ॥ लक्ष्मणको दल सिंधु निहारो । ताकहँ बाण अगस्त्य तिहारो ॥ १२ ॥ कौन यहै घटिहैं अरि घेरे । नाहिंन हाथ शरासन मेरे ॥ नेकु जहीं दुचितो चित कीन्हों । शूर बडो इषुधी धनु दीन्हों ॥ १३ ॥ लै धनु बाण बली तब धायो । पल्लव ज्यों दल मारि उडायो ॥ यों दोउ सोदरसेन सँहारैं । ज्यों वन पावक पौन विहारैं ॥ १४ ॥ भागत हैं भट यों लव आगे । रामके नामते ज्यों अघ भागे ॥ यूथप-यूथ यों मारि भगायो । बात बडे जनु मेघ उडायों ॥१५॥

सवैया ॥ अतिरोषरसे कुश केशव श्रीरघुनायकसों रण रीति रचैं । त्यहिं बार न बार भई बहु बारन खड्ग हनै न गणै विरचैं ॥ तहँ कुम्भ फटैं गज मोती कटैं ते चले बहु श्रोणित रोचि रचैं । परिपूरण पूर पनारेनते जनु पीक कपूरनकी किरचैं ॥१६॥

टी०-बूझत कहे पूंछत असु (प्राण) ॥ १२ ॥ कौन कहे कहा अरिके घेरेमें याही बात घाटि है कि, हमारे हाथमें शरासन धनुष नहीं है या प्रकार कहत लव नेक चित्तको दुचित्तो करचौ अर्थ युद्धहुको विचार विचारत रहे औ सूर्यकी स्तुतिहूमें चित्तको लायो तब सूर कहे सूर्य बडो इषुधी (तरकस) औ धनुष दीन्हों यथा जैमिनिपुराणे (जैमिनिरुवाच) "स्तोत्रेणानेन संतुष्टो रविर्दिव्यं शरासनम् ॥ ददौ लवाय शौरं च जयति श्रेयउत्तमम् ॥ १ ॥ सुवर्णपट्टैरुचिरैर्निबन्धं सगुणं दृढम् ॥ धनुष्प्राप्य महाबाहुर्लवः कुशमथाब्रवीत् ॥२॥ उपदिष्टं हि यत्स्तोत्रं मुनिना करुणात्मना ॥ शौरं तज्जपितं भ्रातस्तस्माल्लब्धं मया धनुः" ॥१३॥१४॥ रसे कहे युक्त तेहिबार कहे समयमें बार कहे बेर ना भई अर्थ थोरीही बेरमें बहुत वारण जे हाथी हैं तिनको खड्ग तरवारिसों हनत हैं औ काहूको गनत नहीं हैं औ चिरचैं

कहे बिरुझात है पीकके पूर कहे धार सम रुधर है कपूर किरच सम मोती हैं ॥ १५ ॥ १६ ॥

नाराचछंद ॥ भगे चपे चमू चमूप छोडि छोडि लक्ष्मणै। भगे रथी महारथी गयंदवृन्द को गणै ॥ कुशै लवै निरंकुशै विलोकि बंधु रामको। उठ्यो रिसाइकै बली बँध्यो सो लाज दामको ॥ १७ ॥ कुशमौक्तिकदामछंद ॥ न हौं मकराक्ष न हौं इंद्रजीत। विलोकि तुम्हैं रण होहुँ न भीत ॥ सदा तुम लक्ष्मण उत्तम गाथ। करौ जाने आपनि मातु अनाथ ॥ १८ ॥ लक्ष्मण ॥ कहौ कुश जो कहि आवति बात। विलोकत हौं उपवीतहिं गात ॥ इते पर बाल वहि क्रम जानि। हिये करुणा उपजै अति आनि ॥ १९ ॥ विलोचन लोचत है लखि तोहिं। तजौ हठ आनि भजौ किन मोहिं ॥ क्षम्यों अपराध अजौं घर जाहु। हिये उपजाउ न मातहि दाहु ॥ २० ॥ दोधकछंद॥ हौं हति हौं कबहूं नहिं तोहीं। तू वरु बाणन बेधहि मोहीं ॥ बालक विप्र कहा हनियेजू। लोक अलोकनमें गनियेजू ॥ २१ ॥

टी०–"एकादशसहस्राणि योधयेद्यस्तुधन्विनाम् ॥ शस्त्रशास्त्रप्रवीणश्च स महारथ उच्यते" ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ हमारे लोचन तुम्हारे देखिबेको लोचन कहे चाहत हैं भजौ (मिलौ) ॥ २० ॥ २१ ॥

हरणीछंद ॥ लक्ष्मण हाथ हथ्यार धरौ। यज्ञ वृथा प्रभुको न करौ ॥हौं हयको कबहूं न तजौं। पट्ट लिख्यौ सोइ बांचि लजौं ॥ २२ ॥ स्वागताछंद ॥ बाण एक तब लक्ष्मण छंड्यो। चर्म बर्म बहुधा तिन खंड्यो ॥ ताहि हीन कुश चित्तहि मोहै ॥ धूमभिन्न जनु पावक सो है॥२३॥रोषवेष कुश बाण चलायो। पौनचक्र जिमि चित्त भ्रमायो ॥ मोह मोहि रथऊपर सोये। ताहि देखि जड जंगमरोये ॥ २४ ॥ नाराचछंद ॥ विराम राम जानिकै भरत्थसों कथाकहैं। बिचारि चित्तमांझ वीर

वीर वे कहाँ रहैं ॥ सरोष देखि लक्ष्मण त्रिलोक्य तौ विलुप्त ह्व । अदेव देवता त्रसैं कहाते वाल दीन ह्वै ॥ २५ ॥ रामरूपमालाछंद ॥ जाहु सत्वर दूत लक्ष्मण हैं जहां यहि बार । जाइकै यह बात वर्णहु राक्षियो मुनि बार ॥ हैं समर्थ सनाथ वै असमर्थ और अनाथ । देखिबे कहँ ल्याइयो मुनिबाल उत्तम गाथ ॥ २६ ॥ सुंदरीछंद ॥ भग्गुल आइ गये तबहीं बहु । बार पुकारत आरत रक्षहु ॥ वे बहु भांतिन सैन सँहारत । लक्ष्मण तौ तिनको नहिं मारत ॥ २७ ॥ बालक जानि तजैं करुणा करि । वे अति ढीठ भये दल संहरि ॥ केहुँ न भाजत गाजत हैं रण । वीर अनाथ भये विन लक्ष्मण ॥ २८ ॥ जानहु जै उनको मुनिबालक । बे कोउ हैं जगती प्रतिपालक ॥ हैं को रावणके कि सहायक । कै लवणासुरके हितलायक ॥ २९ ॥

टी०-या छंदको सारवतीहू कहत हैं ॥ २२ ॥ तिनको कुशको धूम सम चर्मवर्म खंडित ह्वैगयो क्रोध औ प्रतापसों अग्नि सम कुशके अंग शोभित हैं ॥ २३ ॥ पवन चक्र (बौंडर) ॥ २४ ॥ बिराम बेर त्रैलोक्यके अदेव दैत्य औ देवता विलुप्त ह्वै कहे लुकिके त्रसैं कहे डेरावतहैं अर्थ लुकिहु रहत हैं ताहूपर भय नाहीं मिटत यासों अतिभय जानौ ॥ २५ ॥ २६ ॥ बारबार ॥ २७ ॥ २८ ॥ जै कहे जनि जगती प्रतिपालक (ईश्वर) अथवा राजा सहायक कहे बली ॥ २९ ॥

भरत ॥ बालक रावणके न सहायक । ना लवणासुरके हित लायक ॥ हैं निज पातकवृक्षनके फल । मोहत हैं रघुवंशिनके बल ॥ ३० ॥ जीतहि को रणमाझ रिपुघ्नहि । को करै लक्ष्मणके बल विघ्नहि ॥ लक्ष्मण सीय तजी जबते बन । लोक अलोकन पूरि रहे तन ॥ ३१ ॥ छोडोइ चाहत ते तबते तन । पाइ निमित्त करेउ मन पावन ॥ शत्रुघ्न तज्यो तन सोदर लाजनि । पूत भये तजि पाप समाजनि ॥ ३२ ॥ दोधकछंद ॥ पातक कौन तजी तुम सीता ।

पावन होत सुने जग गीता ॥ दोषविहीनहि दोष लगावै । सो प्रभु ये फल काहे न पावै ॥ ३३ ॥ हमहूं त्याहि तीरथ जाइ मरैंगे । सतसंगति दोष अशेष हरैंगे॥ वानर राक्षस ऋक्ष तिहारे। गर्व चढे रघुवंशहि भारे ॥ ता लगि कै यह बात विचारी । हौ प्रभु संतत गर्वप्रहारी ॥ ३४ ॥ चंचरीछंद ॥ क्रोधकै अति भरत अंगद संग संगरको चले । जामवन्त चले बिभीषण और बीर भले भले ॥ को गनै चतुरंग सेनहिं रोदसी नृपता भरी । जाइकै अवलोकियो रणमें गिरे गिरिसे करी ॥३५॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिंद्रजिद्विरचितायां भरतसमागमो नाम षट्त्रिंशः प्रकाशः ॥ ३६ ॥

टी०—मोहत कहे मूर्छित करत हैं अर्थ हीनो करत हैं ॥३०॥ लोकमें घातक करिकै अलोकन (दोषन) सों पूरि रहे हैं ॥ ३१ ॥ जबते अलोक प्राप्त भयो तबते ता अलोकके मिटिबेको यतनको छोडोई चाहत रहे सो युद्धरूपी निमित्त कारण पाइके तनको छोडि मनको पावन करयो शत्रुघ्नके बंधु लक्ष्मण सीताको वनमें छोडि आये या विधि लोकापवाद लाजनसों शत्रुघ्न तनको छोडयौ पूत (पवित्र) छंद उपजाति है ॥ ३२ ॥ पातक कौन एतौ भरतसों रामचन्द्रको प्रश्न है ॥ ३३ ॥ तेहि तीरथ अर्थ युद्धतीरथमें छंद उपजाति गाथा है ॥ ३४ ॥ संगर (युद्ध) रोदसी कहे भू आकाश नृपता कहे नृपसमूहनसों भरी ॥ " द्यावाभूमिचरोदसी " इत्यमरः ॥ ३५ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां षट्त्रिंशः प्रकाशः ॥ ३६ ॥

दोहा ॥ सैंतीसयें प्रकाशमें, लव कटु बैन बखान ॥ मोहन बहुरि भरत्तको, लागे मोहनबान ॥ १ ॥ रूपमालाछन्द ॥ जामवंत विलोकिकै रणभीमभू हनुमंत । श्रोणकी सारिता वही सुअनंतरूप दुरंत ॥ यत्र तत्र ध्वजा पताका दीह देहनि भूप । टूटि टूटि परे मनों बहु बात वृक्ष अनूप ॥ २ ॥ पुंज

कुंजर शुभ्र स्यंदन शोभिजै शुठि शूर। ठेलि ठेलि चले गिरी शानि पेलि श्रोणित पूर ॥ ग्राह तुंग तुरंग कच्छप चारु चम विशाल। चक्रसे रथचक्र पैरत गृद्ध वृद्ध मराल ॥ ३ ॥ केकरे कर बाहु मीन गयंदशुंड भुजंग। चीर चौर सुदेशके शशिबाल जानि सुरंग ॥ बालका बहु भाँति हैं मणि माल-जाल प्रकाश। पैरि पार भये ते द्वै मुनिबाल केशवदास ॥ ४ ॥

टी०—॥ १॥ जामवंत औ हनुमन्त दुरंत कहे दुःख करिकै पाइयत है अंत (पार) जिनको अर्थ अति बडी औ अनंत कहे अनेक श्रोण (रुधिर) की सरिता बही हैं जामें ऐसी जो रणकी भीम भयानक भू है ताको विलो-क्यो बडे पताका ध्वजा कहावत हैं छोटे पताका कहावत हैं ॥ २ ॥ सुठि शूर अर्थ अतिशूर जे सन्मुख घाव सहि मरे हैं ठेली कहे टारि पेलि कहे दबाइके जैसे शिलनको टारि नदीनको पूर प्रवाह चलत है तैसे इहां पर्वत-सम जे गज रथ हैं तिनको टारिकै श्रोणितके पूर चले यासों अतिगंभीरता औ वेगता जो नदीहूके तीर गृध्र रहतहैं इहांऊ हैं श्वेत औ श्वेत ह्वै रहे हैं अंगलोम जिनके ऐसे जे वृद्ध पाणी हैं तेई हंस हैं ॥ ३ ॥ केकरे (गेंगटा) भुजंग (सर्प) ॥ ४ ॥

दोहा ॥ नाम बरण लघु वेष लघु, कहत रीझि हनुमन्त ॥ इतो बडो विक्रम कियो, जति युद्ध अनंत ॥ ५ ॥ भरत-तारकछंद ॥ हनुमंत दुरंत नदी अब नापौ। रघुनाथ सहो-दरजी अभिलाषो ॥ तब जो तुम सिंधुहि नाँघि गये जू। अब नांघहु काहे न भीत भये जू ॥ ६ ॥ हनुमान्--दोहा ॥ सीतापद संमुख हुते, गयो सिंधुके पार ॥ विमुख भय क्यों जाहुँ तरि, सुनों भरत यहि बार ॥ ७ ॥ तारकछंद ॥ धनु बाण लिये मुनिबालक आये। जनु मन्मथके युग रूप सुहाये॥ करिबे कहँ शूरनके मद हीने। रघुनायक मानहुँ द्वै वपु कीने ॥ ८ ॥ भरत ॥ मुनिबालक हौ तुम यज्ञ करावो। सुकिधौं बरबाजिहिं बांधन धावो ॥ अपराध क्षमो सब आशिष दीजै।

रोष न कीजै ॥ ९ ॥ दोहा ॥ बांध्यो पट्ट जो शीश यह, क्षत्रिन काज प्रकाश ॥ रोष करेउ बिन काज तुम, हम विप्र-नके दास ॥ १० ॥

टी०–वर्ण कहे नामके अक्षर ॥ ५ ॥ रघुनाथ सहोदर जे शत्रुघ्न औ लक्ष्मण हैं तिनको जीमें अभिलाषो अर्थ या नदी नांघि लक्ष्मण, शत्रुघ्नको देखो जाइ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ मुनिनके बालकनको यज्ञ कराइबो उचित है अश्व नांधि यज्ञ रोकिबो उचित नहीं है इति भावार्थः ॥ ९ ॥ १० ॥

कुश-दोधकछंद ॥ बालक वृद्ध कहो तुम काको । देहनिको किधौं जीव प्रभाको ॥ है जड देह कहै सब कोई । जीवसो बालक वृद्ध न होई ॥ ११ ॥ जीव जरै न मरै नहिं छीजै । ताकहँ शोक कहा कारि कीजै ॥ जीवहि विप्रन क्षत्रिय जानो । केवल ब्रह्म हियेमहँ आनो ॥१२॥ जो तुम देहु हमैं कछु शिक्षा । तौ हम देहिं तुम्हैं हय भिक्षा ॥ चित्त विचार परै सोइ कीजै । दोष कछू न हमैं अब दीजै ॥ १३ ॥ स्वागताछंद ॥ विप्र-बालकनकी सुनि बानी । क्रुद्ध सूर सुत भो अभिमानी ॥१४॥ सुग्रीव ॥ विप्र पुत्र तुम शीश सँभारो । राखि लेहि अब ताहि पुकारो ॥ १५ ॥ लव-गौरी छंद ॥ सुग्रीव कहा तुमसों रण मांडौं । तो अतिकायर जानिकै छाँडौं ॥ वाजि तुम्हैं बहु नाच नचायो । कहा रणमंडन मोसन आयो ॥ १६ ॥

टी०–भरत मुनिबालकपद कह्यो है तासों कुश यह कहत हैं ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ शिक्षा दै हमारो बोध करौ इत्यर्थः ॥ १३ ॥ १४ ॥ छंद उपजाति है ॥ १५ ॥ फल कहे गांसी ता बाणके लागे वात सम अर्थ औ बँउडरसम बहुत भ्रमत भये औ मुरझात भये ॥ १६ ॥

तामरछंद ॥ फलहीन सो ताकहँ बाण चलायो । अति बात भ्रम्यो बहुधा मुरझायो ॥ तब दौरिकै बाण विभीषण लीन्हों । लव ताहि विलोकतहीं हँसि दीन्हों ॥ १७ ॥ सुंदरीछंद ॥ आउ बिभीषण तूरण दूषण । एक तुहीं कुल कोकिल भूषण ॥

जूझ जुरे जे भले भय जीके । शत्रुहि आइ मिले तुम नीके ॥ १८ ॥ दोधकछंद ॥ देववधू जबहीं हरि ल्यायो । क्यों तबहीं तजि ताहिन आयो ॥ यों अपने जियके उर आयो । छुद्र सबै कुल छिद्र बतायो ॥ १९ ॥ दोहा ॥ जेठो भैया अन्नदा, राजा पिता समान ॥ ताकी पत्नी तू करी, पत्नी मातु समान ॥ २० ॥ को जानै कै बार तू, कही न ह्वैहै माइ ॥ सोई तैं पत्नी करी, सुनु पापिनके राइ ॥ २१ ॥ तोटक-छन्द ॥ सिगरै जगमाँझ हँसावत हैं । रघुबंशिन पाप नशावत हैं ॥ धिक तो कहँ तू अजहूं जो जियै । खल जाइ हलाहल क्यों न पियै ॥ २२ ॥

टी०-जूझ जुरे पर भले जीके भयसों शत्रुको आइ मिले ॥ १७ ॥ १८ ॥ देववधू (सीता) ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

कछु है अब तोकहँ लाज हिये । कहि कौन विचार हथ्यार लिये ॥ अब जाइ करीषकी आगि जरौ । गुरु बाँधिकै सागर बूडिमरौ ॥ २३ ॥ दोहा ॥ कहा कहौं हौं भरतको, जानत है सब कोय ॥ तोसो पापी संग है, क्यों न पराजय होय ॥ २४ ॥ बहुत युद्ध भो भरतसों, देव अदेव समान ॥ मोहि महारथ-पर गिरे, मारे मोहनबान ॥ २४ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिंद्रजिद्विरचितायां भरतमोहनं नाम सप्तत्रिंशः प्रकाशः ॥ ३७ ॥

टी०-करीष (सूख्यो गोबर) बिनुआं कंडा कारि प्रसिद्ध है ॥ २३ ॥ २४ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसाद-निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां सप्तत्रिंशः प्रकाशः ॥ ३७ ॥

दोहा ॥ अडतीसयें प्रकाशमें, अंगद युद्ध बखान ॥ व्याज सेन रघुनाथको, कुश लव आश्रमजान ॥ १ ॥ भरतहि भयो

विलंब कछु, आये श्रीरघुनाथ ॥ देख्यो वह संग्रामथल, जूझि परे सब साथ ॥ २ ॥ तोटकछंद ॥ रघुनाथहि आवत आइ गये । रणमें मुनिबालक रूप रये ॥ गुणरूप सुशीलनसों रणमे । प्रतिबिंब मनो निज दर्पणमें ॥ ३ ॥ मधुतिलक-छंद ॥ सीतासमानमुखचंद विलोकि राम । बूझ्यो कहाँ बसत हौ तुम कौन ग्राम ॥ माता पिता कवन कौन्यहि कर्म कीन । विद्या विनोद शिष कौन्यहि अस्त्र दीन ॥ ४ ॥

टी०-॥ १ ॥ २ ॥ गुण औ रूप औ शील स्वभाव सहित रणमें अर्थ रण करनेमें मानों दर्पणमें आपने प्रतिबिंबही आइ गये हैं जैसे दर्पणके निकट जातही दर्पणमें आपनेही स्वभावादिमों युक्त आपने प्रतिबिंब आइजात हैं ता विधि रणभूमिरूपी दर्पणके निकट रामचन्द्रके आवतही रामचन्द्रहीके स्वभावादिसों युक्त प्रतिबिंब सम लवकुश आये इत्यर्थः ॥ ३ ॥ भाग्यवान् पुत्रको मुख माताको ऐसो होत है ॥ "धन्यो मातृमुखः सुतः ॥" इति प्रमाणात् ॥ कहो कहे कौन स्थानमें कर्म (जातकर्मादि) ॥ ४ ॥

कुश०-रूपमालाछंद ॥ राजराज तुम्हैं कहा मम वंशसों अब काम । बूझि लीन्हेहु ईश लोगन जीतिकै संग्राम ॥ राम ॥ हौं न युद्ध करौं कहे विन विप्रवेष विलोकि । बेगि वीरकथा कहौ तुम आपनी रिस रोकि ॥ ५ ॥ कुश ॥ कन्यका मिथिलेशकी हम पुत्र जाये दोइ । वालमीकि अशेष कर्म करे कृपारस भोइ ॥ अस्त्र शस्त्र सबै दये अरु वेद भेद पढाइ । बापको नहिं नाम जानत आजुलों रघुराइ ॥ ६ ॥ दोधकछंद ॥ जानकिके मुख अक्षर आने । राम तहीं अपने सुत जाने ॥ विक्रम साहस शील विचारे । युद्धकथा कहि आयुध डारे ॥ ७ ॥ राम ॥ अंगद जीति इन्हैं गहि ल्यावो । कै अपने बल मारि भगावो ॥ वेगि बुझावहु चित्त चिताको । आजु तिलोदक देहु पिताको ॥ ८ ॥ अंगद तौ अँग अंगनि

फूले । पौनके पुत्र कह्यो अति भूले ॥ जाइ जुरे लवसों तरु लैकै । बात कही शतखंडन कैकै ॥ ९ ॥

टी०-॥ ५ ॥ ६ ॥ जानकीको नाम लीन्हों तासों औ अपने सदृश विक्रम साहस शीलहूसों विचारयो कि हमारेही पुत्र हैं ॥ ७ ॥ हम तुमसों कहि राख्यो है कि कोऊ हमारे बंशमें तुमसो युद्ध करिहै सो ये हमारेही पुत्र हैं तासों इनको जीतिके ता समयसों क्रोधाग्निसों जरत चित्तरूपी जो चिता है ताको बुझावौ औ रघुवंशिनसों युद्ध करि पिताको तिलोदक देन कह्यो है सो देउ अथवा हमारे ही पुत्र ह्वैकै हमारो अश्व बाँधि वृथा युद्ध करयो ता क्रोधसों जरत चित्तरूपी जो चिताहै ताको बुझावो औ पिताको तिलोदक देहु ॥ ८ ॥ ९ ॥

लव ॥ अंगद जो तुम पै बल होतो । तौ वह सूरज़को सुतको तो ॥ देखतही जननी जो तिहारी । वा सँग सोवति ज्यों वर नारी ॥ १० ॥ जा दिनते युवराज कहाये । विक्रम बुद्धि विवेक बहाये ॥ जीव तपै कि मरे पहँ जैहै । कौन पिताहि तिलोदक दैहै ॥ ११ ॥ अंगद हाथ गहे तरु जोई । जात तहीं तिलसो कटि सोई ॥ पर्वत पुंज जिते उन मेले । फूलके तूल लै बाणन झेले ॥ १२ ॥ बाणन वेधि रही सब देही । बानरते जो भये अब सेही ॥ भूतलते शर मारि उडायो । खेलिके कंदुकको फल पायो ॥ १३ ॥ सोहत है अध ऊरध ऐसे । होत बटा नटको नभ जैसे ॥ जान कहूं न इतै उत पावै । गोबल चित्त दशों दिशि धावै ॥ १४ ॥ बोल घटयो सो भयो सुरभंगी । ह्वै गयो अंग त्रिशंकुको संगी ॥ हा रघुनायक हौं जन तेरो । रक्षहु गर्व गयो सब मेरो ॥ १५ ॥ दीन सुनी जनकी जब बानी । जी करुणा लव बाणन आनी ॥ छांडि दियो गिरि भूमि परयोई । विह्वल ह्वै अति मानों मरयोई ॥ १६ ॥

टी०-वरनारी अर्थ विवाहिता स्त्री ॥ १० ॥ जो रामचंद्र कह्यो कि इनको जीतिकै आजु पिताको तिलोदक देहु सो सुनिकै लव कहत हैं कि कमहो

जीतिकै जो तिलोदक तुम देहौ सो जीवत पिता जे सुग्रीव हैं तिनको प्राप्त ह्वै है कि मरे पिताजे बालि हैं तिनको प्राप्त ह्वै है ॥ ११ ॥ खेले (दूरी) किये ॥ १२ ॥ सेही शल्लकीनामा बनजंतु विशेष ॥ १३ ॥ १४ ॥ त्रिशंकुको संगी अर्थ त्रिशंकुसम शीश नीचे चरण ऊपर भये ॥ १५ ॥ १६ ॥

विजयछंद ॥ भैरवसे भट भूरि भिरे बल खेत खडे करतार करैकै। भारे भिरे रणभूधर भूपन टारे टरे इभ कोटि अरैकै॥ रोषसों खड्ग हने कुश केशव भूमि गिरे न टरेहु गरैकै। राम विलोकि कहैं रस अद्भुत खाये मरे नग नाग मरैकै ॥ १७ ॥ दोधकछंद ॥ वानर ऋक्ष जिते निशि चारी। सेन सबै इक बाण सँहारी ॥ बाण विंधे सबही जब जोये। स्यंदनमें रघुनंदन सोये ॥ १८ ॥ गीतिकाछंद ॥ रण जोइकै सब शीश भूषण संग्रहे जे भले भले। हनुमंतको अरु जामवंतहिं वाजिसों ग्रसि लै चले ॥ रण जीतिकै लव साथ लैकरि मातुके कुश पाँ परे। शिर सूंघि कंठ लगाय आनन चूमि गोद दुवौ धरे ॥ १९ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिंतामणिश्रीरामचन्द्रचंद्रिकाया-
मिन्द्रजिद्विरचितायां कुशलवजयवर्णनं
नामाष्टत्रिंशः प्रकाशः ॥ ३८ ॥

भैरव ऐसे जे भूरिभट हैं ते बलसों भिरेहैं सो इन भटनको कहे कैधौं याही परे कहे अति बिकट खेत कहे युद्धके लिये कर्त्तार विधातैं करे कहे बनायो है अर्थ त्रिकालज्ञ विधाता यह अति विकट युद्ध भावी जानिकै ताके लिये ऐसे प्रबल वीर आपने हाथसों बनायो है या युद्धमें एई वीर भिरे हैं और वीर न भिरि सक्ते इति भावार्थः ॥ अथवा बलसों खडे जे खेत हैं तिनके कर कहे कर्त्ता अर्थ जिन रावणादिसों रण कीन्होंहै ऐसे जे भैरव ऐसे भूरि भट हैं ते करे कहे अति कठोर मारु मारु इत्यादि तार कहे उच्चस्वर कै कहे करिकै रणमें भिरे हैं कोऊ कादरस्वर नहीं बोलत इति भावार्थः । औ भूधर (पर्वत) सम अचल जे भारे भूप हैं अथवा भूधर कहे भूमिके धरनहार अर्थ जेती भूमि धरैं तेती कैसेहू न छोडैं ऐसे जे भारे भूप हैं ते कोटिन इभ जे हाथी हैं तिनको अरे कहे हठे करिकै अर्थ पगनमें जंजीरादि डारि जामें टरैं नहीं

ऐसे करिकै युद्धमें भिरेहैं ते भट औ भूप मरेकै कटेहूं अर्थ शिर कटिगयो है ताहू पर भूमिमें न गिरे अर्थ जिनको कबंधहू लरत रह्यो औ तिन हाथिनको परे देखिकै अद्भुत रसयुक्त है रामचन्द्र कहत हैं कि नग जे पर्वत हैं तिनके खांये कहे खामी मारे हैं कि नाग कहे हाथी मरे हैं अर्थ ऐसे मरे हाथिनकें कतारे परे हैं मानौ पर्वतनके खावाँ मारे हैं अथवा नाग नग जे गजमुक्ता हैं तिनके खाये सम मारि गये हैं अर्थ यह जहाँ गजमुक्तनके खावाँ मारि गये हैं तहाँ हाथिनकी कौन कहै ॥१७॥ तेतीसयें प्रकाशमें कह्यो है कि रामकी जय सिद्धिसों सियको चले वन छाँडि सो जय सिद्धिरूप जे सीता हैं तिनको तौ बनमें छोंडयो जय सिद्धि कैसे प्राप्त होय सो त्रिकालज्ञ जे रामचन्द्र हैं ते यह विचारिकै सोइ रहे ॥ १८ ॥ १९ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसाद-
निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायामष्टत्रिंशः प्रकाशः॥ ३८ ॥

दोहा ॥ नवतीसयें प्रकाश सिय, राम सँयोग निहारि ॥ यज्ञ पूरि सब सुतनको, दीन्हो राजविचारि ॥ १ ॥ रूपमाला छंद ॥ चीन्हि देवरको विभूषण देखिकै हनुमंत । पुत्र हौं विधवा करी तुम कर्मकी न दुरंत ॥ बापको रण मारियो अरु पितृ भ्रातृ सँहारि । आनियो हनुमंत बाँधिन आनियो मोहिं गारि ॥ २ ॥ दोहा ॥ माता सब काकी करी, विधवा एकहि बार ॥ मोसे और न पापिनी, जाये वंशकुठार ॥ ३ ॥ दोधकछंद ॥ पाप कहाँ हति बापहि जैहो । लोक चतुर्दश ठौर न पैहौ ॥ राजकुमार कहै नहिं कोऊ । जारज जाइ कहावहु दोऊ ॥ ४ ॥ कुश ॥ मोकहँ दोष कहा सुनु माता । बाँधि लियो जो सुन्यो उनि भ्राता ॥ हौं तुमहीं तेहि बार पठायो । राम पिता कब मोहिं सुनायो ॥ ५ ॥ दोहा ॥ मोहि विलोकि विलोकिकै, रथपर पौढे राम ॥ जीवत छोंड्यो युद्धमें, माता करि विश्राम ॥ ६ ॥

टी०—॥ १ ॥ दुरंत (अनुत्तम) गारि (कलंक) ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ विश्राम (क्षमा) ॥ ६ ॥

सुंदरीछंद ॥ आइ गये तबहीं मुनिनायक । श्रीरघुनंद-नके गुणगायक ॥ बात विचारि कही सिगरी कुश । दुःख कियो मनमें कलि अंकुश ॥ ७ ॥ रूपवतीछंद ॥ कीजै न विडंबन संतत सीते । भावी न मिटै सुकहूं जग गीते ॥ तू तो पतिदेवनकी गुरु बेटी । तेरी जग मृत्यु कहावति चेटी ॥ ८ ॥ तोटकछंद ॥ सिगरे रणमंडलमांझ गये । अवलोक तहीं अति भीत भये ॥ दूहुँ बालनको अति अद्भुत विक्रम । अवलोकि भयो मुनिके मम संभ्रम ॥ ९ ॥

टी०-कस हैं मुनिनायक कलि जो कलियुग है ताके अंकुश हैं ॥ ७ ॥ विडंबन (दुःख) हे बेटी ! तू पतिव्रतनकी गुरु है चेटी (दासी) तेरी आज्ञासों मृत्यु मरे वीरनको जियाइ है इति भावार्थः ॥ ८ ॥ छंद ॥ उपजातिहै ॥ ९ ॥

दंडक ॥ श्रोणित सलिल नर वानर सलिल चर गिरि वालि-सुत विष बिभीषण डारे हैं । चमर पताका गुडी बडवा अन-लसम रोगरिपु जामवंत केशव विचारे हैं ॥ वाजि सुरवाजि सुरगजसे अनेक गज भरत सबंधु इंदु अमृत निहारे हैं । सोहत सहित शेष रामचंद्र कुश लव जीतिके समरसिंधु साँचेहू सुधारे हैं ॥ १० ॥ सीता-दोहा ॥ मनसा वाचा कर्मणा, जो मेरे मन राम ॥ तौ सब सेना जी उठे, होहि घरी न विराम ॥११॥ दोधकछंद ॥ जीय उठी सब सेन सभागी । केशव सोवतते जनु जागी ॥ स्यो सुत सीतहि लै सुखकारी । राघवके मुनि पाँयन पारी ॥ १२ ॥ मनोरमाछन्द ॥ शुभ सुंदरि सोदर पुत्र मिले जहँ । वर्षा वर्षैं सुर फूलनकी तहँ ॥ बहुधा दिवि दुंदुभिके गण बाजत । दिगपाल गयंदनके गण लाजत ॥ १३ ॥

टी०-कविजन समरको सिंधुसम कहतई हैं औ कुश लव समर जीतिकै

अंगन सहित साँचो सिंधु सँवारचों इत्यर्थः । सो कहत हैं सालिलचर (ग्राहादि) गिरि (मैनाक) रुधिररंगसो अरुण चमर जानौ रोगरिपु (धन्वंतारि) अडतीसयें प्रकाशमें कह्योहै कि हनुमंतको अरु जामवंतहि वाजिसों ग्रासि लै चलै । तासों इहाँ दूसरे जामवंत जानो अथवा प्रथम ग्रसि लै गये हैं फेरि छोडि दिये हैं तेऊ तहाँ हैं भरत चंद्रमा हैं शत्रुघ्न अमृत हैं ॥ १० विराम (बेर) ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥

अंगद-स्वागताछंद ॥ रामदेव तुम गर्व प्रहारी । नित्य तुच्छ अति बुद्धि हमारी ॥ युद्ध देव भ्रमतैं कहि आयो । दास जानि प्रभु मारग लायो ॥ १४ ॥ रूपमालाछंद ॥ सुंदरी सुत लै सहोदर वाजि लै सुख पाइ । साथ लै मुनि वालमी-कहि दीह दुःख नशाइ ॥ राम धाम चले भले यश लोक-लोक बढाइ । भाँति भाँति सुदेश केशव दुंदुभी न बजाइ ॥ ॥ १५ ॥ भरत लक्ष्मण शत्रुहा पुर भीर टारत जात । चौंर ढारत हैं दुवौ दिशि पुत्र उत्तम गात ॥ छत्र है कर इन्द्रके शुभ शोभिजै बहु भेव । मत्त दंति चढे पढैं जयशब्द देव नृदेव ॥ १६ ॥ दोधकछंद ॥ यज्ञथली रघुनंदन आये । धाम-निं धामनि होत बधाये ॥ श्रीमिथिलेश सुता बड भागी । स्यो सुत सासुनको पग लागी ॥ १७ ॥

टी०-पचीसयें प्रकाशमें अंगद कह्यो है कि; देवहौ नरदेव वानर नैर्ऋता दिक वीरहौ ॥ ता बातको ते कहत हैं कि हे देव ! तब जो हमसों युद्ध-करिवेको कहि आयो रहै अर्थ हम युद्ध करिवेको कह्यो रहै सो भ्रमसों कह्यो रहै सो दास जानकै हमारो गर्व दूरि करिकै हमको मारग (राह) लगायो रामचंद्रहूको वचन रह्यो कि कोऊ मेरे वंशमें तोसो युद्ध करिकै तब तेरो मन मोसों शुद्ध ह्वै है सो इहां अंग दको मन शुद्ध भयो जानौ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

दोहा ॥ चारि पुत्र द्वै पुत्र सुत, कौशल्या तब देखि ॥ पायो परमानंद मन, दिगपालनसम लेखि ॥ १८ ॥ रूपमालाछंद ॥ यज्ञ पूरण कै रमापति दान देत अशेष । हीरनीरज चीर मानिक

वर्षि वर्षा वेष ॥ अंगराग तडाग बाग फले भले बहु भाँति ।
भवन भूषण भूमिभाजन भूरि वासर राति ॥ १९ ॥ दोहा ॥
एक अयुत गज वाजि द्वै, तीनि सुरभि शुभ वर्ण ॥ एक एक
विप्रहि दई, केशव सहित सुवर्ण ॥ २० ॥ देव अदेव नृदेव
अरु, जेतने जीव त्रिलोक ॥ मन भायो पायो सबन, कीन्हें
सबन अशोक ॥ २१ ॥ अपने अरु सोदरनके, पुत्र विलोकि
समान ॥ न्यारे न्यारे देश दै, नृपति करे भगवान ॥ २२ ॥
कुश लव अपने भरतके, नन्दन पुष्कर तक्ष ॥ लक्ष्मणके
अंगद भये, चित्रकेतु रणदक्ष ॥ २३ ॥ भुजंगप्रयताछन्द ॥
भले पुत्र शत्रुघ्न द्वै दीप जाये। सदा साधु शूरे बडे भाग पाये ॥
सदा मित्रपोषी हनैं शत्रु छाती। सुबाहू बडो दूसरो शत्रु-
घाती ॥ २४ ॥ दोहा ॥ कुशको दई कुशावती, नगरी
कोशल देश ॥ लवको दई अवंतिका, उत्तर उत्तम वेष
॥ २५ ॥ पश्चिम पुष्करको दई, पुष्करवति है नाम ॥ तक्ष
शिला तक्षहि दई ॥ लई जीति संग्राम ॥ २६ ॥ अंगद कहँ
अंगद नगर, दीन्हों पश्चिम ओर ॥ चंद्रकेतु चन्द्रावती,
लीन्हों उत्तर जोर ॥ २७ ॥

टी०-॥ १८ ॥ नीरज (मोती) वासर राति कहे रातोंदिन देत कहे देत
ाये ॥ १९ ॥ अयुत (दशहजार) सुवर्ण दशमासेकी स्वर्णमुद्रा सुवर्ण (दश
ाासिक) ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

मथुरा दई सुबाहुको, पूरण पावन गाथ ॥ शत्रुघातको नृप
करचौ, देशहिको रघुनाथ ॥ २८ ॥ तोटकछंद ॥ यहि
भाँतिसों सकल भूमि भई। सब पुत्र भतीजन बाँटि दई ॥
सब पुत्र महाप्रभु बो[illegible]। बहु भाँतिनके उपदेश दिये
॥ २९ ॥ चामरछन्द ॥ बोलिये ॥ [illegible]ठईढि मूढपै न कीजई।
दीजिये जो बात हाथ भूलिहू न लीजई। [illegible]
[illegible] देहु तोरिये न देहु

दुःख मंत्रि मित्रको । यत्र तत्र जाहुपै पत्याहुजे अमित्रको ॥ ३० ॥ नाराचछंद ॥ जुवा न खेलिये कहूं जुवान वेद रक्षिये । अमित्र भूमिमाह जै अभक्ष भक्ष भक्षिये ॥ करौ न मंत्र मूढसों न गूढ मंत्र खोलिये । सुपुत्र होहु जै हठी मठी नसों न बोलिये ॥ ३१ ॥ वृथा न पीडिये प्रजाहि पुत्र मान पारिये । असाधु साधु बूझिकै यथापराध मारिये ॥ कुदेव देवनारिको न बालवित्त लीजिये । विरोध विप्रवंशसों सो स्वप्नहू न कीजिये ॥ ३२ ॥

टी०-देशहिको अर्थ अयोध्याके समीप देशको ॥ २८ ॥ २९ ॥ इां मित्रता जो वस्तु बात करिकै अथवा हाथ करिकै दीजिये ताको फेरि न लीजै ॥ ३० ॥ वेदको जुवान कहे वचन भूमि कहे स्थान ॥ ३१ ॥ पुत्र मान कहे पुत्रसम असाधु (सदोष) साधु (निर्दोष) कुदेव (ब्राह्मण) ॥३२

भुजंगप्रयातछंद॥ परद्रव्यको तौ विषप्राय लेखौ । परस्त्रीनसों ज्यों गुरुस्त्रीन देखौ ॥ तजौ कामक्रोधौ महामोहलोभौ । तजौ गर्वको सर्वदा चित्त क्षोभौ ॥३३ ॥ यश संग्रहौ निग्रहौ युद्धयोधा । करौ साधु संसर्ग जो बुद्धिबोधा ॥ हितू होइ सो देइ जो धर्मशिक्षा । अधर्मीनको देहु जैवाकाभिक्षा ॥ ३४ ॥ कृतघ्नी कुवादी परस्त्रीविहारी । करौ विप्रलोभी न धर्माधिकारी ॥ सदा द्रव्य संकल्पको रक्षि लीजै । द्विजातीनको आपुही दान दीजै ॥ ३५ ॥ सवैया ॥ तेरह मंडल मंडित भूतल भूपति जो क्रमही क्रम साधै । कैसेहु ताकहँ शत्रु न मित्रसु केशवदास उदासन बाधै ॥ शत्रुसमीप पर तेहि मित्रसे तासु परे जो उदासकै जोवै । विग्रह संधि न दान निसिंधुलौं लै चहुँ ओरनि तौ सुख सोवै ॥ ३६ ॥

टी०-काम क्रोध मोह लोभ औ गर्व कहे मद औ क्षोभ कहे मात्सर्य जे छः हैं तिनको त्याग करियो ॥ ३३ ॥ योधा शत्रु अथवा जो लरिबे

न्मुख होइ भीतादिको ना मारियो इति भावार्थः। बुद्धि बोधा बुद्धियुक्त ो धर्मशिक्षा देइ सोइ तुम्हारो हित होइ अर्थ ताहीको हितू करियो अधर्मि- ासों बोलियो ना इत्यर्थः ॥ ३४ ॥ ये जे पांच हैं तिनको धर्माधिकारी ना करियो संकल्पको द्रव्य जे दिये ग्रामादि हैं तिनकी रक्षा करियो आपुही अर्थ आपनेही हाथसों ॥ ३५ ॥ आपने देशके समीपको जो राजा है ताको शत्रुताके आगेको मित्रताके आगेको उदासीन जावै देखैं जानौं इति । याही भाँति चारिहू ओर तीनि तिनि राजमंडल सब द्वादश राज मंडल जानौं औ मध्यमें आपनों राजमंडल जोरि सब तेरह मंडल प्रसिद्ध हैं तिनसों युक्त जो भूतल हैं ताको या प्रकार क्रमही क्रम साधै तौ ताको शत्रु मित्र उदासीनता बांधै कैसे साधै सो कहतहैं कि शत्रुको विग्रह कहे दण्ड उपायसों औ मित्रको साधि कहे साम उपायसों उदासीनको दान उपायसों युक्त करै इति शेषः तो सिन्धु पर्यन्त चारों ओर लैकै सुखसों सोवै ॥ "बिष- यानन्तरो राजा शत्रुमित्रमतःपरम् ॥ उदासीनः परतरः" इत्यमरः ॥ ३६ ॥

दोहा ॥ राजश्रीवश कैसेहूँ, होहु न उर अवदात ॥ जैसे तैसे आपु वश, ताकहँ कीजै तात ॥ ३७ ॥ यहि विधि शिष दै पुत्र सब ॥ विदा करे दै राज ॥ राजत श्रीरघुनाथसँग, शोभन बंधुसमाज ॥ ३८ ॥ रूपमालाछंद ॥ रामचंद्रचरि- त्रको जो सुनै सदा सुख पाइ । ताहि पुत्र कलत्र सम्पति देत श्रीरघुराइ ॥ यज्ञ दान अनेक तीरथ न्हानको फल होइ । नारिका नर विप्र क्षत्रिय वैश्य शूद्र जो कोइ ॥ ३९ ॥ रूप- क्रांताछंद ॥ अशेष पुण्य पापके कलाप आपने बहाइ । विदेहराज ज्यों सदेह भक्त रामके कहाइ ॥ लहै सुभुक्ति लोकलोक अंत मुक्ति होहि ताहि । कहै सुनै पढै गुनै जो रामचन्द्रचन्द्रिकाहि ॥ ४० ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकाया- मिंद्रजिद्विरचितायां कुशलवसमागमो नामैकोनचत्वा- रिंशः प्रकाशः ॥ ३९ ॥

टी०-॥ ३७ ॥ शोभन (सुंदर) ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ कलाप (समूह) पुण्य पापके नाशसों मुक्ति होति है ॥ "अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्"

इति प्रमाणात् । अथवा याके धारणसों प्राप्त जो यज्ञादिको अ[illegible] (सम्पूर्ण) पुण्य है तासों पापके कलाप बहाइकै ॥ ४० ॥ कवित्त ॥ कैधौं शुभसागर विराजमान जामें पैठि पाइयत परम पदारथकी राशिका कण्ठमें करत शोभ धरत सभाके मध्य कैधौं सोहै माल उर विमल उज सिका ॥ सेवतही जाको लहे सुमन प्रवीण ताई जानकीप्रसाद कैधौं भारती हुलासिका । ज्ञानकी प्रकाशिका मुकुतिप्रदकाशिका है सेइये सुज न रामभगति प्रकाशिका ॥ १ ॥ दोहा ॥ रामभक्ति उर आनिकै, रामभक्तजनहेतु ॥ रामचन्द्रिकासिंधुमें, रच्यो तिलकको सेतु ॥ २ ॥ जो सुपंथ ताजि सेतुको, चलहि और मग जोर, ॥ रामचन्द्रिकासिंधुको, लहहिं कौन विधि और ॥ ३ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननीजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायामेकोनचत्वारिंशः प्रकाशः ॥ ३९ ॥

टी०-कवित्त ॥ तूरचो शम्भुधनु भृगुनाथको गरब चूरचो ऊरचो निज राज पूरचो पितुको परन है । वन वरवास कीन्हे निशिचर नाश कीन्हे रविसुत आश कीन्हे आवत शरण है ॥ कपिकर लंक जारचो पारचो सेतु सिंधुमहँ मारचो दशशीशबंधु धारचो नृप धन है । ख्याल सम कीन्हे जिन अदभुत काम बन्दियत अभिराम नृपरामके चरन हैं ॥ १ ॥

इति श्रीरामचन्द्रिकासटीकी समाप्ता ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास, "लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस. कल्याण-मुंबई.

खेमराज श्रीकृष्णदास, "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस. खेतवाडी-मुंबई.